4

सत्यमेव जयते

चौथी रिपोर्ट

द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग

शासन में नैतिकता

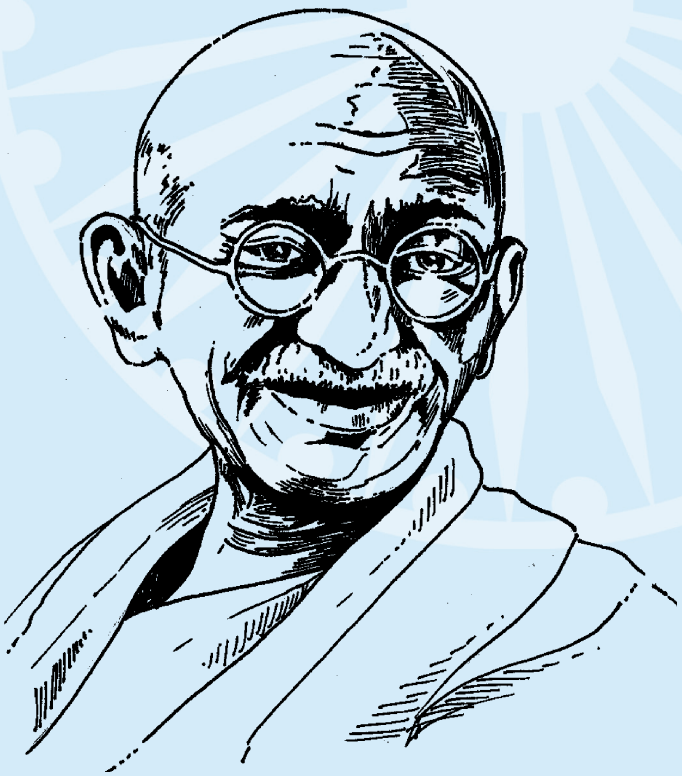

"जो परिवर्तन आप विश्व में देखना चाहते हो वह पहले स्वयं में देखो।"

महात्मा गांधी

जनवरी 2007

भारत सरकार

द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग

चौथी रिपोर्ट

शासन में नैतिकता

जनवरी 2007

"जो परिवर्तन आप विश्व में देखना चाहते हो वह पहले स्वयं में देखो ।"

महात्मा गांधी

प्राक्कथन

''एक इन्सान के रूप में हमारी महानता इसमें इतनी नहीं है कि हम इस दुनिया को बदलें – वह तो परमाणु युग का रहस्य है – जितनी इसमें है कि हम अपने को बदल डालें ।''

महात्मा गांधी

महात्मा जी की एक सुदृढ़ और खुशहाल भारत की दृष्टि – पूर्ण स्वराज्य – कभी वास्तविकता में नहीं बदल सकती यदि हम आमतौर पर राजनीति, अर्थव्यवस्था और समाज से भ्रष्टाचार के खात्मे के मुद्दे का समाधान नहीं कर लेते ।

खुशहाली और समानता की तलाश में शासन को एक कमजोर कड़ी माना जाता है । भ्रष्टाचार को दूर करना एक नैतिक अनिवार्यता ही नहीं है बल्कि किसी देश को दुनिया के बाकी हिस्सों के साथ गठजोड़ के लिए एक आर्थिक आवश्यकता भी है । स्वामित्वहीनता की वापसी, संविदा प्रवर्तन और अधिकारी तंत्र विलंबों और भ्रष्टाचार में कमी से हमारे जीडीपी की दर में पर्याप्त रूप में वृद्धि हो सकती है । एक अच्छे शासन के छः मापदंड समझे जाते हैं जो कुछ उप मापदंडों को मिलाकर बनते हैं, इस प्रकार हैं : कथन और जवाबदेही, राजनीतिक अस्थिरता और हिंसा की अनुपस्थिति, सरकारी प्रभावशीलता, विनियामक बोझ की युक्तियुक्तता, कानूनी नियम, रिश्वत की अनुपस्थिति सरकारी अनुपस्थिति । इनमें से अन्तिम दो नैतिक शासन के संदर्भ में अत्यंत प्रत्यक्ष रूप से महत्वपूर्ण हैं । कानून के नियमों का मापदंड इन चीजों से किया जाता है, क्या दंड उचित प्रकार से दिया गया है या नहीं ; संविदाओं की प्रवर्तनीयता ; काले धन की सीमा; सम्पत्ति के प्रवर्तनीय अधिकार ; कर चोरी की सीमा ; न्यायपालिका की स्वतंत्रता; व्यापार की योग्यता और लोगों द्वारा सरकार की कार्यवाई को न्यायालयों में चुनौती देना आदि । 'रिश्वतखोरी की अनुपस्थिति' का मापदंड इस प्रकार किया जाता है : सरकारी, राजनीतिक और नौकरशाही के अधिकारियों में भ्रष्टाचार की, परमिटों और लाइसेंसों को प्राप्त करने संबंधी रिश्वतखोरी की, न्याय–तंत्र में भ्रष्टाचार की तथा उस भ्रष्टाचार की जिसके कारण विदेशी विनियोगकर्त्ता भय खाता हो – इन सब बातों की संगत अनुपस्थिति।

यह धारणा है कि लोक सेवाएं मनमाने ढंग से और प्रतिशोधी कार्यवाई के विरूद्ध संवैधानिक गारंटी से पैदा होने वाली कार्य–पद्धतियों के कारण दंड के अधिरोपण से अधिकतर बच जाती हैं । उन संवैधानिक सुरक्षणों ने व्यवहार्य तौर पर अपराधी को लोक पद का अपने निजी लाभ के लिए दुरूपयोग करने के लिए कुछ तेज दंड देने से बचाया। इसका एक मुख्य परिणाम यह हुआ है कि जवाबदेही को हानि हुई है । विधि शास्त्र के अनेकानेक पूर्व निर्णयों ने इतना स्थान ले लिया है कि अनुच्छेद 311 की वास्तविक मंशा ही लुप्तप्राय हो गई है जिसके कारण भ्रष्टाचार को कम करने में बाधाओं के अंबार से लग गए हैं । ऐसा प्रावधान युनाईटेड किंगडम सहित किसी भी लोकतांत्रिक देश में नहीं देखा गया है । ईमानदार व्यक्ति का बचाव करने की आवश्यकता है और बेईमान अनुच्छेद 311 का पूरा लाभ उठाता हुआ प्रतीत होता है । अतः कार्य पद्धतियों को युक्तिसंगत बनाने और उनका सरलीकरण करने के लिए प्रशासनिक विधि शास्त्र के समूचे ढांचे की बृहत् जांच करने की आवश्यकता है । प्रवर्तन की एक त्रुटि सक्षम प्राधिकारी द्वारा दोषी व्यक्ति के विरूद्ध अभियोजन की अनुमति में देरी करना रही है । इस संबंध में केन्द्रीय सतर्कता आयोग की 2004 वर्ष के लिए वार्षिक रिपोर्ट का हवाला दिया जा सकता है । स्वीकृति के लिए 153 मामलों में से 21 मामले 3 वर्षों से अधिक अवधि से निलंबित थे, 26 मामले 2–3 वर्षों के बीच और 25 मामले 1–2 वर्षों के बीच से निलंबित थे । विभागीय जांचों का महत्व या तो संरक्षण का पात्र बनने के कारण या फिर किसी की कृपा का पात्र बनने के कारण कम हो जाता है ।

सत्यनिष्ठा वित्तीय ईमानदारी से कहीं अधिक होती है । लोक कार्यालय को एक न्यास के रूप में समझा जाना चाहिए । भ्रष्टाचार के दो पक्ष होते हैं : (1) वह संस्थान जो बहुत ही भ्रष्ट होता है ; (2) वे व्यक्ति जो बहुत ही भ्रष्ट होते हैं । सार्वजनिक लाभ के लिए काम करने की आवश्यकता है और अधिकारियों द्वारा की जा रही सेवाओं को भी महत्व दिए जाने की आवश्यकता है । अन्तःसंबद्ध जवाबदेही एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा मूल्यांकन आसानी से किया जा सकता है और जवाबदेही को भी सुनिश्चित किया जा सकता है ।

विश्वास और आस्था बनाने के लिए एक वातावरण की आवश्यकता होती है जहां पारदर्शिता, खुलापन, निर्भीकता, निष्पक्षता और न्यायपूर्णता का मूल्य होता है । हमें इसे बढ़ावा देना चाहिए ।

स्पष्ट तौर पर, नियमों का न होना कोई समस्या नहीं है । ईमानदारी पर कोई कानून नहीं बना सकता। कानूनी नियम केवल भ्रष्ट दिमाग को विकृत कर सकते हैं । तथापि, यह दिल से उसे विकृत नहीं कर सकते । एलेक्जैंडर सोझैन्स्यिन के शब्दों में : ''अच्छाई और बुराई की जो रेखा होती है वह न तो देशों के बीच से निकलती है और न ही वर्गों के बीच से, बल्कि प्रत्येक मनुष्य के दिल के बीच में से गुजरती है ।'' हमारा कोई अन्य भाग्य नहीं होता, सिवाय इसके कि जो हम स्वयं बनाते हैं । जो केवल अपने गुणों के कारण शासन चलाता है, उसकी तुलना उस ध्रुव तारे से की जानी चाहिए जो अपनी जगह पर रहता है परंतु अन्य सभी तारे उसके चारों ओर घूमते हैं । जब शासक स्वयं सही होता है तो लोग उसकी सही दिशा में अपने आप चलने लगते हैं । यदि शासन उन लोगों द्वारा चलाया जाता है, जो किसी दोष के कारण परित्यक्त हों, तो लोगों को कष्ट होगा ही । हमें प्लूटो के इस व्यादेश को ध्यान में रखना चाहिए:

''यदि बुद्धिमान व्यक्ति शासन के संचालन में भाग लेने से मना करने पर दंड के भागी होते हैं तो बुरे व्यक्तियों द्वारा सरकार चलाने से लोगों को कष्ट भुगतना ही पड़ेगा ।''

अच्छे शासन की नींव स्थिरता और मधुर संबंधों को सुनिश्चित करते हुए नैतिक गुणों पर रखी जानी चाहिए । महान चीनी दार्शनिक कन्फ्यूशियस ने सदाचार को अच्छे शासन और शांति की आधारशिला माना है । अच्छी शासन कला चीजों को सही रूप में लेने और उन्हें सही जगह पर रखने में ही होती है। कन्फ्यूशियस द्वारा बताया गया अच्छे शासन का मार्ग भारत जैसे देश के लिए एक आदर्श के रूप में अनुकूलतम है जहां हमारे शासन के आज के खिलाड़ी किसी सिद्धांत का पालन नहीं करते और केवल अपना उल्लू सीधा ही करते हैं ।

कन्फ्यूशियस ने जीवन और चरित्र निर्माण के लिए सदाचार पर बल दिया है । यह उस धर्म या सदाचार के साथ मेल खाता है जो संसार में सभी धर्मों ने सिखाया है और बौद्ध धर्म में एक चौथे नेक सत्य के रूप में लोगों को सिखाया गया था । उसने यह भी बल दिया था कि आदमी को स्वयं सदाचारी बनना चाहिए और केवल तभी विश्व में सदाचार आएगा । इस बात की गांधी जी की इन शब्दों के साथ तुलना की जा सकती है, ''जो परिवर्तन आप दुनिया में देखना चाहते हो वह पहले स्वयं में देखो ।''

अतः पूर्ण विश्लेषण के बाद अब नैतिकता का ही प्रश्न है । नैतिकता कुछ मानदंडों की एक शृंखला है जो आचार का मार्ग दिखलाती है । एक समस्या यह है कि विद्यमान आचार संहिताएं प्रत्यक्ष और सारंगत

नहीं हैं । वे केवल अस्पष्ट कथन हैं जो कभी कभी सीधे निषेधाज्ञा को दर्शाते हैं । नैतिक संहिता का निर्धारण करने के लिए, नेपोलियन की सलाह को ध्यान में रखना लाभदायक होगा, जिसने कहा था, ''कानून इतना सारगर्भित होना चाहिए कि उसे कोट के जेब में रख कर ले जाया जा सके और यह इतना सरल होना चाहिए कि एक किसान भी इसे समझ सके ।''

यद्यपि, न्यायालय में दुर्विनियोजन के दंडनीय अपराध को हर बार सिद्ध करना संभव नहीं होता, फिर भी, लोक सेवक को राष्ट्र को गंभीर धन की हुई हानि पहुंचाने के लिए सेवा से हटाया जा सकता है । किसी सिंचाई बांध या भवन के निर्माण में किसी इंजीनियर ने त्रुटिपूर्ण सामान का जानबूझ कर प्रयोग किए जाने की अनुमति दे दी होगी । इस बात के लिए भ्रष्टाचार के आरोप लगाकर उसे न्यायालय में अभियुक्त तो नहीं बनाया जा सकता परंतु उसे अक्षमता के आधार पर सेवा हटाया जा सकता है । एक कर अधिकारी ने भविष्य में विवरणी का समर्थन लेने के लिए राजस्व की चोरी करने में समझौता कर लिया होगा । ऐसा आचार उसे दंडनीय अपराध के आरोप के तत्व तो प्रदान नहीं कर सकता परंतु उसे सेवा से हटवा सकता है ।

सार्वजनिक जीवन में सत्यनिष्ठा के लिए मानदंड दंड न्यायालय में दोषसिद्धि ही नहीं होना चाहिए बल्कि इस प्रयोजन से विशेष रूप से गठित उचित स्वतंत्र संस्थानों द्वारा निर्धारित किए गए औचित्य भी होने चाहिए । हमने ब्रिटिश के मॉडल शासन का मुख्य तौर पर अनुकरण किया है । टोनी ब्लेयर की सरकार में मंत्रियों को ऐसे छोटे छोटे अनुचित कामों के लिए त्याग पत्र देना पड़ा जैसे कि मंत्री के किसी बच्चे की 'देखभाल करने वाली' के वीजा के लिए संबंधित व्यक्ति को जल्दी काम कराने के लिए दूरभाष पर बात करना अथवा सरकार द्वारा समर्थित किसी कार्य के लिए उदार योगदान देने वाले व्यक्ति को ब्रिटिश नागरिकता प्रदान करवाना । ऐसे सिद्धांतों का समर्थन करते हुए जवाहर लाल नेहरू ने मुद्गल मामले में घोषणा की थी जिसमें लोक सभा के सदस्य को संसद् द्वारा 24 सितम्बर 1951 को निष्कासित कर दिया गया था, जब उस सदस्य ने स्वयं भी त्याग पत्र देने की इच्छा जताई थी । संसदीय जीवन में आचार के उच्च मानदंड स्थापित करने में पूर्व नेतृत्व के प्रयासों में मुद्गल मामले को एक बहुत ही नेकनीयती के उदाहरण के रूप में लिया जाता है ।

हमें सार्वजनिक जीवन में सत्यनिष्ठा को कड़े मानदंडों को निर्धारित करते हुए वापस लाने की आवश्यकता है न कि संदिग्ध सत्यनिष्ठा वाले महत्वपूर्ण लोक सेवकों को उनके इस तर्क के कारण उनका बचाव करना है कि उन्हें न्यायालय में दोषसिद्ध नहीं किया गया । मानदंड केवल सीजर की पत्नी के लिए ही नहीं होने चाहिए बल्कि स्वयं सीजर पर भी होने चाहिए ।

शासन के किसी अन्य मुद्दे की अपेक्षा भ्रष्टाचार की समस्या का हल अधिक सर्वांगी होना चाहिए। केवल देश की आर्थिक भूमिका का विनियमों से परे करके, उदारीकरण करके और निजीकरण द्वारा संकुचन कर देने से किसी समस्या का आवश्यक रूप से हल नहीं है । प्रचलित संस्थागत प्रबंधों की समीक्षा करके उनमें परिवर्तन किया जाना चाहिए, स्वविवेकी निर्णयों को कम करने के लिए शक्ति से निहित व्यक्ति को जवाबदेह बनाया जाए, उनके संचालन को अधिक पारदर्शी बनाया जाना चाहिए और उनका सामाजिक लेखा–जोखा होना चाहिए । ऐसी सभी कार्य–पद्धतियों, कानूनों और विनियमों जिनसे भ्रष्टाचार फैलता

हो और जो कुशल सुपुर्दगी व्यवस्था में बाधा डालते हों, उन्हें दूर किया जाना होगा । सार्वजनिक जीवन में प्रोत्साहनों की भ्रष्ट व्यवस्था, जिसमें भ्रष्टाचार ऊंचे दाम और कम जोखिम की गतिविधि बन जाते हैं, का समाधान आवश्यक है । इस संदर्भ में, भ्रष्टाचार के आरोपों पर दोषी करार दिए गए लोगों को लेकर सार्वजनिक रूप से एक उदाहरण कायम किया जाना चाहिए और इस संबंध में कानूनी प्रक्रिया का पालन किया जाना चाहिए । इससे यह आशा है कि समाज में भ्रष्टाचार की तस्वीर के संबंध में जो औचित्य पिछले कुछ समय से बढ़ रहा है, वह कम होगा । इसके अतिरिक्त, आर्थिक नीति के राजतंत्र में परिवर्तनों के साथ साथ, विनियमन निकाय, जो सुसंगत आर्थिक संस्थाओं के संचालन का मार्गदर्शन और उस पर निगरानी रखते हुए उपभोक्ताओं के हित में आचार नियमों को बनाते हैं और ऐसी वृत्तियों का निर्धारण करते हैं जो व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने में सहायता करती हैं, उन्हें अर्थव्यवस्था के उन अनेक क्षेत्रों में गठित करना होगा जो अब खोले जा रहे हैं । इसके साथ–साथ, बड़े से बड़े लोक पद के लिए भी सशक्त स्वायत्तता और विश्वसनीय ढांचों के माध्यम से सामाजिक निगरानी का भी गठन करना होगा । इन परिवर्तनों में से कुछ के लिए सूचना का अधिकार एक प्रारंभिक बिन्दु हो सकता है ।

ई–गवर्नेंस और सर्वांगी परिवर्तन पर ध्यान केन्द्रित किया जाना चाहिए । शासन की एक ईमानदार व्यवस्था बेईमान व्यक्तियों को हटा देगी । जैसाकि ग्लैडस्टोन ने ठीक ही कहा है,''सरकार का उद्देश्य लोगों को अच्छा काम करना आसान कर देना और बुरा काम करना कठिन कर देना होता है ।''

हम हमेशा अपनी त्रुटियों के लिए अन्य लोकतांत्रिक संस्थानों द्वारा अतिक्रमण का उल्लेख करते हुए खेल में दोष निकाल कर इन त्रुटियों को दूसरे पर मढ़ देते हैं । एक कार्यपालक/सिविल सेवाएं राजनेता या विधायक पर और उसके विपरीत हस्तक्षेप का दोष लगाता है, विधायक न्यायपालिका को, न्यायपालिका विधायक को दोषी ठहराते हैं ; इसमें मुख्य समस्या किसी एक द्वारा दूसरे के लिए जगह ले लेने के लिए छोड़ दी जाती है तो उस जगह को माफिया या संविधान से इतर प्राधिकारी ग्रहण कर लेते हैं । बिगड़ती हुई लोकतांत्रिक राजनीति की संघर्षमय परिस्थितियों के वास्तविक समाधान ये हैं : अपने अधिकार का अनुभव करके अपने उत्तरदायित्व के क्षेत्र का निष्पादन करना ; जवाबदेही और दायित्व को उन्नत करना। मैं एक प्राचीन सुभाषित (अच्छा संदेश) का उद्धरण देते हुए अपनी बात समाप्त करता हूँ –

''नदियाँ अपना पानी स्वयं नहीं पीतीं, न ही वृक्ष अपने फलों को स्वयं खाते हैं, न ही बादल उनके द्वारा पैदा किए गए अन्न को स्वयं खाते हैं । नेक इन्सान का धन केवल दूसरों के लाभ के लिए प्रयोग किया जाता है ।''

M. Veerappa Moily

नई दिल्ली
जनवरी 16, 2007

(एम. वीरप्पा मोइली)
अध्यक्ष

भारत सरकार
कार्मिक, लोक शिकायत तथा पेंशन मंत्रालय
प्रशासनिक सुधार और लोक शिकायत विभाग

संकल्प

नई दिल्ली, दिनांक 31 अगस्त, 2005

संख्याः के–11022/9/2004–आर.सी – राष्ट्रपति लोक प्रशासन प्रणाली को परिष्कृत करने के लिए एक विस्तृत रूपरेखा तैयार करने हेतु दूसरा प्रशासनिक सुधार आयोग नामक एवं जांच आयोग सहर्ष गठित करते हैं ।

2. इस आयोग में निम्नलिखित शामिल होंगे :–

(i) श्री एम वीरप्पा मोइली – अध्यक्ष

(ii) श्री वी. रामचन्द्रन – सदस्य

(iii) डॉ. ए. पी. मुखर्जी – सदस्य

(iv) डॉ ए. एच. कालरो – सदस्य

(v) डॉ जयप्रकाश नारायण – सदस्य

(vi) श्रीमती विनीता राय – सदस्य–सचिव

3. यह आयोग देश के लिए सरकार के सभी स्तरों पर एक क्रियाशील, जवाबदेह बनाए रखने योग्य तथा कार्यकुशल प्रशासन बनाने का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए उपाय सुझाएगा । यह आयोग अन्य बातों के साथ–साथ निम्नलिखित पर भी विचार करेगा :–

(i) भारत सरकार का संगठनात्मक ढांचा ।

(ii) शासन में आचार संहिता ।

(iii) कार्मिक प्रशासन को नया रूप देना ।

(iv) वित्तीय प्रबन्धन प्रणालियों को सुदृढ़ करना ।

(v) राज्य स्तर पर प्रभावी प्रशासन सुनिश्चित करने संबंधी कदम ।

(vi) प्रभावी जिला प्रशासन सुनिश्चित करने संबंधी कदम ।

(vii) स्थानीय स्व–शासन/पंचायती राज संस्थाएं ।

(viii) सामाजिक धन, ट्रस्ट एवं सहभागितापूर्ण लोक सेवा प्रदान करना ।

(ix) नागरिक केन्द्रित प्रशासन ।

(x) ई–गवर्नेंस को बढ़ावा देना ।

(xi) संघीय राज्य व्यवस्था के मुद्दे ।

(xii) आपदा प्रबन्धन ।

(xiii) लोक व्यवस्था ।

प्रत्येक शीर्षक के अंतर्गत जांच किये जाने वाले कुछ मुद्दे इस संकल्प की अनुसूची के रूप में संलग्न विचारार्थ विषयों में दिये गये हैं ।

4. यह आयोग रक्षा, रेलवे, विदेश मामले, सुरक्षा तथा आसूचना प्रशासनों की विस्तृत जांच के साथ–साथ केन्द्र–राज्य संबंधों, न्यायिक सुधारों आदि विषयों, जिनकी पहले से ही अन्य निकायों द्वारा जांच की जा रही है, को अपने दायरे से बाहर रख सकता है । तथापि, आयोग सरकार के अथवा इसकी किसी सेवा एजेंसी के तंत्र की पुनर्संरचना की अनुशंसा करते हुए इन क्षेत्रों की समस्याओं को ध्यान में रखने के लिये स्वतंत्र होगा ।

5. आयोग राज्य सरकारों के साथ परामर्श की आवश्यकता पर भी पर्याप्त ध्यान देगा ।

6. आयोग अपनी कार्य प्रणाली (आयोग द्वारा समुचित समझे जाने पर राज्य सरकारों के साथ परामर्श सहितद्ध स्वयं तय करेगा और अपनी सहायता हेतु समितियां, परामर्शदाता/सलाहकार नियुक्त करेगा । आयोग विषय से संबंधित उपलब्ध मौजूदा सामग्री तथा रिपोर्टों पर विचार करेगा और सभी मुद्दों पर नये सिरे से सोचने की अपेक्षा उन्हीं के अनुसार आगे कार्यवाई करने हेतु विचार करेगा ।

7. भारत सरकार के मंत्रालय एवं विभाग आयोग द्वारा अपेक्षित सूचना और दस्तावेज तथा अन्य सहायता प्रदान करेंगे । भारत सरकार को आशा है कि राज्य सरकारें तथा अन्य सभी संबंधित आयोग को अपना पूरा सहयोग और सहायता प्रदान करेंगे ।

8. आयोग अपनी रिपोर्ट (रिपोर्टें) कार्मिक, लोक शिकायत तथा पेंशन मंत्रालय, भारत सरकार को इसके गठन के एक वर्ष के अन्दर प्रस्तुत करेगा ।

ह0/–

(पी. आई. सुव्रथन)

अपर सचिव, भारत सरकार

भारत सरकार
कार्मिक, लोक शिकायत तथा पेंशन मंत्रालय
प्रशासनिक सुधार और लोक शिकायत विभाग

संकल्प

नई दिल्ली, दिनांक 24 जुलाई, 2006

संख्याः के–11022/9/2004–आर.सी (खण्ड–II) – राष्ट्रपति दूसरे प्रशासनिक सुधार आयोग द्वारा सरकार को अपनी रिपोर्टें प्रस्तुत करने की अवधि को 31–8–2007 तक एक वर्ष के लिए सहर्ष आगे बढ़ाते हैं ।

ह0/–
(राहुल सरीन)
अपर सचिव, भारत सरकार

विषय वस्तु

अध्याय 1	**परिचय**		**1**
अध्याय 2	**नैतिकता का ढांचा**		**8**
	2.1	नैतिकता और राजनीति	8
	2.2	सार्वजनिक जन–जीवन में नैतिकता	18
	2.3	अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि	21
	2.4	मंत्रियों के लिए नैतिक ढांचा	22
	2.5	विधि–निर्माताओं के लिए नैतिक ढांचा	28
	2.6	लाभ का पद	37
	2.7	सिविल सेवकों के लिए नैतिक संहिता	41
	2.8	विनियंत्रकों के लिए नैतिक संहिता	45
	2.9	न्यायपालिका के लिए नैतिक ढांचा	47
अध्याय 3	**भ्रष्टाचार से लड़ने के लिए संवैधानिक ढांचा**		**58**
	3.1	भारत में भ्रष्टाचार निवारण कानूनों का विकास	58
	3.2	भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988	60
	3.3	निजी क्षेत्र में लिप्त भ्रष्टाचार	71
	3.4	भ्रष्ट तरीकों से प्राप्त की गई गैर–कानूनी सम्पत्तियों को जब्त करना	74
	3.5	'बेनामी' लेनदेन का निषेध	77
	3.6	भ्रष्टाचार की सूचना देने वाले को सुरक्षण	77
	3.7	गम्भीर आर्थिक अपराध	79
	3.8	मामलों के पंजीकरण के लिए पूर्व सहमति : दिल्ली विशेष पुलिस स्थापना अधिनियम, 1946 की धारा 6क	86
	3.9	विधिकर्ताओं द्वारा उन्मुक्ति का उपयोग	87
	3.10	सिविल सेवकों को संवैधानिक रक्षण – अनुच्छेद 311	89
	3.11	अनुशासनिक कार्यवाहियां	98
	3.12	सांविधिक रिपोर्ट देने की बाध्यताएं	105
अध्याय 4	**संस्थागत ढांचे**		**106**
	4.1	विद्यमान संस्थान/एजेंसियां	106
	4.2	भारत में भ्रष्टाचार निवारण व्यवस्था का मूल्यांकन	108
	4.3	लोकपाल	111
	4.4	लोकायुक्त	116
	4.5	स्थानीय स्तर पर ओमबड्समैन	120
	4.6	जांच और अभियोजन को सुदृढ़ करना	122

अध्याय 5	**सामाजिक ढांचा**	**125**
	5.1 नागरिक पहल	125
	5.2 मिथ्या दावा अधिनियम	130
	5.3 मीडिया की भूमिका	132
	5.4 सामाजिक लेखा–जोखा	133
	5.5 सामाजिक सर्वसहमति बनाना	134
अध्याय 6	**सर्वांगीण सुधार**	**135**
	6.1 सर्वांगीण सुधारों का महत्व	135
	6.2 प्रतिस्पर्द्धा को विकसित करना	137
	6.3 लेनदेनों को सरलीकृत करना	138
	6.4 सूचना तकनीक का प्रयोग जाना	140
	6.5 पारदर्शिता को बढ़ावा देना	142
	6.6 सत्यनिष्ठा के लिए करार	143
	6.7 विवेकशीलता को कम करना	144
	6.8 पर्यवेक्षण	145
	6.9 पहुँच और दायित्व को सुनिश्चित करना	148
	6.10 शिकायतों पर निगरानी रखना	149
	6.11 सिविल सेवाओं में सुधार करना	150
	6.12 रोकथाम के लिए जोखिम प्रबंधन	150
	6.13 लेखा परीक्षा	153
	6.14 भ्रष्टाचार पर सक्रिय सतर्कता	154
	6.15 आसूचना एकत्र करना	156
	6.16 सतर्कता जाल–तंत्र (नेटवर्क)	156
	6.17 क्षेत्र विशिष्ट सिफारिशें	157
अध्याय 7	**ईमानदार सिविल सेवकों का बचाव करना**	**158**
अध्याय 8	**अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग**	**163**
अध्याय 9	**राजनीतिक कार्यपालक और स्थायी सिविल सेवा के बीच संबंध**	**166**
	निष्कर्ष	**172**
	सिफारिशों का सार	**173**

बाक्सों की सूची

बाक्स सं0	**शीर्षक**	
2.1	युनाईटेड किंगडम में नैतिकता	9

2.2	भ्रष्टाचार और मिथ्याचार	17
2.3	नैतिक संहिता की आवश्यकता	18
2.4	स्पेन की अच्छी शासन संहिता	20
2.5	बेलीज का संविधान और आचार संहिता	22
2.6	संसद पर एडमुड बुर्के	38
2.7	नैतिकता का विकास	44
2.8	सात सामाजिक पाप	44
2.9	किसी व्यवसाय की विश्वासपात्रता	45
2.10	न्यायपालिका की स्वतंत्रता	49
3.1	भ्रष्टाचार की सूचना देने वाला	78
3.2	गम्भीर अपराध कार्यालय की आवश्यकता	79
5.1	हांगकांग की आईसीएसी	125
5.2	संयुक्त राज्य मिथ्या अधिनियम के अधीन वसूलियाँ	130
5.3	मिथ्या दावा अधिनियम का उद्देश्य	130

तालिकाओं की सूची

तालिका संख्या	शीर्षक	
2.1	उच्चतम न्यायालय की नियुक्तियों की अन्तर्राष्ट्रीय तुलना	51
4.1	रिश्वतखोरी के लिए सिद्धदोषियों की अन्तर्राष्ट्रीय तुलना	110

आंकड़ों की सूची

आंकड़ा सं0	शीर्षक	
3.1	अनुशासनिक कार्यवाइयों की अवस्थाएं	101
4.1	भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा अभियोजित मामलों का विश्लेषण	108
4.2	राज्य भ्रष्टाचार निरोध द्वारा जांच किए गए और अभियोजित किए गए मामलों का विश्लेषण	108
4.3	केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो और राज्य भ्रष्टाचार निरोध संगठनों की दोषसिद्धि दरों की तुलना	109
4.4	न्यायालयों में बकाया मामले	109

संलग्नकों की सूची

संलग्नक I	(1)	श्री न्यायमूर्ति वाई. के. सभरवाल, भारत के मुख्य न्यायाधीश का राष्ट्रीय विचार गोष्ठी में भाषण	195
	(2)	श्री एम. वीरप्पा मोइली द्वारा राष्ट्रीय विचार गोष्ठी में भाषण	214
	(3)	श्री सुरेश पचौरी, कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन तथा संसदीय मामलों के राज्य मंत्री द्वारा राष्ट्रीय विचार गोष्ठी में भाषण	227

(4) राष्ट्रीय विचार गोष्ठी में भागीदारों की सूची 231
(5) राष्ट्रीय विचार गोष्ठी की सिफारिशें 233
(6) प्रश्नावली 240

संलग्नक VII कुछ क्षेत्रों में सर्वांगीण सुधार 244
संलग्नक VIII फिनलैंड में सत्यनिष्ठा 261

संकेताक्षर की सूची

संकेताक्षर	पूरा रुप
ए डी बी	एशियन डेवेलेपमेंट बैंक
ए आई आर	अखिल भारतीय संवाददाता
ए पी एस	आस्टेलियन लोक सेवा
सी ए टी	केन्द्रीय प्रशासनिक अधिकरण
सी बी आई	केन्द्रीय अन्वेक्षण ब्यूरो
सी जे आई	भारत के मुख्य न्यायधीश
सी एल बी	कम्पनी लॉ बोर्ड
सीआर पी सी	दंड प्रक्रिया संहिता
सी वी सी	प्रमुख सतर्कता आयोग
सी वी ओ	प्रमुख सतर्कता अधिकारी
डी डी ए	दिल्ली विकास प्राधिकरण
डीवाई एस पी	उप पुलिस अधिक्षक
आई पी सी	भारतीय दंड संहिता
एमसीओसीए	महाराष्ट्र नियंत्रित संगठित अपराध कानून
एम एल ए	विधान सभा सदस्य
एमएलएएलएडीएस	विधान सभा सदस्य स्थानीय क्षेत्र विकास योजना
एम पी	संसद सदस्य
एमपीएलएडीएस	संसद संदस्य स्थानीय क्षेत्र विकास योजना
एनसीआरडब्ल्यूसी	भारतीय संविधान की पुनरीक्षण हेतु राष्ट्रीय आयोग
एन जी ओ	गैर सरकारी संगठन
एन जे सी	राष्ट्रीय न्यायिक परिषद्
ओ ई सी डी	वित्तीय सहयोग एवं विकास संगठन
पी आई एल	जनहित वाद
पी एस यू	निजी क्षेत्र उपक्रम
आर बी आई	भारतीय रिजर्व बैंक
एस ई बी आई	भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड
एस एफ आई ओ	गम्भीर कपट कार्यालय
एस पी ई	विशेष पुलिस स्थापना
यू के	यूनाईटड किंगडम
यू एन	संयुक्त राष्ट्र
यू पी एस सी	संघ लोक सेवा आयोग
यू एस	संयुक्त राज्य

1

परिचय

1.1 नैतिकता मानक नियमों का एक संवर्ग है, जिसे समाज अपने ही ऊपर लागू करता है और जो व्यवहार, विकल्पों और कार्यवाईयों के मार्गदर्शन में सहायता करता है । आयोग इस बात से बड़े दुःख के साथ अवगत हुआ है कि मानक नियम अपने आप में नैतिक व्यवहार को सुनिश्चित नहीं करते, जिसे एक ईमानदार संस्कृति की सख्त जरूरत है । मानक नियमों के रूप में नैतिक व्यवहार का मर्म जोरदार शब्दों और अभिव्यक्तियों में नहीं होता बल्कि उस पर कार्यवाई किए जाने में, उल्लंघन के लिए दण्ड देने में, उल्लंघन के आरोपों को, छानबीन करने के लिए, सक्षम अनुशासनिक अधिकारियों के हवाले करने में और शास्तियों को तुरन्त लागू करने में तथा एक ईमानदार संस्कृति विकसित करने में होता है ।

1.2 भ्रष्टाचार नैतिकता की विफलता का एक महत्वपूर्ण आविर्भाव है । अंग्रेजी का 'Corrupt' शब्द लैटिन शब्द 'corruptus' से लिया गया है, जिसका अर्थ है 'तोड़ना या नष्ट करना'। अग्रेंजी के 'ethics' शब्द को मूल ग्रीक के शब्द 'ethikos' से लिया गया है जिसका अर्थ है 'आदत से पनपने वाला '। यह दुर्भाग्य है कि एक बहुत बड़े भ्रष्टाचार में संलिप्त ऊंचें तबके के लोगों से चलकर यह भ्रष्टाचार निचले तबके तक आम लोगों की रोजमर्रा जिन्दगी तक पहुंच कर अनेक लोगों के लिए एक आदत सी बन गई है ।

1.3 भ्रष्टाचार को रोकने के लिए अब तक जो हस्तक्षेप किए गए हैं वे प्रभावी नहीं पाए गए और जनता में उनके बारे में कटुता व्याप्त है । इन हस्तक्षेपों को भ्रष्टाचार के विरूद्ध कार्यवाई करने की किसी वास्तविक मंशा के बिना दिखावा मात्र पाया गया है । इन्हें विरोधियों को परेशान करने के लिए राजनीतिक प्रयोग, पक्षपात करने के लिए एक सरल हथियार के रूप में माना जाता है । भ्रष्टाचार की जड़ें व्यवस्था में इतनी गहरी जम गई हैं कि अधिकतर लोग भ्रष्टाचार को अपरिहार्य समझते हैं और इससे लड़ने के किसी भी प्रयास को व्यर्थ समझते हैं । यह कटुता इतनी तेजी से फैल रही है कि इससे हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था का रूग्ण हो जाने का अंदेशा बना रहता है ।

1.4 भ्रष्टाचार और सत्ता के दुरूपयोग से निपटने के लिए दो कमोपेश परस्पर विरोधी उपाय हैं । पहला है, मूल्यों और चरित्र पर अधिक जोर देना । अनेक लोग नैतिक मूल्यों में गिरावट के फलस्वरूप भ्रष्टाचार में हुई बढ़ोतरी से बहुत दुखी हैं । जब तक इन नैतिक मूल्यों को पुनः अपनाया नहीं जाता, तब तक मानवीय आचरण में सुधार लाने के लिए अधिक कुछ नहीं किया जा सकता । दूसरा उपाय इस विश्वास पर आधारित है कि अधिकतर लोग अपने मूल से ही शिष्टाचारी और सामाजिक रूप से जागरूक हैं, परन्तु फिर भी, लोगों का एक छोटा अनुपात है, जो समाज की भलाई के लिए पृथक रूप से लक्ष्यों के साथ समझौता नहीं कर पाता। ऐसे भटके हुए लोग सार्वजनिक अच्छाई की आड़ में अपना उल्लू सीधा करने की कोशिश में लग जाते हैं और संगठित सरकार का ऐसे भटके हुए कदाचारों को दण्ड देने का उद्देश्य होता है। यदि अच्छा बर्ताव करने

वाले को निरन्तर पुरस्कृत किया जाता है और बुरे व्यवहार वाले को निरंतर दंडित किया जाता है तो अधिकतर लोग सीधा और तंग मार्ग ही अपनाते हैं । तथापि, यदि सद्व्यवहार को न केवल पुरस्कार से ही मुक्त रखा जाए बल्कि कठिनाइयों से भी जूझना पड़े और दुर्व्यवहार को दंड भी न दिया जाए बल्कि अक्सर मनमाने ढंग से पुरस्कृत भी किया जाए तो लोग अधिक संख्या में सम्मानजनक रास्ता अपनाने से कतराएंगे ही ।

1.5 नैतिक मूल्यों और संस्थानों दोनों का ही इस वास्तविक जगत में स्थान है । मार्गदर्शी सितारों के रूप में मूल्यों की आवश्यकता होती है और ये मूल्य हमारे समाज में प्रचुर मात्रा में विद्यमान हैं । अच्छे–बुरे का अहसास हमारी संस्कृति और सभ्यता में अपने मूल से है परन्तु इन मूल्यों को संस्थानों द्वारा टिकाऊ बनाए रखने की आवश्यकता है और दूसरों के लिए एक उदाहरण प्रस्तुत करने की जरूरत है । संस्थानों के बिना समर्थन के ये मूल्य जल्द ही कमजोर होकर नष्ट हो जाएंगे । संस्थान वह पात्र प्रदान करते हैं जो नैतिक मूल्यों को आकार और परिमाण का रूप देते हैं । सभी शासन–कला और कानूनों और संस्थानों का यह एक आधार है । मानदेय और संस्थाएं सभी लोगों के लिए होती हैं जबकि लोक सेवकों के समूह – निर्वाचित या नियुक्त – निर्णय लेने के प्राधिकार से सम्पन्न तथा मानव जीवन पर असर डालते हुए संसाधनों के आबंटनों के निर्धारण करने की शक्ति का प्रयोग करते हुए ये उन्हें निपटने में निर्णायक होते हैं । सरकारी दफतर और सरकारी जेब पर नियंत्रण करने वालों को आम जनता के पैसे से निजी लाभ लेने के असंख्य प्रलोभन और अवसर मिलते हैं । अतः जनता के सेवकों में नैतिक आचरण को प्रोन्नत करने के लिए संस्थानों के सृजन और मानदेयों के निर्धारण का अत्यधिक महत्व है ।

1.6 हमारे समाज में भ्रष्टाचार और सत्ता के दुरूपयोग में तीन कारणों से वृद्धि हुई है । पहला, आपत्ति न करने वाले प्राधिकारियों की उपनिवेशी पैतृक सम्पत्ति और मनमाने ढंग से शक्तियों के प्रयोग की प्रवृत्ति। जिस समाज में सत्ता की पूजा की जाती हो, वहां सरकारी अधिकारियों के लिए नैतिक आचरण से बच निकलना आसान हो जाता है । दूसरा, हमारे समाज में सत्ता की असंख्य विषमताएं हैं । लगभग 90 प्रतिशत लोग असंगठित क्षेत्र के हैं । उनमें से अनेक लोग बिना किसी रोजगार सुरक्षा के निर्वाह करने योग्य मजदूरी पर निर्भर रहते हुए एक अनिश्चित जीवन यापन करते हैं और 70 प्रतिशत के लगभग संगठित कामगार रोजगार की सुरक्षा के साथ और नियमित मासिक मजदूरी पर सरकार द्वारा प्रत्यक्ष रूप से या लोग उद्योग उपक्रमों द्वारा काम पर लगाए गए हैं । लगभग ये सभी कर्मचारी अधिकतर साक्षर या अर्धसाक्षर समाज में 'शिक्षित' हैं और आर्थिक रूप से सबसे कम आय पाने वाले लोक सेवक देश के बहुत से लोगों की अपेक्षा ज्यादा खुशहाल हैं । इससे भी अधिक तो यह है कि उनकी सरकार में नौकरी सत्ता के सभी साज–सम्मान को लेकर आती है । सत्ता की ऐसी विषमता नैतिक व्यवहार पर उच्च वर्गी दबाव को कम कर देती है और भ्रष्टाचार में संलिप्त होना आसान कर देती है ।

1.7 तीसरा चेतना के रूप में किया गया चुनाव है, जिसमें स्वतंत्रता के बाद उसके शुरू के दशकों में भारतीय सत्ता ने नीतियों का एक ऐसा पुलिंदा चुना, जिसका परिणाम नागरिकों को सत्ता की दया पर छोड़ देना था। नियमों की आड़ में, आर्थिक गतिविधियों पर अनेक अंकुश, अधिक सरकारी नियंत्रण, कई क्षेत्रों में सरकार का अधिकतर एकाधिकार और अभावों की अर्थव्यवस्था इन सब ने मिलकर ऐसी स्थितियों को कुप्रेरित किया है कि जिससे भ्रष्टाचार बेलगाम बढ़ गया है । इसके अतिरिक्त, सत्ता की विषमता की स्थिति में अनेक राज्य

सब्सीडियों और लाभोन्मुखी कार्यक्रमों ने लोक सेवक को संरक्षक और स्वामी बना दिया है और बहुत से नागरिकों को भिखमंगा बना कर रख दिया है । इससे एकदम ही भ्रष्टाचार में संलिप्त होने के अवसरों को बढ़ावा मिला है और इन छींना झपटी करने वालों की करतूतों का विरोध करने वाले नागरिकों का बल भी कम हो गया है ।

1.8 हमारे देश में और इसके साथ साथ कहीं और भी पिछले छह दशकों का अनुभव हमें भ्रष्टाचार दूर करने का मूल्यवान सबक सिखाता है । आमतौर पर सब यह मानते हैं कि एकाधिकार और विवेकशीलता भ्रष्टाचार की प्रवृत्ति को बढ़ाते हैं जबकि प्रतिस्पर्द्धा और पारदर्शिता भ्रष्टाचार को कम करते हैं । यह भारत में आर्थिक युक्तिकरण के परिणामस्वरूप बड़े नाटकीय अंदाज में देखा गया है । ज्यों ज्यों प्रतिस्पर्द्धा आती गई और विकल्पों का विस्तार होता गया, त्यों त्यों भ्रष्टाचार घटता गया है । दूरभाष, इस्पात, सीमेंट, चीनी और यहां तक कि दुपहिया गाडियाँ उन अनेक क्षेत्रों में से हैं, जिनमें पूर्ति और विकल्प बढ़े हैं जिससे भ्रष्टाचार कम ही नहीं हुआ है बल्कि दूर भी हुआ है । इसी प्रकार प्राद्यौगिकी और पारदर्शिता का आगमन जहां जहां हुआ है, वहां वहां भ्रष्टाचार काफी रूका है । कंप्यूटरीकरण तथा सूचना तक पहुंच के आगमन ने रेल आरक्षण सेवाओं से लेकर चालक लाईसेंस जारी करने की सेवा समेत भ्रष्टाचार रहित कई सेवाओं में वृद्धि हुई है ।

1.9 भ्रष्टाचार को बढ़ाने वाला एक घटक है अति–केन्द्रीयकरण । जितना लोगों से सत्ता का प्रयोग दूर होगा, उतना ही अधिक प्राधिकारी और जवाबदेही के बीच अंतर होगा । नागरिक और अंतिम निर्णायक के बीच पदाधिकारियों की भारी संख्या होने से जवाबदेही कमजोर पड़ जाती है और प्राधिकारों के दुरूपयोग की लालसा को मजबूत बना देती है । एक बड़े लोकतंत्र के लिए भारत में शायद अन्तिम निर्णय लेने वालों की संख्या बहुत कम है । स्थानीय सरकार को इस बात की अनुमति नहीं है कि जड़ को पकड़ सके और सत्ता चारों ओर से कुछेक हाथों में ही केन्द्रित है । इन सब का कुल परिणाम है – कमजोर नागरिक वर्ग और बढ़ता भ्रष्टाचार ।

1.10 यह बात अच्छी तरह से मान्य है कि हर लोकतंत्र में नागरिकों को इस बात के अधिकार दिए जाने की आवश्यकता होती है ताकि प्राधिकारियों को जवाबदेह ठहराया जा सके । सूचना का अधिकार, नागरिकों का प्रभावकारी चार्टर, नागरिकों की दूरदृष्टि को विकसित करने के लिए अवसर और मानदेय, दावाधारियों की लोक सेवाओं की पूर्ति में संलिप्तता, निर्णय लेते समय जनता से परामर्श किया जाना और सामाजिक लेखा–जोखा, जवाबदेई के कुछ ऐसे साधन हैं जो भ्रष्टाचार पर नाटकीय अंदाज में नियंत्रण करते हैं और ईमानदारी और एक योग्य निर्णय को विकसित करते हैं ।

1.11 एक आधारभूत विश्लेषण में, शासन और कानून व्यवस्था अनुपालन को प्रभावी करने और अपेक्षित व्यवहार को विकसित करने के लिए अस्तित्व में आते हैं । अतः कानून के नियमों को लागू करना और भ्रष्टाचार के विरूद्ध कड़ी निवारक सजा, नैतिक रूप से एक स्वस्थ समाज का निर्माण करने के लिए निर्णायक पहलू हैं । कानूनी शक्तियों को मजबूत करने और भ्रष्ट लोक सेवकों के कृत्यों के निवारण के लिए हमारी भ्रष्टाचार निवारण व्यवस्थाओं और उनके विफल हो जाने के कारणों का विस्तृत विश्लेषण करना आवश्यक है ।

1.12 शायद, समाज की निष्ठा या भ्रष्टाचार के प्रचलन का अत्यन्त महत्वपूर्ण निर्धारक तत्व राजनीति की गुणवत्ता है । यदि राजनीति निष्ठा, सक्षमता और जनहित का कल्याण सोचने वाले पुरूष और महिलाओं को अपनी ओर आकृष्ट करके उन्हें प्रोत्साहित करती है तो वह समाज सुरक्षित है और निष्ठा का निर्वाह होगा। परंतु यदि राजनीतिक जीवन का सत्यनिष्ठा के साथ मेल नहीं बैठता और लोक जीवन में अपने निजी लाभ के लिए अवांछनीय और भ्रष्ट तत्व की ओर आकर्षण होता है तो प्राधिकार का दुरूपयोग और भ्रष्टाचार प्रतिमानक बन जाते हैं । ऐसी राजनीतिक संस्कृति और वातावरण में, अपेक्षित पहलों से पर्याप्त लाभ मिलने वाले नहीं हैं । प्रतिस्पर्द्धा और विकेन्द्रीकरण कुछ क्षेत्रों में निश्चित रूप से भ्रष्टाचार को कम करते हैं । परंतु यदि भ्रष्टाचार की भूख राजनीति में अनुचित विधियों के लिए असीम रूप में ज्वालामुखी बन जाती है तो फिर भ्रष्टाचार के अन्य मार्ग भी बलपूर्वक खुल जाते हैं । परिणामस्वरूप, जहां तक कि कुछ क्षेत्रों में भ्रष्टाचार नीचे गिर जाता है परंतु वह अन्य क्षेत्रों और कभी कभी अत्यधिक खतरनाक क्षेत्रों में, अंतरित हो जाता है, जिसमें प्रतिस्पर्द्धा नहीं लाई जा सकती और सरकार को एक स्वाभाविक एकाधिकार का प्रयोग करना पड़ता है । उदारीकरण के साथ जिस चीज की आवश्यकता है वह है राजनीतिक और लोक पदों पर प्रोत्साहनों को बदलने के लिए और सत्यनिष्ठा और नैतिक आचार के विकास के लिए तदनुरूप राजनीतिक और शासन सुधार ।

1.13 सभी प्रकार के भ्रष्टाचार निन्दनीय होते हैं और हमें भ्रष्टाचार को नगण्य सहनशीलता की संस्कृति को विकसित करने की आवश्यकता है । लेकिन कुछ भ्रष्टाचार के रूप अन्यों की अपेक्षा बहुत अधिक अहितकर होते हैं और उनकी ओर बहुत नजदीकी से ध्यान जाना चाहिए । रिश्वतखोरी के अधिकतर मामलों में लोगों से पैसे ऐंठे जाते हैं और प्रत्येक नागरिक को विवशतापूर्वक रिश्वत देनी पड़ती है ताकि वह अपना काम करवा सके, जिसका वह हकदार है । अधिकतर नागरिकों का यह अनुभव है कि भ्रष्टाचार का एक दुष्चक्र सा चल रहा है और यदि वे भ्रष्टाचार का विरोध करते हैं तो उन्हें रिश्वत से अधिक पैसा गंवाना पड़ता है । विलंब, उत्पीड़न, अवसरों से वंचित होना, कीमती समय और मजदूरियों की हानि, अनिश्चितता और कई बार जीवन या जीवन के अंगों को खो देने का खतरा, ये सभी भ्रष्टाचार का विरोध करने और माँगों का अनुपालन न करने के परिणाम हैं, जिनसे लोगों को जूझना पड़ता है । ऐसे मामलों में, नागरिक जोरजबरदस्ती से भ्रष्टाचार का अनिच्छा से शिकार बना बैठा है परंतु अनेक ऐसे भी मामले हैं, जिनमें रिश्वत देने वाला और लोक सेवक के बीच सांठ–गांठ चलती है । सांठगांठ से भ्रष्टाचार करने के ऐसे मामलों में दोनों पक्षकारों को समाज से मोटे लाभ प्राप्त होते हैं । लोक निर्माण कार्यों के लिए संविदाएं मंजूर करना, सामान और सेवाओं की अधिप्राप्ति, कर्मचारियों की भर्ती, करों की चोरी, घटिया परियोजनाएं, विनियमों का सांठगांठ से उल्लंघन, खाद्य पदार्थों और दवाइयों में मिलावट, न्याय देने में बाधा और जांच में साक्ष्य को छिपाना या फेरबदल करना , ये सभी भ्रष्टाचार के खतरनाक रूपों के उदाहरण हैं । जब अर्थव्यवस्था राज्य के नियंत्रण से हट जाती है तो पैसे ऐंठने का भ्रष्टाचार गिर जाता है और सांठगांठ का भ्रष्टाचार बढ़ने लगता है । इस सांठगांठ वाले भ्रष्टाचार, जिससे हमारे लोकतंत्र की नींव क्षीण होकर समाज को खतरे में डाल रही है, के बढ़ते हुए संकट से निपटने के लिए हमें मजबूत और प्रभावशाली हथियारों को तैयार करना पड़ेगा ।

1.14 भ्रष्टाचार सारे विश्व में व्याप्त है और विश्व के लिए यह एक गंभीर चिंतन का विषय है । भ्रष्टाचार के विरूद्ध संयुक्त राज्य महासभा ने अक्तूबर 2003 में संयुक्त राज्य अधिवेशन को अपना लिया था, जिसमें इसे

भ्रष्टाचार के विरूद्ध एक अंतर्राष्ट्रीय हथियार बना दिया गया । ए.डी.बी.–ओ.ई.सी.डी अन्तर्राष्ट्रीय भ्रष्टाचार निरोध कार्यवाई योजना, जिसपर भारत सरकार द्वारा हस्ताक्षर किए गए हैं, भ्रष्टाचार निवारण मामले में अन्तर्क्षेत्रीय सहयोग बढ़ाने में एक व्यापक समझौता है । विश्व बैंक ने भी उन परियोजनाओं को वित्त देने से इन्कार करके भ्रष्टाचार के विरूद्ध युद्ध की घोषणा कर दी है, जिनका कार्यान्वयन भ्रष्ट वृत्तियों से प्रभावित है । सिंगापुर में, 2006 में हुई अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व बैंक ग्रुप की वार्षिक बैठक में प्रमुख बहुपक्षीय वित्तीय संस्थानों के साथ एक संयुक्त वक्तव्य जारी किया गया था, जिसमें उनके संस्थानों की गतिविधियों और प्रचालनों में कपट और भ्रष्टाचार के निवारण और उनका सामना करने के लिए एक रूपरेखा तैयार करने में सहमति जताई गई ।

1.15 भारत में की गईं कुछ हाल ही की भ्रष्टाचार निवारण पहलें सही दिशा में कदम हैं । उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया है कि चुनाव लड़ने वाले प्रत्याशियों को अपने नामांकन पत्र भरते समय उनके साथ उनके धन, शैक्षणिक योग्यताएं और अपराधिक पूर्ववृतों से संबंधित ब्यौरों को जमा कराना चाहिए । सूचना अधिकार अधिनियम, जिसे हाल ही में अधिनियमित किया गया है, भ्रष्टाचार के साथ लड़ने के लिए एक शक्तिशाली हथियार है । सूचना संचार तकनीकों का आरंभ, ई–गवर्नेंस की पहलों और प्रशासन में भ्रष्टाचार में लिप्त प्रक्रियाओं की स्वायत्तता ने भ्रष्टाचार को कम करने में सफलता प्राप्त की है ।

1.16 तथापि, अभी बहुत कुछ किया जाना बाकी है और ये विद्यमान विनियमों के अधिकार क्षेत्र से परे है। हमारी अर्थव्यवस्था में विविध स्थानों पर भ्रष्टाचार के बढ़ते हुए स्तरों, जिनके परिणामस्वरूप काले धन का बड़े पैमाने पर इकट्ठा होना, गंभीर आर्थिक अपराध और कपट और पैसे की हेरा–फेरी, यहां तक कि देश के विरूद्ध आतंकी गतिविधियों को पैसा उपलब्ध कराना, के कारण एक गंभीर स्थिति पैदा हो गई है, जिसे सख्ती के साथ निपटा जाना चाहिए । भ्रष्ट लोक सेवकों की बेनामी सम्पत्तियों और भ्रष्ट कामों से प्राप्त की गई गैर–कानूनी सम्पत्तियों को जब्त करने की आवश्यकता है । घोटाले और भ्रष्टाचार की सूचना देने वाले– सीटी बजाने वाले विधान – को लाया जाना चाहिए ताकि जानकारी देने वाले को प्रतिशोध से बचाया जा सके । भ्रष्ट वृत्तियों की जांच करने और उसके साथ भ्रष्टाचारी को अनुकरणीय दंड दिलाने, जिससे भ्रष्ट व्यवहारों से संबंधित जोखिम को अधिक बड़ा किया जा सके, हमें संस्थागत ढांचे को समुचित रूप से सुदृढ़ करना होगा ।

1.17 तथापि, सरकार के अन्य विभिन्न क्षेत्रों में हो रहे कामों के मुकाबले शासन में नैतिकता का बहुत ही व्यापक महत्व है । नैतिक मानदंडों से हटकर किए गए कामों में आए अंतरों से निपटने के लिए बोर्ड के पास बैठकर किए जाने वाले प्रयासों की जरूरत है । ऐसे प्रयासों में निगमित नैतिकता और व्यवसाय में नैतिकता को शामिल किए जाने की आवश्यकता है । वास्तव में, 'व्यावसायिक नैतिकता' शब्द अब अपमानजनक हो गया है, अतः इसे 'व्यवसाय में नैतिकता' में उदाहरण के रूप में बदल दिया जाना चाहिए। प्रत्येक व्यवसाय में, स्वेच्छिक संगठन और सिविल सोसाइटी के ढांचे में नैतिकता की आवश्यकता है क्योंकि ये अस्तित्व अब शासन की प्रक्रिया में आवश्यक रूप से लिप्त होते हैं । अन्त में, नागरिक व्यवहार में भी नैतिकता आनी चाहिए क्योंकि ऐसे व्यवहार से सरकार और प्रशासन में नैतिकता का प्रत्यक्ष रूप से प्रभाव पड़ता है ।

1.18 प्रशासनिक सुधार आयोग के विचारार्थ विषयों में से एक शासन में नैतिकता से संबंधित है, जिसमें निम्नलिखित पहलु विशेष रूप से हैं :–

क. सतर्कता और भ्रष्टाचार :

- *भ्रष्टाचार समाप्त करने तथा ईमानदार सिविल सेवकों को सताए जाने से बचाने के लिये सक्रिय सतर्कता को सुदृढ़ करना तथा जहाँ कहीं भी आवश्यक हो, कार्यपालकों के विवेक को सीमित करना ।*

- *भ्रष्टाचारियों को दंड देने के लिये ढील बरतने के लिये परिणामदायक सुव्यवस्थित कमियों का पता लगाना ।*

- *(क) भ्रष्टाचार को बढ़ावा देने वाली पद्धतियों, नियमों और विनियमों एवं तत्वों की पहचान करना (ख) भ्रष्टाचार तथा मनमाना निर्णय लेने की निरंकुश स्थिति पर रोक लगाने संबंधी उपाय सुझाना और (ग) दावाधारियों के साथ परामर्श करके इनकी आवधिक समीक्षा के लिये एक ढांचा सुझाना ।*

ख. राजनीतिक कार्यपालकों तथा स्थाई सिविल सेवकों के बीच संबंध :

- *सिविल सेवकों और राजनीतिक कार्यपालकों के बीच सहज, कुशल एवं सौहार्दपूर्ण संबंधों के लिये संस्थानिक प्रबंधों को बेहतर बनाने संबंधी उपाय सुझाना ।*

ग. सरकार के विभिन्न अंगों के लिये आचरण नियम :

- *राजनीतिक कार्यपालक, सिविल सेवाएं, आदि ।*

1.19 जहां एक ओर आयोग ने इस रिपोर्ट में मद्द संख्या क और ग की विस्तृत रूप से परीक्षा कर ली है, वहीं दूसरी ओर मद्द संख्या ख के बारे में सिविल सेवा सुधारों पर प्रशासनिक सुधार आयोग की रिपोर्ट में बृहत् रूप से विचार किया जाएगा । आयोग ने उन संगत कानूनों, संहिताओं और नियम पुस्तिकाओं की परीक्षा कर ली है, जो नैतिकता और भ्रष्टाचार से संबंधित है । इसने उस संस्थागत ढांचे का भी विवेचनात्मक अध्ययन कर लिया है जो भ्रष्टाचार की जांच करता है और भ्रष्टाचार को सामने लाता है । इसने सरकार में भ्रष्टाचार में व्याप्त प्रक्रियाओं को भी देखा है और उन व्यवस्थाओं, नियमों और कार्यपद्धतियों की परीक्षा कर ली है जो इन प्रक्रियाओं को नियंत्रित करते हैं ।

1.20 शासन में नैतिकता पर विभिन्न दावाधारियों के मतों को जानने के लिए, आयोग ने राष्ट्रीय न्यायिक अकादमी, भोपाल में सितम्बर 2006 में एक राष्ट्रीय विचार–गोष्ठी (कोलोक्वीम) का आयोजन किया । भारत के तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश न्यायमूर्ति श्री वाई. के. सभरवाल जी, जिन्होंने समापन भाषण[1] दिया, कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन तथा संसदीय मामलों के राज्य मंत्री श्री सुरेश पचौरी जी, जिन्होंने उद्घाटन[2]

[1] भाषण संलग्नक 1 (1) पर
[2] भाषण संलग्नक 1 (3) पर

समारोह की अध्यक्षता की और न्यायमूर्ति श्री एस. बी. सिन्हा, जिन्होंने मूल्यवान सुझाव दिए, इन सब के प्रति यह आयोग गहरा आभार व्यक्त करता है । प्रशासनिक सुधार आयोग के अध्यक्ष ने उपस्थित महानुभावों को संबोधित[3] किया । आयोग द्वारा उपर्युक्त विषय पर आयोजित विचार गोष्ठी (कोलोक्वीम) में भाग लेने वाले व्यक्तियों की सूची संलग्नक 1(4) में दे दी गई है । संगोष्ठी की सिफारिशें संलग्नक 1 (5) पर है । विविध दावाधारियों को परिपत्रित प्रश्नावली संलग्नक 1 (6) पर है ।

1.21 यह आयोग लोकायुक्तों, केन्द्रीय सतर्कता आयोग के प्रतिनिधियों और राज्यों के भ्रष्टाचार निरोध खंडों, 'नागरिकों की पहलें' के सदस्यों, भारत सरकार के अधिकारियों और राज्य सरकारों को कार्यशाला में सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए अपना आभार व्यक्त करता है । यह आयोग श्री न्यायमूर्ति जे.एस.वर्मा, भारत के भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश, श्री न्यायमूर्ति एम.एन. वेंकटाचैल्लया, भारत के भूतपर्व मुख्य न्यायाधीश, श्री न्यायमूर्ति संतोष हेगडे, भूतपूर्व न्यायाधीश, उच्चतम न्यायालय, श्री न्यायमूर्ति एन. वेंकटाचला, भूतपूर्व लोकायुक्त, कर्नाटक, श्री फाली नारीमन, श्री बी.वी. आचार्या, भूतपूर्व महाधिवक्ता, कर्नाटक, श्री के.आर. चामयया, भूतपूर्व विधि सचिव, कर्नाटक सरकार, श्री के. ईश्वरा भटट, भूतपूर्व विधि सचिव, कर्नाटक सरकार और एडमिरल आर. एच. तहलियानी (अवकाश–प्राप्त), अध्यक्ष, ट्रांसपेरेंसी इंटरनैशनल, भारत, के प्रति भी अपना गहरा आभार व्यक्त करता है, जिनके विचार और सुझाव इस आयोग द्वारा अपनी सिफारिशों को तैयार करने में विशाल रूप से सहायक रहे हैं । आयोग इस रिपोर्ट का प्रारूप बनाने में श्री एस.के.दास, परामर्शदाता, प्रशासनिक सुधार आयोग द्वारा मूल्यवान योगदान के लिए अपना सम्मान व्यक्त करता है ।

1.22 क्योंकि शासन में नैतिकता से संबंधित मुद्दे अन्य विचारार्थ विषयों में चले गए हैं, इस रिपोर्ट में प्रमुख मुद्दों पर विचार करने की कोशिश की गई है । रिपोर्ट को शासन में नैतिकता के विभिन्न पहलुओं पर विचार करते हुए नौ अध्यायों में बांटा गया है । सिफारिशों में विधि ढांचे में परिवर्तन से लेकर वे सिफारिशें हैं, जिन्हें कम समय अवधि में कार्यकारी निदेशों के माध्यम से कार्यान्वित किया जा सकता है । 'सिफारिशों के सार' में उन सिफारिशों के पहले '*' चिन्ह लगाकर पहचाना गया है, जिन्हें कार्यकारी निदेशों के माध्यम से तुरन्त ही कार्यान्वित किया जा सकता है ।

[3] भाषण संलग्नक 1 (2) पर

2 नैतिक ढांचा

2.1 नैतिकता और राजनीति

2.1.1 परिचय

2.1.1.1 किसी भी लोकतंत्र में शासन के लिए नैतिक ढांचे पर कोई भी चर्चा अनिवार्य रूप से राजनीति में नैतिक मूल्यों से ही आरंभ की जानी चाहिए । राजनीति और इसमें लगे लोग, किसी राज्य की विधायी और कार्यपालिका पक्षों में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं जिनके द्वारा संविधान के संचालन में कृताकृत और कानून के नियम न्यायपालिका के लिए हस्तक्षेप का प्रश्न बन जाते हैं । जहां राजनीति में नैतिकता की दृष्टि से एक दोषयुक्त वातावरण में, पूर्णता की आशा करना अवास्तविक और एकतरफा होगा, वहां दूसरी ओर इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि राजनीति में जो मानदंड स्थापित किए गए हैं, वे शासन के अन्य पहलुओं पर जोरदार असर डालते हैं । जो लोग राजनीति में होते हैं, उनके ऊपर एक स्पष्ट और दूभर उत्तरदायित्व होता है । भारत का यह सौभाग्य ही था कि नैतिक आचरण के ऊंचे मानदंड स्वतंत्रता संग्राम के अटूट हिस्से रहे । दुर्भाग्यवश, सत्ता के हस्तांतरण के बाद नैतिकता का यह वृक्ष टूटने लगा । चुनावों में ज्यादितयां (चुनाव अभियान में कोष, अनुचित धन का प्रयोग, अत्यधिक मात्रा में व्यय, दोषयुक्त निर्वाचन–नामावलियाँ, जाली मतदान, चुनाव पेटियों को लूटना, हिंसा, लालच और जोर–जबरदस्ती), चुनावों के बाद सत्ता को हथियाने के लिए हथकंडे अपनाना और सार्वजनिक पद का दुरूपयोग करना, ये सब बातें बरसों से राजनीतिक प्रक्रिया के लिए मुख्य वेदनाएं बनी हुई हैं । बढ़ते हुए इस अत्यधिक दुरूपयोग को, जो स्पष्ट रूप से एक मानदंड बन गया है, दूर करने के लिए 1980 से राजनीतिक दलों, सरकारों और इससे अधिक महत्वपूर्ण निर्वाचन आयोग और सर्वोच्च न्यायालय ने अनेक कदम उठाए हैं । फिर भी, यह बात सर्वव्याप्त है कि हमें अपनी राजनीतिक व्यवस्था को चाकबंद रखने के लिए काफी कुछ करने की आवश्यकता है । भ्रष्टाचार के इस मुददे के साथ–साथ, इस आयोग द्वारा राज्यों के दौरों में की गई प्रत्येक सुनवाई में यह मुद्दा उठाया जाता रहा है ।

2.1.1.2 राजनीति का अपराधीकरण – 'अपराधियों का चुनाव प्रक्रिया में भाग लेना' – यह हमारी निर्वाचन व्यवस्था का एक नाजुक अंग बन गया है । समाज में अपराध और हिंसा (कई क्षेत्रों में 'माफिया' को उकसाने वाले बिन्दु तक) में वृद्धि होने के अनेक मूल कारण हैं । कानूनों की बिल्कुल अनदेखी, सेवाओं की खराब गुणवत्ता और उनमें विद्यमान भ्रष्टाचार, कानून तोड़ने वालों का राजनीतिक, वर्ग, श्रेणी, सम्प्रदाय या जाति के आधार पर संरक्षण, अपराधों की जांच में पक्षपातपूर्ण हस्तक्षेप, मामलों का धीमा अभियोजन, न्यायिक प्रक्रिया में कई वर्षों का असाधारण विलंब और ऊंची लागतें, असंख्य मामलों का वापस लिया जाना पैरोल की अंधाधुंध मंजूरी आदि ऐसे कारण हैं जो अधिक महत्वपूर्ण हैं । आयोग इन मुददों पर अपनी आने

वाली 'लोक आदेश' रिपोर्ट में विस्तार से विचार करेगा । यहां पर केवल यह कह देना आवश्यक होगा कि ऐसी स्थिति में कुछ मामलों में जब अपराधी विरोधाभास के रूप में तीव्र न्याय सुनिश्चित करवा लेता है तो वह 'स्वागत पात्र' सा बन जाता है। अपराधी अपने ऊपर ऐसी ''स्वीकृति'' बना लेने से राजनीति और चुनाव में प्रवेश करने में प्रेरित सा हो जाता है । अपराध की जांच पर असर डालने से और पुलिसकर्मियों को अपने समवर्गीयों में शक्तिशाली विरोधी बनने का अवसर – यह एक ऐसा चुंबक है जो बिना किसी विरोध के अपराधियों को राजनीति में खींच लाता है । निर्वाचित स्थिति और इससे मिलने वाले पर्याप्त संरक्षण से या तो उसकी गतिविधियाँ बढ़ जाती हैं और या फिर वह और भी ऊंची राजनीतिक छवि में प्रवेश करने के लिए अपने को शामिल कर लेता है । राजनीतिक दलों की तरह ही, ऐसे व्यक्ति धन और बाहुबल से वोटों को प्राप्त करने के लिए चुनाव प्रक्रिया में अपनी योग्यता को दांव पर लगा देते हैं ।

बाक्स सं0 2.1 : युनाईटिड किंगडम में नैतिकता

80 वर्षों से अधिक पहले का उल्लेख है, जब युनाईटिड किंगडम में रामसे मैक डोनाल्ड के नेतृत्व की प्रथम लेबर सरकार ''कैंबेल मामले'' के कारण विफल हो गई क्योंकि उस सरकार ने बिल्कुल राजनीतिक कारणों से राजद्रोह के मामलें में फंसे आपराधिक आरोपों को वापस लेने का निर्णय ले लिया । इसके विद्रोह के परिणामस्वरूप सरकार को अपने पद से हटाए जाने और ताजा चुनाव कराने के पक्ष में मत डाले गए । यह कहा जाता है कि तब से ब्रिटिश मंत्री और उच्च पदाधिकारी आपराधिक जांच या अभियोजन के काम में हस्तक्षेप करने का साहस कम ही करते हैं ।

2.1.1.3 जन हित और अच्छे शासन को अपवाद के रूप में छोड़ कर सभी के लिए यह स्थिति कुछ समय की होती है । यह सब कुछ प्रत्येक स्थान पर घटित नहीं हुआ लेकिन जिस हद तक यह हुआ, इसने उस स्थिति को जन्म दिया जिसमें निर्वाचन आयोग को औपचारिक रूप से यह कहने को विवश होना पड़ा कि भारत में 6 में से एक विधायक को गंभीर अपराधपूर्ण आरोपों का सामना करना पड़ा । तब समय था जब तत्काल रोकथाम के उपाय किए जाते ।

2.1.1.4 चुनावों में बड़ी संख्या में, गैर–कानूनी और अनुचित धन का व्यय भ्रष्टाचार का एक और मूल कारण है। यद्यपि, चुनाव में खर्च करने की औपचारिक सीमाएं हैं और उन पर अंकुश लगाने के लिए कुछ कदम भी उठाए गए हैं, फिर भी वास्तव में यह खर्च बहुत मात्रा में किए जाने का आरोप है । निर्वाचन चक्र को गतिमान रखने के लिए असामान्य खर्च को कई गुना कम करना पड़ेगा । इसका परिणाम 'अपरिहार्य' और चारों ओर फैला भ्रष्टाचार होता है जो राजनीतिक और प्रशासनिक शक्ति की प्रकृति को बदल देता है और विश्वास और लोकतंत्र को हानि पहुंचाता है । साफ सुथरे ढंग से किए जाने वाले चुनाव राजनीति में नैतिक मूल्यों में सुधार करने, भ्रष्टाचार रोकने और कुप्रशासन को सही करने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण मार्ग हैं ।

2.1.2 हाल ही के सुधार

लोकतंत्र के संचालन में सभी त्रुटियों के बावजूद यह स्वयं में सुधार करने का एक उपाय है । जैसाकि पहले कहा जा चुका है, पिछले दो दशकों से अर्थपूर्ण निर्वाचन सुधार लाने के लिए पर्याप्त रूप से प्रयत्न किए गए हैं । कुछ लोगों ने यह भी पाया है कि दूसरे विश्व युद्ध के बाद पिछले दशक में भारत में अन्य किसी बड़े लोकतंत्र की अपेक्षा अधिक राजनीतिक सुधार हुए हैं । संक्षेप में, ये अधिक महत्वपूर्ण सुधार निम्नलिखित से संबंधित हैं :–

2.1.2.1 निर्वाचन नामावलियों की परिशुद्धता में सुधार

- चुनाव आयोग ने मतदाता के पंजीकरण को मतदाता की अधिक पहुंच में लाने के प्रयत्न किए हैं और निर्वाचन नामावलियों के संशोधन में डाकघरों को कुछ सीमा तक लिप्त किया है ।

- मुद्रित निर्वाचन नामावलियों/उनकी सीडी को बिक्री के लिए उपलब्ध करा दिया गया है।
- 620 मिलियन से अधिक मतदाताओं की संपूर्ण निर्वाचन नामावलियों के कंप्यूट्रीकरण का काम शुरू कर दिया गया है ।
- सभी मतदाताओं के लिए फोटो पहचान–पत्र की व्यवस्था का काम शुरू हो चुका है ।

लोकसत्ता जैसी सिविल सामाजिक संस्थाओं के अध्ययनों से विचारणीय सुधार देखने को मिले हैं और 1999 से 2004 के बीच निर्वाचन नामावलियों में भूलों में कमी आई है ।

2.1.2.2 उम्मीदवारों के पूर्ववृत्तों का ब्यौरा देना :

- *सर्वोच्च न्यायालय ने निदेश दिए हैं कि यदि किसी उम्मीदवार को किसी न्यायालय ने सिद्धदोषी करार दिया है अथवा उसके विरूद्ध कोई आपराधिक मामला निलंबित है तो उस उम्मीदवार को इसकी घोषणा कर देनी चाहिए ।*
- *उम्मीदवार और उसके परिवार के सदस्यों द्वारा सम्पत्तियों और दायित्वों के ब्यौरों की घोषणा करने के निदेश देने से अगले चुनावों के समय उस पर नियंत्रण हो सकेगा ।*

2.1.2.3 दंडित अपराध के दोषी लोगों की अयोग्यता

- सर्वोच्च न्यायालय ने 2005 में निर्णय दिया है कि लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम की धारा 8(4) असंवैधानिक थी क्योंकि यह कानून में समानता का अतिक्रमण करती है । अब सभी दोषी व्यक्ति कतार में खड़े होते हैं, चाहे वे दोषसिद्ध होने के समय पदस्थ विधायक थे या नहीं । (तथापि, किसी विधायक को उसकी अवधि के दौरान अयोग्यता से छूट लागू होती है यदि कोई अपील निलंबित हो और सजा पर रोक लगा दी गई हो ।)

2.1.2.4 आचार संहिता का प्रवर्तन करना

- निर्वाचन आयोग ने संविधान के अनुच्छेद 324 के अंतर्गत चुनावों पर ''अधीक्षण, नियंत्रण और निदेश'' करने की समूची शक्तियों का प्रयोग करते हुए, चुनाव अभियानों के समय, बंदनवार, चित्र लगाने के निषेध, दैनिक खर्चों के विवरण देने पर जोर देना, बड़ी संख्या में पर्यवेक्षकों की नियुक्ति करना, विशिष्ट चुनावी बूथों पर पुनः मतदान के आदेश देना और अन्य ऐसे कदमों के निदेश जारी करते हुए चुनावों के लिए आचार संहिता को सभी प्रकार से बाध्य कर दिया है।

2.1.2.5 स्वतंत्र तथा निर्भीक चुनाव

- पुलिस के प्रबंधों में सुधार आए हैं, जिसमें किसी राज्य में एक दिन से अधिक चुनाव कराए जाने तथा केन्द्रीय दलों का भारी प्रयोग और सीमाओं को सील करने जैसे उपाय आदि शामिल हैं।
- इलैक्ट्रॉनिक मशीनों का सारे देश में प्रयोग आरंभ कर दिया गया है । (2004 के संसदीय चुनावों से)

- यह निर्णय लिया जा चुका है कि किसी निर्दलीय उम्मीदवार की मृत्यु से चुनाव रद्द नहीं होंगे।

2.1.2.6 मंत्रिपरिषद के आकार को कम करना

तीन दशकों से भी अधिक पहले प्रथम प्रशासनिक सुधार आयोग ने आकार को 10% तक सीमित रखने की सिफारिश की थी । संविधान (91वां संशोधन) अधिनियम, 2003 मंत्रिपरिषद के आकार को संसद के निचले सदन/राज्य विधानमंडल की संख्या को 15% तक प्रतिबंधित करता है । यह संशोधन मंत्रियों की संख्या को कुछ सीमा तक सामान्य रखने में एक कदम है ।

2.1.3 राजनीतिक सुधारों के मुद्दे

किए गए उपायों के बावजूद, अपराधीकरण, चुनावों में धन के प्रयोग, प्रलोभनों की निपुणता के रूप और सार्वजनिक युनिटों की अध्यक्षता और सदस्यता के रूप में संरक्षण तथा कार्यपालकों के रूप में छिपकर काम कर रहे विधायकों की विसंगति जैसी महत्वपूर्ण समस्याओं के मामले में सुधार बहुत ही कम हुए हैं । अतः और अधिक प्रभावी कदम उठाए जाने का सुझाव दिया गया हैं और उनमें से अधिक महत्वपूर्ण कदमों के बारे में आयोग विचार करना चाहेगा ।

2.1.3.1 राजनीतिक कोषों में सुधार

2.1.3.1.1 भारत में, राजनीतिक दलों में धन उपलब्ध कराने के स्रोतों में से निजी दान प्राप्त करना एक है । अन्तर्राष्ट्रीय रूप से, राजनीतिक दलों के लिए राज्य धन के कोष के लिए तीन मुख्य सोपान हैं । पहला है, अत्यन्त ही कम सोपान, जहां पर सामान्यतः विशिष्ट अनुदानों या राज्य द्वारा दी गई सेवाओं के माध्यम से चुनावों में आंशिक रूप से आर्थिक सहायता दी जाती है । उम्मीदवारों की एक सीमित चुनाव अवधि में खर्च का ब्यौरा देने, पर्यवेक्षण और रिपोर्ट देने वाले सार्वजनिक प्राधिकारी के प्रति जवाबदेही होती है । संयुक्त राष्ट्र, आयरलैंड, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड और कनाडा इस सोपान के उदाहरण हैं, जबकि संयुक्त राज्य इनसे भिन्न है जहां चुनाव के लिए अधिकतर निजी धन प्रयोग किया जाता है और सख्ती के साथ रिपोर्ट देने और खर्च को दिखाने और सीमित अंशदान की आवश्यकताओं की शर्तों पर होता है ।

2.1.3.1.2 दूसरा सोपान अधिकतम धन प्रयोग करने का है जिसमें सरकारी धन के कोष में चुनावों के लिए ही सार्वजनिक धन लिप्त नहीं होता बल्कि दलों की अन्य गतिविधियों पर भी खर्च होता है, जैसेकि स्वीडन और जर्मनी । इस सोपान में, अंशदानों और खर्चों के विस्तृत नियमन की कम संलिप्तता रहती है क्योंकि दल अधिकतर शासन की सहायता पर ही निर्भर रहते हैं और स्थानीय आवश्यकताएं, आन्तरिक लोकतंत्र और सामान्य पारदर्शिता को प्रभावी करती है ।

इन दोनों के बीच, विभिन्न प्रकार के मिश्रित सोपान होते हैं जिसमें मेल खाती अनुदानों के आधार पर चुनावों की लोक निधि के लिए आंशिक रूप से प्रतिपूर्ति शामिल रहती है जैसेकि फ्रांस, नीदरलैंड और दक्षिण कोरिया में ।

2.1.3.1.3 लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम चुनावी खर्चों पर अंकुश लगाता है, जबकि राजनीतिक दलों को कंपनी दान दिए जाने पर 1969 में रोक लगा दी गई थी परंतु बाद में 1985 में कंपनी अधिनियम के संशोधन द्वारा इसकी अनुमति दे दी गई थी । 1990 में निर्वाचन सुधारों पर दिनेश गोस्वामी समिति ने माइक्रोफोन के किराए के प्रभारों, वाहन के ईंधन के लिए, निर्वाचन नामावलियों की प्रतियों आदि के लिए वस्तु के रूप में सीमित

सहायता की सिफारिश की थी, जबकि इसके साथ ही कंपनी के दानों पर प्रतिबंध लगाने की सिफारिश की थी । इसके बाद के परिवर्तनों में, सर्वोच्च न्यायालय ने नोटिस जारी किए और 4 अप्रैल 1996 को एक आदेश पारित किया जिसमें लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम की धारा 77 की व्याख्या –। को प्रभावी ढंग से समाप्त कर दिया गया और लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम के अन्तर्गत निर्धारित अधिकतम खर्च की सीमाओं के अंतर्गत तृतीय दल (दलों) तथा राजनीतिक दल के खर्चों को मिला दिया गया । इसके बाद आय–कर और धन–कर अधिनियमों के अंतर्गत दलों को विवरिणयां फाइल करने के लिए विवश कर दिया गया । चुनावों में सरकारी कोषों पर दूसरी समिति, इन्द्रजीत गुप्त समिति ने आंशिक रूप से सरकारी कोषों की मुख्यतः वस्तुओं के रूप में सिफारिश की है । तथापि, संविधान के कार्यकरण की समीक्षा के लिए राष्ट्रीय आयोग ने यह विचार व्यक्त किया है कि जब तक भारत में राजनीतिक दलों के लिए अधिक उत्तम नियमों की प्रणाली विकसित नहीं कर ली जाती, तब तक चुनावों के लिए सरकारी कोषों को स्थगित रखा जाए।

2.1.3.1.4 संसद ने 2003 में द्विदलीय चुनाव की भावना से निर्वाचन और अन्य संबंधित विधि (संशोधन) अधिनियम को सर्वसम्मति से अधिनियमित कर दिया । इस अधिनियम ने निर्वाचन सुधार समिति (दिनेश गोस्वामी समिति, 1990) चुनावी सरकारी कोष समिति (इन्द्रजीत गुप्ता समिति, 1999) और भारत के विधि आयोग (निर्वाचन सुधार अधिनियम, 1999 पर 170वीं रिपोर्ट) की सिफारिशों पर विचार किया । कानून मंत्री ने बिल को पेश करते हुए 2002 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा गठित दलीय वित्तों पर डा0 मनमोहन सिंह की सिफारिशों को स्वीकृत किया । अधिनियम में निम्नलिखित मुख्य उपबंधों को समाविष्ट किया गया है :–

- राजनीतिक दलों को दिए गए सभी दानों पर व्यक्तियों और कंपनियों को कर की पूरी छूट।
- लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम की धारा 77 के अन्तर्गत व्याख्या–। को प्रभावी ढंग से समाप्त किया जाना । तृतीय दलों और राजनीतिक दलों द्वारा खर्च अब अधिकतम सीमाओं के अन्तर्गत आते हैं और केवल दलों के नेताओं के यात्रा व्ययों को ही छूट है ।
- 20,000/– रूपयों से ऊपर के खर्चों के लिए दलों के वित्त और अंशदानों का ब्यौरा दिया जाना ।
- मान्यता प्राप्त दलों के उम्मीदवारों को अप्रत्यक्ष रूप से सार्वजनिक निधि – जिसमें निर्वाचन नामावलियां (पहले से प्रचलित) के निशुल्क वितरण और ऐसी मदें, जिनका निर्णय निर्वाचन आयोग द्वारा केन्द्र सरकार के परामर्श से किया जाता है, शामिल हैं ।
- केबल टेलीविजन नेटवर्क और दूसरे इलैक्ट्रॉनिक मीडिया (सार्वजनिक और निजी) पर मान्यता प्राप्त दलों द्वारा समय का एक समान विभाजन ।

2.1.3.1.5 राजनीतिक भ्रष्टाचार के मुख्य स्रोतों को समाप्त करने के लिए चुनावों में सरकारी कोषों को लागू करने की विवशता का मामला है । जैसाकि चुनावों में सरकारी कोषों पर इन्द्रजीत गुप्ता समिति द्वारा सिफारिश की गई है, यह कोष कुछ अनिवार्य मद्दों के लिए मुख्यतः वस्तुओं के रूप में आंशिक सरकारी कोष होना चाहिए ।

2.1.3.1.6 सिफारिश :

क. चुनावों में खर्च किए जाने वाले धन के अनुचित और अनावश्यक कोष की गुजांइश को कम करने के लिए आंशिक राज्य कोष की व्यवस्था को लागू किया जाना चाहिए।

2.1.3.2 दल बदल विरोधी कानून का कड़ाई से पालन किया जाना

2.1.3.2.1 भारतीय राजनीतिक जीवन लम्बे समय से दल बदल से रोग–ग्रस्त रहा है । इसमें निजी हितों में और वृद्धि करने के लिए राजनीतिक प्रणाली के साथ छल–कपट किया जाता है और राजनीतिक भ्रष्टाचार का यह एक शक्तिवान स्रोत है । इस रोग ग्रस्तता पर नियंत्रण के लिए जिस दल–बदल कानून को अधिनियमित किया गया था, उसमें कुछ संख्या नियत की गई थी, जिसके ऊपर किसी दल में दल बदलने की अनुमति थी । तथापि, ऐसे चयनित दल परिवर्तन को कानूनी बनाने से राजनीतिक नैतिकता के अतिक्रमण और अवसरवादिता को बढ़ावा मिला । इसमें संदेह नहीं कि किसी रूप में या किसी संदर्भ में दल बदलने की अनुमति देना राजनीति की नैतिक विडम्बना है ।

2.1.3.2.2 1985 में अधिनियमित की गई दसवीं अनुसूची के दल–बदल प्रावधानों को कड़ा बनाने के लिए 2003 में संविधान में 91वां संशोधन लाया गया । यह संशोधन उन सभी राजनीतिक मोड़ लेने वालों के लिए– चाहे व्यक्तिगत रूप से या सामूहिक तौर से – यह अनिवार्य बना देता है कि वे वैधानिक सदस्यता से त्याग–पत्र दे दें । अब यदि वे दल बदलते हैं तो उन्हें पुनः चुनाव लड़ना पड़ेगा और वे सदस्यों की 1/3 संख्या से बिखर जाने से अथवा दल के लगातार बदलने के भेष में पद पर बने रहना जारी नहीं रख सकते। यह संशोधन विधायकों पर दल बदल के बाद भी लाभ के पद पर बने रहने पर रोक लगाता है । इस प्रकार से यह संशोधन दल बदल को स्पष्टतः असंभव बना देता है और राजनीति की छवि को साफ रखने में एक महत्वपूर्ण अगला कदम है । इसके अतिरिक्त, निर्वाचन आयोग ने राजनीतिक दलों को उन्हें अपने नेताओं को चुनने के लिए आन्तरिक चुनावों पर भी जोर दिया है ।

2.1.3.2.3 निर्वाचन आयोग ने यह सिफारिश की है कि सदस्यों के दल–बदल के आधार पर अयोग्यता के प्रश्न का निर्णय भी निर्वाचन आयोग की सलाह पर राष्ट्रपति/राज्यपाल द्वारा लिया जाना चाहिए । कानून में ऐसा संशोधन, हाल ही के स्पष्ट रूप से दिखने वाले कुछ मामलों में पाए गए लंबे विलंबों के प्रकाश में, दुर्भाग्यवश आवश्यक हो गया है ।

2.1.3.2.4 सिफारिश :

क. दल–बदल के आधार पर सदस्यों को अयोग्य ठहराए जाने के मामले पर राष्ट्रपति/राज्यपाल द्वारा निर्वाचन आयोग की सलाह पर निर्णय लिया जाना चाहिए।

2.1.3.3 अयोग्यता :

2.1.3.3.1 यह सुझाव दिया गया है कि गंभीर आपराधिक आरोपों के संबंध में पिछले विमोचन को दिखाया जाना काफी उपयोगी सिद्ध हो सकता है । हमारे यहां अपराधों के लिए न्याय व्यवस्था में विलंब करना, दोषसिद्ध

हो जाने के बाद अयोग्य ठहराया जाना एक अपर्याप्त बचाव है । ऐसे उम्मीदवार भी हैं जो हत्या, अपहरण, बलात्कार और डकैती जैसे गंभीर आपराधिक आरोपों का सामना कर रहे होते हैं, जिनका राजनीतिक प्रदर्शनों से कोई संबंध नहीं होता । ऐसे मामलों में उम्मीदवार के चुनाव लड़ने के अधिकार और समुदाय का उत्तम प्रतिनिधित्व दोनों के बीच समाधान की आवश्यकता है । एक नियम के रूप में उम्मीदवारों को किसी न किसी बहाने से अयोग्य ठहराना जल्दबाजी और अलोकतांत्रिक होगा । चुनाव के परिणामों का निर्णय लोगों द्वारा लिया जाता है जो मतदाता पेटी के माध्यम से अन्तिम निर्णायक होते हैं । अविवेकपूर्ण अयोग्यता के चलते प्रभुसत्ता सम्पन्न चुनाव करवाना एक चाल है, जिसे लोकतांत्रिक प्रक्रिया का दुरूप्योग करने के लिए तानाशाह किसी समय में अपना लेता है । तथापि, वर्तमान स्थिति में, संतुलन रखते हुए यदि मुकदमों पर विचार कर रहे न्यायालय द्वारा लगाए गए गंभीर आपराधिक आरोपों का सामना कर रहे लोगों के मामलों में, उस न्यायालय द्वारा प्रारंभिक जांच के बाद उन्हें तब तक विधानमंडल या संसद में लोगों का प्रतिनिधित्व करने से इन्कार कर दिया जाता है, जब तक उन्हें आरोपों से मुक्त नहीं कर दिया जाता तो ऐसा करना उचित और समझदारी का काम प्रतीत होता है परंतु इस सावधानी को सुनिश्चित करना होगा कि ऐसे आरोपों में कोई राजनीतिक कुलवैर लिप्त न हो और राजनीतिक आंदोलनों से संबंधित आरोपों का सामना कर रहे लोगों के साथ कोई अत्याचार न हो पाए । सर्वोच्च न्यायालय के एक निर्णय के बाद उम्मीदवारों द्वारा ब्यौरे दिए जाने से संबंधित जुलाई 2002 के ड्राफ्ट अध्यादेश में गंभीर और जघन्य अपराधों से संबंधित आरोपों का सामना कर रहे उम्मीदवारों को अयोग्य करार देने का उपबंध किया गया । इसमें जिन जघन्य अपराधों की सूची दी गई उनमें थे – हत्या, अपहरण, बलात्कार, डकैती, भारत के विरूद्ध युद्ध कराने, संगठित अपराध और नारकोटिक्स अपराध । भ्रष्टाचार के आरोपों का सामना कर रहे लोगों को भी अयोग्य करार दिया जाना युक्तिसंगत प्रतीत होता है, बशर्ते कि ये आरोप किसी न्यायाधीश/मजिस्ट्रेट द्वारा आरंभिक साक्ष्यों के बाद लगाए गए हों । निर्वाचन आयोग[4] ने यह सुझाव दिया है कि भ्रष्टाचार से प्रेरित मामलों में एक सावधानी के रूप में, यह उपबंध किया जाए कि केवल ऐसे मामलों को अयोग्य करार दिया जाए, जिन्हें चुनाव से छः महीनों पहले फाइल किया गया हो ।

2.1.3.3.2. सिफारिश :

क. लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8 में निर्वाचन आयोग द्वारा सुझाए संशोधन के साथ गंभीर और जघन्य अपराधों से संबंधित आरोपों का सामना कर रहे सभी लोगों को अयोग्य ठहराए जाने के लिए संशोधन किए जाने की आवश्यकता है।

2.1.3.4 मिथ्या घोषणाएं

2.1.3.4.1 निर्वाचन आयोग ने यह सिफारिश की है कि लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम की धारा 31 के अन्तर्गत (जो अब निर्वाचन नामावलियों को तैयार करने/संशोधन करने, उन्हें शामिल करने/शामिल न करने से संबंधित विवरणों तक ही सीमित है) पीठासीन अधिकारी, निर्वाचन अधिकारी, मुख्य निर्वाचन अधिकारी या निर्वाचन आयोग के समक्ष की गई सभी मिथ्या घोषणाओं को निर्वाचन अपराध माना जाना चाहिए । प्रस्तावित संशोधन मिथ्या घोषणाओं के प्रभावशाली निवारण का काम करेगा ।

2.1.3.5 राजनीतिक दलों द्वारा खातों का प्रकाशन करना

2.1.3.5.1 राजनीतिक दलों का यह उत्तरदायित्व है कि वे अपनी आय और व्यय के उचित खाते रखें और हर

[4] स्रोत : ''प्रस्तावित निर्वाचन सुधार'' भारतीय निर्वाचन आयोग, 2004 www.eci.gov.in

वर्ष उनकी लेखा–परीक्षा करवाएं । यदि ऐसा करना कानूनी तौर पर अनिवार्य कर दिया जाता है तो पैराग्राफ 2.1.3.1.4 में उल्लिखित विविध रिपोर्टों के अनुपालन में निर्वाचन और अन्य संबंधित विधि (संशोधन) अधिनियम 2003 में उठाए गए कदमों को सुदृढ़ किया जा सकता है । निर्वाचन आयोग ने इस प्रस्ताव का एक बार फिर उल्लेख किया है । इसे जल्दी ही लागू किए जाने की आवश्यकता है । अंकेक्षित खातों को जनता की सूचना के लिए उपलब्ध कराए जाने चाहिए ।

2.1.4 गठबंधन और नैतिकता

2.1.4.1 भारतीय राजनीति में हाल ही के वर्षों में गठबंधन राजनीति का घटक बहुत ही दृढ़ता के साथ उभर कर सामने आया है । भारतीय निर्वाचन और हमारे गुंजायमान लोकतंत्र की विभिन्नता और जटिलता ने हमारी निर्वाचन प्रक्रिया को एक जाना पहचाना पहलु बना दिया है । गठबंधन राजनीति प्रायः इस तथ्य के कारण भी आवश्यक हो जाती है कि बहुदलीय व्यवस्था में, जैसा कि हमारे देश में है, आज किसी एक दल के लिए यह मुश्किल है कि वह विधानमंडल या संसद में स्पष्ट बहुमत प्राप्त कर सके । गठबंधन सरकार को समुचित ठहराए जाने के लिए, गठबंधन करने वाले दलों के लिए यह आवश्यक है कि वे यह सुनिश्चित करने के लिए, व्यापक रूप से बनाए गए कार्यक्रमों पर आधारित एक सोच बना लें कि सामाजिक–आर्थिक विकास के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके । ऐसी सोच को साझा न्यूनतम कार्यक्रम के रूप में बदलने की आवश्यकता है और इसे या तो चुनाव से पहले घोषित कर दिया जाना चाहिए और या मिली जुली सरकार बनाने से पहले घोषित कर दिया जाना चाहिए ।

2.1.4.2 तथापि, गठबंधन सरकार की नैतिकता, तब गंभीर रूप से धूमिल हो जाती है, जब ये मिले जुले दल बीच में ही अपने साझेदारों को बदल लेते हैं और सामाजिक–आर्थिक विकास के लक्ष्य को पाने के लिए उनकी सहमति से बनाए गए साझा न्यूनतम कार्यक्रम की बिल्कुल ही अवहेलना करते हुए मुख्य रूप से अवसरवादिता का लाभ उठाने और सत्ता पाने की लालसा से नया गठबंधन बना लेते हैं । यह साझा कार्यक्रम, जिसे चुनाव से पूर्व निर्वाचन आयोग द्वारा स्पष्ट रूप से अथवा चुनाव के बाद और सरकार बनाने से पहले निहित रूप से जनमत आदेश के रूप में बनाया जाता है, ऐसे कार्यक्रम का अस्तित्व ही समाप्त हो जाता है और जनता द्वारा प्रदत्त शक्ति का दुरूपयोग किया जाता है । लोगों की अपेक्षाओं को बनाए रखने के लिए यह आवश्यक है कि यह सुनिश्चित करने के लिए एक नैतिकता का ढांचा बनाया जाए कि जिससे चुनावों के बीच गठबंधन को पुनः बना लेने से, अवसरवादिता के ऐसे प्रयोग न किए जा सकें ।

2.1.4.3 सिफारिश :

क. यह सुनिश्चित करने के लिए संविधान में संशोधन किया जाना चाहिए कि यदि एक या अधिक दल निर्वाचन मंडल द्वारा आदेशित सामान्य कार्यक्रम के गठबंधन में चुनाव से पूर्व स्पष्ट रूप से अथवा सरकार बनाते समय निहित रूप में, बीच में ही गठबंधन से बाहर किसी एक या अधिक दलों में पुनः शामिल हो जाते है तो उस दल या दलों के सदस्यों को निर्वाचन मंडल से नया आदेश लेना होगा ।

2.1.5 मुख्य निर्वाचन आयुक्त/आयुक्तों की नियुक्तियाँ ।

2.1.5.1 मुख्य निर्वाचन आयुक्त और अन्य निर्वाचन आयुक्तों की नियुक्तियों की वर्तमान कार्य प्रणाली को

संविधान के अनुच्छेद 324 में दिया जा चुका है जिसमें यह अनुबंध किया गया है कि उनकी नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा प्रधान मंत्री की सलाह पर की जाएगी ।

2.1.5.2 नियुक्ति के लिए कार्य–प्रणाली पर संविधान सभा में हुई बहस के दौरान, यह सुझाव दिए गए थे कि मुख्य निर्वाचन आयुक्त के रूप में नियुक्त किए गए व्यक्ति को सभी दलों को अपने विश्वास में लेना चाहिए और इसलिए उसकी नियुक्ति को दोनों सदनों द्वारा 2/3 बहुमत से पुष्टि की जानी चाहिए । अतः उस स्थिति में भी, यह विचार रखा गया था कि नियुक्ति की कार्य प्रणाली व्यापकता पर आधारित और सभी पक्षपातपूर्ण विचारों से ऊपर होनी चाहिए । हाल ही में, राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग और केन्द्रीय सतर्कता आयोग जैसे संवैधानिक निकायों के लिए अध्यक्ष और सदस्यों की नियुक्तियां व्यापकता पर आधारित समिति की सिफारिश पर की जाती हैं । अतः मुख्य सतर्कता आयुक्त की नियुक्ति के लिए, इस समिति में प्रधान मंत्री, गृह मंत्री और लोक सभा में विपक्ष के नेता शामिल होते हैं, जब कि राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग के लिए समिति के अध्यक्ष प्रधान मंत्री होते हैं और इसके सदस्यों के रूप में, लोक सभा के अध्यक्ष, गृह मंत्री, लोक सभा में विपक्ष के नेता, राज्य सभा में विपक्ष के नेता और राज्य सभा के उपसभापति होते हैं ।

2.1.5.3 हमारे लोकतंत्र के संचालन में निर्वाचन आयोग का दूरगामी महत्व और नाजुक भूमिका को देखते हुए, यह अवश्य ही उचित होगा यदि मुख्य निर्वाचन आयुक्त और निर्वाचन आयुक्तों के चयन के लिए इसी प्रकार की समिति का गठन किया जा सके ।

2.1.5.4 सिफारिश :

क. प्रधान मंत्री की अध्यक्षता में, लोक सभा के अध्यक्ष, लोक सभा में विपक्ष के नेता, कानून मंत्री और राज्य सभा के उपाध्यक्ष को सदस्यों के रूप में साथ लेकर बनी परिषद् को मुख्य निर्वाचन आयुक्त और निर्वाचन आयुक्तों की नियुक्ति के लिए राष्ट्रपति के विचारार्थ सिफारिशें करनी चाहिएं ।

2.1.6 चुनावी याचिकाओं का शीघ्र निपटान

2.1.6.1 चुनावी याचिकाओं को इस समय उच्च न्यायालय में फाइल किया जाता है । लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम के अंतर्गत, ऐसी याचिकाओं का 6 महीनों की अवधि में निपटारा किया जाना होता है । तथापि, वास्तव में, ऐसी याचिकाएँ वर्षों तक निलंबित रहती हैं और तब तक संसद की पूरी अवधि भी समाप्त हो लेती है जिससे चुनाव याचिका निष्फल हो जाती है । अन्य उच्च स्तर की समितियों द्वारा और प्रतिष्ठित व्यक्तियों की ओर से यह सुझाव दिए जाते रहे हैं कि एक पृथक न्यायिक व्यवस्था के गठन की आवश्यकता हो सकती है । संविधान के कार्यकरण की समीक्षा के लिए राष्ट्रीय आयोग ने सिफारिश की है कि उच्च न्यायालयों में विशेष चुनाव पीठों का गठन किया जाए जिनमें केवल चुनाव याचिकाओं के निपटान को ही विशेष रूप से सुरक्षित रखा जा सके ।

2.1.6.2 आयोग का यह विचार है कि उच्च न्यायालयों में इस समय भारी मुकदमों के बोझ को देखते हुए, संविधान के अनुच्छेद 323 ख के अंतर्गत उपबंध किए गए विशेष न्यायाधिकरणों के गठन से ही चुनावी

याचिकाओं के तेजी से निपटान को सुनिश्चित किया जाना संभव हो पाएगा । ऐसा करते समय, यह विशेष रूप से सुनिश्चित करना होगा कि ऐसे न्याधिकरणों का निर्णय अन्तिम हो और जैसा कि संविधान में पहले से ही उपबंध है इन निर्णयों के खिलाफ अपील किए जाने का कार्य–क्षेत्र सीधे सर्वोच्च न्यायालय तक सीमित हो । ऐसे न्यायाधिकरणों में दो सदस्य हो सकते हैं, एक उच्च न्यायालय का कोई न्यायाधीश और दूसरा, प्रशासनिक सदस्य । इन दोनों में मतभेद हो जाने पर मामले को उच्च न्यायालय में भेज दिया जाना चाहिए।

2.1.6.3 सिफारिशः

क. संविधान के अनुच्छेद 323 ख के अन्तर्गत क्षेत्रीय स्तर पर विशेष निर्वाचन न्यायाधिकरण बनाए जाने चाहिए ताकि चुनाव याचिकाओं और विवादों का छः महीनों की विर्निदिष्ट अवधि के भीतर गति से निपटान किया जा सके । प्रत्येक न्यायाधिकरण में उच्च न्यायालय का एक न्यायाधीश और एक वरिष्ठ सिविल सेवक जिसे चुनावों के आयोजन में कम से कम 5 वर्ष का अनुभव हो (भारत सरकार के अपर सचिव/राज्य सरकार के प्रधान सचिव के स्तर से नीचे के पद का नहीं होना चाहिए)। इसके शासनादेश में यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि सभी चुनाव याचिकाओं पर छः महीनों के भीतर निर्णय ले लिया जाए जैसा कि कानून में प्रावधान है । न्यायाधिकरणों को सामान्यतः केवल एक वर्ष के लिए ही गठित किया जाना चाहिए जिसे अपवादस्वरूप स्थितियों में 6 महीनों की अवधि के लिए बढ़ाया जा सकता है ।

2.1.7 सदस्यता के लिए अयोग्यता के आधार

2.1.7.1 संविधान के अनुच्छेद 102 में संसद के किसी सदन की सदस्यता के किंचित् विशेष स्थितियों में, अयोग्य करार दिए जाने का उपबंध है, जो निम्न प्रकार से है :–

(1) वह व्यक्ति संसद के किसी सदन का सदस्य चुने जाने के और सदस्य होने के योग्य नहीं होगा, यदि वह –

(क) भारत सरकार के या राज्य सरकार के अधीन कोई लाभ का पद धारण करता हो, सिवाय उस पद के, जिसके बारे में संसद ने विधि द्वारा छूट दी हो :

(ख) विकृतचित्त है और उसके बारे में सक्षम न्यायालय की घोषणा विद्यमान हो

(ग) वह अनुन्मोचित दिवालिया हो

(घ) वह भारत का नागरिक नहीं हो अथवा उसने किसी विदेशी राज्य की नागरिकता को स्वैच्छिक रूप से प्राप्त कर लिया हो अथवा किसी विदेशी राज्य के प्रति उसकी निष्ठा हो

बाक्स 2.2 : भ्रष्टाचार और मिथ्याचार

भ्रष्टाचार और मिथ्याचार, लोकतंत्र के ऐसे अपरिहार्य गुणक नहीं होने चाहिएं जैसे कि निस्संदेह वे आज हैं ।

महात्मा गांधी

(ङ.) संसद द्वारा बनाए गए किसी कानून के अधीन या कानून के द्वारा अयोग्य करार दे दिया गया हो ।

व्याख्या –इस खंड के प्रयोजन के लिए किसी व्यक्ति को केवल इस कारण से भारत सरकार अथवा किसी राज्य सरकार के अंतर्गत किसी लाभ के पद को धारण किया हुआ नहीं समझा जाना चाहिए कि वह केन्द्र में या किसी राज्य में मंत्री के पद पर है।

(2) कोई भी व्यक्ति संसद के किसी भी सदन का सदस्य बनने के अयोग्य होगा यदि उसे दसवीं अनुसूची के अधीन अयोग्य करार दे दिया गया हो ।

2.1.7.2 अनुच्छेद 102(ड़) में स्पष्ट है कि संसद को यह कानून पारित करने का अधिकार है कि वह ऐसी अयोग्यता के लिए और भी शर्तों को शामिल करे । हाल ही में कुछ संसद सदस्यों को निष्कासित करने के मामलों को ध्यान में रखते हुए, उन अन्य स्थितियों का भी विस्तार से उल्लेख करना अपेक्षित होगा, जिसके अंतर्गत संसद सदस्य को अयोग्य करार दिया जा सकता है । इससे इस मामले में किसी अस्पष्टता को दूर किया जा सकेगा और यह संसद की उच्चतम प्रभुत्ता के ऐसे सभी मामलों में पुनः पुष्टि करेगा ।

2.1.7.3 सिफारिश :

क. संविधान के अनुच्छेद 102 (ड़) के अन्तर्गत समुचित विधान अधिनियमित किया जाए जिसमें किसी संसद सदस्य की अयोग्यता की शर्तों का सर्वांगीण ढंग से उल्लेख किया जाना चाहिए । इसी प्रकार, राज्यों को भी अनुच्छेद 198 (ड़) के अन्तर्गत विधान बनाना चाहिए ।

2.1.8 पिछले पैराग्राफों में प्रकाश में लाए गए प्रस्तावों को हमारे राजनीतिक दलों के बीच गंभीर चर्चा करने की आवश्यकता है। इनका जल्द ही या बाद में अपनाया जाना इनपर ही निर्भर करेगा । हमारा देश उन अनेक लोकतांत्रिक देशों में से है, जिन्होंने दूसरे विश्व युद्ध के बाद स्वतंत्र किए गए देशों में से 6 दशकों तक लंबी यात्रा के बाद स्वतंत्रता और स्थिरता प्राप्त की है । लोकतांत्रिक परिपक्वता में समय, धैर्य और जटिल समस्याओं का युक्तिसंगत उत्तर पाने और संघर्षमय विचारों का समाधान करने के लिए तत्परता की आवश्यकता होती है। सभी बड़े लोकतांत्रिक देश लोकतंत्र के रूपातंरण की यातना की प्रक्रिया में से गुजरे हैं । विचारों की शक्ति, नेतृत्व के ऊंचे गुण, आदर्शवाद की प्रेरणा और भावना मुख्य विकृत्तियों से मुक्त एक महान लोकतंत्र को बनाने के लिए आवश्यक शर्तें हैं। भारत में ऐसे लोकतंत्र को बनाने का सामर्थ्य और लचीलापन है और हमारे राजनीतिक दलों को इस अवसर का लाभ उठाना चाहिए ।

बाक्स 2.3 नैतिक संहिता की आवश्यकता

सीनेटर फुलब्राइट ने ऐसे सरकारी कर्मचारियों की समस्या का पता लगाया जिन्होंने ऐसी नैतिक भूलें की थीं जिन्हें आपराधिक आचार की संज्ञा नहीं दी जा सकती । उसने पूछा –

ऐसे व्यक्तियों के बारे में क्या किया जाना चाहिए जो धन के लिए अपने पद का दुरूपयोग प्रत्यक्ष रूप से या अंधाधुंध नहीं करते और इसलिए वे कानूनी दंड के अंतर्गत आ जाते हैं ? उन लोगों के साथ कैसे निपटा जाना चाहिए जो मित्रता के भेष में पक्षपात करते हैं, जो कानून की भावना को चोट तो पहुंचाता है परंतु इसकी विषयवस्तु का प्रत्यक्ष उल्लंघन नहीं करता ।

उसने आगे विस्तार से कहा –

इस नैतिक आचार की समस्या का एक सबसे बड़ा विघ्नकारी पहलु है इस बात का पता लगाना कि अनेक प्रभावकारी लोगों के बीच नैतिकता कानून के समानान्तर हो गई है । किसी व्यक्ति की सार्वजनिक जीवन में सत्यनिष्ठा की पहचान करने का सर्वसम्मत मानदंड यदि यह है कि वह कानून की परिधि में अपने को रखता है तो निश्चय ही यह हमारे लिए दुःखद स्थिति है ।

स्रोत : सीनेट एथिक्स मैनुअल 2003

संस्करण : पृष्ठ 6 : ethics.senate.gov/downloads/pdffiles/manual.pdf से पुनः प्राप्त।

2.2 सार्वजनिक जीवन में नैतिकता

2.2.1 नैतिकता की नींव उत्तरदायित्व और जवाबदेही की धारणा में रखी जाती है । लोकतंत्र में सार्वजनिक

पद पर आसीन जनता को अंततोगत्वा जवाब देना होता है । ऐसी जवाबदेही को कानून और नियमों की व्यवस्था से प्रभावी किया जाता है जिसे जनता के निर्वाचित प्रतिनिधि अपने कानूनों द्वारा अधिनियमित करते हैं । नैतिकता ऐसे कानून और नियमों के निर्माण में एक आधार देती है । यह लोगों के आदर्श विचार ही होते हैं जो कानून और नियमों को जन्म देकर उनका चरित्र निर्माण करते हैं । हमारी कानूनी व्यवस्था अच्छाई और न्याय की साझा दृष्टि से निःसृत होती है ।

2.2.2 लोकतंत्र का मूलभूत सिद्धांत यह है कि सत्ता को धारण करने वाले सभी व्यक्ति इसे लोगों से प्राप्त करते हैं । दूसरे शब्दों में, सभी सार्वजनिक पदों पर आसीन व्यक्ति जनता की धरोहर हैं । सरकारी भूमिका में वृद्धि से सार्वजनिक पद पर बने लोग जन–जीवन पर पर्याप्त प्रभाव डालते हैं । जनता और पदाधिकारी के बीच में धरोहर का संबंध यह अपेक्षा करता है कि अधिकारियों को सौंपे गए अधिकारों का प्रयोग लोगों की सर्वोत्तम भलाई या 'जन हित' में किया जाना चाहिए ।

2.2.3 आम जीवन में नैतिकता की भूमिका के अनेक पक्ष हैं । एक तरफ उच्च आचार के मूल्यों की अभिव्यक्ति है और दूसरी ओर कार्रवाई की सुनिश्चितता से है जिसके लिए सार्वजनिक अधिकारी को वैधानिक रूप से जवाबदेह ठहराया जा सकता है । नैतिक व्यवहार के किसी भी ढांचे में निम्नलिखित तत्वों को अवश्य शामिल करना चाहिए :–

क. नैतिक प्रतिमानक और व्यवहारों को संहिताबद्ध करना ।

ख. जन हित और व्यक्तिगत लाभ के बीच संघर्ष से बचने के लिए व्यक्तिगत रूचि को अभिव्यक्त करना ।

ग. सारभूत संहिताओं को प्रभावी बनाने के लिए व्यवस्था की रचना करना ।

घ. किसी सार्वजनिक अधिकारी को अपने पद पर योग्य या अयोग्य करार दिए जाने के लिए प्रतिमानक प्रदान करना ।

2.2.4 कानूनों और नियमों की व्यवस्था, चाहे जितनी भी विस्तृत क्यों न हो, वह सभी स्थितियों का समाधान नहीं हो सकती । निस्संदेह, यह अपेक्षित होता है और शायद संभव भी हो कि उन लोगों के आचरण पर नियंत्रण किए जाएं जो निचले तबके के हैं और एक सीमा में अपने विवेक का प्रयोग करते हैं । लेकिन सार्वजनिक सेवा में यह तबका जितना ऊंचा होगा, उतनी ही विवेक की परिधि बड़ी होगी । और कानूनों और नियमों की एक ऐसी व्यवस्था का उपबंध करना कठिन है जिसमें ऊंचे पदों पर विवेक के प्रयोग को बृहत् रूप से शामिल करके उस पर नियंत्रण किया जा सके ।

2.2.5 सार्वजनिक पद पर आसीन लोगों के लिए नैतिक मानदंड क्या होने चाहिए, इस पर अत्यधिक बृहत् वक्तव्यों में से एक, संयुक्त राज्य में लोक जीवन में प्रतिमानकों पर समिति से आया था, जो नोलन समिति के नाम से लोकप्रिय था, जिसमें सार्वजनिक जीवन के निम्नलिखित सिद्धांतों का उल्लेख किया गया :–

1. *निःस्वार्थनिष्ठता : सार्वजनिक पद पर बैठे लोगों को जन हित से संबंधित निर्णयों को स्वयं ही*

लेना चाहिए । अपने, अपने परिवार और अपने मित्रों के लिए वित्तीय या अन्य भौतिक लाभ प्राप्त करने के लिए ऐसा नहीं करना चाहिए ।

2. *सत्यनिष्ठाः— सार्वजनिक पद पर बैठे लोगों को बाहर के ऐसे व्यक्तियों या संगठनों के साथ वित्तीय या अन्य बाध्यतावश अपने को लिप्त नहीं करना चाहिए जो उनके सरकारी कार्य–निष्पादन को प्रभावित करे ।*

3. *विषयनिष्ठताः— सरकारी काम करते हुए, जिसमें सार्वजनिक नियुक्तियां करना, संविदाओं को स्वीकृति देना या किसी व्यक्ति विशेष को पुरस्कार या लाभों की सिफारिश करना शामिल है, सरकारी पदधारी को अपने चयन को योग्यता के आधार पर करना चाहिए ।*

4. *जवाबदेहीः— सरकारी पद पर आसीन लोग अपने निर्णयों और कार्रवाई के लिए जनता को जवाबदेही के लिए जिम्मेदार होंगे और उनके पद के लिए जो उचित छानबीन आवश्यक हो, उसे प्रस्तुत करना चाहिए ।*

बाक्स 2.4 स्पेन की उत्तम शासन संहिता से उद्धरण

फिर भी, वर्तमान परिप्रेक्ष्य में, सार्वजनिक प्राधिकारियों के लिए यह आवश्यक है कि वे नागरिकों को यह वचन दें कि सभी वरिष्ठ पदाधिकारी कानून द्वारा अधिकथित दायित्वों की ही पुष्टि नहीं करेंगे बल्कि इसके अलावा भी, उनके आचार में नैतिकता के सिद्धांतों और अच्छे आचरण का उत्साह और मार्गदर्शन भी होगा जिनका अभी तक विनियमों में अभिव्यक्त रूप से उल्लेख नहीं है – यद्यपि निस्संदेह वे अन्तर्निहित हैं और जो एक उत्तम शासन संहिता प्रदान करता है।

प्रथम *मूल सिद्धांत* – सरकारी सदस्य और राज्य के सामान्य प्रशासन के वरिष्ठ अधिकारी अपनी गतिविधियों को संविधान और शेष विधि व्यवस्था के अनुसार इस संहिता में विकसित किए गए निम्नलिखित नैतिक सिद्धांतों और उत्तम आचार का पालन करते हुए निष्पादित करेंगे : विषयनिष्ठा, सत्यनिष्ठा, तटस्थता, उत्तरदायित्व, विश्वसनीयता, निष्पक्षता, गोपनीयता, लोक सेवा का समर्पण, पारदर्शिता, अनुकरणीय आचार, मितव्ययिता, पहुंच कुशलता, ईमानदारी और पर्यावरणीय और सांस्कृतिक वातावरण बनाना तथा लिंड्गों के बीच समानता बनाए रखना.....

स्रोतः http//www.oecd.org/dataoecd/17/35/35521364pdf; से 7–12–06 को पुनः प्राप्त किया गया।

5. *निष्कपटता :— सरकारी पदधारी को अपने सभी निर्णयों और कार्यवाइयों के संबंध में निष्कपट होना चाहिए । उन्हें अपने निर्णयों के लिए कारणों का उल्लेख करना चाहिए और किसी सूचना को देने पर तभी रोक लगाना चाहिए जब व्यापक जन हित में इसकी माँग हो ।*

6. *ईमानदारी :— सरकारी पदधारी व्यक्तियों का यह कर्त्तव्य है कि वे अपने सरकारी काम से संबंधित निजी हितों की घोषणा करें और ऐसे किसी विरोध के समाधान के लिए कदम उठाएं जो उन हितों की रक्षा करने में आड़े आता हो ।*

7. *नेतृत्व :— सरकारी पदाधिकारियों को अपने नेतृत्व द्वारा और एक मिसाल पेश करते हुए इन सिद्धांतों को विकसित करना और इनका समर्थन करना चाहिए ।*

2.2.6 प्रत्येक लोकतंत्र में सार्वजनिक जीवन के ये सिद्धांत सामान्य व्यवहार्यता के सिद्धांत होते हैं । ऐसे ही नैतिक सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए सरकारी पदाधिकारियों के लिए एक आचार संहिता की प्रवृत्ति लिए हुए लोक व्यवहार के मार्गदर्शी सिद्धांतों का एक सेट बनाना आवश्यक हो गया है । वास्तव में, ऐसा कोई भी व्यक्ति जिसे लोगों की बागडोर के मार्गदर्शन करने का विशेषाधिकार प्राप्त हुआ हो, उसे केवल नैतिक ही नहीं होना चाहिए बल्कि उसे ऐसे नैतिक मूल्यों को व्यवहार में भी लाना चाहिए । यद्यपि, सभी नागरिक

देश के कानूनों के साथ बाधित हैं, लोक सेवकों के मामले में, व्यवहार के प्रतिमानकों को साधारण नागरिक की अपेक्षा अधिक कड़ा होना चाहिए । यह सरकारी कार्यवाई और निजी हित के मध्य एक समन्वय है, जिसके कारण नैतिक संहिता ही नहीं, बल्कि आचार संहिता की भी आवश्यकता है । नैतिक संहिता में सद्व्यवहार और शासन के मुख्य–मुख्य मार्गदर्शी सिद्धांत शामिल होंगे, जब कि और अधिक विशिष्ट आचार संहिता में संक्षिप्त और सुस्पष्ट तरीकों से स्वीकृत और अस्वीकृत व्यवहारों और कार्यवाई की सूचना का उल्लेख होगा।

2.3 अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि

2.3.1 अपने दिनांक 31 अक्तूबर 2003 के संकल्प संख्या 58/4 में महासभा ने भ्रष्टाचार के विरूद्ध संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन[5] को अपना लिया । संकल्प की धारा 8 में उल्लेख है कि :–

"सरकारी पदाधिकारियों के लिए आचार संहिता

1. *भ्रष्टाचार से लड़ने के लिए, प्रत्येक दल, अन्य बातों के अलावा न्यायनिष्ठा, सत्यनिष्ठा और उत्तरदायित्व को, अपनी वैधानिक व्यवस्था के मूलभूत सिद्धांतों के अनुसार, अपने सरकारी पदाधिकारियों के बीच विकसित करेगा ।*

2. *विशेष रूप से, प्रत्येक राज्य दल अपने संस्थानात्मक और वैधानिक व्यवस्थाओं के भीतर सार्वजनिक कार्यों के सही, सम्मानजनक और समुचित कार्य–निष्पादन के लिए आचार संहिता या प्रतिमानकों को लागू करने का प्रयास करेगा ।*

3. *इस धारा के उपबंधों को कार्यान्वित करने के प्रयोजन से, प्रत्येक राज्य दल, यथोचित और अपनीवैधानिक व्यवस्था के मूलभूत सिद्धांतों के अनुसार महासभा संकल्प 51/59 तारीख 12 दिसंबर 1996 के संलग्नक में अन्तर्विष्ट सरकारी पदाधिकारियों के लिए अन्तर्राष्ट्रीय आचार संहिता जैसे क्षेत्रीय, अन्तर्क्षेत्रीय और बहुपक्षीय संगठनों के सुसंगत पहलुओं को ध्यान में रखेगा।*

4. *प्रत्येक राज्य दल सरकारी पदाधिकारियों द्वारा अपने कार्य–निष्पादन के दौरान उनके ध्यान में आए भ्रष्टाचार के कार्यों की सूचना को समुचित प्राधिकारियों तक पहुंचने के कार्य को सुविधाजनक बनाने के लिए अपने राष्ट्रीय कानूनों के मूलभूत सिद्धांतों के अनुसार स्थापित किए गए उपायों और व्यवस्थाओं पर भी विचार करेगा ।*

5. *प्रत्येक राज्य दल जहां समुचित हो, अपने राष्ट्रीय कानूनों के मूलभूत सिद्धांतों के अनुसार ऐसे उपाय और व्यवस्थाओं को स्थापित करने का प्रयास करेगा, जिनमें सरकारी प्राधिकारियों द्वारा समुचित प्राधिकारियों के समक्ष अन्य बातों के अलावा, उनकी बाहरी गतिविधियों, रोजगार, विनियोग सम्पत्तियों और पर्याप्त उपहारों अथवा लाभों से संबंधित ऐसी घोषणाएं करना आवश्यक हो जिनमें से उनके द्वारा किए जा रहे कार्यों के संबंध में किसी अभिरूचि का विरोध हो सकता हो ।*

6. *प्रत्येक राज्य दल अपने राष्ट्रीय कानूनों के मूलभूत सिद्धांतों के अनुसार ऐसे सरकारी पदाधिकारियों के विरूद्ध अनुशासनिक और अन्य उपायों पर विचार करेगा, जो इस धारा के अनुसार स्थापित संहिताओं और प्रतिमानकों का अतिक्रमण करते हों ।"*

[5] भारत इस सम्मेलन में हस्ताक्षरकर्त्ता है, परंतु इसे अभी विरल किया जाना है ।

2.3.2 विविध देशों ने समय समय पर, अपने मंत्रियों, विधायकों और सिविल सेवकों के लिए आचार/नैतिक संहिता को निर्धारित करने के मुद्दे का समाधान किया है । संयुक्त राज्य में मंत्रीय संहिता, संयुक्त राष्ट्र सीनेट में आचार संहिता और कनाडा में 'मंत्रियों के लिए मार्गदर्शन' है । बेलीज में सरकारी पदाधिकारियों के लिए आचार संहिता संविधान[6] में ही निर्धारित की गई है ।

बाक्स 2.5 : बेलीज का संविधान और आचार संहिता

धारा 121 (1) : यह धारा जिन व्यक्तियों पर लागू होती है, उन्हें इस प्रकार से आचरण नहीं करना होगा कि जिससे –

(क) वे ऐसी स्थिति में आ जाएं कि उनमें अभिरूचि का विरोध आ जाएं :

(ख) उनकी सार्वजनिक या सरकारी कामों और कर्तव्यों के उत्तम प्रयोग में कोई समझौता करना पड़ेः

(ग) अपने पद का प्रयोग निजी लाभ के लिए करना पड़े;

(घ) उनके पद या स्थिति की प्रतिष्ठा गिर जाएं;

(ड़) उनकी ईमानदारी पर प्रश्न उठे ।

(च) सरकारी सत्यनिष्ठा में विश्वास या आदर कम होने या खतरे में पड़े ।

यह धारा राष्ट्रीय सभा के महा गवर्नर, सदस्यों, बेलीज सलाहकार समिति के सदस्यों, लोक सेवा आयोग के सदस्यों, निर्वाचन और सीमाओं के सदस्यों, लोक अधिकारियों, सांविधिक निगमों और सरकारी एजेंसियों के अधिकारियों और ऐसे अधिकारियों, जो राष्ट्रीय सभा द्वारा अधिनियमित कानून द्वारा निर्धारित हो, पर लागू होगी ।

2.4 मंत्रियों के लिए नैतिक ढांचा

2.4.1 जैसा कि पूर्व के पैराग्राफों में कहा गया है, अनेक देशों ने मंत्रियों के लिए आचार/नैतिक संहिता निर्धारित कर रखी है । कनाडा में, 'मंत्रियों के लिए मार्गदर्शन (2006)' में मंत्रियों की भूमिका और जिम्मेदारियों से संबंधित मूल सिद्धातों का उल्लेख किया गया है । इसमें मंत्रीय उत्तरदायित्व के व्यक्तिगत और सामूहिक दोनों के केन्द्रीय सिद्धांत तथा मंत्रियों के प्रधान मंत्री और मंत्रिमंडल के साथ संबंध, उनके विभागों, और संसद शामिल हैं । इसमें मंत्रियों से अपेक्षित आचार के प्रतिमानक और प्रशासनिक, कार्य प्रणाली से संबंधित और संस्थागत मामलों [7] के समाधान की रूपरेखा दी गई है । युनाईटिड किंगडम में, मंत्रियों की संहिता मंत्रियों को यह मार्गदर्शन देती है कि वे किस प्रकार इन प्रतिमानकों को बनाए रखने के लिए कार्यवाई करें और अपने मामलों का प्रबंध करें । इसमें उन सिद्धांतों की सूची दी गई है जिसे पिछले उदाहरण के आधार पर विशेष परिस्थितियों में लागू किया जा सकता है। इसमें यह भी उल्लिखित किया गया है किः–

''संसद में अपनी कार्यवाईयों को उचित सिद्ध करने और संहिता को ध्यान में रखते हुए यह निर्णय लेने के लिए कि उन्हें किसी प्रकार काम और आचरण करना है, इसके लिए मंत्री व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी हैं । संहिता कोई कानून की पुस्तक नहीं है और यह इसे प्रभावी करने के लिए मंत्रिमंडल के सचिव या अन्य पदाधिकारियों की भूमिका या यह मंत्रियों की जांच करने के लिए भी नहीं है यद्यपि, वे इसमें शामिल मामलों पर मंत्रियों को निजी सलाह दे सकते हैं ।

मंत्री तब तक ही पद पर रह सकते हैं जब तक कि उन्हें प्रधान मंत्री का विश्वास प्राप्त है । वह किसी मंत्री से अपेक्षित व्यवहार के प्रतिमानकों और इन प्रतिमानकों के किसी अतिक्रमण के समुचित परिणामों का अन्तिम निर्णायक है यद्यपि वह उन सभी आरोपों पर अपनी टिप्पणी देने की अपेक्षा नहीं रखेगा [8] ।''

2.4.2 भारत सरकार ने एक ऐसी आचार संहिता को निर्धारित किया हुआ है जो संघ और राज्य सरकारों दोनों के ही मंत्रियों पर लागू होती है । इस आचार संहिता को यहां पर पुनः उद्धृत करना समीचीन होगा :–

1. *मंत्री के रूप में किसी व्यक्ति द्वारा पद संभालने से पहले, संविधान के प्रावधानों, लोक*

[6] धारा 121 (1), बेलीज का संविधान, 30–11–06 को http://www.belizelaw.org/e_library/constitution.html, से पुनः प्राप्त किया गया।
[7] स्रोत : जवाबदेह सरकार, मंत्रियों के लिए गाइड 2006; 24–11–06 को http://www.pm.gc.ca/grfx/docs/guide_e.pdf, से पुनः प्राप्त ।
[8] स्रोतःhttp://www.cabinetoffice.gov.uk/propriety_and_ethics/publications/pdf/Ministerial_code.pdf

प्रतिनिधित्व अधिनियम 1951 और ऐसे किसी अन्य कानून, जो फिलहाल लागू हो, के अतिरिक्त वह व्यक्ति, :–

क. यथास्थिति प्रधान मंत्री, या मुख्य मंत्री को अपने और अपने परिवार के सदस्यों की सम्पत्तियों और दायित्वों और व्यापार में रूचियों के ब्यौरों को प्रकट करेगा । प्रकट किए जाने वाले ब्यौरों में सभी अचल सम्पत्ति के विवरण और (i) शेयर और डिबेंचरों, (ii) नकदी और (iii) गहनों का अंदाज से कुल मूल्य शामिल होना चाहिए :

ख. मंत्री के रूप में उसकी नियुक्ति से पहले किसी चीज के स्वामित्व, किसी भी व्यवसाय को चलाने और उसके प्रबंधन में भाग लेने, जिसमें इससे पहले वह रूचि रखता था, से अपने संबंध तोड़ लेगा : और

ग किसी ऐसी व्यावसायिक कंपनी के संबंध में जो संबंधित सरकार या उस सरकार के अधीन किसी उपक्रम को माल और सेवाएं प्रदान करती हो, (व्यापार अथवा व्यवसाय के सामान्य व्यवहार और मानक और बाजार दरों को छोड़ कर) अथवा जिसका व्यवसाय मुख्यतः संबंधित सरकार से प्राप्त अथवा प्राप्त होने वाले लाइसेंसों, परमिटों, कोटों, पटटों आदि पर निर्भर करता हो, ऐसे कथित व्यवसाय में और उसके प्रबंधन से वह अपनी सभी रूचियों से संबंध तोड़ लेगा ।

बशर्ते कि वह (ख) के मामले में प्रबंध में अपनी रूचि को और (ग) के मामले में स्वामित्व और प्रबंध दोनों की अपनी रूचियों को अपनी पत्नी (या यथास्थिति पति) को छोड़कर अपने परिवार के किसी ऐसे व्यस्क सदस्य अथवा व्यस्क संबंधी को अंतरित कर सकता है, जो उसके मंत्री की नियुक्ति से पहले कथित व्यवसाय के संचालन अथवा प्रबंधन अथवा स्वामित्व से संबद्ध था । ऐसी सार्वजनिक सीमित कंपनियों में शेयर धारण किए रहने के मामले में रूचियों से अपना संबंध समाप्त करने का प्रश्न नहीं उठेगा, सिवाय इसके कि जहां यथास्थिति प्रधान मंत्री या मुख्य मंत्री यह समझे कि ऐसे शेयरों के धारण करने की प्रकृति या सीमा ऐसी है कि जिससे उसे अपने सरकारी काम के निष्पादन में अड़चन आने की संभावना हो ।

2. पद पर आसीन हो जाने और पद पर रहने तक, मंत्री :–

(क) यथास्थिति प्रधान मंत्री या मुख्य मंत्री को हर वर्ष 31 मार्च तक अपनी सम्पत्ति और दायित्वों के संबंध में घोषणा भेजेगा:

(ख) सरकार से किसी भी प्रकार की अचल सम्पत्ति को खरीदने या बेचने से अपने को अलग रखेगा, सिवाय इसके कि जहां ऐसी संपत्ति सरकार द्वारा अनिवार्य रूप से अपने सामान्य ढंग में अधिगृहित की जानी हो ।

(ग) किसी व्यवसाय को शुरू करने या उसमें भाग लेने से अपने को अलग रखेगा ।

(घ) *यह सुनिश्चित करेगा कि उसके परिवार के सदस्य किसी ऐसी व्यावसायिक कंपनी को शुरू नहीं करते या उसमें भाग नहीं लेते, जो उस सरकार को माल और सेवाओं की पूर्ति करने में लिप्त हो या उस सरकार पर लाइसेंस, परमिट, कोटों, पट्टों आदि को मंजूर करवाने के लिए निर्भर हो । (व्यापार अथवा व्यवसाय के सामान्य व्यवहार और मानक और बाजार दरों को छोड़कर) : और*

(ङ.) *यथास्थिति प्रधान मंत्री या मुख्य मंत्री को उस मामले में सूचित करे, जिसमें उसके परिवार का कोई सदस्य अन्य किसी व्यवसाय को स्थापित कर लेता है या उसके संचालन और प्रबंध में भाग लेना शुरू कर देता है ।*

3.1 *कोई भी मंत्रीः–*

(क) *व्यक्तिगत रूप से या अपने परिवार के किसी सदस्य के माध्यम से, किसी भी उद्देश्य के लिए, चाहे वह राजनीतिक हो, धर्मार्थ हो या अन्यथा हो, किसी भी चंदे को स्वीकार नहीं करेगा। यदि किसी सार्वजनिक अधिकरण द्वारा मान्यता प्राप्त संस्थान, पंजीकृत सोसाएटी अथवा धर्मार्थ निकाय के लिए अभीष्ट कोई पर्स या चैक प्रस्तुत किया जाता है तो उसे वह यथासंभव शीघ्र ही उस संगठन को सौंप देगा जिसके लिए यह अभीष्ट है ।*

(ख) *स्वयं को (।) सार्वजनिक प्राधिकरण द्वारा मान्यता प्राप्त किसी पंजीकृत सोसाएटी अथवा धर्मार्थ निकाय, अथवा संस्थान और (2) राजनीतिक दल से प्राप्त किसी लाभ को छोड़ कर किसी अन्य कोषों को जमा करने से संबद्ध नहीं रहेगा । तथापि, वह सुनिश्चित करेगा कि ऐसे चन्दों को, संबंधित दल की सोसाएटी या निकाय या संस्थान के विशिष्ट पदाधिकारियों को भेज दिया जाता है और न कि स्वयं उसी को । उपर्युक्त निधियों के वितरण के लिए परिचालन से संबद्ध रहने से मंत्री को पूर्व कथित में से कोई नहीं रोक पाएगा ।*

3.2 *केन्द्रीय मंत्रियों, मुख्य मंत्रियों और राज्य सरकारों/संघ शासित प्रदेशों के अन्य मंत्रियों सहित कोई भी मंत्री अपनी पत्नी/पति और उस पर आश्रित सदस्यों को विदेशी सरकार के अधीन, भारत में या विदेश में अथवा किसी विदेशी संगठन में (व्यापारिक कंपनियों सहित) प्रधान मंत्री के पूर्व अनुमोदन के बिना कोई रोजगार स्वीकृत करने की अनुमति नहीं देगा । जहां किसी मंत्री की पत्नी या कोई आश्रित व्यक्ति पहले से ही ऐसे रोजगार को कर रहा हो तो ऐसे मामले में प्रधान मंत्री को यह निर्णय लेने के लिए सूचित किया जाना चाहिए कि इस रोजगार को जारी रखा जाए या नहीं । सामान्य नियम के रूप में, विदेशी मिशन में रोजगार पर पूरी रोक होनी चाहिए ।*

4.1 *कोई भी मंत्री –*

(क) *अपने निकट के संबंधियों को छोड़कर किसी से भी मूल्यवान उपहारों को स्वीकार नहीं*

करेगा और वह या उसके परिवार के सदस्य किसी भी ऐसे व्यक्ति से उपहार बिल्कुल भी स्वीकार नहीं करेंगे जिनके साथ उसका सरकारी व्यवहार हो ।

(ख) अपने परिवार के किसी सदस्य को किसी प्रकार के ऐसे संविदा ऋण देने की अनुमति नहीं देगा जिससे उसके सरकारी कर्त्तव्यों के निष्पादन में अड़चन डलने या उस पर प्रभाव डलने की संभावना हो ।

4.2 कोई भी मंत्री विदेश जाने पर अथवा भारत में विदेशी गणमान्य व्यक्तियों से उपहार स्वीकृत कर सकता है । ऐसे उपहार दो श्रेणियों में आते हैं । पहली श्रेणी में, वे उपहार शामिल किए जाएंगे, जो प्रतीकात्मक प्रकृति के हों, जैसे सम्मानजनक तलवार, समारोह में पहने जाने वाले वस्त्र आदि जिन्हें प्राप्तकर्त्ता अपने पास रख सकता है । उपहारों की दूसरी श्रेणी में वे आते हैं, जो प्रतीकात्मक प्रकृति के न हों । यदि इसका मूल्य 5000/– रूपयों से कम हो तो मंत्री इसे अपने पास रख सकता है । तथापि, उपहारों के अनुमानित मूल्य के बारे में कोई संदेह हो तो मामले को मूल्यांकन के लिए तोशखाना के पास भेज देना चाहिए । यदि उपहार का मूल्य इसके मूल्यांकन किए जाने पर निर्धारित 5000/– रूपयों के भीतर आता है तो उपहार को मंत्री के पास वापस भेज दिया जाएगा । यदि यह मूल्य 5000/– रूपयों से अधिक आता है तो इसे तोशखाने से, प्राप्तकर्ता को तोशखाना द्वारा आंके गए मूल्य और 5000/– रूपयों के अंतर का भुगतान करके खरीदने का विकल्प होगा । गृह कार्य के केवल वही उपहार जो तोशखाना द्वारा रखे जाते हैं जैसे कि दरियां, चित्रकारी, फर्नीचर आदि जिनका मूल्य 5000/– रूपयों से अधिक हो, राष्ट्रपति भवन, प्रधान मंत्री निवास या राज भवन में राज्य की संपदा के रूप में रखे जाएंगे ।

(टिप्पणी :– उपहार का मूल्य मूल देश में इसके अनुमानित बाजार मूल्य को इंगित करता है।)

4.3 किसी संगठन द्वारा किसी मंत्री/किसी ऐसे व्यक्ति जो मंत्री की हैसियत/पद पर हो, को कोई पुरस्कार प्रदान किया जा रहा हो, तो निम्नलिखित कार्य–प्रणाली को अपनाया जाना चाहिएः–

(क) पुरस्कार देने वाले संगठन के प्रत्ययपत्र का अध्ययन कर लिया जाना चाहिए ।

(ख) यदि पुरस्कार देने वाले निकाय के प्रत्ययपत्र निर्दोष हों तो ऐसे पुरस्कार को स्वीकृत कर लेना चाहिए परंतु उसके नकदी वाले भाग को स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए ।

(ग) यदि पुरस्कार मंत्री के पद पर रहने से पहले उस व्यक्ति के काम से संबंधित हों तो ऐसे पुरस्कारों को स्वीकृत कर लिया जाना चाहिए परंतु ऐसे सभी मामलों में यथास्थिति प्रधान मंत्री या मुख्य मंत्री का विशिष्ट अनुमोदन ले लिया जाना चाहिए । मुख्य मंत्री और अन्य मंत्रियों को प्रधान मंत्री और केन्द्रीय गृह कार्य मंत्री से अनुमति लेनी पडेगीः और

(घ) ऐसे उदाहरणों में, जहां मंत्री को किसी संगठन से ऐसा पुरस्कार लिया जाना हो, जिसके संबंध किसी विदेशी एजेंसियों/संगठनों से हों तो ऐसे मंत्री/उस व्यक्ति को जो मंत्री की हैसियत/पद पर हो, भारत के प्रधान मंत्री से पूर्व अनुमति प्राप्त करनी होगी ।

4.4 मंत्री को भारत में विदेशी मिशनों अथवा विदेश में आयोजित समारोहों में शामिल होने से संबंधित और संयुक्त राष्ट्र संगठनों को छोड़ कर ऐसे विदेशी न्यास, संस्थान या संगठन जिनका भारत सदस्य हो, की सदस्यता को स्वीकृत करने के लिए, प्रधान मंत्री द्वारा समय–समय पर दिए गए अनुदेशों का पालन करना चाहिए ।

5. मंत्री –

(क) सरकारी दौरे पर जाते समय, जहां तक व्यवहार्य हो, स्वयं के आवास में अथवा सरकार, सरकारी उपक्रम, लोक निकायों द्वारा या संस्थानों द्वारा देखभाल कर रहे आवासों में रहना चाहिए (जैसे कि सर्किट हाउस, डाक बंगला आदि) या मान्यता प्राप्त होटलों में रहना चाहिए ; और

(ख) यथासंभव अपने सम्मान में दी गई भड़कीली और खर्चीली पार्टियों में जाने से बचना चाहिए ।

6. आचार संहिता का पालन सुनिश्चित करने वाला प्राधिकारी केन्द्रीय मंत्रियों के मामले में प्रधान मंत्री, मुख्य मंत्रियों के मामले में प्रधान मंत्री और गृह मंत्री तथा राज्य के मंत्रियों के मामले में संबंधित मुख्य मंत्री होगा, सिवाय इसके कि जहां अन्यथा उल्लिखित किया गया हो । उक्त प्राधिकारी, इस संहिता के किसी तथाकथित या संदेहात्मक अतिक्रमण का निर्धारण करने या निपटाने के लिए, प्रत्येक मामले के तथ्यों और हालातों के अनुसार ऐसी कार्य–प्रणाली को अपनाएगा, जिसे वह ठीक समझे ।

व्याख्या : इस संहिता में मंत्री के परिवार में उसकी पत्नी (या यथास्थिति पति) जो उससे कानूनी तौर पर पृथक न हुई हो, अव्यस्क बच्चे या अन्य व्यक्ति, जो रक्त संबंधी रिश्तेदार या विवाह से संबंध रखता हो और पूर्णतया मंत्री पर निर्भर है ।

2.4.3 आचार संहिता मंत्रियों द्वारा अच्छे आचारण को सुनिश्चित करने के लिए एक आरंभिक बिन्दु है । तथापि, यह अपने आप में बृहत् नहीं है और प्रतिनिषेधों की सूची की प्रकृति इसमें अधिक है । अतः यह आवश्यक है कि आचार संहिता के अलावा, एक नैतिक संहिता होनी चाहिए जो इस बात पर मार्गदर्शन दे कि किस प्रकार मंत्री अपने कर्तव्यों का निष्पादन करते हुए संवैधानिक और नैतिक संहिता के उच्चतम प्रतिमानकों को बनाए रखें । यह संहिता कानून का पालन करने, न्याय के संचालन को बनाए रखने और जन जीवन की सत्यनिष्ठा की रक्षा करने के लिए मंत्रियों के प्रधान कार्यों पर आधारित होगी । यह मंत्री–सिविल सेवकों के संबंधों के सिद्धांतों को भी निर्धारित करेगी । नैतिक संहिता जन जीवन के सात सिद्धांतों का भी चिन्तन करेगी, जैसे कि पैराग्राफ 2.2.5 में बतलाया गया है । आयोग ने दूसरे देशों की आचार संहिताओं की जांच की है और आयोग का विचार है कि मंत्रियों की आचार संहिता और नैतिक संहिता में निम्नलिखित को शामिल किया जाना चाहिए :–

क. मंत्रियों को उच्चतम नैतिक प्रतिमानकों को बनाए रखना चाहिए ;

ख. मंत्रियों को सामूहिक जिम्मेदारी के सिद्धांत को बनाए रखना चाहिए ;

ग. संसद में जवाबदेही मंत्रियों का कर्तव्य है और उन्हें अपने विभागों और एजेंसियों की नीतियों, निर्णयों और कार्यवाईयों के लिए जवाबदेह बनना होगा ;

घ. मंत्रियों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि उनकी सार्वजनिक कार्यों और उनकी निजी रूचियों के बीच कोई विरोध न उठे या ऐसा प्रतीत हो कि यह उठ सकता है ;

ड़ लोक सभा में मंत्रियों को अपनी भूमिकाओं को मंत्री और निर्वाचन क्षेत्र के रूप में अलग–अलग रखना चाहिए ;

च. मंत्रियों को चाहिए कि वे अपने दल के लिए या राजनीतिक प्रयोजनों के लिए सरकारी संसाधनों का प्रयोग न करें, उनके द्वारा लिए गए निर्णयों के लिए उन्हें स्वयं का उत्तरदायित्व स्वीकार करना चाहिए, न कि किसी की सलाह पर केवल दूसरों पर दोष मड़ना चाहिए ;

छ. मंत्रियों को चाहिए कि वे सिविल सेवा की राजनीतिक निष्पक्षता को बनाए रखें और सिविल सेवकों को ऐसा कोई काम करने के लिए न कहें, जिससे सिविल सेवकों के कर्तव्यों और जिम्मेदारियों के साथ विरोध उठे ;

ज. मंत्रियों को उन अपेक्षाओं का पालन करना चाहिए जिन्हें संसद के दोनों सदन समय समय पर निर्धारित करे ;

झ. मंत्रियों को यह मानना चाहिए कि सरकारी पद या सूचना का दुरूपयोग उस विश्वास का हनन है जो उनमें सार्वजनिक पदाधिकारियों के रूप में जताया गया है ;

ञ. मंत्रियों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि जनता के पैसे का उपयोग अत्यन्त मितव्ययिता और सावधानी से हो ;

ट. मंत्रियों को अपना काम इस प्रकार से करना चाहिए कि जिससे वे अच्छे शासन के अस्त्र के रूप में सेवा कर सकें और जनता की अधिकतम रूप से भलाई के लिए सेवाएं प्रदान कर सकें और सामाजिक–आर्थिक विकास को बढ़ावा दे सकें ;

ठ. मंत्रियों को चाहिए कि वे उद्देश्यपूर्ण, निष्पक्ष, सत्यनिष्ठा से, न्यायसंगत तरीके से, मेहनत से तथा उचित और न्यायपूर्ण तरीके से काम करें ।

2.4.4 वर्तमान आचार संहिता का पालन सुनिश्चित करने के प्राधिकारी, केन्द्रीय मंत्रियों के मामले में प्रधान मंत्री, मुख्य मंत्रियों के मामले में प्रधान मंत्री और गृह मंत्री और राज्य सरकार के मंत्रियों के मामले में संबंधित मुख्य मंत्री हैं । आयोग का विचार है कि आचार संहिता के अनुपालन पर निगरानी रखने के लिए प्रधान मंत्री और राज्यों के मुख्य मंत्रियों के कार्यालयों में समर्पित युनिटों का गठन किया जाना चाहिए । अतिक्रमणों का ब्यौरा दिए जाने वाली एक वार्षिक रिपोर्ट समुचित विधान मंडल को विचार के लिए प्रस्तुत की जानी चाहिए। इसके अतिरिक्त वर्तमान आचार संहिता जनता के मामलों से मेल नहीं खाती और इसके परिणामस्वरूप जनता के सदस्य शायद इस बात से अवगत नहीं है कि ऐसी संहिता भी विद्यमान है । आयोग यह सिफारिश करना चाहेगा कि मंत्रियों के लिए आचार संहिता को विस्तृत करके जनता की पहुँच में रखी जानी चाहिए

जैसाकि कुछ अन्य देशों [9] में भी ऐसा होता है । क्योंकि गठबंधन सरकार आजकल अधिक चलन में है, अतः यह विशेष रूप से सुनिश्चित करना उचित होगा कि केन्द्र और राज्यों दोनों के गठबंधन साझेदारों के रूप में मंत्री नैतिक और आचार संहिताओं का पालन करें और प्रधान मंत्री और मुख्य मंत्री का यह कर्तव्य है कि वे इन संहिताओं के अतिक्रमण को जनता के अधिकार क्षेत्र में रखें ।

2.4.5 सिफारिशें :

क. मंत्रियों के लिए वर्तमान आचार संहिता के अतिरिक्त एक नैतिक संहिता होनी चाहिए जिसमें ये दिशा–निर्देश होने चाहिए कि किस प्रकार मंत्री अपने कर्तव्यों के निष्पादन में संवैधानिक और नैतिक आचरणों के उच्चतम मानदंडों को बनाए रख सकते हैं ।

ख. प्रधान मंत्री और मुख्य मंत्रियों के कार्यालयों में नैतिक संहिता और आचार संहिता के अनुपालन के अनुवीक्षण के लिए समर्पित एककों का गठन किया जाना चाहिए । इस एकक को आचार संहिता के उल्लंघन से संबंधित जनता की शिकायतो को प्राप्त करने का भी अधिकार दिया जाना चाहिए ।

ग. प्रधान मंत्री अथवा मुख्य मंत्री को इस कर्त्तव्य द्वारा आबद्ध होना चाहिए कि मंत्रियों द्वारा नैतिक संहिता और आचार संहिता का अनुपालन सुनिश्चित किया जाए । ऐसा गठबंधन सरकारों के मामले में भी लागू होगा, जहां मंत्री विभिन्न दलों से हो सकते हैं ।

घ. इन संहिताओं के अनुपालन से संबंधित एक वार्षिक रिपोर्ट समुचित विधानमंडल को प्रस्तुत की जानी चाहिए । इस रिपोर्ट में अतिक्रमण के विशिष्ट मामलों, यदि कोई हों, और उन पर की गई कार्रवाई को शामिल किया जाना चाहिए ।

ङ नैतिक संहिता में, अन्य बातों के अलावा, मंत्री–सिविल सेवक संबंधों पर व्यापक सिद्धांतों को शामिल किया जाना चाहिए और आचार संहिता में पैरा 2.4.3 में दिखाए गए विवरणों का उल्लेख होना चाहिए ।

च. नैतिक संहिता, आचार संहिता और वार्षिक रिपोर्ट को जनता की पहुंच मे रखा जाना चाहिए ।

2.5 विधि–निर्माताओं के लिए नैतिक ढांचा

2.5.1 अन्य देशों में विधि–निर्माताओं के लिए नैतिक ढांचा

2.5.1.1 किसी आदर्श लोकतांत्रिक ढांचे के चार आधार–स्तंभों के बीच विधानमंडल का सबसे अधिक महत्वपूर्ण स्थान है । यह लोगों की इच्छा की अभिव्यक्ति है और कार्यपालिका इसके लिए जवाबदेह है । यह कार्यपालिका के लिए नैतिक मानकों की आवश्यकता से पहले विधि निर्माताओं के लिए नैतिक मानकों की आवश्यकता पर समान रूप से जोर देने की माँग करता है ।

[9] यू.के. मंत्रालीय संहिता http://www.cabinetoffice.gov.uk/propriety _and_ethics/publications/pdf/Ministerial_code.pdf पर उपलब्ध है ।

2.5.1.2 संयुक्त राष्ट्र का संविधान अपने अनुच्छेद । धारा 5 में अपने सदस्यों को अनुशासन में रखने के लिए कांग्रेस को व्यापक अधिकार प्रदान करता है । तथापि, वर्तमान कांग्रेसीय नैतिक समितियों और सदस्यों, अधिकारियों और कर्मचारियों के आचार पर नियंत्रण करने वाले औपचारिक नियम 1960 से पहले तक नहीं आए थे । पहले कांग्रेस द्वारा सदस्यों के विरूद्ध अनुशासनिक कार्यवाई तदर्थ आधार पर होती थी । 1964 में, सीनेट ने एस0रेस0 338, 88वीं कांग्रेस को अपना लिया जिसने मानकों और आचार पर सीनेट प्रवर समिति का गठन किया । छः–सदस्यीय ये द्विदलीय समिति परामर्शी कृत्यों के साथ ''अनुचित आचार के उन आरोपों की, जो सीनेट को प्रभावित कर सकते हैं, शिकायतों को प्राप्त करके उनकी जांच करने, कानून का अतिक्रमण करने और सीनेट के नियमों और विनियमों का अतिक्रमण करने'' की जांच करने के लिए प्राधिकृत थी । 1968 में सीनेट ने 1977 की संहिता में पर्याप्त पुनरीक्षण और संशोधन करने के बाद इसे प्रथम सरकारी संहिता के रूप में अपना लिया । इस समिति का नाम बदल कर नैतिकता पर प्रवर समिति[10] रखा गया । वित्तीय ब्यौरे, उपहार, यात्रा प्रतिपूर्ति, हित संघर्ष, रोजगार उपरांत प्रतिबंध, रोजगार व्यवसाय आदि पर सीनेट आचार संहिता नियंत्रण रखती है ।

2.5.1.3 यू.के.हाउस आफ कामेन्स ने वर्तमान आचार संहिता को अपने संकल्प दिनांक 19 जुलाई 1995 द्वारा अपने सदस्यों के लिए अपना लिया । इस आचार संहिता का उद्देश्य, सदस्यों द्वारा संसदीय और लोक कृत्यों का निष्पादन करने में उनसे अपेक्षित आचार के मानकों पर मार्गदर्शन प्रदान करके सदस्यों को सदन, उनके संघटकों और आम जनता के प्रति उनके दायित्वों का निष्पादन करने में सहायता करना है । यह भी उल्लेख है कि इस संहिता में निर्धारित किए गए दायित्व उनके पूरक हैं जो सदन की कार्य प्रणाली के नियमों और अन्य नियमों तथा अध्यक्ष[11] के निर्णयों की हैसियत से सभी सदस्यों पर लागू होते हैं ।

2.5.2 राज्य सभा की नैतिकता समिति :

2.5.2.1 राज्य सभा में प्रक्रिया तथा कार्य संचालन संबंधी नियमों के अध्याय XXIV में सदस्यों के आचार और नैतिक संहिता पर निगरानी रखने के लिए नैतिकता समिति के गठन की व्यवस्था है । इस नैतिकता समिति का पहला गठन 4 मार्च 1997 को सदन के सभापति द्वारा किया गया था । अपनी प्रथम रिपोर्ट में समिति ने अन्य बातों के अलावा लोक जीवन में राजनीति का अपराधीकरण और निर्वाचन संबंधी सुधारों के मूल्यों जैसे मामलों पर विचार किया है । इसने राज्य सभा[12] के सदस्यों के लिए आचार संहिता की रूपरेखा का सुझाव दिया है । अपनी दूसरी रिपोर्ट में समिति ने प्रथम रिपोर्ट में सुझाई गई आचार संहिता को प्रभावी करने के कार्य प्रणाली संबंधी पहलुओं पर जोर दिया है जिसमें 'सदस्यों की रूचियों का रजिस्टर रखना', सदस्यों द्वारा रूचियों की घोषणा, छानबीन और दंड देने की विधि शामिल हैं । तीसरी रिपोर्ट में समिति ने सदन में और उसके बाहर सदस्यों के व्यवहार से संबद्ध मुद्दों पर विचार किया है । चौथी रिपोर्ट में, समिति ने राज्य सभा में अनुशासन और शालीनता, संपत्तियों और दायित्वों के ब्यौरों की घोषणा, रूचियों का पंजीकरण, आचार संहिता और शास्तियों[13] की सिफारिश करने के लिए समिति की शक्तियों पर विचार किया है ।

2.5.2.2 राज्य सभा[14] के सदस्यों के लिए आचार संहिता का वर्तमान ढांचा निम्न प्रकार से है :–

[10] स्रोत : http://ethics.senate.gov/downloads/pdffiles/manual.pdf
[11] स्रोत : http://www.publications.parliament.uk/pa/cm/code02.htm से 30–11–06 को पुनः प्राप्त ।
[12] 15 दिसंबर 1999 को राज्य सभा द्वारा समिति की पहली और दूसरी दोनों रिपोर्टों पर चर्चा की गई थी और इन्हें एक साथ पारित कर लिया गया था ।
[13] नैतिकता पर समिति की छठी रिपोर्ट से उद्धरण लिया गया http://rajyasabha.nic.in/book2/reports/ethics/6threport.htm
[14] स्रोत : 8–12–06 को http://rajyasabha.nic.in/code.htm से पुनः प्राप्त किया गया ।

राज्य सभा के सदस्यों को उनमें व्यक्त किए गए विश्वास को बनाए रखने के लिए, अपना उत्तरदायित्व समझते हुए उन्हें लोगों की आम भलाई के लिए अपने शासनादेश का निष्पादन कर्मठता के साथ करना चाहिए । उन्हें संविधान, संसदीय संस्थानों और सबसे ऊपर आम जनता को उच्च सम्मान देना चाहिए । उन्हें संविधान की उद्देशिका में निर्धारित आदर्शों को वास्तविकता में बदलने के लिए निरंतर प्रयास करते रहना चाहिए । उन्हें अपना काम करते हुए निम्नलिखित सिद्धांतों का पालन करना चाहिए :–

(i) सदस्यों को ऐसा कोई काम नहीं करना चाहिए, जिससे संसद की अवमानना हो और उनके विश्वास पर प्रभाव पड़े

(ii) सदस्यों को लोगों की आम भलाई का विकास करने के लिए संसद सदस्य के रूप में अपनी हैसियत का सदुपयोग करना चाहिए ।

(iii) अपना काम करते हुए यदि सदस्यों को यह पता चलता है कि उनके व्यक्तिगत हित और उनके द्वारा प्राप्त किए हुए लोक विश्वास के बीच कोई संघर्ष है तो इस संघर्ष का इस प्रकार से समाधान कर लेना चाहिए कि उनके निजी हित, उनके सार्वजनिक पद के प्रति कर्तव्यों के बाद ही गौण समझें जाएं ।

(iv) सदस्यों को हमेशा यह देखना चाहिए कि उनकी वित्तीय रूचियां और उनके नजदीकी परिवार के हित जन हित में आड़े न आएं और यदि ये हित आड़े आ रहे हों तो उन्हें ऐसे संघर्ष का इस प्रकार से समाधान करना चाहिए कि जिससे जन हित को कोई खतरा न हो ।

(v) सदस्यों को सदन के पटल पर उनके द्वारा किए गए किसी मतदान के लिए या मतदान न किए जाने पर, बिल पेश किए जाने पर, किसी संकल्प को प्रस्तुत किए जाने पर, किसी प्रश्न के पूछे जाने पर अथवा प्रश्न पूछने से अपने को रोके जाने पर, सदन अथवा संसदीय समिति की बैठक में चल रहे विचार विमर्श में भाग लेने के लिए किसी प्रकार के शुल्क, पारिश्रमिक अथवा लाभ की अपेक्षा अथवा उसे स्वीकार नहीं करना चाहिए ।

(vi) सदस्यों को ऐसा कोई उपहार नहीं लेना चाहिए जिससे उनके सरकारी कर्त्तव्यों का सत्यनिष्ठा और निष्पक्ष रूप से निष्पादन करने में कोई हस्तक्षेप होता हो । तथापि, वे आकस्मिक उपहार या मूल्यहीन यादगार उपहार और रिवाजी आतिथ्य स्वीकार कर सकते हैं ।

(vii) सार्वजनिक पद पर रहते हुए सदस्यों को लोक संसाधनों का प्रयोग इस प्रकार करना चाहिए कि जिससे जनता की भलाई हो सके ।

(viii) संसद सदस्य होने के नाते या संसदीय समिति के सदस्य होने के नाते यदि इन सदस्यों के पास कोई गोपनीय सूचना हो तो ऐसी सूचना को उन्हें अपने निजी स्वार्थों के लिए प्रकट नहीं करना चाहिए ।

(ix) सदस्यों को किसी व्यक्ति या संस्थानों को ऐसा कोई प्रमाण–पत्र देने से बचना चाहिए, जिसकी उन्हें कोई व्यक्तिगत जानकारी न हो और जो तथ्यपरक न हो ।

(x) सदस्यों को ऐसे किसी मामले में तुरन्त समर्थन नहीं देना चाहिए जिसके बारे में उन्हें कोई जानकारी न हो या नाम मात्र जानकारी हो ।

(xi) सदस्यों को उन्हें उपलब्ध कराई जा रही सुविधाओं और सुख सुविधाओं का दुरूपयोग नहीं करना चाहिए ।

(xii) सदस्यों को किसी धर्म के प्रति असम्मान व्यक्त नहीं करना चाहिए और धर्मनिरपेक्ष मूल्यों को बढ़ावा देने के लिए काम करना चाहिए ।

(xiii) सदस्यों को संविधान के भाग 4क में सूचीबद्ध किए गए मूल कर्तव्यों को अपने मन में सर्वोपरि रखना चाहिए ।

(xiv) सदस्यों से लोक जीवन में नैतिकता, गरिमा और शालीनता के उच्च मानदंडों को बनाए रखना अपेक्षित है ।

2.5.3 लोक सभा की नैतिकता समिति

2.5.3.1 लोक सभा के सदस्यों की उस सदन[15] में आचार और नैतिकता पर निगरानी रखने के लिए एक नैतिकता समिति बनाई गई है । नैतिकता समिति (13वीं लोक सभा) ने अपनी प्रथम रिपोर्ट[16] में यह अवलोकन किया है कि सदस्यों के लिए नैतिक व्यवहार संबंधी मानदंडों को, लोक सभा में कार्य प्रणाली और कार्य संचालन नियमों में अध्यक्ष के निदेशों तथा विविध संसदीय समितियों द्वारा की गई सिफारिशों के आधार पर वर्षों से अपनाई जा रही प्रथाओं में पर्याप्त रूप से प्रावधान किया गया है । विद्यमान मानदंडों के अलावा, समिति ने यह भी सिफारिश की है कि सदस्यों को निम्नलिखित सामान्य नैतिक सिद्धांतों[17] का पालन करना चाहिएः–

i. सदस्यों को अपने पद का प्रयोग लोगों के सामान्य कल्याण को बढ़ावा देने के लिए करना चाहिए ।

ii. सदस्यों की व्यक्तिगत रूचि और लोक हित के बीच यदि कोई संघर्ष हो तो उसे उस संघर्ष का समाधान इस प्रकार करना चाहिए कि जिससे लोक पद के कर्त्तव्य के प्रति व्यक्तिगत रूचियां गौण समझीं जाएं ।

iii. निजी वित्तीय/पारिवारिक रूचियों के बीच संघर्ष को इस प्रकार से सुलझाना चाहिए कि जिससे लोक हित को खतरा न बन सके ।

iv. सार्वजनिक पद पर रहते हुए सदस्यों को लोक संसाधनों का प्रयोग इस प्रकार से करना चाहिए कि जिससे जनता की भलाई हो सके ।

v. सदस्यों को संविधान के भाग 4 में सूचीबद्ध किए गए मूल कर्तव्यों को अपने मन में सर्वोपरि रखना चाहिए ।

vi. सदस्यों को लोक जीवन में नैतिकता, गरिमा और शालीनता के उच्च मानदंडों को बनाए रखना चाहिए ।

[15] नैतिकता पर वर्तमान समिति का गठन अध्यक्ष द्वारा 28 अप्रैल 2005 को किया गया था।
[16] अध्यक्ष को 31 अगस्त 2001 को प्रस्तुत किया गया ।
[17] सदन द्वारा 16 मई 2002 को पारित।

2.5.3.2 उपलब्ध सूचना के अनुसार, आंध्र प्रदेश, उड़ीसा आदि जैसे कुछेक राज्य विधान मंडलों ने अपने विधायकों के लिए आचार संहिता को अपनाया है । 25 नवम्बर 2001 को नई दिल्ली में संसद और राज्यों और संघ शासित क्षेत्रों के विधानमंडलों में अनुशासन और शिष्टाचार पर पीठासीन अधिकारियों, मुख्य मंत्रियों, संसदीय कार्य मंत्रियों, दलों के नेताओं और सचेतकों के अखिल भारतीय सम्मेलन में सर्वसम्मति से एक संकल्प पारित किया गया था । इस संकल्प में विधि निर्माताओं के लिए आचार संहिता को अपनाना शामिल हैं । यह भी सिफारिश की गई है कि नैतिक समितियों का गठन ऐसे सभी विधानमंडलों में किया जाना चाहिए जहां आचार संहिता को प्रभावी करने के लिए इनका गठन पहले से न किया गया हो ।

2.5.4 रूचि को व्यक्त करना

2.5.4.1 लोक और निजी रूचियों के बीच संघर्ष से बचने के लिए एक उपाय स्वयं की रूचि को अभिव्यक्त करना है । केवल ऐसा करने से ही रूचि के संघर्ष का समाधान नहीं किया जा सकता बल्कि यह एक अच्छा व पहला कदम है क्योंकि यह ऐसे संघर्ष की संभावना को आत्मसात कर लेता है । विभिन्न देशों में विधि मंडलों ने इस मुद्दे पर विभिन्न दृष्टिकोण अपनाए हैं । कुछ देशों में, ऐसी अभिव्यक्ति के स्वतः परिणामस्वरूप किसी ऐसी निर्णय निर्माण प्रक्रिया में भाग लेने से परहेज किया जाता है जबकि अन्य देशों में निर्णय अध्यक्ष के ऊपर छोड़ दिया जाता है ।

2.5.4.2 अपनी रूचि को विभिन्न प्रकार से और लोक सेवा व्यवसाय के विभिन्न चरणों में व्यक्त किया जा सकता है । एक व्यवस्था में, निजी रूचि को तब अस्थायी रूप से व्यक्त किया जा सकता है जब ऐसा कोई संघर्ष प्रत्याशित हो । संयुक्त राष्ट्र कांग्रेस और आस्ट्रेलिया और कनाडा की संसदों के नियम किसी विधि निर्माता को मतदान देने की अनुमति नहीं देते यदि उनका आर्थिक रूप से सीधा स्वार्थ हो । दूसरी व्यवस्था रूचि के पूर्व पंजीयन की है । इसमें भी विविध व्यक्तिगत और आर्थिक स्वार्थ शामिल हैं जिनमें परिवार के नजदीकी सदस्य के स्वार्थ भी हैं ।

2.5.4.3 भारत में, संसद के दोनों सदनों में अपनी रूचि को विभिन्न प्रकार से व्यक्त किया जाता है । राज्य सभा के सभापति ने यह निर्णय दिया है कि यदि किसी सदस्य का सदन के समक्ष किसी मामले में व्यक्तिगत आर्थिक अथवा सीधा स्वार्थ है तो उस मामले में कार्यवाही में भाग लेते समय अपने स्वार्थ की प्रकृति को घोषित करना अपेक्षित है । (सभापति पद का निर्णय और पर्यवेक्षण 1952–2000 (469)पृ0 338)[18]

2.5.4.4 लोक सभा में प्रक्रिया तथा कार्य संचालन संबंधी नियमों में यह विहित है कि यदि सदन के किसी खंड में सदस्य के मत को निर्णय लिए जाने वाले किसी मामले पर व्यक्तिगत, आर्थिक या सीधे स्वार्थ के आधार पर चुनौती दी जाती है तो अध्यक्ष को ऐसे मुद्दे की जांच करके यह निर्णय लेना चाहिए कि सदस्य के मत को स्वीकृत किया जाना चाहिए या नहीं और उसका यह निर्णय अन्तिम होना चाहिए[19]। सदस्यों की पुस्तिका में यह उल्लिखित है कि सदन के द्वारा निर्णय लिए जाने वाले किसी मामले में व्यक्तिगत, आर्थिक या सीधा स्वार्थ रखने वाले सदस्य से उस मामले पर कार्यवाही में भाग लेते समय अपने स्वार्थ की घोषणा करना अपेक्षित है ।

[18] स्रोत : http://rajyasabha.nic.in/rulings/rulingmain.html
[19] लोक सभा में कार्य संचालन और कार्य पद्धति नियमों का नियम 371

2.5.5 रूचि का रजिस्टर

2.5.5.1 निजी रूचियों या हितों की अभिव्यक्ति के लिए विशिष्ट व्यवस्था रूचि रजिस्टर का बनाना है । विधि निर्माताओं से इस रजिस्टर में अपनी सभी रूचियों को समय समय पर दर्ज करने की अपेक्षा की जाती है । इस व्यवस्था को कारगर बनाने के लिए उन रूचियों के प्रकारों, जिनकी अभिव्यक्ति करना आवश्यक हो, उन्हें निर्धारित किया गया है । एक नजदीकी सारंगत व्यवस्था, सदस्यों द्वारा नियमित अंतराल पर संपत्तियों और दायित्वों के ब्यौरे देना है ।

2.5.5.2 नैतिक समिति (13वीं लोक सभा) ने अपनी पहली रिपोर्ट (31.8.2001) में यह सिफारिश की है कि लोक सभा के प्रत्येक सदस्य के लिए यह अनिवार्य कर दिया जाना चाहिए कि वह अपनी आय, संपत्तियों और दायित्वों के ब्यौरे दे । इसने यह भी सिफारिश की है कि सदस्यों की रूचियों का एक रजिस्टर लोक सभा सचिवालय में बनाया जाना चाहिए, जिसे गोपनीय समझा जाना चाहिए और उसमें समाविष्ट सूचना को किसी भी व्यक्ति को अध्यक्ष की अनुमति[20] दिए जाने पर ही उपलब्ध कराई जानी चाहिए । तथापि, अपनी दूसरी रिपोर्ट (20.11.2002) में समिति ने यह पाया है कि क्योंकि सदस्यों द्वारा वित्तीय सूचना देने और रूचियों की घोषणा करने, जैसाकि उन्होंने अपनी पहली रिपोर्ट में सिफारिश की है की आवश्यकता को एक अध्यादेश के प्रख्यापन[21] द्वारा पूरा कर लिया गया है, समिति द्वारा इस अवस्था में कोई आगे की कार्रवाई करने की आवश्यकता नहीं है ।

2.5.5.3 नियम 293 (राज्य सभा में प्रक्रिया तथा कार्य संचालन संबंधी नियम) में यह अनुबंध किया गया है कि नैतिक समिति द्वारा 'सदस्यों का रजिस्टर' बनाया जाना है । राज्य सभा की नैतिक समिति ने अपनी चौथी रिपोर्ट में सिफारिश की है कि प्रारंभ में सदस्यों की निम्नलिखित रूचियों को रजिस्टर[22] में दर्ज कर लेना चाहिएः–

i) पारिश्रमिक निदेशन का कार्य

ii) नियमित पारिश्रमिक गतिविधि

iii) नियंत्रण प्रकृति का अंशदान

iv) भुगतान के बदले परामर्श और

v) व्यावसायिक व्यस्तता

2.5.6 संपत्तियों और दायित्वों के ब्यौरे देना

2.5.6.1 लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 में लोक प्रतिनिधित्व (तीसरा संशोधन) अधिनियम 2002 द्वारा संशोधन किया गया है । एक नई धारा, 75 क शामिल की गई है जिसमें अनुबंध किया गया है कि संसद के किसी सदन या राज्य के विधान मंडल के लिए निर्वाचित प्रत्येक प्रत्याशी को अथवा अभिज्ञान की तारीख से 90 दिनों के भीतर अपनी संपत्तियों और दायित्वों के ब्यौरे को यथा–स्थिति राज्यों की परिषद अथवा विधान परिषद के अध्यक्ष के पास अथवा लोक सभा या विधान सभाओं के अध्यक्ष के पास जमा कराना होगा। तदनुसार, लोक सभा सदस्य (संपत्तियों और दायित्वों की घोषणा) नियम 2004 और राज्य सभा (संपत्तियों और दायित्वों की घोषणा) नियमों को निर्धारित कर दिया गया है ।

[20] सदन द्वारा 16 मई 2002 को पारित ।

[21] लोक प्रतिनिधित्व (संशोधन) अध्यादेश 2002. धारा 75 क को लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 में जोड़ दिया गया जिसमें प्रत्येक सदस्य को अपनी संपत्तियों और दायित्वों के ब्यौरे देने आवश्यक थे ।

[22] रिपोर्ट को समिति द्वारा सर्वसम्मति से 20 अप्रैल 2005 को पारित कर लिया गया ।

2.5.6.2 उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि संसद के दोनों सदनों में नैतिक संहिता का प्रावधान है और उन सदस्यों की अभिरूचि की सूचना और संपत्तियों और दायित्वों के ब्यौरों की घोषणा करने का प्रावधान किया गया है । लोक सभा और राज्य सभा दोनों की नैतिकता समितियों ने सदस्यों की नैतिक और आचार के संचालन पर निगरानी रखने के लिए अधिदेश दिया हुआ है ।

2.5.7 संसद और विधान मंडलों में नैतिक मानदंडों का प्रवर्तन

2.5.7.1 भारत में, संसद के दोनों सदनों ने विभिन्न अवसरों पर नैतिक सिद्धांतों के अतिक्रमण के प्रति कड़ाई का पालन किया है । 1951 में, अस्थायी संसद द्वारा श्री एच. जी. मुदगल के आचरण की जांच करने के लिए सदन की एक तदर्थ समिति नियुक्त की गई थी । इस समिति का यह निष्कर्ष था कि संसद में बम्बई बुलियन संघ की ओर से धन और अन्य लाभ के बदले में संसद में उनके कुछ हितों का पक्षपात करते हुए श्री मुदगल का आचरण सदन की मर्यादा के प्रति असम्मानजनक था और आचार के अपेक्षित मानदंडों से मेल नहीं खाता था । प्रधान मंत्री श्री नेहरू ने इस मुद्दे को संक्षेप में, निम्न प्रकार से सारगर्भित किया :–

> *''प्रश्न यह उठता है कि वर्तमान मामले में इसे किया जाना चाहिए या अन्यथा कुछ और । मेरा कहना है कि यह बिल्कुल स्पष्ट है कि यह मामला ऐसा भी नहीं है कि जिसे सीमांत मामला कहा जा सके जहां लोग इस बारे में दो विचार रखते हों जिसमें किसी को यह संदेह हो सकता है कि सुझाया गया उपाय अत्यधिक गंभीर है । यह मामला यदि मैं कहूं तो इतना बुरा है कि बहुत ही बुरा है । यदि हम ऐसे ही मामले को सीमांत मामला समझें अथवा ऐसा मामला जिसमें शायद कुछ कमी दिखाई गई हो तो मैं समझता हूं कि कई दृष्टियों से यह दुर्भाग्यवश होगा विशेषतः क्योंकि सदन के समक्ष यह अपनी तरह का पहला मामला होने के कारण यदि सदन ऐसे मामलों में अपनी इच्छा स्पष्ट, साफ और कड़े शब्दों में व्यक्त नहीं करती है तो जनता में यह संदेह उठ सकता है कि सदन ऐसे मामलों में बहुत निश्चित है या नहीं । अतः मैं यह निवेदन करता हूं कि यह हमारे लिए एक कर्तव्य बन गया है और हमें स्पष्ट, संक्षिप्त और दृढ़ होना चाहिए । तथ्य बहुत साफ और सूक्ष्म हैं, अतः हमारा निर्णय भी स्पष्ट और सारगर्भित और संक्षिप्त होना चाहिए और मैं निवदेन करता हूं कि सदन का निर्णय, इस रिपोर्ट के निष्कर्षों को स्वीकार करने के बाद यही होना चाहिए कि इस सदस्य को सदन से निष्कासित कर दिया जाना चाहिए ।''*[23]

2.5.7.2 इसी प्रकार के मुद्दे अर्ध शताब्दी के बाद फिर सामने आए । दिसंबर 2005 में दूरदर्शन के समाचार चैनल 'आज तक' (12 दिसंबर 2005) में सदन में प्रश्न पूछने या अन्य मामलों को उठाए जाने के लिए लोक सभा के दस सदस्यों द्वारा पैसा स्वीकार किए जाने से संबंधित अनुचित आचरण के आरोपों की जांच सदन की छानबीन समिति द्वारा की गई थी (कुछ सदस्यों के ऊपर अनुचित आचरण के आरोपों की जांच समिति)। यह समिति इस निष्कर्ष पर पहुंची कि उक्त सदस्यों का आचरण संसद सदस्य के लिए अभद्र था और अनैतिक भी था । समिति ने सदस्यों का सदन से निष्कासन करने की सिफारिश की और यह सुझाव सदन द्वारा स्वीकार कर लिया गया ।

2.5.7.3 जैसा कि पहले कहा गया है, 'राज्य सभा में प्रक्रिया तथा कार्य संचालन संबंधी नियमों में यह

[23] दिनांक 24.9.1951 को श्री एच.डी. मुद्गल के निष्कासन प्रस्ताव पर बोलते हुए भारत के प्रथम प्रधान मंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू द्वारा किए गए अवलोकन ।

अनुबंध है कि नैतिकता पर समिति, सदस्यों के आचार और नैतिक आचरण का निरीक्षण करेगी और सदस्यों द्वारा आचार संहिता के कथित उल्लंघन से संबंधित मामलों की जांच करेगी और सदस्यों के किसी अन्य नैतिक कदाचार के आरोपों से संबंधित मामलों की भी जांच करेगी । समिति, स्वप्रेरणा से भी मामलों को छानबीन के लिए उठा सकती है । यदि जांच के बाद, यह पाया जाता है कि सदस्य अनैतिक आचार में लिप्त हुआ है या अन्य कोई कदाचार हुआ है या सदस्य ने संहिता/नियमों का उल्लंघन किया है तो समिति समुचित शास्ति लगाने की सिफारिश कर सकती है । राज्य सभा के सभापति ने 'आज तक' चैनल में दिखाई गई सदन के एक सदस्य के लिप्त होने से संबंधित घटना को नैतिक समिति को भेज दिया । समिति इस निर्णय पर पहुंची कि सदस्य ने राज्य सभा के सदस्यों के लिए आचार संहिता के पैरा 5 का उल्लंघन किया था और इस प्रकार काम किया था कि जिससे सदन की मर्यादा को गंभीर रूप से क्षति पहुंची है और संसदीय लोकतंत्र के पूरे संस्थान को असम्मानित किया गया है । समिति ने सदस्य को सदन से निष्कासित करने की सिफारिश की और सदन ने सिफारिश को स्वीकार कर लिया ।

2.5.7.4 जहां एक ओर नैतिक मूल्यों और आचार संहिताओं के प्रतिपादन से लोक पदाधिकारियों पर नैतिक दबाव पड़ता है वहीं दूसरी ओर उन पर प्रभावी अनुवीक्षण और प्रवर्तन की आवश्यकता होती है । संसार के विधानमंडलों ने इस उद्देश्य के लिए विभिन्न माडलों को अपनाया है । कनाडा का हित संघर्ष और लोक पदाधिकारियों के लिए नियोजन उपरांत संहिता (2006), संहिता पर निरीक्षण और सलाह देने के लिए नैतिक आयुक्त का ही हवाला देते हैं। नैतिक आयुक्त कनाडा संसद अधिनियम की धारा 72.01 के अन्तर्गत नियुक्त किया गया अधिकारी होता है । यह आयुक्त सदस्यों की संहिता के अनुसरण में उसके द्वारा की गई छानबीन की रिपोर्ट देता है और हाउस आफ कामन्स को इनके सदस्यों से संबंधित गतिविधियों पर वार्षिक रिपोर्टें देता है। नोलन समिति की सिफारिशों के आधार पर, हाउस आफ कामन्स ने प्रतिमानकों के लिए संसदीय आयुक्त के पद की स्थापना की है । इस आयुक्त के प्रमुख उत्तरदायित्व हैं[24] :–

- *सदस्यों के हितों के रजिस्टर के प्रचालन का रखरखाव और अनुवीक्षण का निरीक्षण करना ।*

- *व्यक्तिगत सदस्यों और प्रवर समिति को प्रतिमानकों पर गोपनीय आधार पर सलाह देना, आचार संहिता के निर्वचन के बारे में विशेषाधिकारों और सदस्यों के आचार से संबंधित नियमों का मार्गदर्शन करना ।*

- *सदस्यों के आचार, औचित्य और नैतिकता के मामलों पर मार्गदर्शन देना और प्रशिक्षण प्रदान करना।*

- *आचार संहिता के प्रचालन और नियमों के मार्गदर्शन पर अनुवीक्षण करना और जहां तक समुचित हो, समिति को इसमें संभव संशोधनों का प्रस्ताव करना ।*

[24] स्रोत : http://www.parliament.uk/about_commons/pcfs.cfm, से 30–11–06 को पुनः प्राप्त किया गया ।

- *उन सदस्यों के बारे में शिकायतें प्राप्त करके उनकी जांच करना, जिन्होंने आचार संहिता और नियमों के मार्गदर्शन का उल्लंघन किया हो और समिति को अपने निष्कर्षों की रिपोर्ट देना ।*

- *इसके अतिरिक्त, आयुक्त कार्यालय, विविध रजिस्टरों और सूचियों के प्रचालन को बनाए रखने और अनुवीक्षण करने के लिए उत्तरदायी होता है और उनके बारे में सलाह देता है और शिकायतों को प्राप्त करके उनकी जांच करता है ।*

2.5.7.5 प्रतिमानकों के लिए संसदीय आयुक्त के पद के गठन से नैतिक प्रतिमानकों से संबंधित मामलों में बड़ी पारदर्शिता लाने में सदन को सहायता मिली है । इससे आचार संहिता से संबंधित मामलों में समय पर सलाह देने से सदस्यों को भी सहायता मिली है । आयोग का मत है कि संसद के दोनों सदनों को इसी प्रकार के कार्यालय के गठन पर विचार करना चाहिए । यह कार्यालय अध्यक्ष के अधीन कार्य करेगा । यह नैतिक समिति को अपने कृत्यों का निष्पादन करने, सदस्यों को यथा–आवश्यकता सलाह देने और रिकार्डों को रखने में भी सहायता कर सकता है ।

2.5.7.6 सिफारिशें :

क. संसद के प्रत्येक सदन द्वारा 'नैतिक आयुक्त' पद का गठन किया जाना चाहिए । यह पद अध्यक्ष/उपसभापति के अन्तर्गत कार्य करते हुए नैतिकता पर समिति के अपने कामों का निष्पादन करने में सहायता करेगा और सदस्यों को यथा–आवश्यकता सलाह देगा और आवश्यक अभिलेखों को रखेगा ।

ख. राज्यों के बारे में आयोग निम्नलिखित की सिफारिश करता है:–

i सभी राज्य विधान मंडलों को अपने सदस्यों के लिए नैतिक संहिता और आचार संहिता को अपना लेना चाहिए ।

ii विधायकों द्वारा नैतिकता आचार को सुनिश्चित करने के लिए अतिक्रमण के मामले में मंजूरियों की कार्यप्रणालियों की उत्तम परिभाषा बना कर नैतिकता समितियों का गठन किया जाना चाहिए ।

iii राज्यों के विधायकों द्वारा अभिरूचियों की घोषणा के साथ 'सदस्यों की अभिरूचि के रजिस्टर' को बनाया रखा जाना चाहिए ।

iv संबंधित सदनों के पटल पर वार्षिक रिपोर्टों को, विवरण देते हुए, जिनमें अतिक्रमण शामिल हों, रखा जाना चाहिए ।

v राज्य विधान मंडलों के प्रत्येक सदन द्वारा 'नैतिकता आयुक्त' के पद का गठन किया जाए । यह पद अध्यक्ष/सभापति के तहत उस आधार पर काम करेगा जैसा कि संसद के लिए सुझाया गया है ।

2.6 लाभ का पद

2.6.1 भारत के संविधान में यह निर्धारित किया गया है कि उन संसद और विधानमंडल के सदस्यों को संसद या विधानमंडल का सदस्य चुने जाने के लिए और सदस्य होने के लिए अयोग्य कर दिया जाएगा यदि वे सरकार के अधीन, ऐसे पद को छोड़कर, जिसको धारण करने वाले का अयोग्य न होना संसद ने विधि द्वारा घोषित किया है, कोई लाभ का पद धारण करता है । इसके पीछे मूल विचार पद के कृत्यों और विधायी कृत्यों के बीच हित संघर्ष को दूर करना है । सरकार के अधीन लाभ का पद धारण करने वाले लोगों को संसद या विधानमंडल का सदस्य बनने से विमुक्त करने का सिद्धांत यह है कि ऐसा व्यक्ति उस कार्यपालिका के कृत्यों का प्रयोग स्वतंत्र रूप से न कर सके जिसका वह अंश है । इस सिद्धांत को ब्रिटिश के संवैधानिक इतिहास में हुए विकास में से लिया गया है, जिसके चलते यह स्थापित किया गया कि क्राउन और इसके अधिकारी संसद में अपनी बात नहीं रख सकते । संविधान के निर्माताओं ने कार्यपालिका के प्रभाव और प्रचालन से विधायी पद को पृथक रख कर बिल्कुल उचित ही किया था ।

2.6.2 संवैधानिक सिद्धांतों में यह ध्यान रखा गया है कि निर्वाचित सदस्य सरकार के कृत्यों पर निगरानी रख सकें । कानून का निर्माण, बजट का अनुमोदन और सभी सरकारी कार्यवाइयों पर निगरानी रखना सदस्यों के कार्य क्षेत्र में है । सरकार की कार्यपालिका शाखा के कानून का कार्यान्वयन करना चाहिए, लोक धन का अनुमोदित उद्देश्यों के लिए सदुपयोग करना चाहिए और विधान के प्रति इसके कृत्यों के लिए उत्तरदायी रहना चाहिए । अतः यदि सदस्य कार्यपालिका के प्रति कृतज्ञ हों तो विधान कभी भी अपनी स्वतंत्रता को कायम नहीं रख सकता और वह मंत्रिपरिषद् और अधिकारियों के समूहों पर नियंत्रण खो देता है । इस परिप्रेक्ष्य से, सदस्यों के लिए पद के लाभ पर संवैधानिक रोक लगना आवश्यक और स्वागत योग्य दोनों ही हैं ।

2.6.3 हमने वैस्टमिन्सटर मॉडल को इसलिए स्वीकृत किया, क्योंकि ये उसके साथ मेल खाता है और ऐतिहासिक संबद्धता भी है । इस मॉडल में, कार्यपालिका (मंत्रिपरिषद्) संसद या विधानमंडल से ली जाती है । यद्यपि सिद्धांत रूप में, विधानमंडल सरकार पर जवाबदेही के लिए नजर रखता है, फिर भी वास्तव में प्रायः यह देखा गया है कि सरकार विधान पर तब तक नियंत्रण रखती है जब तक सदन या विधानमंडल में इसका बहुमत होता है । सत्ता के लिए विधायकों के बहुमत की संतुष्टि के लिए अधिकतर संघर्ष मंत्रिमंडल संरचना के साथ समझौता और संरक्षण की इस आवश्यकता के साथ संबद्ध होता है । यही कारण है कि मंत्रिपरिषद् का आकार पिछले दशकों से भारी भरकम होता आया है । अन्ततः 2003 में संविधान के 91वें संशोधन को अधिनियमित करके निचली सदन में मंत्रिपरिषद् के आकार को इसके 15 प्रतिशत तक ही सीमित कर दिया गया है । निगमों के अध्यक्ष, विविध मंत्रालयों के संसदीय सचिव के रूप में तथा लाभ के अन्य पद प्रायः विधायकों को पद, प्रतिष्ठा और विशेषाधिकार के लिए अपनी अभिलाषाओं को पूरा करने के लिए प्रायः घूसखोरी का काम करती है । निसंदेह, यह शक्तियों को अलग करने के सिद्धांत का दुरूपयोग हो । परन्तु जब तक यह दुरूपयोग लोकतंत्र के हमारे मॉडल को एकीकृत रखता है, तब तक लाभ के पद से संबंधित चर्चा को केवल तकनीकी और कानूनी मुद्दों तक सीमित रखना बहुत ही अपर्याप्त होगा ।

2.6.4 संवैधानिक दृष्टि से कोई भी व्यक्ति तब तक मंत्री नहीं बन सकता, जब तक वह संसद सदस्य/विधायक/विधान परिषद का सदस्य न हो । यदि किसी ऐसे व्यक्ति को, जो संसद सदस्य/विधायक/विधान परिषद् का सदस्य न हो, मंत्री बनाया जाता है तो उसे छः महीनों के भीतर संसद सदस्य/विधायक/विधान परिषद् का सदस्य बनना होगा । हमारी व्यवस्था में, इस परिप्रेक्ष्य में, कार्यपालिका और विधायिका दोनों में कोई अन्तर नहीं रह जाता । परन्तु, ब्रिटेन और जर्मनी जैसे देशों में, इस अवस्था में ऐसा नहीं होता, जिससे कुल मिलाकर भ्रष्टाचार और संरक्षण को बढ़ावा मिल सके । यही कारण है कि एक राजनीतिक संस्कृति को विकसित किया गया है, जिसमें सार्वजनिक पद सामाजिक कल्याण की उन्नति का एक साधन होता है, न कि निजी या पारिवारिक लाभ के लिए । जब कि हमारे देश में काफी समय से सार्वजनिक पद का प्रयोग अपनी सम्पत्ति में बढ़ोतरी करने के लिए किया जाता है । इसीलिए, कभी कभी सार्वजनिक पद बहुत बड़े भ्रष्टाचार के स्रोत और संरक्षण में वृद्धि करने के साधन बन जाते हैं ।

बाक्स 2.6 : संसद पर एडमंड बुर्के

230 वर्षों से अधिक पहले (1774 !) एडमंड बुर्के ने, ब्रिसेल्स में अपने निर्वाचकों को संबोधित करते हुए निम्न प्रकार से कहा था :

आपका प्रतिनिधि न केवल अपने काम से बल्कि अपने निर्णय से भी आपका ऋणी है और वह यदि आपकी सेवा करने के बजाय आपके मत का बलिदान कर देता है तो यह धोखा है ।

संसद् ऐसे विभिन्न और विरोधी हितों के कारण ही प्रतिनिधियों की कांग्रेस नहीं होती, जिनका पालन प्रत्येक प्रतिनिधि और पक्ष समर्थक को दूसरे प्रतिनिधियों और पक्ष समर्थकों के प्रति करना चाहिए, बल्कि संसद् किसी एक देश की एक समूचे हित की विचारवान विधान सभा भी होती है; जहां स्थानीय प्रयोजनों का नहीं, स्थानीय प्रतिपक्षों का नहीं बल्कि समूचे सामान्य कारण के फलस्वरूप सामान्य कल्याण का मार्गदर्शन किया जाना चाहिए । आप वास्तव में सदस्य को अवश्य चुनते हैं, परंतु जब आप उसे चुन लेते हैं, तब वह ब्रिसेल्स का सदस्य नहीं, बल्कि संसद् का सदस्य बन जाता है ।

2.6.5 इस प्रकार के झुकाव और दबाव में, जिसमें सरकार को अपना काम करना पड़े यह आवश्यक हो जाता है कि लाभ के पद की इस परिभाषा की पुनः समीक्षा की जाए। लाभ के पद से संबंधित संविधान के अनुच्छेद 102 और अनुच्छेद 191 की भावना का वर्षों से अतिक्रमण होता आ रहा है जबकि कागजों पर इसका पालन किया जाता है । परिणामस्वरूप, विधि निर्माता अनुच्छेद 102 और अनुच्छेद 191 के अंतर्गत अयोग्यता से छूट की सूची में वृद्धि करते रहे । उदाहरण के लिए, 1959 के अधिनियम 10 में अनुच्छेद 102 के तहत अयोग्यता से छूट दिए जाने वाले सैंकड़ों नामों का उल्लेख सूची में किया गया है । ऐसी सूची में किसी स्पष्ट युक्तिकरण का उल्लेख शायद समय समय पर कुछ पदधारियों की रक्षा करने के औचित्य के अलावा और कुछ प्रतीत नहीं होता । इसी प्रकार के कानून राज्य विधानमंडलों द्वारा अनुच्छेद 191 के तहत अधिनियमित किए गए हैं, जिसमें राज्य विधान मंडलों के लिए सैंकड़ों पदों को अयोग्यता से छूट दी गई है । हर बार, कार्यपालिका द्वारा एक विधायक की किसी पद पर नियुक्ति कर दी जाती है जिसे लाभ के पद पर वर्गीकृत किया जा सकता हो और उस पद को छूट वाली सूची में शामिल करते हुए कानून को अधिनियमित कर दिया जाता है ।

2.6.6 प्रायः अशोधित मानदंड अपना लिया जाता है चाहे उस पद के लिए कोई पारिश्रमिक हो या न हो । इस प्रक्रिया में, इस बात का बिना वास्तविक अन्तर करते हुए कि निर्णय लेने में कार्यपालिका के अधिकार का प्रयोग किया गया है अथवा सार्वजनिक निधियों के नियोजन में प्रत्यक्ष रूप से संलिप्तता है, इसे प्रायः नजरों से ओझल कर दिया जाता है । नियुक्ति और पद से हटाए जाने के बारे में उच्चतम न्यायालय द्वारा दिया गया स्पष्टीकरण भी सरकार की कार्यपालिका के हाथों में होता है, अतः वह दोनों जगह काम नहीं आ सकता क्योंकि कई नियुक्तियां सलाहकारी शक्यता की होती हैं ।

2.6.7 विद्यमान प्रतिमानक भी स्थानीय क्षेत्र विकास स्कीमों पर लागू नही होते, जिसके तहत विधायकों को लोक निर्माण कार्यों की मंजूरी देने और संसद सदस्य स्थानीय क्षेत्र विकास स्कीमों और विधायक स्थानीय क्षेत्र विकास स्कीमों के अंतर्गत मंजूर की गई निधियों के व्ययों को अधिकृत करने के लिए सशक्त किया जाता है । अनेक दलों के नेताओं और विधायको को उनकी मर्जी से विवेकी लोक निधियों की आवश्यकता होती है ताकि वे अपने निर्वाचन स्थलों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सार्वजनिक निर्माण को जल्दी से निष्पादित करवा सकें । तथापि, ऐसी स्कीमों की शक्तियों को पृथक करने वाली धारणा गंभीर रूप से अर्थविहीन हो जाती है, क्योंकि विधायक सीधे–सीधे कार्यपालिका का काम भी करने लग जाते हैं । इससे यह दलील भी दोषपूर्ण सिद्ध हो जाती है कि विधायक इन स्कीमों के अंतर्गत सार्वजनिक निधियों को प्रत्यक्ष रूप से संचालित नहीं करते, क्योंकि ये जिला मजिस्ट्रेट के नियंत्रण में होती हैं । वास्तव में, कोई भी मंत्री सार्वजनिक धन का निपटारा नहीं करता । जहां तक कि खजानों और वितरण अधिकारियों के अलावा, कोई कर्मचारी भी व्यक्तिगत रूप से रोकड़ का संचालन नहीं करता । विधानमंडल द्वारा बजट को अनुमोदित करने के बाद व्ययों पर दिन प्रतिदिन निर्णय लेने का काम एक कार्यपालिका का एक महत्वपूर्ण कृत्य है ।

2.6.8 विविध संवैधानिक विशेषज्ञों और विधि–वेत्ताओं ने उपर्युक्त स्कीमों को असंवैधानिक करार दिया है । लोक लेखा समिति के भूतपूर्व अध्यक्ष इरा सेजियन द्वारा लिखित ''संसद सदस्य स्थानीय क्षेत्र विकास स्कीमः संकल्पना, भ्रम और अन्तर्विरोध की रिपोर्ट में कहा गया है कि इस स्कीम (संसद सदस्य स्थानीय क्षेत्र विकास स्कीम) ने संघीय व्यवस्था में संसद सदस्यों की भूमिका को विकृत कर दिया है और उन निधियों को दूसरी ओर मोड़ दिया है जिन्हें वास्तव में, पंचायती राज संस्थानों जैसी एजेंसियों के पास जाना चाहिए था । स्थानीय सरकारों के अधिकारों के हनन के अलावा, इस स्कीम को लागू करने में सबसे बड़ी गंभीर आपत्ति हितों का संघर्ष है जो तब उत्पन्न होता है, जब विधायक कार्यपालिका की भूमिका अदा करने लग जाते हैं । इसी प्रकार के मुद्दे की 1959 में संसद में कांग्रेस पार्टी की एक समिति द्वारा जांच की गई थी जिसकी अध्यक्षता वी. के. कृष्ण मेनन द्वारा की गई थी, जिसने राज्य के उपक्रमों के लिए संसदीय निगरानी के प्रश्न पर विचार किया। उस समय सार्वजनिक उद्यमों की शासी निकायों पर संसद सदस्य के नामांकन का मामला सामने आया । वी.के. कृष्ण मेनन समिति ने निष्कर्ष दिया कि ऐसी नियुक्तियों[25] के विरूद्ध ''प्रतिफलों का अति सबल भार'' होना चाहिए ।

2.6.9 अतः यह आवश्यक जान पड़ता है कि लाभ के पद की सुस्पष्ट परिभाषा बनाई जाए ताकि शक्तियों को अधिक स्पष्ट रूप से पृथक किया जा सके । वे विधायक जो मंत्री नहीं होते, अपने व्यक्तिगत या व्यावसायिक पृष्ठभूमि से प्रायः महत्वपूर्ण विशेषज्ञता वाले होते हैं । इसके अलावा, उन्हें लोक सेवा के अनुभव से लोक नीति की अद्भुत् दृष्टि और विवेकशीलता मिलती है । ऐसी विशेषज्ञता और जानकारी कार्यपालिका को नीति निर्माण में मूल्यवान इन्पुट दे सकती है । अतः, विधायकों को केवल पूर्णतया सलाहकारी प्रकृति की समितियों और आयोगों के गठन में संबद्ध किया जाना चाहिए । केवल ऐसे पदों पर रह कर कुछ पारिश्रमिक और अन्य सुविधाएं प्राप्त कर लेने से ही वे कार्यपालिका के पद पर नहीं बन जाते । संविधान यह मान्यता देता है कि विशेषज्ञ और सलाहकारी निकायों में ऐसे पदों पर रहने से शक्तियों के पृथक्करण का अतिक्रमण नहीं होता और ऐसे गैर–कार्यपालिका के पद को अयोग्यता से छूट देना संसद और राज्यों के विधायकों पर छोड़ दिया जाता है । परन्तु सीधे निर्णय लेने वाली शक्तियों और क्षेत्र के कार्मिकों के दिन प्रतिदिन नियंत्रण सहित सांविधिक और गैर–सांविधिक कार्यकारी प्राधिकारों सहित नियुक्तियों में अथवा सार्वजनिक क्षेत्र

25 वी. रामाचंद्रन, इकनामिक एंड पोलिटीकल वीकली, जून 2005 द्वारा ''इरा सेजियन द्वारा लिखित'' संसद सदस्य स्थानीय क्षेत्र विकास स्कीम की समीक्षा : एक विकृत कथन : कल्पना, भ्रम और अन्तर्विरोध से उद्धृत ।

उपक्रमों के शासी निकायों के पद या निजी उद्यमों में सरकारी नामांकन स्पष्ट रूप से कार्यकारी उत्तरदायित्व वाले होते हैं और इनमें निर्णय लेने वाली शक्तियां संलिप्त रहती हैं । ऐसी नियुक्तियों में निसंदेह शक्तियों के पृथक्करण का अतिक्रमण होता है । विधायकों को सार्वजनिक निर्माण कार्यों की मंजूरी देने या अनुमोदन देने की विवेकपूर्ण शक्तियां प्रदान करना स्पष्ट रूप से एक कार्यकारी कृत्य का प्रयोग है, चाहे विधायकों को सरकार एक पदनामित पद दे या न दे । यह आवयक है कि लाभ के पद की परिभाषा बनाते समय कार्यकारी कृत्यों और कार्यकारी प्राधिकारों में सुस्पष्ट तौर से अन्तर किया जाए भले ही ऐसी भूमिका या ऐसे पदों में पारिश्रमिक और सुविधाएं मिलती हों ।

2.6.10 ऐसे हालातों में, कानून में निम्नलिखित संशोधन करना उचित होगा :–

- ऐसे सभी सलाहकारी निकायों के कार्यालयों को, जहां पर विधायक के अनुभव और जानकारियां सरकारी नीतियों में इन्पुट गिनी जा सकें, लाभ के पद नहीं समझे जाने चाहिए, भले ही ऐसे पद के साथ पारिश्रमिक और सुविधाएं मिलती हों ।

- उन सार्वजनिक उद्यमों और सांविधिक और गैर सांविधिक प्राधिकरणों के शासी निकायों के पदों सहित, जिनमें नीति निर्णय करना होता है या संस्थानों का प्रबंध करना होता हो या व्ययों को अधिकृत करना या उनका अनुमोदन करना होता हो, ऐसे सभी कार्यालयों को लाभ के पद वाले कार्यालय समझा जाना चाहिए और विधायकों को ऐसे पदों को धारण नहीं करना चाहिए (विधायकों की मर्जी से विवेकशील कोषों या विशिष्ट परियोजनाओं और स्कीमों का निर्धारण करने की शक्ति या लाभार्थियों का चुनाव या व्यय को अधिकृत करना कार्यकारी कृत्यों का निष्पादन समझा जाएगा और अनुच्छेद 102 और अनुच्छेद 191 के अंतर्गत अयोग्यता समझी जाएगी, भले ही नया पद अधिसूचित या धारित कर लिया गया हो या नहीं ।)

- यदि कोई सेवा–रत पदेन मंत्री योजना आयोग जैसे संगठनों का सदस्य या अध्यक्ष रहता है, जहां पर मंत्रिपरिषद् और किसी संगठन या प्राधिकरण या समिति के बीच नजदीकी समन्वय सरकार के दिन प्रतिदिन के कृत्य के लिए आवश्यक होता हो तो इसे लाभ का पद समझा जाएगा ।

2.6.11 उच्चतम न्यायालय का एक निर्णय है कि विधानमंडलों के सदस्य भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम[26] के अंतर्गत लोक सेवक हैं । आयोग का यह अनुभव है कि संसद सदस्यों और विधानमंडलों के सदस्यों को सूचना अधिकार अधिनियम के अंतर्गत 'लोक प्राधिकारी' घोषित कर दिया जाना चाहिए सिवाए इसके कि जब वे विधायी कृत्यों का निष्पादन कर रहे हों ।

2.6.12 सिफारिशें :

क. कानून में लाभ पद की परिभाषा बनाने के लिए निम्नलिखित सिद्धांतों के आधार पर संशोधन किया जाना चाहिए :–

[26] पी.वी.नरसिम्हा राव बनाम राज्य (सीबीआई/एसपीई) ए.आई.आर. 1998 एस.सी 2120

(i) सम्पूर्ण रूप से सलाहकारी निकायों के ऐसे सभी पदों को लाभ के पद नहीं समझा जाना चाहिए, जहां विधायक का अनुभव, दृष्टि और विशेषज्ञता सरकारी नीति के लिए इन्पुट का काम करे, चाहे ऐसे पद से संबद्ध पारिश्रमिक और सुविधाएं ही क्यों न दी गई हों ।

(ii) ऐसे सभी पदों, जिनमें सार्वजनिक निधियों पर कार्यपालक का निर्णय और नियंत्रण संलिप्त हों, जिसमें सार्वजनिक उपक्रमों के शासी निकायों और संवैधानिक तथा असंवैधानिक प्राधिकरणों में पदों पर रहना शामिल हो और जहां प्रत्यक्ष रूप से नीति का निर्णय लेने और प्रबंध संस्थानों या खर्चों का अधिकार और अनुमोदन शामिल हो, को लाभ के पद समझा जाना चाहिए और विधायक को किसी भी ऐसे पद पर बने रहना नहीं चाहिए ।

(iii) यदि मंत्री पद पर रहते हुए, कोई मंत्री किंचित् संगठनों जैसे कि योजना आयोग, जहां पर मंत्रिमंडल और संगठनों, प्राधिकरण या समिति के बीच नजदीकी समन्वय और एकीकरण सरकार के रोजमर्रा के कामों के लिए आवश्यक होता हो तो इसे लाभ का पद नहीं समझा जाना चाहिए ।

(विधायकों के अधिकार में विवेकाधीन निधियों का प्रयोग, विशिष्ट परियोजनाओं और स्कीमों के निर्धारण की शक्ति या लाभार्थियों का चयन करना या व्ययों को अधिकृत करना कार्यपालक कार्यों का निष्पादन करना माना जाएगा और अनुच्छेद 102 और 191 के तहत अयोग्यता को निमंत्रण होगा, चाहे नये पद को अधिसूचित करके उस पर रहा गया हो या नहीं)

ख. संसद सदस्य स्थानीय क्षेत्र विकास योजना और विधायक स्थानीय क्षेत्र विकास योजना जैसी स्कीमों को समाप्त कर दिया जाना चाहिए ।

ग. संसद सदस्यों और विधायकों को सूचना अधिकार अधिनियम के अन्तर्गत 'सार्वजनिक प्राधिकारियों' के रूप में घोषित किया जाना चाहिए सिवाय इसके कि जब वे विधायी कामों का निष्पादन कर रहे हों ।

2.7 सिविल सेवकों के लिए नैतिक संहिता

2.7.1 भ्रष्टाचार निवारण समिति ('संथानम समिति' – 1964) ने टिप्पणी दी थी कि :

''भारत जैसे देश के लिए, भौतिक संसाधनों का विकास करना और सभी वर्गों के लिए जीवन के स्तर को ऊपर उठाना, वास्तव में अनिवार्य है । इसके साथ–साथ लोक जीवन के बिगड़ते हुए स्तरों को भी सुधारना है । हमें यह सुनिश्चित करने के लिए अर्थोपाय ढूंढने होंगे कि हमारे युवाओं में आदर्शवाद और देशभक्ति की भावना उनकी एक आकांक्षा के रूप में विद्यमान रहे । हाल ही के वर्षों में जो नैतिक उत्साह की कमी रही है वह शायद एक अकेला ऐसा घटक है जो सत्यनिष्ठा और कुशलता की मजबूत परंपराओं के विकास में बाधा बना हुआ है ।''

2.7.2 उन मूल्यों को ग्रहण कर लेना जिससे स्वयं की अधीनता से ऊपर उठने, सामाजिक कल्याण और उन लोगों के लिए जिन्हें सुधरे हुए राज्य हस्तक्षेपों की आवश्यकता है, तदनुभूति की भावना उत्पन्न करना, ये ऐसे कौशल नहीं हैं जिन्हें लोक सेवा में आते ही आत्मसात् कर लिया जा सके । तथापि, यह स्वीकार कर लिया जाना चाहिए कि हमारी सिविल सेवा व्यवस्था में व्यवहारों और सफलताओं की परंपरा रही है जो वर्तमान और भविष्य के सिविल सेवकों द्वारा अमल करने के उदाहरण पेश करती है । यह भी स्वीकार कर लिया जाना चाहिए कि 'उचित आचार' के मानदंडों को बनाने और उन्हें विकसित करने के लिए विद्यमान रूपरेखा के कानूनों और नियमों का अंधाधुंध प्रवर्तन नहीं किया जा सकता । यह सब कुछ सही जगह पर संतुलन रखने का प्रश्न है । सिविल सेवाओं के अन्दर ऐसी औपचारिक प्रवर्तनीय संहिताएं विद्यमान होती हैं जिनमें अपेक्षित व्यवहार के प्रतिमानक निर्धारित किए हुए होते हैं जिनके साथ ऐसे प्रतिमानकों को पृथक रूप से नकारने पर विहित 'दंडों' का प्रावधान भी होता है । दूसरी ओर, औचित्य और स्वीकारने योग्य व्यवहार की ऐसी प्रारंभिक और अपूर्ण परंपराएं भी होती हैं जो बिना औपचारिक दंडों के होती हैं परंतु ऐसे व्यवहारों और परंपराओं को न अपनाए जाने पर सामाजिक बहिष्कार और कलंक को बल मिलता है ।

2.7.3 'प्रवर्तनीय प्रतिमानकों' का एक वर्तमान सैट 'आचार नियम' है, जो केन्द्रीय सिविल सेवाएं (आचार) नियम–1964 के प्ररूप में है और वे अखिल भारतीय सेवाओं के सदस्यों पर और विविध राज्य सरकारों के कर्मचारियों पर लागू नियम हैं । ऐसे नियमों में निर्धारित मानदंड ऐसे हैं जो नियमों से भी पुराने हैं । अतः विशिष्ट अधिनियमों को मूल नियमों और सिविल सेवा विनियमों के अंतर्गत अधिसूचनाओं द्वारा समय समय पर हटा दिया गया था। कुछ उदाहरण हैं, आदतन अंधाधुंध कर्ज लेने या देने का अननुमोदन (1869) विविध कार्यवाईयों पर प्रतिबंध–उपहार स्वीकार करना (1876), सम्पत्ति खरीदना और बेचना (1881) व्यापारिक विनियोग करना (1885), कंपनियां चलाना (1885) और अवकाश प्राप्ति के बाद व्यावसायिक रोजगार स्वीकार करना (1920) । ऐसे प्रतिबंधों को भंग किए जाने पर सेवा से हटाए जाने जैसी सख्त कार्यवाई की जाती थी । ऐसे भी प्रावधान थे, जैसे कि गैर कानूनी पारितोषण या रिश्वतखोरी – भारतीय दंड संहिता की धाराएं 161 से 165 – या 'लोक सेवक द्वारा आपराधिक विश्वासघात' – धारा 409 भारतीय दंड संहिता – जिसमें दंड का प्रावधान है । 1947 में, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधिनियमित होने के बाद अपराधों के एक नये सैट का भी गठन किया गया था ।

2.7.4 1930 में, 'क्या करें' और 'क्या न करें' का उल्लेख करते हुए अनुदशों का एक 'सार–संग्रह' जारी किया गया था और इसे सामूहिक रूप से 'आचार नियम' कहा गया । इस 'सार–संग्रह' को 1955 में पृथक नियमों के रूप में बदल दिया गया था । 'सन्थानम समिति' ने ऐसे नियमों को बड़ा आकार देने की सिफारिश की थी जिसे 1964 के संस्करण में ऐसा किया गया था । इन नियमों को बाद में व्यवहार के अतिरिक्त मानदंडों के रूप में शामिल करने के लिए अद्यतन किया गया था । कुछ नए नियम हैं, शिष्टाचार के पालन की आवश्यकता, दहेज मांगने और स्वीकार करने पर प्रतिबंध, महिला कर्मचारियों के यौन उत्पीड़न पर प्रतिबंध और 14 साल से नीचे की आयु वाले बच्चों को घरेलु सहायता के लिए नौकरी पर रखने पर प्रतिबंध । यह एक निरंतर चलती हुई प्रक्रिया है जो बदलती रहती है और प्रायः समाज की आशाओं में वृद्धि होती रहती है ।

2.7.5 आचार नियमों में प्रतिपादित व्यवहार संहिता 'सत्यनिष्ठा को बना कर रखते हुए और कर्तव्य के प्रति पूर्णतः समर्पित' जैसे कुछ सामान्य प्रतिमानकों को शामिल करके और 'सरकारी कर्मचारी के अशोभनीय आचार में लिप्त न रह कर' सरकारी कर्मचारियों के लिए अनापेक्षित समझी जाने वाली विशिष्ट गतिविधियों का सूचीकरण करने

की ओर सामान्यतः संचालित की गई है । भारत में सिविल सेवकों के लिए कोई निर्धारित नैतिक संहिता नहीं है यद्यपि ऐसी संहिताएं अन्य देशों में विद्यमान हैं । भारत में विविध आचार नियम हैं, जो सामान्य गतिविधियों के सैट पर प्रतिबंध लगाते हैं । ये आचार नियम एक उद्देश्य को पूरा तो अवश्य करते हैं परंतु नैतिक संहिता का निर्माण नहीं करते । काफी समय से यह चिन्ता व्यक्त की जा रही है कि स्वीकृत आचारों की सूची में और भी 'सामान्य मानदंडों' को जोड़ा जाना चाहिए । इस संदर्भ में हित संघर्ष एक महत्वूपर्ण क्षेत्र है जिनमें इन संहिताओं को पर्याप्त रूप से दक्ष कर लिया जाना चाहिए । हित संघर्ष को रोकने के लिए रक्षा उपाय करना आवश्यक है । एक ड्राफ्ट 'लोक सेवा बिल' जो अब कार्मिक, लोक शिकायत तथा पेंशन मंत्रालय के विचाराधीन है, में सिविल सेवकों से अनेक सामान्य अपेक्षाओं का निर्धारण करने के लिए प्रस्ताव किया गया है, जिन्हें ''मूल्यों'' के रूप में उल्लिखित किया गया है । बिल में रखे गए प्रमुख 'मूल्य' इस प्रकार हैं :–

- *संविधान की उद्देशिका में स्थापित विविध आदर्शों के प्रति निष्ठा।*
- *राजनीति से परे रह कर कृत्य करना।*
- *लोगों की उन्नति के लिए अच्छा शासन देना सिविल सेवा का प्राथमिक लक्ष्य।*
- *उद्देश्यपूर्ण और निष्पक्षता से काम करने का कर्त्तव्य।*
- *निर्णय निर्माण में जवाबदेही और पारदर्शिता।*
- *उच्चतम नैतिक प्रतिमानक बनाए रखना।*
- *राष्ट्र की संस्कृति, मानवीय और अन्य विभिन्नताओं से मेल खाते हुए, सिविल सेवकों के चयन में योग्यता को ही कसौटी मानना ।*
- *खर्चों में मितव्ययिता और अपव्यय को सुनिश्चित करना।*
- *स्वस्थ और अनुकूल कार्य के वातावरण प्रदान करना ।*
- *कृत्यों के निष्पादन में संचार, परामर्श और सहयोग अर्थात् प्रबंध में सभी स्तरों के कार्मिकों का भाग लेना ।*

2.7.6 ड्राफ्ट बिल में लोक सेवा संहिता और लोक सेवा प्रबंध संहिता का भी प्रस्ताव किया गया है जिसमें और अधिक विशिष्ट कर्त्तव्यों और उत्तरदायित्वों का निर्धारण किया गया है । संहिता का अतिक्रमण करना संस्थानों/संगठनों द्वारा वर्तमान मुख्य और लघु जुर्मानों के समान दंडों को आमंत्रण होगा । उपर्युक्त संहिता और मूल्यों के कार्यान्वयन का निरीक्षण करने और मूल्यों और संहिता के मामले में सलाह देने के लिए एक 'लोक सेवा प्राधिकरण' के गठन का भी प्रस्ताव रखा गया है । आयोग ने यह निर्णय लिया है वह सिविल सेवा सुधारों पर अपनी आगामी रिपोर्ट में प्रस्तावित ड्राफ्ट बिल की समुचित रूप से विस्तृत जांच करेगा ।

2.7.7 जिन विविध मुद्दों का ऊपर विवेचन किया गया है, वे केवल सिविल सेवाओं के लिए ही महत्वपूर्ण नहीं हैं । वे नौकरशाही के सभी स्तरों के लिए भी महत्वपूर्ण हैं और समान रूप से सभी स्थानीय निकायों और उनके कर्मचारियों के लिए भी । संविधान के 73वें और 74वें संशोधनों के बाद स्थानीय निकायों की अब राष्ट्र के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका हो गई है और इनके पास मुख्य कार्यकारिणी की शक्तियां हैं । यह आवश्यक है कि इन निकायों और उनके कर्मचारियों और अन्य किसी प्राधिकरण के लिए संगत संहिताओं की आवश्यकता को मान्यता दे दी जाएं ।

बाक्स 2.7 : नैतिक विकास

''..... हम जानते हैं कि जैसे–जैसे ज्ञान प्राप्त होता है, व्यक्ति आगे बढ़ता है, सदाचार का निर्माण होता है और गैर–प्रथकतावादी विचार जन्म लेते हैं । व्यक्ति इसे समझ पाता है या नहीं परंतु निःस्वार्थ होने के पीछे उस शक्ति द्वारा वह प्रेरित रहता है । यही सदाचार की नींव है । सभी नैतिकताओं का यह सारतत्व है जिसका प्रचार किसी भी भाषा में या किसी भी धर्म में या संसार के किसी भी पैगंबर द्वारा किया जा सकता है ।''

– स्वामी विवेकानन्द

2.7.8 1999 में आस्ट्रेलिया की सरकार ने आस्ट्रेलिया लोक सेवा अधिनियम बनाया, जो लोक सेवा मूल्यों के एक सैट का निर्धारण करता है । ये मूल्य केवल उद्देश्यों के प्रेरणा–कथन नहीं हैं बल्कि सभी कर्मचारियों से इन मूल्यों को अपनाने और संहिता का अनुपालन करने की अपेक्षा की जाती है । जहां तक कि वरिष्ठ अधिकारियों से इन नियमों को उन्नत करने की अपेक्षा भी की जाती है । यह एक रोचकपूर्ण बात है कि लोक सेवा आयुक्त उस परिसीमा का मूल्यांकन करने और संहिता के अनुपालन को सुनिश्चित करने के लिए अपेक्षित व्यवस्था तथा कार्य प्रणालियों की पर्याप्तता के लिए अधिकृत है, जिस तक एजेंसियां मूल्यों का पालन करती हैं । उसके पास सांविधिक शक्तियां और नीति के उत्तरदायित्व दोनों मौजूद हैं । इनमें सेवा की स्थिति पर संसद को वार्षिक रिपोर्ट शामिल है जिस पर सरकार की विविध एजेंसियों ने मूल्यों को अपना लिया ।

2.7.9 आयोग का यह मत है कि लोक सेवा मूल्यों का एक सेट होना चाहिए जो कानून द्वारा अनुबंध किया जाए । जैसाकि आस्ट्रेलिया के मामले में होता है, यह सुनिश्चित करने की व्यवस्था होनी चाहिए कि सिविल सेवक निरंतर इन मूल्यों के प्रति उत्साहजनक रहें । ड्राफ्ट लोक सेवा बिल 2006 में विहित मूल्य सही दिशा में एक कदम है । आयोग सिविल सेवा सुधारों पर अपनी रिपोर्ट में इस बिल की विस्तार से जांच करेगा ।

बाक्स 2.8 : सात सामाजिक पाप

महात्मा गांधी द्वारा 1925 में ''यंग इंडिया'' में बताए गए सात सामाजिक पाप

1. बिना सिद्धांतों के राजनीति
2. बिना काम के धन
3. बिना अंतःकरण के आराम
4. बिना चरित्र के ज्ञान
5. बिना नैतिकता के व्यापार
6. बिना मानवता के विज्ञान
7. बिना बलिदान के पूजा

2.7.10 यह देखा गया है कि सामान्य तौर पर आचार संहिताएं 'सेवा' के लिए निर्धारित होती हैं । इसके साथ यह अपेक्षित होगा कि संगठन भी आचार संहिताओं का निर्धारण करे । जिन संगठनों की जनता से बातचीत रहती है, उनके लिए यह विशेष रूप से उपयुक्त है ।

2.7.11 आयोग यह महसूस करता है कि सार्वजनिक क्षेत्र के निकायों के बोर्डों के लिए नामांकित सेवा–रत अधिकारियों का विद्यमान अनुप्रयोग इन निकायों में निर्णय लेने के लिए अपेक्षित विषयनिष्ठा और आवश्यक स्वतंत्रता के साथ समझौता कर सकता है । सरकार सार्वजनिक उद्यमों पर नियंत्रण करने वाली प्रधान शक्ति तथा स्वामी दोनों ही हैं । किसी ऐसे अधिकारी के लिए यह बहुत ही अवास्तविक और अविवेकपूर्ण होगा कि वह अधिकारी उस बोर्ड द्वारा लिए गए निर्णय के निष्कर्ष पर बैठा रहे, जिसका वह सदस्य है । सार्वजनिक क्षेत्र के निकायों के बोर्डों के लिए सेवा–रत अधिकारियों के न तो नामांकित किए जाने और न ही नामांकित किए जाने की अनुमति देने का यह एक मामला बन गया है, क्योंकि इसमें हितों का संघर्ष हो सकता है ।

2.7.12 सिफारिशें † :

क. 'लोक सेवा मूल्यों' जिन्हें सभी सार्वजनिक कर्मचारियों को ऊंचा उठाना चाहिए, को परिभाषित किया जाना चाहिए और सरकार और अर्ध–सरकारी संगठनों की सभी

† सिफारिशों के अधिक विस्तृत सैट को आयोग की सिविल सेवा सुधारों पर आगामी रिपोर्ट में दे दिया जाएगा ।

श्रेणियों पर लागू किया जाना चाहिए । इन मूल्यों का उल्लंघन किए जाने पर इसे कदाचार और दंड को निमंत्रण समझा जाना चाहिए ।

ख. अभिरूचियों के संघर्ष को अधिकारियों के लिए नैतिक संहिता और आचार संहिता में विस्तृत रूप से शामिल समझा जाना चाहिए । सेवारत अधिकारियों को भी सरकारी उपकमों के मंडलों में नामांकित नहीं किया जाना चाहिए । तथापि, यह गैर–लाभ के सरकारी संस्थानों और परामर्शी निकायों पर लागू नहीं होगा ।

2.8 विनियंत्रकों के लिए नैतिक संहिता

2.8.1 व्यावसायियों तथा अन्य व्यापारियों के लिए आचार संहिताएं होती हैं । वास्तव में, ऐसी संहिताएं अति प्राचीन समय से चलती आ रही हैं । उदाहरण के लिए, हम्मुराबी की संहिता में यह निर्धारित[27] है :–

- *यदि कोई गृह निर्माता किसी घर को बनाता है और इसका अच्छी तरह से निर्माण करता है तो घर का स्वामी उसे घर के प्रत्येक धरातल के लिए दो शैकल्स (इज्राइल की मुद्रा) देगा ।*
- *यदि कोई गृह निर्माता किसी के लिए घर बनाता है और उसका अच्छी तरह से निर्माण नहीं करता और उसके द्वारा निर्मित घर गिर जाता है और घर के स्वामी की मृत्यु हो जाती है तो उस गृह निर्माता को मौत की घाट उतार दिया जाएगा ।*

2.8.2 समाज के विभिन्न वर्गों के लिए आचार संहिता का निर्धारण और प्रवर्तन सामान्यतः आन्तरिक विनियामक व्यवस्थाओं से होता है । गिल्डस ऐसी ही एक व्यवस्था का अति प्राचीन रूप है । यह गिल्ड एक ही प्रकार के व्यापारियों या पेशे के लोगों का संघ होता था जो अपने परस्पर हितों की रक्षा करने और मानदंडों[28] को बनाए रखने के लिए गठित किया जाता था । प्रतिस्पर्द्धा औद्योगिकरण हो जाने के कारण इन गिल्डों का प्रचलन कमोपेश समाप्त हो गया है । तथापि, पिछली शताब्दी में बड़ी संख्या में व्यवसायों का आविर्भाव देखने को मिला है, विशेष रूप से वह जिसे आज सेवा क्षेत्र की संज्ञा दी जाती है । इन व्यावसायियों ने प्रारंभ में विभिन्न प्रकार के संघों में अपने को संगठित किया ताकि सामान्य उद्देश्यों को हासिल किया जा सके और साथ ही उनका प्रवर्तन करने के लिए व्यवहार और व्यवस्थाओं के स्वीकार्य प्रतिमानकों को तैयार किया जा सके । कुछ मामलों में ऐसी व्यवस्थाओं के लिए सांविधिक पृष्ठभूमि भी अपनाई गई है । भारतीय आयुर्विज्ञान परिषद् अधिनियम, 1956 (1956 का 102) में यह निर्धारित किया गया है कि परिषद् व्यावसायिक आचार और शिष्टाचार के मानकों और आयुर्विज्ञान व्यावसायियों के लिए नैतिक संहिता को विहित करे । आयुर्विज्ञान परिषद् ने तदनुसार व्यावसायिक आचार से संबंधित विनियमों 'पंजीकृत आयुर्विज्ञान व्यावसायियों के लिए शिष्टाचार और नैतिकता'[29] को बनाया है । अधिवक्ता अधिनियम, 1961 में भारतीय विधिज्ञ परिषद् के कृत्यों को रखा गया है, जिसमें अधिवक्ताओं के लिए व्यावसायिक आचार और

बाक्स 2.9 : किसी व्यवसाय की विश्वसनीयता

किसी भी व्यवसाय के संबंध में 'अनुशासनिक निकाय' सहित परिषद् (व्यावसायिक) की विश्वसनीयता – चाहे वह कानून हो, आयुर्विज्ञान हो, लेखा–प्रणाली हो या कोई अन्य व्यवसाय हो – इस पर निर्भर करती है कि वे गंभीर कदाचार में संलिप्त अपराध के उन मामलों का किस प्रकार निपटारा करते हैं, जो कथित व्यवसाय की विश्वसनीयता और प्रसिद्धि को ठेस पहुंचाने की प्रवृत्ति हो और ''कदाचार की गंभीरता के अनुरूप ही दंड होना चाहिए''

उच्चतम न्यायालय : शंभु राम यादव बनाम हनुम दास खत्री, दिनांक 26.07.2001 के मामले में ।

(http://judis.nic.in से पुनः प्राप्त)

27 स्रोत : http://www.wsu.edu/~dee/MESO/CODE.HTM, से 15–12–06 को पुनः प्राप्त किया गया ।
28 स्रोत : http://www.answers.com/topic/guild; से 10–12–06 को पुनः प्राप्त किया गया ।
29 11 मार्च 2002 को जारी किया गया ।

शिष्टाचार शामिल है । चार्टर्ड अकाउन्टेंट्स अधिनियम, 1949 में भारत में चार्टर्ड लेखा–प्रणाली व्यवसाय के अधिनियमन के लिए इन्स्टीट्यूट आफ चार्टर्ड अकाउन्टेंट्स आफ इंडिया के गठन के लिए अनुबंध किया गया है । चार्टर्ड अकाउन्टेंट्स अधिनियम, 1949 और इस अधिनियम की अनुसूचियों में व्यवसाय के सदस्यों के व्यवहार के स्वीकार्य प्ररूपों को भी रखा गया है । भारतीय प्रेस परिषद्, प्रेस परिषद् अधिनियम, 1978 के अंतर्गत काम करती है । यह एक सांविधिक, न्यायिक–कल्प निकाय है, जो प्रैस पर निगरानी रखने का काम करती है । यह प्रैस द्वारा या प्रैस के विरूद्ध क्रमशः नैतिकता के हनन और प्रेस की स्वतंत्रता के अतिक्रमण की शिकायतों का न्यायनिर्णय करती है । इस परिषद् के उद्देश्य और कृत्यों में समाचार–पत्रों, समाचार एजेंसियों और पत्रकारों के लिए आचार संहिता का उच्च व्यावसायिक मानदंडों के अनुसार निर्धारण करना शामिल है । भारतीय प्रेस परिषद् ने पत्रकारिता मानदंड संहिता को जारी किया है, जिसका अनुपालन करना मीडिया से अपेक्षित है । इंस्टीट्यूशन आफ इंजीनियर्स (रायल चार्टर, 1935 के अन्तर्गत निगमित 1935) ने 'निगमित सदस्यों के लिए नैतिक संहिता' को विहित किया हुआ है ।

2.8.3 आन्तरिक विनियंत्रकों को छोड़ कर, विनियंत्रकों का एक और वर्ग है, जिसे 'बाहरी विनियंत्रक' कहा जा सकता है । बाहरी विनियंत्रक का एक उदाहरण अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् है, जो एक सांविधिक निकाय है, जिसे सारे देश में तकनीकी शिक्षा प्रणाली के समुचित आयोजन और समन्वित विकास के लिए गठित किया गया है । पिछली सरकार के कृत्यों में प्रतिस्पर्द्धा के आगमन से 'बाहरी विनियंत्रकों' की संख्या अधिक देखने को मिली है । भारतीय दूरसंचार विनियामक प्राधिकरण और राज्य विद्युत् विनियामक प्राधिकरण इसके कुछ अन्य उदाहरण हैं ।

2.8.4 लगभग सभी व्यवसायों के लिए प्रचुर मात्रा में आचार संहिताओं के विद्यमान होने के बावजूद, प्रायः यह ध्यान दिलाया जाता है कि नैतिकता के मानदंडों का अनुपालन सामान्यतः असंतोशजनक रहा है । व्यवसायों में नैतिक मूल्यों की गिरावट ने देश के शासन तंत्र को विपरीत रूप से प्रभावित किया है और सार्वजनिक जीवन में भ्रष्टाचार के बढ़ने का यह एक महत्वपूर्ण कारण है । बाहरी विनियंत्रकों की भूमिका भी इससे बढ़ जाएगी जब सरकारी कृत्यों को शुरू कर दिया जाएगा । ऐसे मामलों में विनियंत्रकों को स्वयं के लिए और इसके साथ–साथ सेवा प्रदान करने वालों के लिए नैतिकता के मानदंडों को विहित करना आवश्यक हो जाएगा । इससे भी अधिक महत्व की बात उद्देश्यपूर्ण, पारदर्शी और निष्पक्ष निर्णय लेने की प्रक्रियाओं और प्रवर्तन व्यवस्थाओं को तैयार करना है । आयोग एक पृथक रिपोर्ट में व्यवसायों, नियामक निकायों और उनकी नैतिकता से संबंधित सभी मुद्दों की जांच करेगा । तथापि, आयोग महसूस करता है कि सभी प्रमुख व्यवसायों के लिए नैतिक संहिता और एक बृहत् और प्रवर्तनीय आचार संहिता होनी चाहिए ।

2.8.5 सिफारिश :

क. एक बृहत् और लागू करने योग्य आचार संहिता संवैधानिक पृष्ठभूमि वाले सभी संव्यवसायों के लिए निर्धारित की जानी चाहिए ।

2.9 न्यायपालिका के लिए नैतिक ढांचा

2.9.1 आयोग के विचारार्थ विषयों में यह कहा गया है :

''यह आयोग रक्षा, रेलवे, विदेश मामले, सुरक्षा तथा आसूचना प्रशासनों की विस्तृत जांच के साथ–साथ केन्द्र–राज्य संबंधों, न्यायिक सुधारों आदि विषयों, जिनकी पहले से ही अन्य निकायों द्वारा जांच की जा रही है, को अपने दायरे से बाहर रख सकता है । तथापि, आयोग सरकार के अथवा इसकी किसी सेवा एजेंसी के तंत्र की पुनर्संरचना की अनुशंसा करते हुए इन क्षेत्रों की समस्याओं को ध्यान में रखने के लिये स्वतंत्र होगा।''

अतः यद्यपि न्यायिक सुधारों की विस्तृत जांच प्रशासनिक सुधार आयोग के दायरे में बिल्कुल नहीं है, फिर भी यह आवश्यक है कि न्यायपालिका से संबंधित सुधारों के कुछ महत्वपूर्ण घटकों का उल्लेख किया जाए क्योंकि नैतिक शासन को सुनिश्चित करने में न्यायपालिका की महत्वपूर्ण भूमिका होती है ।

2.9.2 न्यायपालिका की स्वतंत्रता न्यायिक नैतिकता के साथ विकट रूप से जुड़ी हुई है । जनता का विश्वास ले कर चलने वाली स्वतंत्र न्यायपालिका विधान के नियम की एक मूल आवश्यकता है । यदि किसी न्यायाधीश द्वारा ऐसा आचरण किया जाता है जिससे सत्यनिष्ठा और गरिमा का हनन दिखाई देता हो तो इससे नागरिकों द्वारा न्यायपालिका पर किए हुए विश्वास को धक्का पहुंचेगा । अतः न्यायाधीश का आचरण हमेशा दोषरहित होना चाहिए ।

2.9.3 अमरीका में, फेडरल के न्यायाधीश अमरीकी न्यायाधीशों के लिए आचार संहिता को अपनाते हैं, जो अमरीका की न्यायिक कांग्रेस द्वारा अपनाए जाने वाले नैतिक सिद्धांतों और मार्ग–दर्शी सिद्धांतों का एक सेट है । यह आचार संहिता न्यायाधीशों के लिए न्यायिक सत्यनिष्ठा और स्वतंत्रता, न्यायिक तत्परता और निष्पक्षता, अनुज्ञेय अतिरिक्त न्यायिक गतिविधियां और अनौचित्य से बचाव और यहां तक कि उसका लोगों के सामने आने[30] के मुद्दों पर मार्गदर्शन प्रदान करती है । कनाडा में, फेडरल के न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिए कोई लिखित आचार संहिता नहीं है, परन्तु पिछले कई वर्षों से, कनाडा न्यायिक परिषद् द्वारा प्रकाशित विविध कागजातों में उन नैतिक मानदंडों का वर्णन मिल जाता है, जिनकी न्यायाधीशों को इच्छा रहती है । कनाडा न्यायिक परिषद् का गठन 1971 में न्यायिक शासन के क्षेत्र में व्यापक विधायी अधिदेश के साथ किया गया था । इस परिषद् का मुख्य उद्देश्य कार्यकुशलता और एकाग्रता विकसित करना और कनाडा के सभी उच्च न्यायालयों में न्यायिक सेवा की गुणवत्ता का सुधार करना है ।

2.9.4 भारत के उच्चतम न्यायालय ने दिनांक 7 मई 1997 को हुई अपनी पूर्ण न्यायालय बैठक में **''न्यायिक जीवन के मूल्यों के पुनर्कथन''** नामक एक चार्टर को पारित कर दिया जिसे सामान्यतः न्यायाधीशों के लिए आचार संहिता के नाम से जाना जाता है । यह निम्न प्रकार[31] से है :–

क. केवल न्याय ही नहीं किया जाना चाहिए बल्कि यह भी देखा जाना चाहिए कि न्याय कर दिया गया है । उच्चतर न्यायपालिका के सदस्यों के आचार और व्यवहार से न्यायपालिका की निष्पक्षता में लोगों का विश्वास सुदृढ़ होना चाहिए । तदनुसार, उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय के किसी न्यायाधीश का ऐसा कोई कृत्य, चाहे वह कार्यालय में हो या व्यक्तिगत रूप से हो, जिससे इस अवगम की विश्वसनीयता को ठेस पहुंचे तो उससे बचना होगा ।

[30] स्रोत : http://www.uscourts.gov/understand03/content_5_0.html, से 10–12–2006 को पुनः प्राप्त किया गया ।

[31] स्रोत : न्यायिक स्वतंत्रता राजकोषीय स्वायत्तता और जवाबदेही ; न्यायमूर्ति एस. बी. सिन्हा; न्यायाधीश, उच्चतम न्यायालय, भारत; http://jrn21.supremecourt.gov.ph/files/documents paper%20 %&%20 Jutice%20S.B.%20 Sinha%20_India_.pdf

ख. किसी भी न्यायाधीश को क्लब, सोसायटी या अन्य किसी संघ के किसी पद पर चुनाव नहीं लड़ना चाहिए, इसके अलावा, उसे कोई निर्वाचन पद को धारण नहीं करना चाहिए, सिवाय उस सोसाएटी या संघ के जिसका संबंध कानून से हो ।

ग. विधिज्ञ संघ के व्यक्तिगत सदस्यों के साथ नजदीकी संबंध, विशेष रूप से, जो उसी न्यायालय में अपना काम कर रहे हों, से दूर रहना चाहिए ।

घ. न्यायाधीश अपने नजदीकी परिवार के किसी भी सदस्य को, जैसे कि पति/पत्नी, पुत्र, पुत्री, दामाद या बहू या अन्य कोई नजदीकी रिश्तेदार, जो विधिज्ञ संघ का एक सदस्य हो, अपने न्यायालय में उपस्थित होने देने और उस न्यायाधीश द्वारा किए जाने वाले किसी काम के साथ किसी प्रकार से भी संबंधित होने की आज्ञा नहीं देगा ।

ड़ उसके परिवार के किसी भी सदस्य को, जो विधिज्ञ संघ का सदस्य हो, न्यायाधीश के वास्तविक आवास में रहने देने या उसके व्यावसायिक काम के लिए अन्य सुविधाएं दिए जाने की अनुमति नहीं दी जाएगी।

च. न्यायाधीश को अपनी मर्यादा के अनुरूप अपनी पद्धति में अंतर का दर्जा रखना होगा ।

छ. न्यायाधीश ऐसे किसी मामले को नहीं सुनेगा और न ही अपना निर्णय देगा जिसमें उसके परिवार का कोई सदस्य, नजदीकी संबंधी या मित्र उस मामले से संबंधित हो ।

ज. न्यायाधीश किसी सार्वजनिक वाद–विवाद बहस में भाग नहीं लेगा या राजनीतिक मामलों अथवा उन मामलों में जो निलंबित हों और जिनका न्यायिक निर्णय आने की संभावना हो पर जनता के समक्ष अपने विचार व्यक्त नहीं करेगा ।

झ. एक न्यायाधीश से यह अपेक्षित है कि उसका निर्णय स्वयं बोलने की क्षमता रखता हो । वह मीडिया के समक्ष कोई साक्षात्कार नहीं देगा ।

ञ. न्यायाधीश अपने परिवार, नजदीकी संबंधी और मित्रों को छोड़कर किसी से उपहार या आतिथ्य सत्कार को स्वीकार नहीं करेगा ।

ट. न्यायाधीश ऐसी किसी कंपनी से संबंधित मामले की सुनवाई नहीं करेगा और निर्णय नहीं लेगा, जिसमें उसके शेयर लगे हों जब तक कि उसने उसमें अपने हित को प्रकट न कर दिया हो और उस मामले की सुनवाई और निर्णय देने के लिए 'कोई आपत्ति नहीं' न ले ली हो ।

ठ. न्यायाधीश शेयरों, स्टॉकों और ऐसी ही अन्य चीजों में सट्टा नहीं लगाएगा ।

ड. न्यायाधीश स्वयं को या किसी अन्य व्यक्ति के साथ मिलकर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कोई व्यापार या व्यवसाय में लिप्त नहीं होगा । (किसी श्शौक के रूप में विधि के शोध–प्रबंध के प्रकाशन या अन्य किसी गतिविधि को व्यापार या व्यवसाय नहीं समझा जाएगा ।)

ढ. न्यायाधीश किसी भी प्रयोजन के लिए किसी भी प्रकार के कोष के लिए न तो अंशदान मांगेगा, न उसे स्वीकार करेगा या अन्यथा स्वयं को सक्रिय रूप से उससे संबंधित नहीं करेगा ।

ण. *न्यायाधीश अपने कार्यालय संबद्ध किसी परिलब्धि या विशेषाधिकार के रूप में किसी वित्तीय लाभ को प्राप्त नहीं करेगा जब तक कि यह स्पष्ट रूप से उपलब्ध न हो। इस बारे में किसी भी संदेह का समाधान करवा कर मुख्य न्यायाधीश के माध्यम से स्पष्ट कर दिया जाना चाहिए।*

बाक्स 2.10 : न्यायपालिका की स्वतंत्रता

''न्यायपालिका का राजा अथवा कार्यपालक के हस्तक्षेप से स्वतंत्र होना एक अच्छी बात है परंतु राष्ट्र के हित की ओर से स्वतंत्र होना कम से कम गणतंत्र सरकार में एक बहुत ही अशिष्ट बात है ।''

– थामस जेफरसन

त. *प्रत्येक न्यायाधीश को इस बात से सर्वदा सावधान रहना चाहिए कि जनता उस पर टकटकी बांधे देख रही है और उसके द्वारा ऐसा कोई कृताकृत नहीं होना चाहिए जिससे उसके द्वारा धारित उच्च पद तथा लोक प्रतिष्ठा जिसमें वह पद धारित किया हुआ है दोनों अशोभनीय बनें।*

ये केवल ''न्यायिक जीवन के मूल्यों के पुनर्कथन'' हैं और अपने आप में परिपूर्ण नहीं है परंतु दृष्टांत स्वरूप हैं, जो किसी न्यायाधीश से अपेक्षित हैं ।

2.9.5 निम्नलिखित दो संकल्पों को भी भारत के उच्चतम न्यायालय की उपर्युक्त संपूर्ण न्यायालय बैठक में पारित किया गया थाः–

''यह संकल्प लिया गया कि भारत के माननीय मुख्य न्यायाधीश द्वारा उन न्यायाधीशों के विरूद्ध समुचित उपचारी कार्रवाई करने के लिए एक इन–हाउस प्रणाली को तैयार किया जाएगा, जो अपने कृताकृत द्वारा न्यायिक जीवन के सर्वसम्मति से स्वीकृत मूल्यों का पालन नहीं करते, जिनमें ''न्यायिक जीवन के मूल्यों के पुनर्कथन'' में उल्लिखित मूल्य भी शामिल हैं ।''

''यह भी संकल्प लिया गया कि प्रत्येक न्यायाधीश अपना पद संभालने के उचित समय के भीतर और पीठासीन न्यायाधीशों के मामले में इस सकंल्प के पारित होने के युक्तियुक्त समय के भीतर और उसके पश्चात् जब कभी बड़ी मात्रा में अधिग्रहण किया जाता है तो उसे युक्तियुक्त समय के भीतर, अपनी जमीन जायदाद या निवेश के रूप में सभी संपत्तियों (उसके अपने नाम में या उसकी पत्नी / पति के नाम में अथवा उस पर आश्रित किसी व्यक्ति के नाम में) की घोषणा करेगा । इस प्रकार की गई घोषणा न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश को दी जाएगी । मुख्य न्यायाधीश रिकार्ड के उद्देश्य से इसी प्रकार की घोषणा करेगा । यथास्थिति न्यायाधीशों या मुख्य न्यायाधीश द्वारा की गई घोषणा को गोपनीय रखा जाएगा ।''

2.9.6 न्यायिक जीवन के पुनर्कथन मूल्य बृहत् रूप है पर ये परिपूर्ण नैतिक संहिता नहीं है । जैसाकि पहले कहा जा चुका है, आचार संहिता के निर्धारण मात्र से इसका अपने आप में अंत नहीं हो जाता । आचार संहिता के साथ, संहिता के प्रवर्तन के लिए एक प्रणाली को आरंभ करने की आवश्यकता है । उच्चतम न्यायालय के किसी वरिष्ठ न्यायाधीश को ''न्यायिक मूल्य आयुक्त'' के रूप में पदाभिहित करना अपेक्षित होगा । न्यायिक मूल्य आयुक्त को आचार संहिता के अतिक्रमण के मामलों की जांच करके मामले की रिपोर्ट को भारत के मुख्य न्यायाधीश के पास कार्रवाई के लिए भेजने के लिए सशक्त किया जाना चाहिए । उच्चतम न्यायालय के

न्यायाधीश और अन्य न्यायिक और न्यायिककल्प निकायों के सदस्य, न्यायिक मूल्य आयुक्त के अधिकार क्षेत्र में आने चाहिए । राज्य के स्तर पर भी इसी प्रकार के संस्थान का गठन किया जाना चाहिए । न्यायिक जवाबदेही का मुद्दा भी इसके साथ जुड़ा हुआ है । न्यायिक जवाबदेही के प्रवर्तन के लिए प्रभावी व्यवस्था की आवश्यकता पर अति–दबाव नहीं डाला जा सकता ।

2.9.7 न्यायिक स्वतंत्रता और जवाबदेही दोनों को एक साथ चलना चाहिए । भारतीय संविधान के अनुच्छेद 235 में उच्च न्यायालय के अधीनस्थ न्यायालयों पर नियंत्रण के लिए उपबंध है जिसमें यह स्पष्ट किया गया है कि न्यायिक जवाबदेही के प्रवर्तन के लिए प्रभावशाली व्यवस्था का प्रबंध करना हमारे संवैधानिक दर्शन–शास्त्र का एक हिस्सा है । लेकिन यह व्यवस्था उस स्तर तक न्यायपालिका की स्वतंत्रता के साथ किसी भी प्रकार से समझौता नहीं करती । वास्तव में, संविधान के अनुच्छेद 50 में स्थापित न्यायपालिका को कार्यपालिका से अलग रखने के निदेशक सिद्धांत का यह सम्मान करती है और उसे सुदृढ़ करती है । इसमें संदेह नहीं है कि किसी अधीनस्थ न्यायाधीश की स्वतंत्रता उतनी ही महत्वपूर्ण है जितनी कि किसी उच्च न्यायालय या उच्चतम न्यायालय की । यदि इस बात को स्वीकृत कर लिया जाए तो कोई कारण नहीं रह जाएगा कि उच्चतर न्यायपालिका के लिए जवाबदेह की व्यवस्था पर विचार न किया जा सके । तब, वह क्या व्यवस्था होनी चाहिए ?

2.9.8 अनुच्छेद 124 भारत के मुख्य न्यायाधीश और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति की शक्ति राष्ट्रपति में निहित करता है । इसमें यह अनुबंध किया गया है कि राष्ट्रपति उच्चतम न्यायालय के किसी न्यायाधीश की नियुक्ति उच्चतम न्यायालय के और अन्य न्यायालयों के उतने ही न्यायाधीशों के साथ परामर्श करने के बाद करेगा, जितने कि न्यायाधीश वह आवश्यक समझे । उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति भी भारत का राष्ट्रपति करता है । राष्ट्रपति को भारत के मुख्य न्यायाधीश, राज्य के राज्यपाल और उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के साथ परामर्श करना होगा । राष्ट्रपति द्वारा एक संदर्भ उच्चतम न्यायालय को 23 जुलाई 1998 को भेजा गया था, जिसमें उच्चतम न्यायालय को नौ प्रश्नों पर विचार करने को कहा गया था । उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित सिद्धांतों में से एक यह था कि भारत का मुख्य न्यायाधीश चार वरिष्ठतम न्यायाधीशों के समूह का गठन करेगा । उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति या उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश या उच्च न्यायालय के किसी न्यायाधीश के तबादले के लिए ऐसा करना आवश्यक है और उस समूह का मत नियुक्तियों के मामलों में प्रमुख होगा । इसने यह भी स्पष्ट किया है कि कार्यपालिका के लिए यह विकल्प खुला रहेगा कि वह इस समूह को अपनी आपत्तियों की सूचना दे । तथापि, यदि मुख्य न्यायाधीश और उसके साथी न्यायाधीशों का फिर भी यह मत हो कि उनकी सिफारिशों को वापस लेने का कोई कारण न बनता हो तब एक स्वस्थ परंपरा का पालन करते हुए वह नियुक्ति कर दी जानी चाहिए । तथापि, यदि दो न्यायाधीशों को किसी विशेष नियुक्ति के बारे में गंभीर आपत्ति हो तो नियुक्ति नहीं की जानी चाहिए ।

2.9.9 जैसाकि संविधान में अनुबंध किया गया है तथा जैसाकि उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्वचन किया गया है, उच्च न्यायालयों में नियुक्तियों की व्यवस्था में न्यायिक स्वतंत्रता को सर्वोच्च स्थान दिया गया है । भारत में, कुछ न्यायाधीशों का समूह ही राष्ट्रपति को पीठ की प्रगति की सिफारिश करता है और इस प्रयोजन के लिए बाहर से कोई परामर्श नहीं दिया जाता है । न्यायिक घोषणाओं ने सिफारिश को बाध्यकारी बना दिया

है । शायद, विश्व के और किसी देश में अपनी ही नियुक्तियों के बारे में न्यायपालिका अन्तिम रूप से कुछ नहीं कहती । भारत में, न तो कार्यपालिका और न ही विधायिका उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय में किसी नियुक्ति के बारे में अपना कोई कथन रख पाती है । नियुक्ति की वर्तमान व्यवस्था सार्वजनिक रूप

तालिका 2.1 : उच्चतम न्यायालय में नियुक्तियों की अन्तर्राष्ट्रीय तुलना

देश/उच्चतम न्यायालय का नाम	नियुक्ति करने वाला प्राधिकारी	नियुक्ति प्रक्रिया
युनाईटेड किंगडम/ युनाईटेड किंगडम[32] का उच्चतम न्यायालय {धारा 23(1)}	उच्चतम न्यायालय में 12 न्यायाधीश होते हैं जो हर मजस्टी द्वारा लैटर्स पेटंट से नियुक्त किए जाते हैं {धारा 23(2)} इस संबंध में प्रधान मंत्री द्वारा एक सिफारिश की जाती है । (धारा 26)	चयन के लिए किसी व्यक्ति की सिफारिश करने के लिए लार्ड चांसलर को एक चयन कमीशन बुलाना पड़ता है । चयन कमीशन 5 सदस्यों का होता है जिसमें राष्ट्रपति, उच्चतम न्यायालय का उपाध्यक्ष और निम्नलिखित निकायों में से प्रत्येक का कोई एक सदस्य शामिल होता हैः (i) न्यायिक नियुक्ति आयोग (ii) स्काटलैंड का न्यायिक नियुक्ति बोर्ड (iii) दि नार्दर्न आयरलैंड न्यायिक नियुक्ति आयोग (अनुसूची 8) । चयन आयोग को वरिष्ठ न्यायाधीशों, लार्ड चांसलर, स्काटलैंड के प्रथम मंत्री, वेल्स में एसेंबली प्रथम सेक्रेटरी और उत्तरी आयरलैंड के लिए सेक्रेटरी आफ स्टेट के साथ परामर्श करना चाहिए और चयन के बारे में लार्ड चांसलर को रिपोर्ट देनी चाहिए । (धारा 27) । रिपोर्ट के प्राप्त होने पर लार्ड चांसलर चयन कमीशन के मामले में उन्हीं गणमान्य व्यक्तियों के साथ परामर्श करेगा । परामर्श के बाद या तो वह प्रधान मंत्री को चयन की सूचना दे देगा या अस्वीकार कर देगा या कमीशन को पुनः विचार के लिए भेज देगा । यह प्रक्रिया तीन चरणों में होती है । फिर भी, लार्ड चांसलर एक व्यक्ति का नाम सूचित कर सकता है जिसका चयन लिखित रूप में दिए गए कारणों के आधार पर न किया गया हो (धाराएं 28, 29 और 30) लार्ड चांसलर द्वारा दी गई अधिसूचना प्रधान मंत्री के लिए बाध्य होती है {26(3)}

तालिका 2. जारी पेज 52

[32] सांविधिक सुधार अधिनियम 2005 पर आधारित । लघु कोष्ठक में संदर्भ इस अधिनियम के हैं ।

51 पेज से जारी

तालिका 2. जारी

देश/उच्चतम न्यायालय का नाम	नियुक्ति करने वाला प्राधिकारी	नियुक्ति प्रक्रिया
संयुक्त राज्य अमेरिका/संयुक्त राज्य का उच्चतम न्यायालय[33]	सीनेट की सहमति से संयुक्त राज्य के राष्ट्रपति	संयुक्त राज्य का राष्ट्रपति नामांकन करता है। सीनेट न्यायिक समिति सुनवाई करती है और सीनेट को रिपोर्ट देती है । सीनेट का केवल बहुसंख्यक मत ही नामांकन की संतुष्टि करने के लिए आवश्यक होता है ।
फ्रांस/कोर डे कैसेशन[34]	गणराज्य का राष्ट्रपति, कोंसिल सुपीरियर डिला मैजेस्ट्रेचर (सीएसएम) से नियुक्ति के लिए प्रस्तावों के प्राप्त होने पर (संविधान का अनुच्छेद 65)	गणराज्य का राष्ट्रपति सीएसएम की अध्यक्षता करता है और न्याय मंत्री इसका पदेन उपाध्यक्ष होता है । इसके अतिरिक्त, 16 अन्य सदस्य होते हैं । इन सदस्यों में से चार सदस्य मजिस्ट्रेट नहीं होते । वे सार्वजनिक महत्व के प्रमुख व्यक्ति होते हैं । शेष 12 व्यक्ति दो संघटकों में बंटे होते हैं : एक पीठासीन न्यायाधीशों का निपटारा करने वाला संघटक और दूसरा सरकारी अभियोजकों का निपटारा करने वाला । पीठासीन न्यायाधीशों का निपटारा करने वाला संघटक पांच पीठासीन न्यायाधीशों और एक लोक अभियोजक के गठन से बना हुआ होता है । चार सदस्य जो मजिस्ट्रेट नहीं होते वे दोनों संघटकों में बैठते हैं ।
जर्मनी / फेडरल कंस्टीट्यूशनल कोर्ट[35] (बंदेसवरफेसुंगगेरिछ्ट)	यह न्यायालय 8 न्यायाधीशों के दो पैनलों का बना हुआ होता है । प्रत्येक पैनल के आधे व्यक्ति बंदेस्ट्रेट द्वारा निर्वाचित किए जाते हैं (संसद् का निचला सदन) और बंदेस्ट्रेट (फेडरल काउंसिल)	बंदेस्ट्रेट चुने जाने वाले न्यायाधीश बंदेस्ट्रेट के दो–तिहाई मतों से निर्वाचित किए जाते हैं । बंदेस्ट्रेट के मामले में, न्यायाधीश अप्रत्यक्ष रूप से चुने जाते हैं । बंदेस्ट्रेट आनुपातिक प्रतिनिधित्व से 12–सदस्यीय निर्वाचन समिति द्वारा चुना जाता है । चुने जाने के लिए, एक न्यायाधीश को कम से कम 8 मतों की आवश्यकता होती है ।

[33] स्रोत : http://encarta.msn.com/encyclopedia_761574302/Supreme_Court_of_the_United_States.html
[34] स्रोत : htpp://www.conseil-superieur-magistrature.fr/presentationenglish/membership.htm
[35] फेडरल कंस्टीट्यूशनल कोर्ट पर आधारित (Gesetz uber das Bundesverfassungsgericht), स्रोत : http://www.inscomp.org/gla/statutes/BVerfGG.htm#6

से छानबीन के लिए खुली हुई नहीं है, अतः जवाबदेही और पारदर्शिता से अभावग्रस्त है । विभिन्न देशों में न्यायाधीशों की नियुक्ति की व्यवस्था का तुलनात्मक विश्लेषण तालिका 2.1 में नीचे दिया गया है । तालिका को सरसरी नजर से देखने पर पता चलता है कि इन देशों में उच्च न्यायपालिका के लिए लोगों की सिफारिश करने के लिए एक समिति बनी हुई है और उस समिति में ऐसे लोगों को भी शामिल किया हुआ है जो अनिवार्यतः न्यायपालिका से ही न हों बल्कि संभवतः प्रतिष्ठावान व्यक्ति भी हो सकते हैं ।

2.9.10 न्यायाधीशों के जवाबदेही का नजदीक से संबंध रखने वाला एक पहलु है – न्यायाधीशों को उनके त्रुटिपूर्ण व्यवहार के लिए पद से हटाए जाने की व्यवस्था । अनुच्छेद 124 (4) और अनुच्छेद 217 (1) के अन्तर्गत महाभियोग को छोड़ कर अन्य कोई व्यवस्था नहीं है जिसके अंतर्गत न्यायाधीशों के अनुचित व्यवहार या अपराध के लिए उनके विरूद्ध कार्यवाई की जा सके । संविधान का निर्माण करते समय, यह महसूस कर लिया गया था कि न्यायिक परंपराएं और प्रतिमानकों द्वारा दृढ़ता से निगरानी की जा सकेगी । तथापि, महाभियोग के उपबंध व्यवहारपूर्ण नहीं निकले क्योंकि महाभियोग की किसी कार्यवाई को आरंभ करना असंभव है, न ही उसे सफलतापूर्वक पूर्ण किया जा सकता है । महाभियोग की पांच अवस्थाएं हैं, जिन्हें पूर्ण करना कठिन हैं। पहली है, लोक सभा के कम से कम सौ सदस्यों और राज्य सभा के कम से कम पचास सदस्यों का नोटिस देने के लिए अनिवार्यतः उपस्थित रहना । दूसरी अवस्था में, अध्यक्ष या सभापति द्वारा प्रस्ताव को मंजूरी देनाः यदि वह मंजूरी नहीं देता तो यह मामला वहीं पर खत्म हो जाता है । तीसरी अवस्था में, यदि न्यायाधीशों की संख्या एक है तो जांच करने के लिए एक समिति नियुक्त की जाएगी । चौथी अवस्था यह है कि समिति अपनी रिपोर्ट देती है और उसे अध्यक्ष या सभापति को अग्रेषित कर देती है । पांचवीं और अन्तिम अवस्था तब आती है जब संसद के दोनों सदन न्यायाधीश (जांच) अधिनियम की धारा 6(3) में विहित पद्धति से कार्यवाही करते हैं । विद्यमान व्यवस्था की अपर्याप्तता के0 रामास्वामी के वाद 1991 (3) एससीसी 655[36] के मामले में न्यायाधीश (जांच) अधिनियम 1968 के तहत न्यायाधीशों की समिति द्वारा वी0 रामास्वामी[37] के मामले में विरूद्ध निष्कर्ष दिए जाने के बावजूद असफल महाभियोग की कार्यवाही सिद्ध हो गई ।

2.9.11 न्यायाधीशों की नियुक्ति और उन्हें पद से हटाने के मामले पर संविधान के कार्यकरण की समीक्षा के लिए राष्ट्रीय आयोग द्वारा जांच की गई थी । आयोग ने एक राष्ट्रीय न्यायिक आयोग के गठन की सिफारिश की है जिसमें ''न्यायाधीशों की नियुक्ति की व्यवस्था के लिए एक एकीकृत स्कीम के रूप में '' राज्य की कार्यपालिका और न्यायपालिका दोनों की ही प्रभावशाली सहभागिता होगी ।

2.9.12 सरकार ने लोक सभा में 2003 में संविधान (98वां संशोधन) बिल पेश किया था । इस बिल में भारत के मुख्य न्यायाधीश की अध्यक्षता में एक राष्ट्रीय न्यायिक आयोग के गठन का प्रस्ताव किया गया था जिसमें उच्चतम न्यायालय के दो न्यायाधीश, जो भारत के मुख्य न्यायाधीश के अगले दो वरिष्ठतम न्यायाधीशों में से होंगे, कानून और न्याय मंत्री और राष्ट्रपति द्वारा प्रधान मंत्री के परामर्श से नामांकित एक प्रतिष्ठित नागरिक इसके सदस्य होंगे । इस बिल में न्यायाधीशों के लिए नैतिक संहिता बनाने और किसी न्यायाधीश के कदाचार के मामले की जांच करने (उन्हें छोड़ कर जिन्हें पद से हटाकर दण्डित किया जाना हो) के लिए राष्ट्रीय न्यायिक आयोग को सशक्त किए जाने का भी प्रस्ताव था । यह बिल पारित नहीं हो सका ।

[36] 1991 में, न्यायमूर्ति के. वीरास्वामी, ग्रदास उच्च न्यायालय के तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश के घर पर जब केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा अभियोजन की कार्यवाही की गई तो उनके घर से पर्याप्त संख्या में धनराशि प्राप्त होने से उठे मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि उस न्यायाधीश के विरूद्ध कोई प्राथमिकी नहीं लिखी जा सकती और न ही भारत के मुख्य न्यायाधीश की पूर्व सहमति के बिना अपराधिक जांच शुरू की जा सकती है ।

[37] न्यायाधीश के विरूद्ध आरोप खरीदारी में की गई अनियमितताओं के बारे में थे । इन खरीदारियों की लेखापरीक्षा नियंत्रक और महालेखापरीक्षक द्वारा की गई थी और इसी प्रक्रिया में अनुचित सौदों के साक्ष्य प्रकाश में आए । तीन न्यायाधीशों की संविधिक समिति ने न्यायमूर्ति रामास्वामी को भ्रष्टाचार के आरोपों का दोषी पाया। तथापि, महाभियोग का प्रस्ताव सदन के तल पर असफल हो गया ।

2.9.13 विधि आयोग ने अपनी 195वीं रिपोर्ट में ड्राफ्ट न्यायाधीश (जांच) अधिनियम 2005 की जांच की है। इसमें कहा गया है कि

> *न्यायिक स्वतंत्रता पूर्ण नहीं है । न्यायिक स्वतंत्रता और जवाबदेही एक ही सिक्के के दो पहलु हैं । 2005 के बिल में वर्तमान प्रस्ताव, हमारी इस सिफारिश के साथ कि न्यायिक परिषद् को 'लघु अध्युपाय' लागू करने के लिए समर्थ किया जाए, जिसमें न्यायिक कार्य के समानुदेशन को रोका जाना शामिल है, संवैधानिक हैं । इन प्रस्तावों को कार्यपालिका या विधायिका द्वारा न्यायिक स्वतंत्रता पर अधिक्रमण नहीं समझा जाना चाहिए । (पृ0 341)*

2.9.14 विधि आयोग ने यह पाया है कि 2005 का बिल, जिसमें राष्ट्रीय न्यायिक परिषद् की स्थापना का प्रस्ताव है, जिसमें केवल न्यायाधीश ही शामिल होंगे, संवैधानिक रूप से वैध है और न्यायापालिका की स्वतंत्रता, न्यायिक जवाबदेही और शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत की धारणा से मेल खाता है । (पृ0 363)

2.9.15 न्यायपालिका के लिए आचार संहिता के विचार का समर्थन करते हुए, इसने सिफारिश की है कि इस संहिता को भारत के राजपत्र में प्रकाशित किया जाना चाहिए और जब तक न्यायिक परिषद् आचार संहिता प्रकाशित नहीं कर लेती, उस समय तक इस बिल में यह व्यवस्था की जानी चाहिए कि उच्चतम न्यायालय द्वारा अपने दिनांक 7 मई, 1997 के संकल्प में अपनाए गए 'न्यायिक जीवन के मूल्यों के पुनर्कथन' को ही प्रस्तावित कानून के प्रयोजनों के लिए आचार संहिता समझा जाना चाहिए । इसमें यह भी पक्ष लिया गया है कि इस आचार संहिता का भंग होना कदाचार समझा जा सकता है ।

2.9.16 सरकार न्यायाधीश (जांच) बिल, 2006 को प्रस्तुत करने पर विचार कर रही है । इस बिल में एक राष्ट्रीय न्यायिक परिषद् की स्थापना करने का प्रस्ताव है, जो उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के दुर्व्यवहार और असमर्थता के आरोपों की प्रारंभिक छानबीन और जांच करेगा तथा ऐसी छानबीन, जांच और प्रमाण के लिए तथा लघु अध्युपाय लागू करने के लिए एक कार्य–प्रणाली का नियमन करेगा । इसमें यह भी व्यवस्था है कि परिषद् न्यायिक प्रशासन के हित में एक आचार संहिता जारी करे जिसमें न्यायाधीशों के आचार और व्यवहार के लिए मार्गदर्शी सिद्धांत दिए गए हों । बिल में यह भी प्रस्ताव है कि प्रत्येक न्यायाधीश अपनी नियुक्ति के समय और उसके बाद हर वर्ष अपनी संपत्तियों और दायित्वों के बारे में सूचना यथा–स्थिति भारत के मुख्य न्यायाधीश अथवा उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश को दे देगा । यह व्यवस्था की गई है कि कोई भी व्यक्ति परिषद् के किसी न्यायाधीश के बारे में दुर्व्यवहार या असमर्थता के किसी आरोप में संलिप्त करते हुए लिखित रूप में एक शिकायत कर सकता है । परिषद् उसके पश्चात् मामले की छानबीन कर सकती है और यदि इसका यह मत है कि जो आरोप सिद्ध किए गए हैं, वे न्यायाधीश को पद से हटाने के लिए समुचित नहीं हैं, तो वह निर्धारित लघु अध्युपाय को अधिरोपित कर सकती है । यदि परिषद् इस बात से संतुष्ट है कि जो आरोप सिद्ध हो चुके हैं, वे गंभीर प्रकृति के कारण न्यायाधीश को पद से हटाने के लिए समुचित हैं तो वह राष्ट्रपति को तदनुसार परामर्श दे देगी ।

2.9.17 जहां एक ओर राष्ट्रीय न्यायिक परिषद् का गठन एक बड़ी न्यायिक जवाबदेही को सुनिश्चित करने की दिशा में एक सकारात्मक परिणाम है, वहीं दूसरी ओर परिषद् के संगठन की नींव व्यापक होनी आवश्यक

है और इसकी शक्तियों को विस्तृत बनाने की आवश्यकता है ताकि यह न्यायपालिका का आवश्यक निरीक्षण कर सके । यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि केवल उच्चतम सत्यनिष्ठा और योग्यता वाले प्रत्याशियों की ही इन न्यायालयों में नियुक्ति की जाए और वे एक बार नियुक्त हो जाने के बाद अपने कर्तव्यों को सत्यनिष्ठा, ईमानदारी, समर्पण और सक्षमता के उच्चतम मानदंडों के साथ निष्पादित करें । नियुक्ति के समय इसकी अति सावधानी से छानबीन की आवश्यकता है । ऐसी छानबीन को तभी सुनिचित किया जाएगा यदि राष्ट्रीय न्यायिक परिषद् का प्रतिनिधित्व कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका से हो ।

2.9.18 जैसाकि पैरा 2.9.10 में ध्यान दिलाया गया है, दोषी न्यायाधीशों को पद से हटाने के लिए महाभियोग की प्रक्रिया विफल हो गई है । हमारी संवैधानिक योजना में उच्च न्यायालयों को दी गई आवश्यक स्थिति को देखते हुए और अन्य संस्थानों तथा राज्य के अन्य हिस्सों के कृत्यों में विकारों को सही करने के लिए उच्च न्यायालय जो नाजुक भूमिका अदा कर रहे हैं, यह परमावश्यक है कि उच्च न्यायपालिका में समर्थता और सत्यनिष्ठा दोनों को सुनिश्चित किया जाए । जैसाकि तालिका 2.1 में दिखाया गया है, सभी प्रमुख लोकतंत्रों में या तो नियुक्तियां कार्यपालिका द्वारा प्रत्यक्ष रूप से की जाती हैं, या विधायिका के परामर्श और सहमति से की जाती हैं या फिर विधायिका द्वारा किसी निर्वाचित प्रक्रिया द्वारा की जाती हैं ।

2.9.19 आयोग का यह मत है कि उच्च न्यायालयों में न्यायाधीशों की नियुक्ति कार्यपालिका, विधायिका और मुख्य न्यायाधीश की भागीदारी से हो और दिन–प्रतिदिन की राजनीति से ऊपर यह द्विदलीय प्रक्रिया होनी चाहिए । अतः प्रस्तावित राष्ट्रीय न्यायिक परिषद् में राज्य के सभी अंगों – विधायिका, न्यायपालिका और कार्यपालिका का प्रतिनिधित्व होना चाहिए । परिषद् उच्च न्यायपालिका के लिए उम्मीदवारों की पहचान करने और छानबीन करने में अपनी कार्य–प्रणालियों का निर्धारण कर सकती है ।

2.9.20 आयोग का यह भी मत है कि राष्ट्रीय न्यायिक परिषद् को उच्च न्यायालयों में न्यायाधीशों को पद से हटाने की सिफारिश करने का उत्तरदायित्व सौंप दिया जाना चाहिए । ऐसी सिफारिशें राष्ट्रपति को माननी होंगी और संविधान के अनुच्छेद 124 और अनुच्छेद 217 में तदनुसार संशोधन करना होगा । भारत में न्यायाधीशों को पद से हटाने के लिए महाभियोग की प्रक्रिया के विफल हो जाने के कारण इस संशोधित कार्य–प्रणाली की आवश्यकता पड़ी । अमेरिका के संविधान की धारा ।।, उप धारा 4 के अनुसार राष्ट्रपति, उप राष्ट्रपति और अन्य सभी सिविल अधिकारियों को अपने पद से हटाया जा सकता है या विश्वास भंग के लिए दोषसिद्धि का, घूसखोरी के लिए अथवा अन्य बड़े अपराधों और उप अपराधों के लिए महाभियोग चलाया जा सकता है । अब तक दो राष्ट्रपतियों, एक मंत्रिमंडल का अधिकारी, एक सीनेटर और 13 न्यायाधीशों समेत 17 संघीय अधिकारियों ने महाभियोग की कार्यवाई का सामना किया है । दो राष्ट्रपतियों, एंड्रुव जॉनसन और बिल क्लिंटन दोषमुक्त सिद्ध हो गए, एक अन्य राष्ट्रपति, रिचर्ड निक्सन ने किंचित महाभियोग तथा पदच्युत् होने के कारण त्याग–पत्र देना चुन लिया । अमेरिका में स्पष्ट रूप से उन न्यायाधीशों का बहुत प्रचलन है, जिन्हें महाभियोग का सामना करना पड़ा है । उन 13 न्यायाधीशों में से, जिनके विरूद्ध महाभियोग किया गया था, 9 को पद से हटा दिया गया था और 4 को दोषमुक्त करार दे दिया गया था । अतः अमेरिका में महाभियोग की प्रक्रिया संतोषजनक रही है । परंतु भारत में महाभियोग की प्रक्रिया विफल हो जाने के कारण तथा न्यायपालिका में सत्यनिष्ठा के गंभीर प्रश्नों के समाधान की व्यवस्था के असमर्थ हो जाने के कारण न्यायाधीशों के न्यायिक कदाचार और उन्हें पदच्युत करने के लिए जांच की संशोधित, पारदर्शी, जवाबदेह और द्विदलीय प्रक्रिया बनाना आवश्यक बन पड़ा है ।

2.9.21 बड़े स्तर के उच्च गण्यमाण्य व्यक्तियों का एक द्विदलीय निकाय एक ऐसा आदर्श संस्थान बन सकता है जिसे न्यायाधीशों के विरूद्ध शिकायतों और आरोपों की जांच किए जाने का और उन्हें हटाए जाने की सिफारिश करने का गंभीर उत्तरदायित्व सौंपा जा सकता है । तदनुसार, आयोग का मत है कि उपर्युक्त अनुसार गठित राष्ट्रीय न्यायिक परिषद् को न्यायिक कदाचार की जांच करने और न्यायाधीशों को पद से हटाने की राष्ट्रपति को सिफारिश करने की शक्ति होगी । ऐसी सिफारिशें राष्ट्रपति के लिए बाध्य होंगी । अनुच्छेद 124 और अनुच्छेद 217 में समुचित संशोधन किए जाएं । राष्ट्रीय न्यायिक परिषद् के पास यह शक्ति होगी कि वह अपने इन दूभर कृत्यों के निष्पादन में अपनी ही कार्य–प्रणाली निर्धारित कर लें ।

2.9.22 राष्ट्रीय न्यायिक परिषद् का गठन इसके लिए संविधान के अनुच्छेद 124 के अन्तर्गत किया जाना होगा (और अनुच्छेद 217 और 218 का भी) इसके साथ–साथ न्यायाधीश (छानबीन) अधिनियम 1968 में भी परिवर्तन लाने होंगे । ऐसी परिषद् के सृजन के लिए विद्यमान कानूनों में तीन स्थानों पर परिवर्तन करने आवश्यक होंगे । उच्चतम न्यायालय में नियुक्ति की प्रक्रिया में किसी परिवर्तन को लाने के लिए यह आवश्यक होगा कि संविधान के अनुच्छेद 124 में संशोधन करके राष्ट्रीय न्यायिक परिषद् का प्रावधान किया जाए । इसी प्रकार का संशोधन अनुच्छेद 217 में भी करना होगा । क्योंकि परिषद् के पास न्यायाधीशों पर नजर रखने और उन्हें अनुशासन में रखने के लिए प्राधिकार की आवश्यकता भी होगी, अतः अनुच्छेद 217 (खंड 4) में आगे परिवर्तन करना आवश्यक होगा ।

2.9.23 सिफारिशें :

क. **एकरूपता से स्वीकृत सिद्धांतों की तर्ज पर एक ऐसी न्यायिक परिषद् का गठन किया जाना चाहिए, यहां न्यायपालिका के सदस्यों की नियुक्ति एक मंडल के रूप में की जानी चाहिए, जिसमें कार्यपालक, विधानमंडल और न्यायपालिका का प्रतिनिधित्व हो। इस परिषद् में निम्नलिखित शामिल होंगे :–**

- **परिषद् के अध्यक्ष के रूप में उप राष्ट्रपति**
- **प्रधान मंत्री**
- **लोक सभा के अध्यक्ष**
- **भारत के मुख्य न्यायमूर्ति**
- **कानून मंत्री**
- **लोक सभा में विपक्ष के नेता**
- **राज्य सभा में विपक्ष के नेता**

उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति और निरीक्षण से संबंधित मामलों में परिषद् में निम्नलिखित सदस्य भी शामिल होंगे:

- **संबंधित राज्य के मुख्य मंत्री**

- संबंधित उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति

ख. राष्ट्रीय न्यायिक परिषद् को अधीनस्थ न्यायपालिका सहित न्यायधीशों के लिए आचार संहिता बनाए जाने के लिए अधिकृत किया जाना चाहिए ।

ग. राष्ट्रीय न्यायिक परिषद् को उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय के न्यायधीशों की नियुक्तियों की सिफारिश करने का काम सौंपा जाना चाहिए । इस परिषद् को न्यायधीशों के निरीक्षण के काम को भी सौंपा जाना चाहिए और उन्हें अभिकथित कदाचार की छानबीन करने और लघु दंड देने का भी अधिकार दिया जाना चाहिए । यदि आवश्यक हो तो यह न्यायाधीश को हटाए जाने की भी सिफारिश कर सकती है।

घ. राष्ट्रीय न्यायिक परिषद् की सिफारिशों के आधार पर राष्ट्रपति को उच्चतम न्यायालय अथवा उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को हटाने का अधिकार होना चाहिए ।

ड. राष्ट्रीय न्यायिक परिषद् का प्रावधान करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 124 को संशोधित किया जाना चाहिए। इसी प्रकार का संशोधन अनुच्छेद 217 में भी किया जाना होगा । क्योंकि परिषद् को न्यायाधीशों पर निरीक्षण करने और उन्हें अनुशासन में रखने का भी अधिकार होगा, अतः अनुच्छेद 217 (खंड 4) में और आगे परिवर्तन करने आवश्यक होंगे ।

च. उच्चतम न्यायालय के किसी एक न्यायाधीश को न्यायिक मूल्य आयुक्त पर पदासीन किया जाना चाहिए । उसे आचार संहिता को प्रभावी करने का काम दिया जाना चाहिए। इसी प्रकार के प्रबंध उच्च न्यायालय में भी किए जाने चाहिए ।

3 भ्रष्टाचार से लड़ने के लिए वैधानिक ढांचा

3.1 भारत में भ्रष्टाचार निवारण कानूनों का विकास

3.1.1 स्वतंत्रता से पूर्व अवधि के दौरान, जन जीवन में भ्रष्टाचार का सामना करने के लिए भारतीय दंड संहिता (आईपीसी) ही मुख्य साधन थी । इस संहिता में 'लोक सेवकों द्वारा अपराध' का एक अध्याय था । धारा 161 से धारा 165 में भ्रष्ट लोक सेवकों के विरूद्ध कानूनी कार्यवाई करने के लिए वैधानिक ढांचे का उपबंध था। उस समय, भ्रष्टाचार से निपटने के लिए किसी विशेष कानून की आवश्यकता महसूस नहीं की गई ।

3.1.2 दूसरे विश्व युद्ध में अभावग्रस्तता से अनैतिक तत्वों ने स्थिति का शोषण किया जिसके कारण जन जीवन में बड़े पैमाने पर भ्रष्टाचार होने लगा । यह स्थिति युद्ध के पश्चात् भी बनी रही । इस खतरे से चिन्तित कानून के निर्माताओं ने यह महसूस किया कि कठोर विधायी अध्युपाय करने की आवश्यकता है । अतः रिश्वत और भ्रष्टाचार की बुराइयों से लड़ने के लिए भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1947 अधिनियमित किया गया था ।

3.1.3 *भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1947 :* इस अधिनियम में भारतीय दंड संहिता में पहले से विद्यमान भ्रष्टाचार से संबंधित अपराधों को न तो पुनः परिभाषित किया गया और न ही इस परिभाषा में कोई विस्तार किया गया । इसी प्रकार, इसने भारतीय दंड संहिता[38] में दी गई 'लोक सेवक' की परिभाषा को ही अपनाया। तथापि, इस कानून ने एक नए अपराध की परिभाषा बनाई – 'पदीय कर्तव्य के निर्वहन में आपराधिक अवचार' जिसके लिए सजा को बढ़ाने का (न्यूनतम एक वर्ष से अधिकतम 7 वर्ष तक) अनुबंध किया गया था । किन्हीं मामलों में सबूत के भार को अभियुक्त को स्थानांतरित किए जाने के लिए यह उपबंध किया गया था कि जब कभी भी यह साबित कर दिया जाता है कि 'लोक सेवक' ने कोई परितोषण प्रतिगृहीत किया है तो यह उपधारणा की जाएगी कि लोक सेवक ने ऐसे परितोषण को भारतीय दंड संहिता की धारा 161 के अंतर्गत ऐसे हेतु या इनाम के रूप में प्रतिगृहीत किया है । ईमानदार अधिकारियों को किसी उत्पीड़न से रोकने के लिए यह अधिदेश दिया गया था कि कोई न्यायालय भारतीय दंड संहिता की धारा 161, 164 और 165 के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान आरोपित लोक सेवक को पद से हटाने के लिए सक्षम प्राधिकारी की अनुमति के बिना नहीं करेगा । इस अधिनियम में यह भी उपबंध किया गया था कि रिश्वत देने वाले व्यक्ति के द्वारा रिश्वत देना मान लिए जाने के वक्तव्य पर कोई अभियोजन[39] नहीं हो सकेगा । यदि यह उन्मुक्ति न दी गई होती तो सभी परिवादी दंडनीय हो जाते जिससे उस लोक अधिकारी के विरूद्ध शिकायतें करने के लिए वे भयभीत हो जाते, जिसने रिश्वत प्रतिगृहीत की हो ।

3.1.4 दंड विधि संशोधन अधिनियम 1952 के आ जाने से भ्रष्टाचार से संबंधित कानूनों में कुछ परिवर्तन हुए। भारतीय दंड संहिता की धारा 165 के अधीन उल्लिखित सजा को विद्यमान दो वर्षों की बजाय तीन वर्षों तक

[38] धारा 2; भ्रष्टाचार निरोध अधिनियम, 1947
[39] धारा 8; भ्रष्टाचार निरोध अधिनियम, 1947

कर दिया गया । इसके साथ ही भारतीय दंड संहिता में एक नई धारा 165 क लगा दी गई जिसमें भारतीय दंड संहिता की धारा 161 और 165 में परिभाषित किए गए अपराधों को दुष्प्रेरित करना भी अपराध बना दिया गया । यह भी अनुबंध किया गया कि भ्रष्टाचार से संबंधित सभी अपराधों की सुनवाई विशेष न्यायाधीशों द्वारा ही की जाए ।

3.1.5 *1964 में संशोधन :* 1964 में भ्रष्टाचार निरोध कानूनों में बृहत् संशोधन हुए । भारतीय दंड संहिता के अधीन 'लोक सेवक' की परिभाषा का विस्तार किया गया (संथानम समिति ने भी 'लोक सेवक' नाम की परिभाषा का विस्तार करने की सिफारिश की थी ।) दंड प्रक्रिया संहिता में यह व्यवस्था देने के लिए संशोधन किया गया था कि यदि कोई एक पक्ष या न्यायालय चाहे तो सुनवाई बंद कमरे में हो । भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 5(1) और 5(2) के अधीन परिभाषित अपराधों को शामिल करने के लिए इस अधिनियम की धारा 4 के अधीन उपलब्ध उपधारणा का विस्तार किया गया । 'आपराधिक अवचार' की परिभाषा का विस्तार किया गया और लोक सेवक की आय के ज्ञात स्रोतों से अधिक संपत्तियां रखना अपराध माना गया । धारा 5(क) में संशोधन किया गया ताकि पुलिस निरीक्षक स्तर के अधिकारियों को अधिनियम के अधीन मामलों की जांच को अधिकृत करने के लिए राज्य सरकारों को सशक्त किया जा सके। {पहले, इसे मजिस्ट्रेट के अनुमोदन से ही किया जा सकता था (संथानम समिति ने इसकी सिफारिश की थी)}। इस अधिनियम के अधीन मामलों की जांच करने के लिए सक्षम पुलिस अधिकारी बैंक अभिलेखों का निरीक्षण करने के लिए सशक्त थे, यदि उन्हें अधिनियम के अधीन अपराध किए जाने के संदेह के कारण पता हों । (इस शक्ति का प्रयोग धारा 94 दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन किया जा सकता है परंतु मामला पंजीकृत हो जाने के बाद । यह भी संथानम समिति की सिफारिशों में से एक थी ।)

3.1.6 *भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988 :* इस अधिनियम को राष्ट्रपति की अनुमति 9 सितंबर 1988 को मिली। इसमें भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1947, दंड विधि संशोधन अधिनियम 1952 और भारतीय दंड संहिता के कुछ उपबंधों को समेकित किया गया है । इसके अलावा, इसमें कुछ परंतुक भी हैं जिन्हें लोक सेवकों में भ्रष्टाचार का प्रभावशाली ढंग से सामने करने की इच्छा से रखा गया है । इस अधिनियम की प्रमुख विशेषताएं इस प्रकार हैं :–

क. 'लोक सेवक' शब्द की परिभाषा अधिनियम में दी गई है । यह परिभाषा भारतीय दंड संहिता में विद्यमान परिभाषा से बड़ी है ।

ख. अधिनियम में एक नई धारणा – 'लोक कर्त्तव्य' को रखा गया है ।

ग. भारतीय दंड संहिता में भ्रष्टाचार से संबंधित अपराधों को अधिनियम के अध्याय 3 में रखा गया है और भारतीय दंड संहिता से वे हटा दिए गए हैं ।

घ. अधिनियम के अधीन सभी मामलों की सुनवाई विशेष न्यायाधीशों द्वारा ही होगी ।

ड. न्यायालय की कार्यवाही दिन प्रतिदिन के आधार पर होगी ।

च. विविध अपराधों के लिए जुर्मानों में वृद्धि की गई है ।

छ. दंड प्रक्रिया संहिता (केवल इस अधिनियम के प्रयोजन के लिए) में मामलों की सुनवाई के शीघ्र निपटान के लिए संशोधन किया गया । {दंड प्रक्रिया संहिता की संशोधित धाराओं 243, 309,317 और 397 के लिए अधिनियम की धारा 22 में उपबंध है ।}

ज. यह अनुबंध किया गया है कि कोई भी न्यायालय इस अधिनियम के अधीन कार्यवाही पर रोक के आदेश मंजूर की गई शास्ति में किसी चूक या अनियमितता के आधार पर तब तक नहीं जारी नहीं करेगा जब तक न्यायालय के विचार में उचित न्याय करने में विफलता[40] न हुई हो ।

झ. रिश्वत देने वाले व्यक्ति को उपधारणा, उन्मुक्ति, उप पुलिस अधीक्षक के स्तर के अधिकारी द्वारा, बैंकों के रिकार्डों तक पहुंच आदि प्रावधानों को पहले जैसा ही रखा गया है ।

3.2 भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988

3.2.1 भ्रष्टाचार की परिभाषा देना

3.2.1.1 भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम में भ्रष्टाचार की कोई परिभाषा नहीं दी गई है । रोचक बात यह है कि पारदर्शिता अन्तर्राष्ट्रीय भ्रष्टाचार बोध सूचकांक के अनुसार फिनलैंड, जो सबसे कम भ्रष्टाचार वाला देश है, के कानूनों में भ्रष्टाचार की कोई औपचारिक परिभाषा नहीं कही गई है । यहां तक कि भ्रष्टाचार के विरूद्ध संयुक्त राष्ट्र कन्वेंशन में भी भ्रष्टाचार की कोई परिभाषा प्रदान नहीं की गई है । अनुच्छेद 5 में, इसमें कुछ भ्रष्टाचार निरोध नीतियों और पद्धतियों का निर्धारण किया गया है । वे हैं :–

1. *प्रत्येक राज्य दल, अपनी विधि व्यवस्था के मूलभूत सिद्धांतों के अनुसार प्रभावी, समन्वित भ्रष्टाचार उन निरोध नीतियों का विकास, कार्यान्वयन और उनका रखरखाव करेगा जो समाज की भागीदारी में प्रगति करे और कानूनी नियमों के सिद्धांतों को दर्शाए, लोक कार्य और सार्वजनिक सम्पत्ति, सत्यनिष्ठा, पारदर्शिता और जवाबदेही का उचित प्रबंधन करे ।*

2. *प्रत्येक राज्य दल भ्रष्टाचार निवारण पर किए गए लक्ष्यों के स्थापन और उनकी प्रभावकारी पद्धतियों को विकसित करने का प्रयत्न करेगा ।*

3. *प्रत्येक राज्य दल संगत वैधानिक प्रपत्र और प्रशासनिक उपायों को भ्रष्टाचार को रोकने या उससे लड़ने के लिए उनकी पर्याप्तता का निर्धारण करने के लिए समय समय पर मूल्यांकन करने का प्रयत्न करेगा ।*

   राज्य दल, जैसा उचित हो और अपनी वैधानिक व्यवस्था के सिद्धांतों के अनुसार इस अनुच्छेद में उल्लिखित उपायों का विकास और उन्नति करने में परस्पर एक दूसरे के साथ और संगत अन्तर्राष्ट्रीय और क्षेत्रीय संगठनों के साथ सहयोग करेंगे । इस सहयोग में भ्रष्टाचार निवारण के लक्ष्यों में अन्तर्राष्ट्रीय कार्यक्रमों और परियोजनाओं में भागीदारी को शामिल किया जा सकता है ।

[40] धारा 19(3)(ख); भ्रष्टाचार निरोध अधिनियम, 1947

3.2.1.2 भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988 में धारा 7 से 15 में रिश्वत के अपराधों और अन्य संबंधित अपराधों और जुर्मानों को सूचीबद्ध किया गया है । इन अपराधों में किसी पदेन कृत्य को करने या न करने के लिए किसी हेतु या इनाम के रूप में असंवैधानिक परितोषण को प्रतिगृहीत करना या किसी व्यक्ति को पक्षपात देना या पक्षपात न देना, किसी मूल्यवान वस्तु को बिना प्रतिफल के या अपर्याप्त प्रतिफल के प्राप्त करना, परितोषण प्राप्ति में संलिप्त आपराधिक अवचार, दुर्विनियोजन, बिना किसी लोक हित के किसी व्यक्ति से धन लाभ प्राप्त करना, या किसी व्यक्ति की आय के ज्ञात स्रोतों से अधिक आर्थिक संसाधन या संपत्तियां होना, शामिल हैं । अपराध कानूनों में सामान्यतः लागू किए जाने वाले सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए ऐसे अपराधों को करने के प्रयत्न या दुष्प्रेरणा को भी अपराधों की सूची में रखा गया है । अतः सभी प्रकार के प्रतिफलों, परितोषण और आर्थिक लाभों पर बल दिया गया है ।

3.2.1.3 तथापि, पिछले दशकों के अनुभव से यह पता चलता है कि भ्रष्ट पद्धतियों की ऐसी प्रत्यक्ष परिभाषा विरोधाभास के रूप में प्रतिबंधित है और पदेन आचार के संपूर्ण तंत्र में, जो लोक हित के लिए अहितकर है, दृढ़ दंड प्रावधान शामिल नहीं हैं । विशेष रूप से चार प्रकार के पदेन आचार ऐसे हैं जो लोक हित की विशाल क्षति करते हैं, आपराधिक कानून के अतिक्रमण में स्पष्ट रूप से आते हैं ।

3.2.1.4 इनमें से पहला और संभवतः अति महत्वपूर्ण है संविधान और लोकतांत्रिक संस्थानों का दुरूपयोग जिसमें पद शपथ का जानबूझकर अतिक्रमण करना शामिल है। कभी कभी संवैधानिक कार्यकर्ताओं को पक्षपाती प्रतिफलों या व्यक्तिगत प्रेरणा के कारण ऐसी संवैधानिक विकृतियों में लिप्त पाया गया है । ऐसे अधिकतर मामलों में, न तो असंवैधानिक प्रतिफल, न ही आर्थिक लाभ और न ही किसी प्रकार के परितोषण संलिप्त होते हैं । ऐसे कुछ मामलों में, उच्चतम न्यायालय ने उच्च पद पर आसीन व्यक्तियों को संपूर्ण कदाचार का दोषी पाया है जिससे संविधान में विकृति आई है । ऐसे मामलों में, लोकमत, राजनीतिक दबाव और व्यक्तियों की अन्तरात्मा की मांग को छोड़कर ऐसे काम करने वालों को सजा देने के लिए कोई संवैधानिक उपबंध नहीं हैं ।

3.2.1.5 अपराधों का ऐसा दूसरा वर्ग है, बिना किसी धन के प्रतिफल या परितोषण के अनुचित पक्षपात अथवा हानि पहुंचाने में अधिकार का दुरूपयोग करना । ऐसे मामलों में, प्रायः पक्षपातपूर्ण हित, भाईभतीजावाद और व्यक्तिगत द्वेष भूमिका अदा करते हैं, यद्यपि 'वैधानिक' अर्थ में कोई भ्रष्टाचार लिप्त नहीं होता । फिर भी, ऐसे जानबूझ कर किए गए कृत्यों की हानि होने से या आपराधिक अनदेखी द्वारा किसी के अधिकार को नकारने से समाज को भयावह परिणाम भुगतने पड़ते हैं और नैतिक शासन और कानून के नियम के ढांचे में दुर्बलता आती है ।

3.2.1.6 तीसरा, अपना अनुचित प्रभाव रखने वाली कानून की प्रवर्तन और अभियोजन एजेंसियों द्वारा न्याय देने में अड़चन और विकृति पैदा करना हमारे देश में आम बात है । ऐसे अधिकतर मामलों में, पक्षपाती प्रतिफल, भाईभतीजावाद और द्वेष हेतु हो सकते हैं न कि धन लाभ या परितोषण । इसका नतीजा यह होता है कि न्याय की विफलता के कारण व्यवस्था में जनता का विश्वास गिर जाता है और इससे अराजकता और हिंसा ही फैलती है ।

3.2.1.7 अन्ततः, सरकारी काम की दिखावटी जीवन शैली समेत लोक धन का व्यय बहुत ही सामान्य बात हो गई है । ऐसे सभी मामलों में, किसी भी नागरिक को न तो निजी आर्थिक लाभ हो पाता है और न ही कोई विशेष लाभ या हानि । कोई संलिप्त दुर्विनियोजन भी नहीं होता । कुल मिला कर राजकोष का ही नुकसान होता है और जन हित और नागरिकों का सरकार में विश्वास दोनों ही कम हो जाते हैं ।

3.2.1.8 ऐसा सामान्यतः माना जाता है कि हमारे देश में ये सभी चार प्रकार के पदों के स्वैच्छिक दुरूपयोग सभी स्तरों पर बढ़ रहे हैं और यदि हमें अपने लोक हित और लोकतांत्रिक व्यवस्था की रक्षा करनी है तो हमें इन पर दृढ़ता से काबू पाना होगा अन्यथा, सार्वजनिक पदों पर रह कर जनहित के संरक्षक और लोकतंत्र के प्रहरी कहे जाने वाले ये लोक सेवक – चाहे वे निर्वाचित हों अथवा नियुक्त – अपने व्यक्तिगत लाभ की बढ़ोतरी के लिए काम करने वाले अवसरवादी और व्यक्तिगत एजेंडों का अनुसरण करने वाले दिखाई देंगे ।

3.2.1.9 अतः भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अंतर्गत निम्नलिखित को अपराध के रूप में वर्गीकृत करने की आवश्यकता है :

- संविधान और लोकतांत्रिक संस्थानों को पूर्ण रूप से विकृत करना जिससे शपथ पद का स्वैच्छिक अतिक्रमण होता हो ।
- किसी व्यक्ति को अनुचित समर्थन देना या उसे नुकसान पहुंचाना ।
- न्याय में बाधा
- लोक धन का अपव्यय

3.2.1.10 सिफारिशः

क. भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अन्तर्गत निम्नलिखित को अपराधों के रूप में वर्गीकृत किया जाना चाहिए :

- **संविधान और लोकतांत्रिक संस्थानों का संपूर्ण दुरूपयोग शपथ पद का जानबूझ कर किया गया अतिक्रमण होगा ।**
- **किसी व्यक्ति का अनुचित पक्षपात करके या उसे हानि पहुंचा कर अधिकार का दुरूपयोग करना ।**
- **न्याय में बाधा**
- **सार्वजनिक पैसे का अपव्यय**

3.2.2 दुस्संधिपूर्ण रिश्वतखोरी

3.2.2.1 किसी भी भ्रष्टाचार लेन–देन में दो पक्षकार होते हैं – एक रिश्वत देने वाला और दूसरा रिश्वत लेने वाला । रिश्वतखोरी के अपराध को दो प्रकार की श्रेणियों में रखा जा सकता है । एक श्रेणी में रिश्वत देने

वाला जबरदस्ती उससे पैसें ऐंठे जाने का शिकार होता है, उसे एक मामूली सी सेवा के लिए पैसे देने पड़ते हैं क्योंकि यदि वह पैसे ऐंठने वाले लोक सेवक की मांग नहीं मानता है तो उसे उस रिश्वत की राशि से कहीं अधिक खो देना पड़ेगा । विलंब, उत्पीड़न अनिश्चितता, खोया हुआ अवसर और मजदूरी – ये सभी परिणाम होते हैं रिश्वतखोरी की मांग को ठुकराने के – जो इतने भयानक हो गए हैं कि भ्रष्टाचार के कुचक्र ने प्रतिदिन के जीवन–यापन के लिए नागरिक को निचोड़ कर रख दिया है । इसके अलावा, ऐसे मामलों की एक और श्रेणी है जिसमें रिश्वत लेने वाला और रिश्वत देने वाला दोनों एक साथ मिल कर समाज को लूटते हैं और रिश्वत देने वाला उतना ही या उससे भी अधिक अपराधी होता है जितना कि रिश्वत लेने वाला । इनमें घटिया गुणवत्ता के कामों के निष्पादन के मामले, प्रतिस्पर्द्धा के विकार, राजकोष को लूटना, लोक अधिप्राप्तियों में कमीशन लेना, दुस्संधि से कर की चोरी और लोगों को घटिया किस्म की दवाएं देकर सीधे हानि पहुंचाना और सुरक्षा नियमों का अतिक्रमण । भ्रष्टाचार की इन दो श्रेणियां को क्रमशः 'बलप्रयोग' और 'दुस्संधि' के नामों से भी जाना जाता है । तेजी से बढ़ रही हमारी अर्थव्यवस्था के साथ–साथ बल प्रयोगपूर्ण भ्रष्टाचार के मामलों में वृद्धि हो रही है और कई बार ये प्रायः कई गुना 'गंभीर आर्थिक अपराधों' का रूप ले लेते हैं ।

3.2.2.2 भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अध्याय–III में विविध अपराधों और जुर्मानों को अधिकथित किया गया है । धारा 7 में लोक सेवक द्वारा किसी सरकारी काम को करने के लिए असंवैधानिक रूप से परितोषण प्राप्त करना अपराध है । यद्यपि, रिश्वत देने की अलग से कोई परिभाषा नहीं दी गई है, फिर भी रिश्वत देने वाला 'दुष्प्रेरणा' का अपराधी है और जो सजा रिश्वत लेने वाले[41] को मिलती है, उसी सजा का पात्र रिश्वत देने वाला भी है । फिर भी अधिनियम की धारा 24 के अंतर्गत, यदि रिश्वत देने वाला न्यायालय में यह वक्तव्य देता है कि उसने रिश्वत का प्रस्ताव रखा था तो रिश्वत देने वाले को अभियोजन से उन्मुक्त रखने का उपबंध है । तथापि, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 'बल–प्रयोग' और 'दुस्संधि' में कोई अन्तर नहीं बताता ।

3.2.2.3 बलप्रयोग के भ्रष्टाचार का सामना करने में व्यवस्थापिक सुधार बहुत प्रभावी होते हैं । इसके अतिरिक्त, यद्यपि भ्रष्टाचार के मामले में सामान्य दोषियों की दर कम है, यह देखा गया है कि बलप्रयोग भ्रष्टाचार के दोषियों के मामलों की दर दुस्संधि भ्रष्टाचार की अपेक्षा अधिक है । इसका कारण यह है कि रिश्वत देने वाला भी एक पीड़ित व्यक्ति होता है और क्योंकि उसे भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 24 के अंतर्गत उन्मुक्ति का प्रावधान है, अतः वह रिश्वत लेने वाले के बचाव के लिए आगे आता है । इसके अतिरिक्त, सतर्कता तंत्र द्वारा 'जाल बनाकर पकड़ने' के मामले ऐसे में बहुत प्रभावशाी होते हैं । 'दुस्संधि' भ्रष्टाचार के लिए वैसा ही करना सत्य नहीं होता है । इन मामलों में सिद्धदोष होना बहुत कठिन बन पड़ता है क्योंकि रिश्वत देने वाले और रिश्वत लेने वाले दोनों की मिलीभगत से उन दोनों को लेनदेन का लाभ मिलता है । दुस्सन्धि भ्रष्टाचार का नकारात्मक प्रभाव बहुत ही विपरीत होता है तथा सरकार और प्रायः समाज ही कुल मिलाकर इससे पीड़ित होते हैं ।

3.2.2.4 आयोग का मत है कि 'दुस्संधि' भ्रष्टाचार से प्रभावी विधिक उपायों द्वारा निपटे जाने की आवश्यकता है ताकि रिश्वत देने वाला और रिश्वत लेने वाला दोनों सजा से बच न सकें । साथ ही, दुस्संधि भ्रष्टाचार के लिए सजा अधिक कड़ी कर दी जानी चाहिए । दुस्संधि भ्रष्टाचार के मामलों में, सबूत का भार दोषी पर डाल दिया जाना चाहिए ।

[41] भ्रष्टाचार निरोध अधिनियम की धारा 12

3.2.2.5 हमारी दंडीय न्याय व्यवस्था का मूल सिद्धांत यह है कि प्रत्येक व्यक्ति तब तक निर्दोष माना जाता है जब तक कि उसे दोषी करार नहीं दे दिया जाता । तथापि, भारतीय साक्ष्य अधिनियम में ही इस सिद्धांत के कुछ अपवादों का उपबंध किया गया है । उदाहरण के लिए, भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 113 क में उपबंध है कि 'जब यह प्रश्न हो कि क्या किसी महिला ने अपने पति द्वारा या अपने पति के किसी संबंधी द्वारा सताए जाने के कारण आत्महत्या की है और यह पता चलता है कि उस महिला ने आत्महत्या अपने विवाह की तारीख से सात वर्षों के अन्दर की है और उसके पति या उसके पति के ऐसे संबंधी ने उस महिला के साथ क्रूरता बरती है तो, न्यायालय, मामले की अन्य स्थितियों को ध्यान में रखते हुए, यह मान सकता है कि वह आत्महत्या उसके पति या उसके पति के ऐसे संबंधी द्वारा उकसाई गई थी ।'' इसी प्रकार, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(1)(ड़) में अनुबंध किया गया है कि लोक सेवक दंड कदाचार का अपराधी कहा जाएगा यदि वह उसके द्वारा रखी गई उस सम्पत्ति का हिसाब संतोषजनक ढ़ंग से नही दे पाता है, जो उसकी आय के ज्ञात स्रोतों से अधिक है । अतः यह स्पष्ट हो जाता है कि दोषी लोक सेवक को आय के स्रोतों के संबंध में रखी गई संपत्तियों को न्यायोचित ठहराया जाना होता है । इसके साथ, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 20 में भी यह अनुबंध है कि यदि यह सिद्ध हो जाता है कि दोषी लोक सेवक ने परितोषण स्वीकार किया है तो न्यायालय को यह मानने के लिए बाध्य होना पड़ेगा कि वह परितोषण धारा 7 में उल्लिखित इनाम के लिए था और साबित करने का भार दोषी पर पड़ेगा ।

3.2.2.6 अतः भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 में 'दुस्संधि रिश्वत' के विशेष अपराध लाए जाने का उपबंध करने के लिए उसमें संशोधन की आवश्यकता है । कोई अपराध 'दुस्संधि रिश्वत' के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है यदि किसी लेनदेन का नतीजा या ऐच्छिक नतीजा सरकार, जनता या जन हित को हानि पहुंचाना होता है । इन सभी मामलों में, यदि यह स्थापित कर दिया जाता है कि सरकार या जनता के हित को लोक सेवक के किसी कृत्य के कारण हानि पहुंची है तो न्यायालय यह मान लेगा कि लोक सेवक और निर्णय के लाभार्थी ने 'दुस्संधि रिश्वत' का अपराध किया है । इन सभी मामलों के लिए सजा 10 वर्षों तक बढ़ा दी जानी चाहिए ।

3.2.2.7 सिफारिशें :

क. भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 में 'कपटपूर्ण रिश्वतखोरी' के विशेष अपराध का प्रावधान करने के लिए संशोधन की आवश्यकता है । यदि किसी लेन देन के परिणामस्वरूप अथवा इच्छित परिणाम से राज्य, जनता या जनता के हित की हानि होती है तो ऐसे अपराध को 'कपटपूर्ण रिश्वतखोरी' के रूप में वर्गीकृत किया जाएगा ।

ख. ऐसे सभी मामलों में यदि यह सिद्ध कर लिया जाता है कि किसी लोक सेवक के काम के कारण राज्य के हित या जनता की हानि हुई है तो न्यायालय यह मान लेगा कि लोक सेवक और निर्णय के लाभार्थी ने 'कपटपूर्ण रिश्वतखोरी' का अपराध किया है ।

ग. कपटपूर्ण रिश्वतखोरी के ऐसे सभी मामलों के लिए दंड रिश्वतखोरी के अन्य मामलों की अपेक्षा दोगुना होगा । इस सबंध में कानून के अनुकूल संशोधन किया जाना चाहिए।

3.2.3 अभियोजन के लिए स्वीकृति

3.2.3.1 भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 में यह उपबंध है कि न्यायालय को अधिनियम की धारा 7, 10, 11,13 और 15 के अंतर्गत परिभाषित अपराधों का संज्ञान लेने से पहले सक्षम प्राधिकारी की पूर्व स्वीकृति लेनी आवश्यक होगी । इस उपबंध का उद्देश्य ईमानदार लोक सेवकों को विद्वेषपूर्ण और कष्टमय शिकायतों द्वारा उत्पीड़न से बचाव करना है । सक्षम प्राधिकारी से यह अपेक्षा की जाती है कि वह उसके समक्ष रखे गए साक्ष्य पर अपने विवेक का प्रयोग करते हुए इस बात से अपने को संतुष्ट कर ले कि अभियुक्त लोक सेवक के विरूद्ध कोई प्रथमदृष्टया मामला बनता है या नहीं । यद्यपि इस प्रावधान की मंशा स्पष्ट है, फिर भी यह दलील दी जाती है कि इस खंड का प्रयोग कभी कभी स्वीकृति प्राधिकारी द्वारा बेईमान अधिकारियों को बचाने के लिए किया जाता है । ऐसे भी मामले सामने आए हैं जहां ऐसी स्वीकृति प्रदान करने में असाधारण विलंब हुए हैं । ऐसे भी उदाहरण मिले हैं जहां स्वीकृति प्रदान करने में त्रुटियों का प्रयोग अभियुक्त द्वारा स्वीकृति को चुनौती देने और इसे रद्द कराए जाने के लिए अज्ञानतावश किया जाता है । इससे संपूर्ण कार्यवाही अकृत हो जाती है । आयोग ने स्वीकृति से संबंधित विविध पहलुओं की जांच की है और आयोग का मत है कि ऐसे कुछ क्षेत्र हैं जहां सुधारों की गुंजाइश है और इसके लिए कानून में संशोधन की आवश्यकता पड़ेगी । इनका विवेचन निम्नलिखित पैराग्राफों में किया गया है :–

3.2.3.1.1 *ऐसे मामलों में जहां लोक सेवकों को रंगे हाथों पकड़ा गया हो और उन मामलों में जहां उनकी आय के ज्ञात स्रोतों से अधिक संपत्तियां हों, अभिमुक्ति देना :* – लोक सेवकों के ऐसे अनेक मामले हैं जहां उन्हें रिश्वत मांगते हुए/रिश्वत लेते हुए रंगे हाथों पकड़ा गया है । भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 के अंतर्गत दिए गए बहुप्रयोजी संरक्षण कभी कभी भ्रष्ट लोक सेवकों को न्याय दिलाने में सहायक हो जाते हैं क्योंकि इससे प्रायः स्वीकृति में विलंब कर दिया जाता है या उसे अस्वीकार कर दिया जाता है । विधान की यह मंशा प्रतीत होती है कि लोक सेवक को अपने उचित सरकारी काम का निष्पादन करने में वह पर्याप्त संरक्षण दे । इस उद्देश्य की पूर्ति अच्छी प्रकार से तभी हो सकती है जब यह उपबंध केवल उन मामलों तक सीमित हो जहां आरोपित कदाचार प्रत्यक्ष रूप से सरकारी कामों के निष्पादन से जुड़ा हुआ हो । ऐसे संरक्षण की आवश्यकता उन अपराधों के लिए नहीं हैं जो मूल रूप से निम्नलिखित के प्रत्यक्ष साक्ष्य पर आधारित हों :–

i. रिश्वत मांगना या/और स्वीकार करना,

ii. बिना प्रतिफल के या अपर्याप्त प्रतिफल के मूल्यवान वस्तुएं प्राप्त करना

iii. आय के ज्ञात स्रोतों से अधिक संपत्तियों को रखने के मामले ।

अतः उपर्युक्त स्थितियों में दिए गए संरक्षण को हटाए जाने का मामला बनता है ।

3.2.3.1.2 *अभियोजन के लिए स्वीकृति की वैधता :* यह पाया गया है कि स्वीकृति प्राधिकारी को उनके द्वारा दी गई स्वीकृति पर साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए प्रायः बुला लिया जाता है और ऐसा कई वर्षों के बाद होता है । अनेक मामलों को इन आधारों पर उन्मुक्त/दोषमुक्त कर दिया जाता है कि स्वीकृति प्राधिकारी ने स्वीकृति देते समय अपने विवेक का प्रयोग नहीं किया था । तथापि, ऐसा प्रायः तब होता है जब अन्य सभी साक्ष्य सुनवाई में प्रस्तुत कर दिए गए हों ।

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 का उद्देश्य सक्षम प्राधिकारी की स्वीकृति के बिना अभियोजन को रोकना था । ऐसे अनेक मामलों में, स्वीकृतियों की वैधता का मामला तब उठाया जाता है जब अभियोजन पक्ष सभी साक्ष्यों को प्रस्तुत कर चुका हो । यह स्वीकृति प्राधिकारी के हित में उचित नहीं है क्योंकि यह स्वीकृति अनेक वर्षों पहले से दी जा चुकी हो सकती है । यह अभियुक्त के लिए भी उचित नहीं है कि जो अभियोजन प्रक्रिया के मुख्य भाग से गुजर चुका हो विशेष रूप से तब जब स्वीकृति को अतर्कसंगत पाया गया हो । तथापि, यह भी देखा गया है कि स्वीकृति प्राधिकारी प्रायः इसलिए न्यायालय में उपस्थित नहीं हो पाते क्योंकि उनकी अन्य सरकारी पूर्व–व्यस्तताएं होती हैं और इससे भी सुनवाई पूरी करने में विलंब होते हैं ।

आयोग यह महसूस करता है कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम को संशोधित करने की आवश्यकता है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि स्वीकृति प्राधिकारियों को गवाह के रूप में न बुलाना पड़े और यदि सुनवाई करने वाला न्यायालय स्वीकृति प्राधिकारियों को बुलाना चाहता है तो उसे ऐसा करने के लिए कारणों को लेखबद्ध करना चाहिए । ऐसा प्रथम चरण में होना चाहिए बल्कि न्यायालय द्वारा आरोप तय करने से भी पहले।

3.2.3.1.3 *संसद सदस्यों और विधायकों के लिए स्वीकृति प्राधिकारी :* भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 2 (परिभाषा) संसद सदस्यों और विधायकों को सुस्पष्ट रूप से शामिल नहीं करती । यह मुद्दा कि निर्वाचित प्रतिनिधि लोक सेवक होते हैं या नहीं, विविध न्यायालयों के समक्ष निर्णय के लिए आया । उच्चतम न्यायालय ने पी.वी.नरसिम्हा राव बनाम राज्य (सी.बी.आई/एस.पी.ई.) के एक वाद में निम्नलिखित निर्णय दिया :–

> *''हम समझते हैं कि उड़ीसा उच्च न्यायालय का यह मत सही है कि विधान सभा का सदस्य एक लोक सेवक होता है । लार्ड अटकिन द्वारा मेक. मिलन बनाम गस्ट वाद में और सीकरी, जे. द्वारा कांता खतुरिया मामले में उसे अपना लिए जाने वाले मामले में घोषित किए गए परीक्षण द्वारा निर्णीत, किसी संसद सदस्य या विधायक की स्थिति अवस्थित, स्थायी और पर्याप्त होती है और इसका अस्तित्व उस व्यक्ति से परे स्वतंत्र होता है जिससे यह पद भरा जाता है और इसे एक के बाद एक निरंतर पदासीन द्वारा आनुक्रमिक रूप से भरा जाता है । प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र स्थायी और व्यापक होता है । साधारणतः इसे निर्वाचन क्षेत्र के लिए चुनाव में सफल हुए उम्मीदवार द्वारा विधायी अवधि के दौरान भरा जाता है । जब विधायी अवधि समाप्त हो जाती है तो इस स्थान को अगले चुनाव में सफल हुए उम्मीदवार द्वारा भरा जाता है । अतः हमारे विचार में इसमें कोई संदेह नहीं है कि संसद सदस्य या विधायक पद धारण करता है और उसे लोक कर्तव्य का पालन करना आवश्यक होता है और वह इसके लिए अधिकृत हो जाता है । संक्षेप में, संसद सदस्य या विधायक कथित अधिनियम के प्रयोजनों के लिए एक लोक सेवक होता है ।''*

संविधान संचालन की समीक्षा करने के लिए राष्ट्रीय आयोग ने निम्नलिखित सिफारिश की थी :

''इस मामले में जो दूसरा मुद्दा उठाया गया था वह संसद के किसी सदन में बोलने के लिए या किसी खास ढ़ंग से मतदान करने या मतदान न करने के बदले किसी प्रतिफल को स्वीकार करने में अपराध के संबंध में लिप्त किसी संसद सदस्य के विरूद्ध अभियोजन की मंजूरी देने के लिए सक्षम प्राधिकारी से संबंधित था । किसी संसद सदस्य की नियुक्ति किसी प्राधिकारी द्वारा नहीं की जाती। वह अपने निर्वाचन क्षेत्र या राज्य की विधान सभा द्वारा निर्वाचित किया जाता है और वह संविधान द्वारा विहित शपथ ग्रहण करके अपना स्थान लेता है । सदस्य के रूप में कार्य करते समय, उसे संसद के अन्दर या इसकी समितियों में कृत्यों के संबंध में पीठासीन अधिकारी के अनुशासिक नियंत्रण में रहना पड़ता है । अतः यह कारण बन जाता है कि अभियोजन के लिए मंजूरी यथास्थिति अध्यक्ष या सभापति द्वारा दी जानी चाहिए ।''

आयोग का यह मत है कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 के अंतर्गत अभियोजन के लिए मंजूरी देने के लिए प्राधिकारी निर्वाचित प्रतिनिधियों के मामले में अनुबंधित की जाए । संसद सदस्य के मामले में यह प्राधिकारी यथास्थिति अध्यक्ष या सभापति होना चाहिए । राज्य विधान मंडलों द्वारा इसी प्रकार की प्रक्रिया को अपनाया जाना चाहिए ।

3.2.3.1.4 उन व्यक्तियों को संरक्षण जो न्यायालय द्वारा अपराध का संज्ञान लेते समय लोक सेवक न रह गए हों : भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19(1) निम्नलिखित रूप से पठित है :–

"कोई न्यायालय धारा 7, 10, 11, 13 और 15 के अधीन दंडनीय किसी ऐसे अपराध का संज्ञान, जिसकी बाबत यह अभिकथित है कि वह लोक सेवक द्वारा किया गया है निम्नलिखित की पूर्व मंजूरी के बिना नहीं लेगा :–

(क) ऐसे व्यक्ति की दशा में, जो संघ के मामलों के संबंध में नियोजित है और जो अपने पद से केन्द्रीय सरकार, उस सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी से हटाए जाने के सिवाय नहीं हटाया जा सकता है, केन्द्रीय सरकार से

(ख) ऐसे व्यक्ति की दशा में, जो राज्य के मामलों के संबंध में नियोजित है और जो अपने पद से राज्य सरकार, उस सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी से हटाए जाने के सिवाय नहीं हटाया जा सकता है, राज्य सरकार से

(ग) किसी अन्य व्यक्ति की दशा में, उसे उसके पद से हटाने के लिए, सक्षम प्राधिकारी से''

एक मुद्दा उठाया गया है कि क्या ऐसी मंजूरी तब आवश्यक होगी यदि न्यायालय द्वारा संज्ञान लेने वाले दिन में अभियुक्त लोक सेवक नहीं रह जाता । उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया है कि जहां अभियुक्त न्यायालय द्वारा अपराध का संज्ञान लेने वाले दिन लोक सेवक नहीं रह जाता, वहां धारा

6 के उपबंध (भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1947) लागू नहीं होंगे और उसके विरूद्ध अभियोजन सक्षम प्राधिकारी द्वारा पूर्व मंजूरी के बिना निष्फल नहीं होगा ।

इस उपबंध का उद्देश्य लोक सेवक को विद्वेषपूर्ण अभियोजन से संरक्षण प्रदान करना है और उसकी हैसियत अभिकथित अपराध किए जाने के समय प्रासंगिक है, न कि न्यायालय द्वारा अपराध के संज्ञान को लिए जाने के समय की हैसियत । न्यायालयों द्वारा दिए गए अर्थनिर्णय से ऐसी स्थिति उत्पन्न हो सकती है जिसमें अधिवर्षिता आयु प्राप्त होने पर अथवा सेवा से त्याग पत्र दिए जाने पर किसी व्यक्ति को इस उपबंध का संरक्षण नहीं मिल सकेगा, चाहे अभिकथित अपराध को सेवा के दौरान रह कर भी किया गया हो । अतः कानून में ऐसा संशोधन किया जाना चाहिए जिससे अवकाश प्राप्त लोक सेवक भी संरक्षण के उसी स्तर को प्राप्त कर सके जिस स्तर पर एक सेवा–रत लोक सेवक प्राप्त करता है ।

3.2.3.1.5 *मंजूरियों का शीघ्र निपटान करना :* आयोग को यह प्रतिवेदित किया गया है कि कई बार सरकार से अभियोजन के लिए मंजूरी प्राप्त करने में पर्याप्त रूप से विलंब हो जाता है जिसका परिणाम यह होता है कि भ्रष्ट अधिकारियों के विरूद्ध कार्यवाई नहीं हो पाती । आयोग का यह मत है कि जहां सरकार सक्षम प्राधिकारी होती है, वहां पर मंजूरी प्रदान करने के लिए एक प्रणाली बना दिए जाने की आवश्यकता है जिससे ऐसे मामलों की प्रक्रिया में विलंब न हो सके । आयोग यह सिफारिश करना चाहेगा कि संघीय सरकार के स्तर पर अभियोजन के लिए मंजूरी की प्रक्रिया किसी सशक्त समिति द्वारा की जानी चाहिए जिसमें केन्द्रीय सतर्कता आयुक्त और सरकार के विभागीय सचिव[42] हों । इन दोनों के बीच किसी मतभेद होने की स्थिति में, इसका समाधान विषय को पूरे केन्द्रीय सतर्कता आयोग के समक्ष रख कर किया जाना चाहिए । यदि सरकार के किसी सचिव के विरूद्ध मंजूरी मांगी गई हो तो शक्तीकरण समिति में मंत्रिमंडल सचिव और केन्द्रीय सतर्कता आयुक्त शामिल होने चाहिए ।

3.2.3.2 सिफारिशें :–

क. ऐसे किसी लोक सेवक के विरूद्ध कानूनी कार्रवाई करने के लिए पूर्व स्वीकृति की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए, जिसे रंगे हाथों पकड़ा गया हो अथवा आय के ज्ञात स्रोतों से अधिक की सम्पत्ति के मामले हों ।

ख. भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम में यह सुनिश्चित करने के लिए संशोधन किया जाना चाहिए कि स्वीकृति देने वाले प्राधिकारियों को बुलाना न पड़े और इसके बजाय समुचित प्राधिकारी द्वारा कागजात प्राप्त करके न्यायालयों के समक्ष पेश कर दिए जाएं।

ग. संसद अथवा विधान मंडल के पीठासीन अधिकारी को कमशः संसद सदस्य और विधायकों की स्वीकृति दिए जाने के लिए पदासीन किया जाना चाहिए ।

घ. सेवारत लोक सेवकों पर अब तक लागू कानूनी कार्रवाई के लिए पूर्व अनुमति की आवश्यकता अवकाश प्राप्त लोक सेवकों पर भी उनके द्वारा सेवा के दौरान निष्पादित किए गए काम के लिए लागू होगी ।

[42] धारा 19(1) में अनुबंध है कि मंजूरी उस प्राधिकारी द्वारा दी जानी चाहिए जो अभियुक्त लोक सेवक को हटाए जाने के लिए सक्षम हो । इसके लिए धारा 19 में संशोधन किया जाना आवश्यक होगा ।

ड. ऐसे सभी मामलों में जहां भारत सरकार कानूनी कार्रवाई करने की स्वीकृति प्रदान करने के लिए अधिकृत हो, वहां इस अधिकार को केन्द्रीय सतर्कता आयुक्त और सरकार के विभागीय सचिव की अधिकारिक समिति को प्रत्यायोजित कर दिया जाना चाहिए । दोनों व्यक्तियों के बीच मतभेद हो जाने के मामले में इसे पूरे केन्द्रीय सतर्कता आयोग के समक्ष रख कर सुलझाया जा सकता है । यदि स्वीकृति भारत के सचिव के विरूद्ध आवश्यक हो तो अधिकारिक समिति में मंत्रिमंडल सचिव और केन्द्रीय सतर्कता आयोग शामिल होंगे । इसी प्रकार के प्रबंध राज्य स्तर पर भी किए जा सकते हैं । सभी मामलों में कानूनी कार्यवाई या अन्यथा स्वीकृति प्रदान करने वाला आदेश दो माह के भीतर जारी किया जाएगा । अस्वीकृति के मामले में, अस्वीकृति के कारणों को संबंधित विधायी मंडल के समक्ष वार्षिक रूप से प्रस्तुत किया जाना चाहिए ।

3.2.4 भ्रष्ट लोक सेवकों द्वारा क्षति पूर्ति करने का दायित्व

3.2.4.1 जहां एक ओर लोक सेवकों द्वारा किए जाने वाले भ्रष्ट कृत्य के कारण वे भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अंतर्गत सजा के पात्र हैं, वहीं दूसरी ओर गलत काम करने वाले के लिए कोई सिविल दायित्व नहीं है और न ही किसी ऐसे व्यक्ति/संगठन को प्रतिपूर्ति के लिए प्रावधान है, जिसके प्रति गलत काम हुआ है या जो लोक सेवक के कदाचार के कारण पीड़ित हुआ है । संविधान संचालन समीक्षा के लिए राष्ट्रीय आयोग ने उन मामलों में दायित्व के नियतन के लिए बृहत् कानून को अधिनियमित करने की सिफारिश की थी, जहां लोक सेवकों ने अपने असद्भावपूर्ण कृताकृतों से सरकार को नुकसान पहुंचाया हो । (पैरा 6.17)

3.2.4.2 उच्चतम न्यायालय ने पैट्रोल पंपों[43] के अनुचित आबंटन के मामलों में अनुकरणीय क्षतिपूर्ति तो अवश्य लगाई परंतु एक समीक्षा याचना[44] में इस आदेश को बाद में विपरीत कर दिया गया जिसमें न्यायालय ने निर्णय दिया कि यद्यपि लोक सेवकों के विरूद्ध अनुकरणीय प्रतिपूर्त्तियों के आदेश दिए जा सकते हैं परंतु ऐसा करना इन मामलों में न्यायपूर्ण नहीं था । आयोग का यह मत है कि उन मामलों में जहां लोक सेवक अपने भ्रष्ट कृत्यों से सरकार या नागरिकों को कोई हानि पहुंचाते हैं तो उन्हें इस पर हुई हानि को पूरा करने का पात्र बनाया जाना चाहिए और इसके अलावा, उसे क्षतिपूर्ति करने का पात्र भी बनाया जाना चाहिए । भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम में एक अध्याय को जोड़कर इसका प्रावधान किया जा सकता है । जहां ऐसी क्षतिपूर्ति का भुगतान देय होगा, क्षतिपूर्ति को आंके जाने के सिद्धांत और उन लोगों को क्षति पूर्ति देने के मानदंड, जिनके साथ गलत किया गया है, ऐसे मामलों के हालातों को स्पष्ट रूप से लेखबद्ध किया जाना चाहिए । यह भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि पर्याप्त सुरक्षा उपाय किए गए हों ताकि सद्भावपूर्ण भूलों को ऐसी क्षतिपूर्तियों का आदेश देने में ही खत्म न कर दिया जा सके । अन्यथा, लोक सेवक स्वच्छ और शीघ्र ढंग से निर्णय लेने में हतोत्साहित होंगे ।

[43] (1996) 6 उच्चतम न्यायालय मामले 593
[44] (1996) 6 उच्चतम न्यायालय मामले 667

3.2.4.3 सिफारिशः

क. आपराधिक मामलों में दंड के अतिरिक्त, कानून में प्रावधान होना चाहिए कि ऐसे लोक सेवकों को, जो अपने भ्रष्ट क्रियाकलापों से राज्य या नागरिकों को हानि पहुंचाते हैं, वे इस हानि को पूरा करने के लिए जिम्मेदार हों और, इसके अतिरिक्त हर्जाने के लिए जिम्मेदार हों । इस बात को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम में एक अध्याय को जोड़ कर किया जा सकता है ।

3.2.5 भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अंतर्गत सुनवाई में तेजी लाना :

3.2.5.1 सुनवाई न्यायालयों द्वारा मामलों का निपटारा करने में लगने वाले औसतन समय में वर्षों से वृद्धि होती रही है । 1996 के अंत तक, सुनवाई के लिए निलंबित मामलों की संख्या 8225 थी जब कि वर्ष 2005 के अंत तक सुनवाई के लिए निलंबित मामलों की संख्या बढ़ कर 12703 हो गई । वर्ष 2005 में पंजीकृत मामलों की संख्या 3008 थी, 2162 मामलों में आरोप पत्र जारी किए गए थे और 2048 मामलों की सुनवाई पूर्ण हो चुकी थी । (ये आंकड़े राज्य भ्रष्टाचार निरोध स्कंधों द्वारा लिए गए मामलों से संबंधित हैं और राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो द्वारा प्रकाशित 'भारत में अपराध' से लिए गए हैं ।)

3.2.5.2 मामलों के विचारण में विलंब का एक प्रमुख कारण अभियुक्त द्वारा कभी एक दलील तो कभी दूसरी दलील देकर बार बार स्थगन की तारीखें लिए जाने की प्रवृत्ति है । अभियुक्त की ओर से यह भी प्रवृत्ति रहती है कि वह लगभग प्रत्येक अन्तरिम आदेश को, चाहे वह किसी विचारण न्यायालय द्वारा विविध आवेदन–पत्र पर ही क्यों न जारी किया गया हो, उच्च न्यायालय और बाद में उच्चतम न्यायालय में चुनौती देकर विचारण पर रोक आदेश प्राप्त कर लेता है । अभियुक्त को दिए जाने वाले इस प्रकार के अवसरों पर दंड प्रक्रिया संहिता में अनुकूल प्रावधानों को ला कर प्रतिबंध लगाया जा सकता है । न्यायधीशों के लिए भी यह अनिवार्य कर दिया जाना चाहिए कि वे किसी दी गई तारीख पर बुलाए गए और उपस्थित गवाहों की जांच कर लें । स्थगन तारीखें केवल विवश कारणों के लिए ही दी जानी चाहिएं ।

3.2.5.3 भ्रष्टाचार मामलों के शीघ्र विचारण को सुनिश्चित करने के लिए भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम में निम्नलिखित उपबंध किए गए :–

क. अधिनियम के अंतर्गत सभी मामलों पर विचारण विशेष न्यायाधीश द्वारा किए जाने होंगे ।

ख. न्यायालय की कार्यवाही दिन प्रतिदिन के आधार पर की जानी चाहिए ।

ग. कोई भी न्यायालय इस अधिनियम के अधीन कार्यवाही पर रोक के आदेश मंजूर की गई शास्ति में किसी चूक या अनियमितता के आधार पर तब तक नहीं जारी नहीं करेगा जब तक न्यायालय के विचार में उचित न्याय करने में विफलता न हुई हो ।

3.2.5.4 अधिनियम के अंतर्गत मामलों पर विचारण का अनुभव उन प्रावधानों के बावजूद निराशाजनक रहा है, जिन्हें उस समय मार्ग में बाधक के रूप में समझा जाता था । यद्यपि, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के

अंतर्गत भ्रष्टाचार मामलों पर विचारण करने वाले न्यायाधीशों को विशेष न्यायाधीश घोषित कर दिए गए हैं, फिर भी, उन्हें अनेक अन्य गैर–भ्रष्टाचार मामले दे दिए गए हैं जिनके परिणामस्वरूप भ्रष्टाचार के मामलों के विचारण में विलंब हो जाता है ।

3.2.5.5 आयोग यह महसूस करता है कि भ्रष्टाचार मामलों में विचारण के विविध चरणों के लिए समय सीमा नियत करने की आवश्यकता है । ऐसा दंड प्रक्रिया संहिता में संशोधन लाकर किया जा सकता है । इससे भी अधिक महत्वूपर्ण बात यह है कि विचारण को दिन प्रतिदिन के आधार पर किए जाने के लिए विद्यमान प्रावधानों का पालन अति सावधानी से किया जाना चाहिए ।

3.2.5.6 सिफारिशें :

क. सुनवाई के विविध चरणों के लिए समय सीमा नियत करने के लिए एक कानूनी प्रावधान लाने की आवश्यकता है । ऐसा आपराधिक दंड संहिता में संशोधन करके किया जा सकता है ।

ख. इस बात को सुनिश्चित करने के लिए कदम उठाए जाने चाहिए कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के प्रावधानों के अन्तर्गत जिन न्यायाधीशों को विशेष न्यायाधीशों के रूप में घोषित किया गया हो, वे अधिनियम के अन्तर्गत मामलों के निपटारे की ओर प्राथमिक ध्यान दें । जब अधिनियम के अन्तर्गत अपर्याप्त काम हों, केवल तभी विशेष न्यायाधीशों को अन्य उत्तरदायित्व सौंपे जाने चाहिए ।

ग. यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अन्तर्गत मामलों की सुनवाई किए जाने वाले न्यायालयों की कार्यवाही को दैनिक आधार पर किया जाए और किसी विचलन की स्वीकृति न दी जाए ।

घ. उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय अवांछित स्थगनों और परिहार्य विलंबों को रोकने के लिए दिशा–निर्देश अधिकथित कर सकता है ।

3.3 निजी क्षेत्र में लिप्त भ्रष्टाचार

3.3.1 ट्रांसपेरेंसी इंटरनेशनल के ब्राइब पेयर्स इंडैक्स 2006 के अनुसार भारत, चीन और रूस से किए जाने वाले व्यवसायों में, जो इस इंडैक्स में सबसे नीचे थे, रिश्वत देने की प्रवृत्ति सबसे अधिक रही है । इससे यह मुद्दा उठता है कि निजी निकायों में कैसे भ्रष्टाचार से निपटा जाता है ।

3.3.2 निजी क्षेत्रों में भ्रष्टाचार, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधिकार क्षेत्र में नहीं आता । तथापि, यदि कोई निजी क्षेत्र (या उनके द्वारा काम पर लगाए गए किसी व्यक्ति) किसी लोक प्राधिकारी को रिश्वत देने में लिप्त होता है तो वह भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अंतर्गत रिश्वत की दुष्प्रेरणा के अपराध के लिए सजा का पात्र हो सकता है । सार्वजनिक सेवाओं की बहुत बड़ी संख्या जिन्हें पहले परंपरागत ढंग से सरकारी

एजेंसियों द्वारा हाथ में लिया जाता था, उन्हें अब गैर सरकारी एजेंसियों को दिया जा रहा है । अतः ऐसी एजेंसियों को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन लाना आवश्यक हो गया है । इसके साथ, गैर सरकारी संगठनों की एक बहुत बड़ी संख्या सरकार से पर्याप्त मात्रा में सहायता प्राप्त कर रही हैं । क्योंकि ये एजेंसियां सार्वजनिक धन खर्च करती हैं, यह अपेक्षित होगा कि ऐसे संगठनों द्वारा लगाए गए लोगों को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के प्रयोजन के लिए लोक सेवक समझा जाना चाहिए ।

3.3.3 तथापि, भ्रष्टाचार के विरूद्ध संयुक्त राष्ट्र कन्वेंशन की धारा 12, जिसमें भारत ने भी हस्ताक्षर किए हैं, निजी क्षेत्र में भ्रष्टाचार का निपटान निम्न प्रकार से करता है :

1. *प्रत्येक राज्य दल, निजी क्षेत्र में लिप्त भ्रष्टाचार की रोकथाम के लिए अपने राज्य के कानून के मूलभूत सिद्धांतों के अनुसार, उपाय करेगा, निजी क्षेत्र में लेखा प्रणाली और लेखा परीक्षा के मानकों में वृद्धि करेगा और जहां उचित हो, वहां ऐसे उपायों के पालन में विफलता के लिए प्रभावी समानुपात और सिविल, प्रशासनिक या आपराधिक दंडों का प्रावधान करेगा ।*

2. *इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए उपायों में अन्य बातों के अलावा, निम्नलिखित को शामिल कर सकते हैं :–*

   (क) कानून प्रवर्तन एजेंसियों और संगत निजी अस्तित्वों के बीच सहयोग को विकसित करना

   (ख) संगत निजी अस्तित्वों की सत्यनिष्ठा को सुरक्षित रखने के लिए निर्धारित प्रतिमानकों और कार्य प्रणालियों को विकसित करना जिनमें व्यवसाय और सभी संगत वृत्तियों की गतिविधियों के सही, सम्मानजनक और उचित निष्पादन के लिए और हित–संघर्षों की रोकथाम और व्यवसायों के बीच अच्छे व्यापारिक अनुप्रयोगों के विकास के लिए और राज्य के साथ व्यवसायों के संविदायी संबंध के लिए आचार संहिता शामिल है ।

   (ग) निजी अस्तित्वों के बीच पारदर्शिता का विकास करने के लिए, जिसमें जहां उचित हो, निगमित अस्तित्वों की स्थापना और प्रबंधन में लिप्त वैधानिक और वास्तविक लोगों का पता लगाने के संबंध में उपाय शामिल हैं ।

   (घ) निजी अस्तित्वों को विनियमित करने वाली कार्य प्रणालियों के दुरूपयोग को रोकना, जिसमें व्यापारिक गतिविधियों के लिए सार्वजनिक प्राधिकारियों द्वारा प्रदान की गई आर्थिक सहायता और लाईसेंसों से संबंधित कार्यप्रणालियां शामिल हैं ।

   (ड.) पूर्व लोक अधिकारियों की वृत्तिक गतिविधियों पर अथवा लोक अधिकारियों को उनके अवकाश प्राप्ति या त्याग पत्र दिए जाने के बाद निजी क्षेत्र द्वारा नियोजित करने पर प्रतिबंधों द्वारा और, जहां उचित हो, न्यायोचित समय अवधि के लिए उनके हित–संघर्षों की रोकथाम करना, जहां ऐसी गतिविधियां या नियोजन का उन लोक अधिकारियों द्वारा अपने सेवा काल के दौरान किए गए कृत्यों अथवा उनके द्वारा निरीक्षण किए गए कृत्यों से सीधा संबंध हो और

(च) यह सुनिश्चित करना कि निजी उद्यमों का, उनके ढांचे और आकार को ध्यान में रखते हुए, भ्रष्टाचार के कृत्यों को रोकने और उनका पता लगाने में सहायता करने के लिए पर्याप्त आन्तरिक लेखा परीक्षण नियंत्रण हो और यह कि ऐसे निजी उद्यमों के लेखों और अपेक्षित वित्तीय विवरणों की उचित लेखा परीक्षा और प्रमाणीकरण कार्यप्रणाली हो ।

3. भ्रष्टाचार को रोकने के लिए, प्रत्येक राज्य दल, लेखों और अभिलेखों, वित्तीय विवरणों के ब्यौरों से संबंधित और लेखा प्रणाली और लेखा परीक्षा मानकों से संबंधित राज्य के कानूनों और विनियमों के अनुसार, इस कन्वेंशन के अनुसार स्थापित किसी अपराध को करने के प्रयोजन से किए गए निम्नलिखित कृत्यों का निषेध करने के लिए ऐसे उपाय करेगा जो आवश्यक हों:–

(क) लेखा बहियों से परे लेखों की स्थापना

(ख) लेखा खातों से बाहर या अपर्याप्त रूप से पता लगाए गए लेनदेनों को करना

(ग) गैर–विद्यमान व्ययों को लेखबद्ध करना

(घ) दायित्वों की उनकी गलत पहचान से प्रविष्टि करना

(ड.) झूठे कागजातों का प्रयोग करना और

(च) लेखा बहियों के कागजातों का कानून के प्रकाश मे आने से पहले ही जानबूझ कर नष्ट कर देना ।

4. प्रत्येक राज्य दल उन खर्चों पर कर कटौती की मंजूरी नहीं देगा, जिन खर्चों को रिश्वत के रूप में किया गया हो, और जहां उचित हो अन्य ऐसे खर्चों को, जिन्हें भ्रष्ट आचार को जारी रखते हुए किया गया हो क्योंकि ये रिश्वत इस कन्वेंशन की धारा 15 और 16 के अनुसार स्थापित अपराधों के संघटक तत्वों में से एक है ।

3.3.4 हांग कांग का रिश्वतखोरी निवारण अध्यादेश (पीबीओ) निजी क्षेत्र में भ्रष्टाचार पर विशेष रूप से विचार करता है । उदाहरण के लिए, पीबीओ की धारा 9 निजी कंपनियों के हितों की उनके नियोजकों को उनके भ्रष्ट कर्मचारियों से सुरक्षा प्रदान करके करती है । धारा 9 भी किसी एजेंट को उसके प्रधान के कार्यों या व्यापार का संचालन करते हुए, प्रधान की मंजूरी लिए बिना किसी लाभ को स्वीकार किए जाने की मनाही करती है ।

3.3.5 भारत में, कंपनी अधिनियम, 1956 ऐसा सांविधिक ढांचा प्रदान करता है जो कंपनी की आंतरिक प्रक्रियाओं पर नियंत्रण करता है । कंपनी एक विधिक व्यक्ति है जिसकी आंतरिक प्रक्रियाएं कंपनी अधिनियम तथा पार्षद अन्तर्नियम द्वारा निर्धारित की जाती हैं । अनुपालन न किए जाने के मामले में कंपनी और इसके दोषी अधिकारियों के विरूद्ध दंड प्रावधानों का अवलंब लिया जाता है । कंपनी अधिनियम 1956

में कंपनियों और उनके निदेशकों और अधिकारियों द्वारा दंडनीय अपराधों के विरूद्ध दंड प्रावधान समाविष्ट हैं । यद्यपि कंपनी अधिनियम 1956 के अधीन भ्रष्टाचार या रिश्वतखोरी के अपराधों का उल्लेख नहीं किया गया है परंतु कंपनियों और उनके अधिकारियों द्वारा की गई गलतियों के वादों को इस प्रकार से सुलझाया जाता है : लेखा और लेखा परीक्षा का तंत्र (धारा 211), धारा 209 क के अधीन निरीक्षण, तुलन पत्र की तकनीकी छानबीन (धारा 234) धारा 235/237 या धारा 247 के अंतर्गत जांच, धारा 233 क के अधीन विशेष लेखा परीक्षा, कंपनी कानून बोर्ड (सीएलबी) की धारा 388 ख के अधीन संदर्भ आदि । इसके अतिरिक्त, कंपनियों के लिए वित्तीय औचित्य से संबंधित विविध पहलुओं की जांच करने के लिए प्रबंधकीय बोर्ड की लेखा परीक्षा समितियों को गठित करने की आवश्यकता होती है । आयोग यह महसूस करता है कि निजी क्षेत्र में भ्रष्टाचार का 'निगमित शासन पर विनियमन' के प्रभावशाली प्रवर्तन द्वारा मुकाबला किया जाना चाहिए।

3.3.6 आयोग का आगे यह भी मत है कि निजी क्षेत्र में भ्रष्टाचार से विद्यमान कानूनों और विनियमों के प्रभावशाली प्रवर्तन द्वारा निपटा जाना चाहिए। पूरे निजी क्षेत्र की गतिविधियों को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के शिकंजे में लाना न तो अपेक्षित होगा और न ही व्यवहारिक होगा । ('गंभीर आर्थिक अपराध' का विवेचन बाद में इस अध्याय के पैरा 3.7 में किया गया है ।)

3.3.7 सिफारिशें :

क. सार्वजनिक उपयोगिता सेवाओं को प्रदान करने वाले निजी क्षेत्र को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधिकार–क्षेत्र में लाने के लिए इस अधिनियम में अनुकूल संशोधन किए जाने चाहिए ।

ख. ऐसी गैर–सरकारी एजेंसियों को जिन्हें कोष की पर्याप्त राशि प्राप्त होती हो, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अन्तर्गत शामिल किया जाना चाहिए । ऐसे मानदंड अधिकथित किए जाने चाहिए कि यदि किसी संस्थान या निकाय को पिछले किन्हीं तीन वर्षों के दौरान अपनी वार्षिक प्रचालन लागतों से 50 प्रतिशत अधिक राशि मिली हो या एक करोड़ के बराबर या उससे अधिक राशि प्राप्त हुई हो तो उसे उस अवधि के दौरान 'पर्याप्त कोष' प्राप्त करने वाला समझा जाना चाहिए और ऐसे कोष का उद्देश्य भी बताया जाना चाहिए ।

3.4 भ्रष्ट तरीकों से प्राप्त की गई गैर–कानूनी संपत्तियों को जब्त करना

3.4.1 भ्रष्ट लोक सेवकों का अभियोजन और उनकी अनुवर्ती दोषसिद्धि भ्रष्टाचार के परिमाण के अनुरूप नहीं होती । जैसाकि पहले कहा जा चुका है, सबूत का अपेक्षित स्तर और कार्यप्रणाली की बाधाओं ने यह सुनिश्चित कर दिया है कि भ्रष्ट लोक सेवकों की बहुत बड़ी संख्या दोषसिद्ध नहीं हो पाती । इससे बदत्तर यह बात है कि प्रायः वे अपनी पाप की कमाई को दंडमुक्त हो कर सबके सामने दिखाते हैं । यह आवश्यक है कि आपराधिक अभियोजन के अलावा, भ्रष्ट लोक सेवक को उसकी पाप की कमाई के स्वामित्व से भी बेदखल कर दिया जाना चाहिए ।

3.4.2 भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम में लोक सेवक की आय के ज्ञात स्रोतों से अधिक की संपत्तियों को जब्त करने का उपबंध है । तथापि, यह उपबंध अपर्याप्त साबित हुआ है क्योंकि ऐसी जब्ती संगत अपराधों के लिए केवल दोषसिद्ध हो जाने पर ही संभव है । इस समय, लोक सेवकों की असंवैधानिक रूप से अधिग्रहित की गई संपत्ति को जब्त और कुर्क करने के लिए दंड विधि संशोधन अध्यादेश, 1944 के प्रावधानों का अवलंब लिया जाता है । इस अध्यादेश के अधीन, असंवैधानिक रूप से अधिग्रहित संपत्ति की अन्तरिम कुर्की के लिए प्रावधान हैं । विशेष न्यायाधीश किसी अधिकृत व्यक्ति द्वारा आवेदन दिए जाने के आधार पर ऐसा करने के लिए सशक्त है । अपराध मामले के नतीजे पर निर्भर करते हुए, कुर्क की गई संपत्ति को या तो जब्त कर लिया जाता है या विमुक्त कर दिया जाता है ।

3.4.3 विद्यमान प्रावधानों में एक और त्रुटि यह है कि कुर्की के लिए प्रक्रिया तभी चालू होगी जब न्यायालय अपराध का संज्ञान ले लेगा । वास्तविक स्थितियों में, ऐसा करने से बहुत विलंब हो सकता है क्योंकि अभियुक्त को अपने पाप की कमाई को छिपा देने या समायोजित कर लेने के लिए समय मिल जाएगा । तथापि, विद्यमान प्रावधानों के अधीन, कुर्की के अनुरोध को फाइल करने के लिए राज्य या संघ सरकार अधिकृत करती है। ऐसा करने में भी समय लग सकता है ।

3.4.4 दिल्ली विकास प्राधिकरण बनाम स्कीपर कंस्ट्रक्शन कंपनी (प्राइवेट लिमिटेड) के वाद में उच्चतम न्यायालय ने पाया है कि :

> *''लोक पदों पर आसीन व्यक्तियों द्वारा भ्रष्ट और असंवैधानिक कृत्यों और सौदों में लिप्त होकर प्राप्त की गई संपत्तियों की जब्ती के लिए एक कानून के उपबंध की हमारे समाज की वर्तमान स्थिति में एक कराहती हुई आवश्यकता है ।''*

3.4.5 विधि आयोग ने अपनी 166वीं रिपोर्ट (1999) में निम्नलिखित विचार व्यक्त किए हैं :–

> *''भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम भ्रष्टाचार रोकने में पूर्णतया नाकाम रहा है । इस तथ्य के बावजूद कि भारत को विश्व के सबसे अधिक भ्रष्ट देशों में से एक गिना जाता है, अभियोजनों की संख्या और इससे आगे अभियोगों की संख्या सबसे कम है । किसी भ्रष्ट मंत्री या किसी भ्रष्ट सर्वोपरि लोक सेवक के विरूद्ध अधिनियम के अधीन शायद ही कोई अभियोजन किया जाता होगा और बहुत ही कम संख्या में यदि अभियोजन होता भी है तो वह अभियोजन किसी निष्कर्ष पर शायद ही पहुंचता है । हर अवस्था में, प्रक्रिया पूरी करने के लिए पुनरीक्षण और रिट याचिका होंगी ।''*

3.4.6 उसी रिपोर्ट में, विधि आयोग ने भ्रष्ट लोक सेवकों की संपत्तियों की जब्ती के लिए कानून के अधिनियमन का सुझाव भी दिया था और एक बिल 'भ्रष्ट लोक सेवक (संपत्ति की जब्ती)' शीर्षक से भी नत्थी किया गया था । यह रिपोर्ट सरकार के पास फरवरी 1999 से विचारार्थ लंबित पड़ी है । इस बिल के संगत प्रावधान इस प्रकार पठित हैं :–

> *''जब कोई व्यक्ति उप धारा (1) के प्रावधानों का उल्लंघन करके असंवैधानिक रूप से अधिग्रहित किसी सम्पत्ति को प्राप्त करता है तो ऐसी सम्पत्ति अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार केन्द्रीय सरकार द्वारा जब्त की जा सकती है ।''*

3.4.7 ड्राफ्ट बिल के अंतर्गत किसी भी लोक सेवक के लिए किसी 'असंवैधानिक अधिग्रहित संपत्ति' को रखना निषेध है, और यह उपबंध किया गया है कि ऐसी संपत्ति को सरकार द्वारा जब्त कर लिया जाए । जब्ती की शक्तियों को सक्षम प्राधिकारी (सीवीसी) को दिए जाने का प्रस्ताव है । जब्ती से संबंधित प्रस्तावित बिल के प्रावधान उस प्रावधान के अतिरिक्त हैं, जो कम से कम सात वर्ष के लिए दोषसिद्धि से संबंधित है, जिसे 14 वर्षों तक बढ़ाया जा सकता है । प्रस्तावित बिल के प्रावधान न केवल लोक सेवक पर लागू होते हैं, बल्कि ऐसे प्रत्येक व्यक्ति पर भी लागू होते हैं, जो लोक सेवक का ''रिश्तेदार'' या ऐसे व्यक्ति का ''साथी'' या ऐसी सम्पत्ति का धारक है जो पहले लोक सेवक के पास किसी समय पर थी, जब तक कि ऐसा सम्पत्ति धारक साबित न कर दे कि पर्याप्त प्रतिफल के लिए सद्भावपूर्ण वह उस सम्पत्ति का अंतरित व्यक्ति था । ड्राफ्ट बिल में यह भी अनुबंध किया गया है कि इस बात को सिद्ध करने का भार अभियुक्त लोक सेवक पर होगा कि जब्त की जा रही सम्पत्ति असंवैधानिक रूप से अधिग्रहित नहीं की गई है । क्योंकि कार्यवाही सिविल प्रकृति की होगी, साबित करने का स्तर इतना सख्त नहीं होगा जितना कि आपराधिक विचारण में होता है।

3.4.8 आयोग के ध्यान में आया है कि जम्मू और कश्मीर विधान मंडल ने 'भ्रष्टाचार निवारण (संशोधन) अधिनियम 2006' पारित कर दिया है । इस अधिनियम में लोक सेवक की उन संपत्तियों की जब्ती और उन्हें कुर्क करने का प्रावधान है जो कृताकृत द्वारा अधिग्रहित की गई हैं और जो भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 5 के अधीन आपराधिक कदाचार के अपराध को निर्मित करता है । अभिग्रहण की प्रारंभिक शक्तियां जांच अधिकारी को दी गई हैं । तथापि, जांच अधिकारी द्वारा जारी अभिग्रहण आदेश को 48 घंटों के अन्दर इसकी तुष्टि के लिए या अन्यथा 'अभिहित प्राधिकारी' के समक्ष प्रस्तुत किया जाना होता है । 'अभिहित प्राधिकारी' राज्य सरकार द्वारा अधिसूचित किया जाता है, और वह सरकार के सचिव पद के अधिकारी के स्तर से नीचे का नहीं होता । अभिहित प्राधिकारी के आदेश के विरूद्ध अपील विशेष न्यायालय में की जा सकती है । विशेष न्यायालय, यदि ऐसी कुर्की के संबंध में संतुष्ट है तो ऐसी संपत्ति की जब्ती का आदेश दे सकता है । अतः जम्मू और कश्मीर भ्रष्टाचार निवारण (संशोधन) अधिनियम 2006 का क्षेत्र विधि आयोग द्वारा सुझाए गए ड्राफ्ट बिल की तुलना में कुछ सीमित सा है । तथापि, जम्मू और कश्मीर अधिनियम दोषसिद्धि पर ही जब्ती के लिए प्रावधान करता है ।

3.4.9 आयोग का मत है कि आय से अधिक सम्पत्ति रखने के लिए दोषसिद्ध लोक सेवक की संपत्तियों की जब्ती के लिए कानून को सबूत का भार उस लोक सेवक पर अंतरित कर देना चाहिए जो दोषसिद्ध है । ऐसे मामलों में उपधारणा यह होनी चाहिए कि लोक सेवक के कब्जे में पाई गई आय से अधिक संपत्तियों को उस के द्वारा भ्रष्ट साधनों से अधिग्रहित की गई थीं और सम्पत्तियों की जब्ती के लिए संभाव्यता की प्रबलता का सबूत पर्याप्त होगा । ये अनिवार्यताएं विधि आयोग द्वारा प्रस्तावित ड्राट बिल में पर्याप्त रूप से पूरी हो रही हैं ।

3.4.10 सिफारिश :

क. विधि आयोग द्वारा दिए गए सुझाव के अनुसार भ्रष्ट लोक सेवक (सम्पत्ति का समपहरण) बिल को बिना किसी और विलंब के अधिनियमित किया जाना चाहिए ।

3.5 'बेनामी'[45] लेनदेन का निषेध

3.5.1 विधि आयोग ने अपनी 57वीं और 130वीं रिपोर्टों में बेनामी लेनदेनों और बेनामी संपत्तियों को अधिग्रहण करने का निषेध करते हुए एक कानून के अधिनियमन की सिफारिश की थी । बेनामी लेनदेन (निषेध) अधिनियम 1988 शीर्षक से एक कानून 1988 में पारित किया गया था । अधिनियम उस व्यक्ति पर प्रतिबंध लगाता है जिसने सम्पत्ति किसी दूसरे व्यक्ति के नाम से लेकर अपने नाम में दावा करने के लिए अधिग्रहित की हो । अधिनियम की धारा 3 बेनामी लेनदेनों का निषेध करती है जबकि धारा 4 अधिग्रहण करने वाले को बेनामीदार से सम्पत्ति को वसूल करने से निषिद्ध करती है ।

3.5.2 अधिनियम की धारा 5 बेनामी सम्पत्ति के अधिग्रहण की मंजूरी देती है । इसमें कहा गया है कि :

''(1) बेनामी रखी गई सभी सम्पत्तियों को ऐसे प्राधिकारी द्वारा ऐसे ढंग से और ऐसी पद्धति का अनुसरण करने के बाद अधिग्रहण किया जा सकेगा जो कि निर्धारित कर लिया गया हो ।

(2) किसी प्रकार के संशय को दूर करने के लिए, यह एतद्द्वारा घोषणा की जाती है कि उप धारा (1) के अधीन किसी सम्पत्ति के अधिग्रहण के लिए कोई धनराशि देय नहीं होगी ।''

3.5.3 दुर्भाग्यवश, पिछले 18 वर्षों में, सरकार द्वारा धारा 5 की उप धारा (1) के प्रयोजनों के लिए कोई भी नियम निर्धारित नहीं किए गए, जिसके परिणाम यह हुए कि सरकार किसी वास्तविक स्वामी द्वारा उसके बेनामीदारों के नाम में अधिग्रहित की गई सम्पत्तियों को जब्त करने की स्थिति में नहीं है । भ्रष्ट लोक सेवकों द्वारा एकत्र किया गया धन प्रायः बेनामी खातों में रख दिया जाता है या दूसरों के नाम से सम्पत्तियों में विनियोग कर दिया जाता है । बेनामी लेन देन (निषेध) अधिनियम, 1988 को सख्ती से लागू करने से ऐसी सम्पतियों को बाहर निकाला जा सकता है और भ्रष्ट अधिकारियों के लिए सम्पतियों को एकत्र करना एक कठिन काम बनाया जा सकता है और अन्यों के लिए भी यह एक रोकथाम का काम कर सकता है ।

3.5.4 सिफारिश :

क. बेनामी लेनदेन (प्रतिषेद) अधिनियम, 1988 के तत्काल कार्यान्वयन के लिए कदम उठाए जाने चाहिएं ।

3.6 सीटी बजाने वाले अथवा भ्रष्टाचार या घोटाले की सूचना देने वाले की सुरक्षा

3.6.1 सूचना देने वाले व्यक्ति भ्रष्टाचार के बारे में सूचना प्रदान करने में एक आवश्यक भूमिका अदा करते हैं । किसी विभाग/एजेंसी में काम करने वाले लोक सेवक अपने संगठन में अन्य लोगों के पूर्ववृत्तों और गतिविधियों से परिचित होते हैं । तथापि, प्रायः वे बदले की भावना के डर से इस सूचना को देने के इच्छुक नहीं होते । लोक सेवक द्वारा अपने संगठन में भ्रष्टाचार की सूचना देने की तत्परता और उसे तथा उसकी पहचान को संरक्षण दिए जाने में बहुत ही नजदीकी संबंध होता है । यदि पर्याप्त रूप से सांविधिक संरक्षण प्रदान कर दिया जाए तो इस बात की बहुत ही संभावना होती है कि सरकार को भ्रष्टाचार के बारे में पर्याप्त सूचना मिल सकती है । ''भ्रष्टाचार, घोटाले की सूचना देने वाला व्यक्ति'' ये शब्द हमारे शब्द कोश में अपेक्षाकृत

[45] 'बेनामी' हिन्दी भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ है 'बिना नाम के' । इसका प्रयोग सामान्यतः कुछ कानूनों के बचने की मंशा से किन्हीं दूसरे लोगों के नाम अथवा किसी फर्जी नाम से संपत्ति का अनैतिक रूप से अन्तरण करने के लिए किया जाता है ।

हाल ही में जुड़े हैं । संयुक्त राज्यों में, डेनियल एल्सबर्ग नाम का व्यक्ति जो तथाकथित ''पैंटागोन पेपरों'' पर ''सीटी बजाता था'' के दुखः और विपत्ति के बाद, वाटरगेट के बाद के युग में, सीटी बजाना केवल संविधि द्वारा न केवल सुरक्षित कर दिया गया है, बल्कि नागरिकों के नैतिक कर्तव्यों के रूप में प्रोत्साहित भी किया जाता है । इतना ही नहीं, एनरोन और वर्ल्डकॉम के आश्चर्यजनक पतन के बाद, संयुक्त राज्य कांग्रेस ने सारबेन्स–ओक्सले अधिनियम 2002 पारित किया, जिसमें सीटी बजाकर सूचना देने वाले को सार्वजनिक व्यापार कंपनियों में भारी सुरक्षा दी गई । किसी भी निगमित सूचना देने वाले से बदला लेने वाले व्यक्ति को अब 10 सालों[46] तक के लिए सजा हो सकती है ।

बाक्स 3.1 : भ्रष्टाचार की सूचना देने वाले

इंडियन आयल कारपोरेशन (आईओसी) में काम करने वाला मंजुनाथ शंमुगम भारती प्रबंध संस्थान, लखनऊ का स्नातक था । उसने पैट्रोल पंपों के स्वामियों द्वारा मिलावट के विरूद्ध अपनी लडाई में रिश्वत लेने से इंकार कर दिया और अपने जीवन को दी गई धमकियों की भी परवाह नहीं की । उसको इसकी कीमत चुकानी पड़ी । उसे 19 नवम्बर 2005 को तथाकथित रूप से भ्रष्ट पैट्रोल पंपों के मालिकों के आदेश पर गोली से मार दिया गया ।

भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण में कार्य–रत सतेन्द्र दुबे ने सड़कों के निर्माण में फैले अत्यधिक भ्रष्टाचार का खुलासा किया । वह भी 27 नवम्बर, 2003 को मृत पाया गया ।

3.6.2 ऐसी सुरक्षा देने वाले कानून यूनाईटेड किंगडम, अमेरिका, आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड में विद्यमान हैं । यूके पब्लिक इंट्रैस्ट डिस्क्लोयर अधिनियम, 1998, आस्ट्रेलिया का दि पब्लिक इंट्रैस्ट डिस्क्लोयर एक्ट 1994, न्यूजीलैंड का दि प्रोटैक्टिड डिस्क्लोयर एक्ट 2000 और अमेरिका का विसिल ब्लोअर प्रोटैक्शन एक्ट 1984, ये ऐसे विधान हैं, जो भ्रष्टाचार की सूचना देने वालों को सुरक्षा प्रदान करते हैं । ये सभी कानून सामान्यतः सूचना देने वाले के गुमनामों का संरक्षण करने और उसे संगठन के भीतर उत्पीड़न से सुरक्षा प्रदान करते हैं।

3.6.3 विधि आयोग ने अपनी 179वीं रिपोर्ट में एक जन हित प्रकटीकरण (सूचना देने वालों का संरक्षण) बिल का प्रस्ताव किया है जिसमें घोटाले या भ्रष्टाचार की सूचना देने वाले को संरक्षण प्रदान किया गया है । इस बिल में भ्रष्टाचार की सूचना देने वालों को संगठन में उत्पीड़न के विरूद्ध सुरक्षा प्रदान करने का प्रावधान है। इस बिल में यह भी प्रावधान है कि भ्रष्टाचार की सूचना देने वाला अपना स्थानान्तरण कहीं और करवा सकता है, यदि उसे वर्तमान स्थिति में किसी उत्पीड़न की आशंका लगती है । सूचना देने वाले को सुरक्षा सुनिश्चित की जा सके, इसके लिए यह आवश्यक है कि विधि आयोग द्वारा प्रस्तावित बिल के अनुसार तुरन्त एक विधान लाया जाए ।

3.6.4 सिफारिशः

क. भष्टाचार या घोटाले की सूचना देने वाले को संरक्षण प्रदान करने के लिए विधि आयोग द्वारा सुझाई गई निम्नलिखित बातों पर तत्काल ही विधान को अधिनियमित किया जाना चाहिएः

- **भष्टाचार या घोटाले की सूचना देने वाले द्वारा झूठे दावों, धोखाधड़ी या भ्रष्टाचार की सूचना देने पर उसे शारीरिक रूप से हानि पहुंचाने से रोकने के लिए गोपनीयता और गुमनाम रखने, व्यवसाय में सताए जाने से रक्षा करना और अन्य प्रशासकीय उपायों को सुनिश्चित करते हुए बचाव किया जाना चाहिए ।**

[46] स्रोतः रघु दयाल – ''सीटी बजाने वालों की सुरक्षा होनी चाहिए'' – ET: 26.12.06

- **विधान में किसी निगम के भ्रष्टाचार या घोटाले की सूचना देने वाले द्वारा धोखाधड़ी या जानबूझ कर चूक करने या गलत कार्य करने से जन हित को गंभीर क्षति पहुंचाने की बात का पर्दाफाश करने वाले को भी शामिल किया जाना चाहिए ।**

- **भ्रष्टाचार या घोटाले की सूचना देने वाले के विरूद्ध कष्ट पहुंचाने, सताए जाने का काम करने या बदला लेने के काम को पर्याप्त जुर्माने और सजा के साथ दंडनीय अपराध माना जाएगा ।**

3.7 गंभीर आर्थिक अपराध

3.7.1 आर्थिक अपराध, जिन्हें आम बोलचाल में कपट या धोखाधड़ी कहा जाता है (इस शब्द की परिभाषा ही भारतीय संविदा अधिनियम[47] में दी गई है) आज आकार और जटिलता दोनों की बढ़ती हुई प्रवृत्ति से एक चिंता का विषय बन गए हैं । चिन्ता की बढ़ती हुई इस प्रवृत्ति की जड़े उस तेज गति से हैं, जिस पर भारतीय अर्थव्यवस्था में विकास आ रहा है और वित्तीय क्षेत्र में भिन्नता आ रही है । इन अपराधों में से कुछ का प्रभाव बहुत ही व्यापक होता है और यह अर्थव्यवस्था को बहुत ही क्षति पहुंचा सकता है और जिससे आम जनता पर गंभीर रूप से प्रभाव पड़ सकता है तथा यह कभी कभी राष्ट्रीय सुरक्षा को खतरा भी बन सकता है । इन आर्थिक अपराधों में कर की चोरी, जालसाजी, शेयर बाजार में विकार पैदा करना, खातों का मिथ्याकरण, बैंकिंग व्यवस्था में धोखा, तस्करी, पैसे की हेरा फेरी, अन्दर का व्यापार और जहां तक कि रिश्वतखोरी भी इनमें शामिल हैं । बढ़ती हुई वित्तीय गतिविधि के संसार में ऐसी गतिविधि के लिए नए यंत्र और इसे सरल बनाने के लिए नई तकनीक, ऐसे में वर्तमान कानून नए आर्थिक अपराधों को रोकने के लिए पर्याप्त नहीं हैं ।

बाक्स 3.2 गंभीर अपराध कार्यालय की आवश्यकता

हाल ही में शेयर बाजार में 'घोटाले' की छानबीन ने हमारी प्रवर्तन व्यवस्था में खंडित विकृति की सीमाओं को रेखांकित किया है । यद्यपि, अनेक एजेंसियों ने इस अति लोकप्रिय हुई धोखाधड़ी की छानबीन की थी, परंतु वास्तव में इस बात का पूर्ण तौर पर कोई भी पता नहीं लगा पाया कि वास्तव में क्या हुआ था ? ऐसी स्थिति में धोखेबाजों को प्रभावशाली ढंग से सजा दिलाने के बहुत ही कम आसार हैं ।

कंपनी जगत में वित्तीय धोखाधड़ियां बड़ी जटिल प्रकृति की हो गई हैं और इनकी उचित छानबीन केवल विशेषज्ञों के बहुविषयक दल द्वारा ही की जा सकती है ; केवल उपहारस्वरूप गतिविधियों का भी पता लगाने की सीमाएं हैं, विशेषतः जब उनका कोई सामान्य धरातल न हो और फिर संबंधित विभिन्न प्रवर्तन एजेंसियां अपनी ओर से अकेली पड़ जाती हैं । युनाइटिड किंगडम में गंभीर धोखाधड़ी के कार्यालय की तर्ज पर एक अधिक संयुक्त प्रयास वाली विचारधारा को लाने की आवश्यकता है ।

स्रोत : कंपनी लेखापरीक्षा और शासन पर समिति की रिपोर्ट (नरेश चन्द्र समिति 2002)

3.7.2 आर्थिक अपराधों पर नियंत्रण के लिए अनेक कानून बनाए गए हैं । इनमें ये शामिल हैं, भारतीय दंड संहिता (आईपीसी), बैंकिंग विनियमन अधिनियम 1949, कंपनी अधिनियम 1956, सीमा शुल्क अधिनियम 1962, आय कर अधिनियम, 1961, आवश्यक वस्तु अधिनियम, विदशी मुद्रा संरक्षण और तस्करी निवारण अधिनियम, खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम, भारतीय पेटेंट अधिनियम, आदि । इनमें से अनेक अधिनियमों में, जांच पुलिस द्वारा की जाती है । कुछ राज्यों ने ऐसी जांचों का मार्गदर्शन करने के लिए आर्थिक अपराध स्कंध भी स्थापित किए हुए हैं । कुछ केन्द्रीय कानूनों के संबंध में, जांच अभिहित एजेंसियों द्वारा की जाती है । केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो भी अन्य प्राधिकारियों की ओर भेजे जाने पर अथवा सरकार या न्यायालयों के निर्देशों पर मामलों की देखरेख करता है । यह सामान्यतः महसूस किया जाता है कि विद्यमान कानूनों के

47 संविदा अधिनियम की धारा 17 में कपट की परिभाषा निम्न प्रकार से दी गई है :''कपट का अर्थ और निम्नलिखित में से कोई एक कृत्य उसमें शामिल होता है, जो किसी ठेके में शामिल पक्षकार द्वारा, उसकी या उसके एजेंट की सांठगांठ से दूसरे पक्षकार या उसके एजेंट को धोखा देने की मंशा से या उसे ठेके में शामिल होने के लिए उकसाने के लिए किया जाता है: (क) किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा उस तथ्य की सलाह देना जिसके बारे में उस व्यक्ति को विश्वास हो कि वह सत्य नहीं है; (ख) ऐसे व्यक्ति द्वारा उस तथ्य को सक्रिय रूप से छिपा लेना, जो उस तथ्य की सत्यता के बारे में जानकारी रखता हो ; (ग) ऐसा वचन देना जिसे पूरा करने की मंशा न हो ;(घ) ऐसा कोई अन्य तथ्य जो धोखा देने के लिए उचित हो ; (ड.) ऐसा कोई कृत्य या अकृत्य जो कानून की दृष्टि में विशिष्ट रूप से कपटपूर्ण हो।''

अधीन दी जाने वाली सजा इन अपराधों को रोकने में अपर्याप्त है । इसके परिणामस्वरूप, ये अपराध उच्च लाभ कम जोखिम गतिविधि बन गए हैं ।

3.7.3 काफी देर से, आर्थिक अपराध अधिक ध्यानाकर्षण कर रहे हैं क्योंकि इनका प्रयोग आपराधिक और जहां तक कि आतंकवादी गतिविधियों को वित्तीय सहायता देने में किया जा रहा है । 1993 में, एन.एन. वोहरा कमेटी ने आपराधिक कानूनों को तोड़ने वालों, राजनीतिज्ञों और सरकारी कार्यकर्ताओं के बीच में संबंध का पता लगाया था, जिनके कारण बड़े पैमाने पर आर्थिक अपराधों को शह दी जा रही थी । उस कमेटी ने यह भी ध्यान में लाया था कि उन मामलों में, जो सार्वजनिक हो गए हैं, अपराधियों के विरूद्ध केवल नाम मात्र कार्रवाई की गई ।

3.7.4 विकसित देशों ने ऐसे अपराधों की चुनौती के जवाब में गंभीर आर्थिक अपराधों से निपटने के लिए एक विशिष्ट व्यवस्था का गठन किया है । इंग्लैंड और वेल्स में, गंभीर अपराध कार्यालय अप्रैल 1988 में गठित किया गया था । यह कार्यालय गंभीर कपट मामलों की जांच और अभियोजन के लिए एक एकीकृत संगठन की आवश्यकता को देखते हुए बनाया गया था । इस कार्यालय के अध्यक्ष निदेशक होते हैं जो महान्यायवादी द्वारा नियुक्त और उनको जवाबदेह होते हैं । इस कार्यालय में बहु–विषयक दल हैं जो कानून, लेखा–प्रणाली, जांच आदि में विशेषज्ञता प्राप्त हैं । जांच का नेतृत्व मामला नियंत्रक करते हैं, जो सामान्यतः अनुभवी विधिज्ञ होते हैं । गंभीर अपराध कार्यालय आपराधिक न्याय अधिनियम, 1987 के अधीन शक्तियां प्राप्त करते हैं और अपने ही मामलों का अभियोजन क्राउन अभियोजन सेवा को भेजे बिना ही करते हैं । यह उल्लेख करना आवश्यक है कि अपराधिक न्याय अधिनियम, 1987 'गंभीर अपराध' को परिभाषित नहीं करता । गंभीर अपराध कार्यालय के निदेशक को अधिनियम की धारा 1(3) के अधीन ''किसी भी ऐसे संदेहात्मक अपराध की जांच करने, जिसमें उसे न्यायसंगत आधारों पर गंभीर या जटिल कपट में लिप्त होना प्रतीत हो'' की शक्ति प्राप्त है ।

3.7.5 न्यूजीलैंड में, गंभीर अपराध कार्यालय अधिनियम के अधीन गठित गंभीर अपराध कार्यालय, गंभीर कपट के मामलों की जांच और अभियोजन करता है । गंभीर अपराध कार्यालय अधिनियम, 1990 गंभीर अपराध कार्यालय को अपनी जांच के दौरान साक्ष्य प्राप्त करने की शक्तियां प्रदान करता है । गंभीर अपराध कार्यालय का अध्यक्ष एक निदेशक होता है जो गंभीर कपटों की जांच करने के लिए सशक्त होता है । यह देखने के लिए कि गंभीर कपट की संकल्पना कैसे होती है, निदेशक को इस पर विचार करना होता है – (क) कपट की संदेहात्मक प्रकृति और कपट के परिणाम (ख) कपट का संदेहात्मक पैमाना (ग) मामले की वैधानिक, वास्तविक और साक्ष्यीय जटिलता (घ) कोई संगत जनहित प्रतिफल ।

3.7.6 रिजर्व बैंक आफ इन्डिया को प्रस्तुत की गई मित्रा कमेटी रिपोर्ट (बैंक कपटों के पहलुओं पर विशेषज्ञ कमेटी की रिपोर्ट 2001) ने ध्यान दिलाया है कि भारत में संदेह से परे सबूत पर आधारित आपराधिक विधि का यंत्र इतना कमजोर है कि वह बैंक के कपटों पर नियंत्रण नहीं कर सकता। कमेटी ने सर्वांगी सुधारों के लिए विनियंत्रकों के मार्गदर्शी सिद्धांतों के सख्त अनुपालन और अनुपालन प्रमाण पत्र प्राप्त करने जैसी दो तरफा रण नीति की सिफारिश की है । दूसरा, घोटालों को गंभीर अपराध की संज्ञा दे कर और सबूत का भार अभियुक्त पर अंतरित करके तथा गंभीर कपटों के लिए पृथक् जांच प्राधिकारी सहित, ऐसे मामलों

के विचारण के लिए विशेष न्यायालय और अभियोजन द्वारा दंडात्मक संकल्पना की सिफारिश की गई थी। कमेटी ने रिजर्व बैंक आफ इन्डिया के अधीन सांविधिक कपट समिति के गठन का सुझाव दिया था । इसने ''वित्तीय कपट (सम्पत्ति की जांच, अभियोजन, वसूली और वापसी) बिल, 2001'' के नाम से एक विधान की भी सिफारिश की है । अपने प्रस्तावित ड्राफ्ट में, इसने वित्तीय कपट जांच समिति और वित्तीय कपट अन्वेषण ब्यूरो के गठन के लिए प्रावधान किए हैं । भारतीय दंड संहिता में धारा 512 और 513 (क) को शामिल करते हुए एक नए अध्याय XXIV को लाकर संशोधन का सुझाव दिया गया है । प्रस्तावित धारा 512 में 'वित्तीय कपट' की परिभाषा दी गई है जिसका अर्थ और जिसमें ये शामिल हैं ''किसी व्यक्ति द्वारा या उसकी मिलीभगत से उसके एजेंट द्वारा उसके किसी बैंक या वित्तीय संस्थान के साथ या किसी अन्य अस्तित्व जो लोक निधियों को रखता हो, के साथ लेनदेन करते हुए निम्नलिखित कृत्यों में से कोई कृत्य :

- किसी व्यक्ति द्वारा एक तथ्य के रूप में कोई सुझाव देना जिस पर उस व्यक्ति का विश्वास हो कि वह सत्य नहीं है
- उस व्यक्ति द्वारा सक्रिय रूप से तथ्य को छिपाना, जिसे उस तथ्य के बारे में जानकारी हो या उस तथ्य का विश्वास हो,
- दिया गया ऐसा वचन जिसे निभाए जाने की मंशा से न दिया गया हो ।
- धोखा देने के लिए अन्य कोई कृत्य ।
- कोई ऐसा कृताकृत जिसे कानून विशिष्ट रूप से कपटपूर्ण घोषित करे बशर्ते कि जो कोई भी व्यक्ति इस वित्तीय कपट की राशि को प्राप्त करता है, अपने पास रखता है या अंतरित करता है या किसी लेनदेन में प्रवेश करता है जो कपट की राशि से प्रत्यक्ष रूप से या अप्रत्यक्ष रूप से संबंधित हो या वित्तीय कपट की राशि को छिपाता है या छिपाने में मदद करता है, वित्तीय कपट को करता है ।''

3.7.7 प्रस्तावित धारा 513 (क) में वित्तीय कपट के लिए सजा का उपबंध है । इंग्लैंड की दावा समिति रिपोर्ट का पालन करते हुए, प्रस्तावित धारा 513 (क) की व्याख्या (2) गंभीर वित्तीय कपटों का वर्गीकरण करने के लिए मार्गदर्शी सिद्धांत का उपबंध करती है । अतः ''यदि और केवल यदि,

- मामले में दस करोड़ों से अधिक की राशि लिप्त हो, या
- मामले की व्यापक रूप से आम जनता में चिंता बढ़ जाने की संभावना हो, या
- मामले की जांच और अभियोजन में वित्तीय बाजार की उच्च विशिष्टता प्राप्त जानकारी की आवश्यकता या बैंकों या अन्य वित्तीय संस्थानों के व्यवहार की संभावना हो, या
- मामला महत्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय आयाम में संलिप्त हो, या
- जिस मामले की जांच में वैधानिक, वित्तीय, विनियोग और जांच के कौशलों को एक साथ लाना हो या

- जो मामला विनियंत्रकों, बैंकों, संघीय सरकार या किसी वित्तीय संस्थान को जटिल प्रतीत होता हो तो प्रस्तावित अधिनियम के अभिव्यक्त प्रयोजनों के लिए 'वित्तीय कपट' के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है । इस ड्राफ्ट अधिनियम में वित्तीय कपटों से संबंधित मामलों के विचारण से संबंधित भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 में विशेष न्यायालयों की स्थापना और संशोधन के लिए उपबंध भी है ।

3.7.8 समिति ने साक्ष्य से संबंधित प्रक्रिया में सबूत की छानबीन करने वाली व्यवस्था की भी सिफारिश की है । इसके लिए, उन्होंने भारतीय साक्ष्य अधिनियम में संशोधन का सुझाव दिया है ताकि न्यायालय द्वारा आपराधिक मनः स्थिति की उपधारणा ली जा सके ।

3.7.9 नरेश चन्द्र समिति ने निगमित लेखा परीक्षा और वित्त पर 2002 में ये सिफारिशें की थीं:

1. *एक निगमित गंभीर अपराध कार्यालय कंपनी मामलों के विभाग में स्थापित किया जाना चाहिए जिसमें विशेषज्ञों को स्थानान्तरण/प्रतिनियुक्ति आधार पर और विशेष समय अवधि के संविदा पर रखा जाना चाहिए ।*

2. *ऐसा बहु–विषयक दल के रूप में किया जाएगा जो न केवल कपट को सामने लाएगा बल्कि समुचित एजेंसियों के माध्यम से विविध आर्थिक विधानों के अधीन अभियोजन के निदेश देगी और उस पर निगरानी रखेगी ।*

3. *अभिहित दल के नेतृत्व के अधीन प्रत्येक मामले के लिए एक कार्य दल होना चाहिए ।*

4. *पर्याप्त नियंत्रण और कुशलता के हित में, मंत्रिमंडल सचिव की अध्यक्षता में एक समिति इस पद की नियुक्तियों को और इसके संचालन पर निगरानी रखेगी और संबंधित विभागों और एजेंसियों के काम में समन्वय रखेगी ।*

5. *बाद में, युनाईटेड किंगडम में गंभीर अपराध कार्यालय की तर्ज पर एक विधायी ढांचे का गठन निगमित गंभीर अपराध कार्यालय को कपट के सभी पहलुओं की जांच करने के लिए और समुचित मामलों में अभियोजन के निदेश देने के लिए किया जाएगा ।*

3.7.10 गंभीर निगमन कपटों के मामलों से निपटने के लिए एक विशिष्ट बहु–विषयक संगठन के रूप में 2003 में एक गंभीर अपराध जांच कार्यालय गठित किया गया था । इसमें वित्तीय क्षेत्र, पूंजी बाजार, बैंकों, लेखा–प्रणाली, न्यायिक लेखा–परीक्षा, कराधान, कानून, सूचना तकनीक, कंपनी कानून, सीमा शुल्क और जांच से संबंधित विशेषज्ञ हैं । यह कार्यालय इस समय कंपनी अधिनियम की धाराओं 235 से 247 के प्रावधानों के अधीन जांच को देखता है । इसके चार्टर में अन्य अधिनियमों के प्रावधानों के अतिक्रमण पर अपनी जांच रिपोर्टें संबंधित एजेंसियों को अभियोजन/समुचित कार्रवाई के लिए अग्रेषित करना शामिल है ।

3.7.11 डा. जमशेद जे. इरानी (2004) की अध्यक्षता में कंपनी कानून पर विशेषज्ञ समिति ने यह पाया कि:

''जांच के अलावा, संबंधित दोषी कंपनी और अधिकारियों का उचित न्यायालय में भी अभियोजन किए जाने की आवश्यकता है । इस उद्देश्य से गंभीर कपट जांच संगठन (एसएफआईओ) को दोषी व्यक्ति के विरूद्ध सफल अभियोजन के लिए तेजी के साथ अपना अर्थपूर्ण काम करने में सहायता के लिए कार्य प्रणालियों को सरलीकृत करने की आवश्यकता होगी । इस की सहायता के लिए, कानून में कुछ अस्पष्टताएं हैं, जिन्हें दूर करना होगा ताकि एसएफआईओ कंपनी अधिनियम के अतिक्रमण के अतिरिक्त, भारतीय दंड प्रक्रिया के अधीन अभियोजन कर सके । समिति यह सिफारिश करती है कि एसएफआईओ के संचालन में मार्गदर्शन और विनियमन के लिए तथा कंपनी कपट के मामलों में सफल जांच और अभियोजन की मदद के लिए ऐसे मामलों का समाधान करने के लिए एक पृथक विधि की रूपरेखा तैयार की जानी चाहिए । अतः एसएफआईओ के अस्तित्व को कंपनी अधिनियम में मान्यता दी जानी चाहिए । कंपनी अधिनियम के अधीन अपराधों के विरूद्ध कार्रवाई करने के अतिरिक्त, एसएफआईओ के अधिकारियों को केन्द्रीय सरकार द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन भी शिकायतें दर्ज करने के लिए अधिकृत किया जाना चाहिए ।

समिति ने इस तथ्य पर भी ध्यान दिया कि कंपनी कपट सामान्यतः कृत्यों के जटिल श्रृंखला के परिणामस्वरूप होते हैं । कानून प्रवर्तन एजेंसियों के लिए, राज्य सरकार स्तर पर ऐसी जांच के लिए संबंधित कानून प्रवर्तन कार्मिकों के कौशल के उचित प्रशिक्षण और विकास के अभाव में ऐसी स्थितियों में प्रभावशाली ढंग से अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करना शायद आसान न हो सके । समिति यह सिफारिश करती है कि केन्द्रीय सरकार द्वारा गठित एसएफआईओ ऐसी विशेषज्ञता के विकास के लिए तथा उसका राज्य सरकारों में प्रचार प्रसार के लिए भी एक नोडल एजेंसी का काम करेगी और वह राज्य सरकारों को भी इसी प्रकार के संगठनों के गठन के लिए और आर्थिक अपराधों के विरूद्ध उनकी कार्रवाई में वांछित विशेषज्ञता प्रदान करने के लिए प्रोत्साहित करेगी । यह भारतीय दंड संहिता के अधीन अपराधों के अभियोजन के संबंध में भी और अच्छा समन्वय प्रदान करेगा ।''

3.7.12 पश्चिम बंगाल राष्ट्रीय न्यायिक विज्ञान विश्वविद्यालय, कलकत्ता ने भी भारत के लिए एक आर्थिक अपराध संहिता के प्रारूप पर एक परियोजना का दायित्व लिया था । 'गंभीर आर्थिक अपराध (रोकथाम, नियंत्रण, जांच और विचारण) अधिनियम' शीर्षक से बनी प्रारूप संहिता 'गंभीर आर्थिक अपराध' की परिभाषा इस अर्थ में करती है : ''पांच करोड़ रूपयों से अधिक मूल्य की राशि या ऐसी अन्य राशि, जो निर्धारित की गई हो, के धन या सम्पत्ति में संलिप्त कोई अनिष्ठावान, कपटपूर्ण या असंवैधानिक लेनदेन –

क) जिसका गंभीर असर राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था या भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा पर पड़े या

ख) जिससे भारत के अन्य राष्ट्रों के साथ सामाजिक, आर्थिक या राजनीतिक संबंध पर असर पड़ता हो या प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की संभावना हो, या

ग) जिस अपराध के पीड़ित होने से बड़ी संख्या में भारत के नागरिकों पर विपरीत प्रभाव पड़ता हो, या

घ) जिसमें ऐसा व्यक्ति संलिप्त हो, जो लोक विश्वास के ऊंचे पद पर हो या सरकार में सार्वजनिक पदेन हो, लोक या निजी उद्यमों में, जिसमें बैंक और अन्य वित्तीय संस्थान शामिल हों या अन्य निकाय निगम हों और जिसमें ऐसे अपराध भी शामिल होंगे जो भारत के अन्दर या भारत से दूर किसी स्थापन पर व्यक्तियों द्वारा किए गए हों ।''

3.7.13 इस कानून के प्रभावकारी कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने के लिए 'गंभीर आर्थिक अपराधों के नियंत्रण के लिए आयोग' नाम से एक उच्च अधिकार प्राप्त और स्वायत्तशासी निकाय के गठन का प्रस्ताव इस ड्राफ्ट में हैं ।

3.7.14 उच्चतम न्यायालय में सामान्य हित की एक गैर–सरकारी एजेंसी द्वारा फाइल किए गए लोकहित वाद की सुनवाई के दौरान, रिजर्व बैंक आफ इन्डिया ने एक स्वतंत्र और पृथक गंभीर अपराध कार्यालय के गठन का सुझाव दिया । यह लोकहित वाद सम्पत्तियों के बहुत बड़े गैर–निष्पादित आकार से संबंधित था, जिसने बैंकिग क्षेत्र को प्लेग से ग्रस्त और आर्थिक अपराधों की बारंबारता से पीड़ित कर रखा था । इस सुझाव की प्रशंसा करते हुए, उच्चतम न्यायालय ने संघीय सरकार को प्राथमिकता के आधार पर[48] इस विचार का उत्तर देने को कहा ।

3.7.15 आयोग ने रिजर्व बैंक आफ इन्डिया, भारतीय प्रतिभूति तथा विनिमय बोर्ड (सेबी) और आईसीआईसीआई बैंक के साथ इस मुद्दे पर विचार–विमर्श किया है । सेबी का मत है कि वित्तीय जांच के क्षेत्र में कौशल चातुर्य के साथ समुचित स्तर के व्यक्तियों की पर्याप्त संख्या के अभाव में, यह उचित होगा कि नए संस्थानों का गठन करने के बजाय विद्यमान संस्थानों को सुदृढ़ किया जाए । आईसीआईसीआई बैंक का मत है कि वित्तीय व्यवस्था में प्रभावशाली कपट नियंत्रण तंत्र का विकास करने के लिए सुदृढ़ जांच, कानून प्रवर्तन और न्यायिक प्रणालियां निरंतर लंबे समय तक साथ देंगी और बैंक में आर्थिक अपराध स्कंध और साइबर अपराध स्कंध बैंकिंग से संबंधित कपट/अपराध की देखभाल करने में सहायता कर रहे हैं । उन्होंने यह भी कहा कि न्यायपालिका में भी इसी प्रकार का विशिष्टिकरण और प्रबंध वित्तीय व्यवस्था में कपट के मामलों की सुनवाई करने में प्रबल सहायता प्रदान करें । रिजर्व बैंक का विचार था कि मित्रा समिति की सिफारिशों का कार्यान्वयन किया जाना चाहिए ।

3.7.16 आयोग का मत है कि बैंकिंग विनियमन अधिनियिम 1949, भारतीय प्रतिभूति तथा विनिमय बोर्ड अधिनियम, 1992 और कंपनी अधिनियम 1956 में विद्यमान उपबंध इतने सुदृढ़ नहीं हैं कि बड़े पैमाने पर कपटपूर्ण व्यवहारों को रोक सकें और न ही वे रोकथाम कर सकते हैं । रिजर्व बैंक आफ इंडिया, सेबी और कंपनी मामलों का विभाग जैसे वर्तमान विनियामक निकाय ऐसे घोटालों और कपटों में लिप्त अपराध का समाधान करने में पर्याप्त रूप से सशक्त नहीं हैं । अतः गंभीर वित्तीय कपटपूर्ण मामलों की जांच और अभियोजन और उनमें लिप्त सम्पत्तियों की वसूली के लिए एक पृथक संस्थान की आवश्यकता है ।

3.7.17 'गंभीर आर्थिक अपराध' को एक कानून के अधीन परिभाषित करने और इसके लिए सख्त सजा निर्धारण करने की आवश्यकता है । विद्यमान एसएफआईओ, यद्यपि यह एक सकारात्मक कदम है, केवल कंपनी अधिनियम के अधीन अपराधों की जांच कर सकता है । 'गंभीर आर्थिक अपराध' की जटिल और

[48] 11 नवम्बर 2006 को टाइम्स आफ इंडिया, नई दिल्ली में रिपोर्ट किया गया ।

बहु–विषयक प्रकृति में ऐसे सभी अपराधों के अधीन मामलों की जांच और अभियोजन करने के लिए एक सशक्त निकाय के गठन की आवश्यकता पड़ेगी । इसके लिए एक नए और पर्याप्त रूप से सशक्त गंभीर अपराध कार्यालय (एसएफओ) की स्थापना की आवश्यकता होगी जो, आवश्यक रूप से, विद्यमान एसएफआईओ को शामिल करेगा । इस प्रकार गठित गंभीर कपट कार्यालय गंभीर कपट अनुवीक्षण समिति के नियंत्रणाधीन और पर्यवेक्षण में होगा जिसकी अध्यक्षता मंत्रिमंडलीय सचिव करेंगे और जिसमें वित्तीय क्षेत्र, पूंजी और भविष्य बाजार, वस्तु बाजार, प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष कराधान, लेखा–प्रणाली, न्यायिक लेखा–परीक्षा, आपराधिक और कंपनी कानून, जांच और सूचना तकनीक आदि के प्रतिनिधि शामिल होंगे । एसएफओ को अपने आप मामलों को हाथ में लेने या संघ अथवा राज्य सरकार द्वारा भेजे जाने वाले मामलों को हाथ में लेने के लिए सशक्त किया जाना चाहिए ।

3.7.18 क्योंकि विद्यमान कानूनों के अधीन आर्थिक अपराधों के लिए अभियुक्त होना कठिन है और क्योंकि ये अपराध कई बार अन्य संगठित अपराधों और आतंकवादी गतिविधियों के लिए कोष एकत्र भी करते हैं, यह आयोग मित्रा कमेटी द्वारा दिए गए इस सुझाव से कि 'गंभीर अपराध' के लिए न्यायालय को आपराधिक मनःस्थिति के विद्यमान होने की उपधारणा मान लेनी चाहिए, सहमत है ।

3.7.19 सिफारिशः

क. 'गंभीर आर्थिक अपराध' पर एक नया कानून लाया जाना चाहिए ।

ख. गंभीर आर्थिक अपराध को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता हैः

(i) वह अपराध जिसमें 10 करोड़ रूपयों से अधिक की राशि संलिप्त हो ।

(ii) वह अपराध जिससे जनता में व्यापक चिन्ता की संभावना हो : या

(iii) वह अपराध जिसकी जांच और कानूनी कार्रवाई में वित्तीय बाजार की उच्च स्तर की विशिष्ट जानकारी अथवा बैंकों या अन्य वित्तीय संस्थानों के व्यवहार को जानने की आवश्यकता पड़े।

(iv) वह अपराध जिसमें महत्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय आयाम संलिप्त हों ।

(v) वह अपराध जिसकी जांच में कानूनी, वित्तीय, निवेश संबंधी और जांच संबंधी कौशलों को एक साथ लेने की आवश्यकता हो : या

(vi) जो केन्द्रीय सरकार, नियंत्रकों, बैंकों या किसी अन्य वित्तीय संस्थानों को पेचीदा लगे ।

ग. एक गंभीर अपराध कार्यालय (एसएफओ) का गठन किया जाना चाहिए (नए कानून के अन्तर्गत), जो ऐसे अपराधों की जांच और उन पर कानूनी कार्यवाई करे । यह कार्यालय मंत्रिमंडल सचिवालय के अधीनस्थ होगा । इस कार्यालय को, इस उद्देश्य से गठित, विशेष अदालतों में, सभी ऐसे मामलों की जांच करने और कानूनी कार्यवाई

करने का अधिकार होगा । गंभीर अपराध कार्यालय को अपने कर्मचारियों को शिक्षा के विविध विषय क्षेत्रों में से विशेषज्ञों को लेना चाहिए, जैसे कि वित्तीय क्षेत्र, पूंजी और भविष्य बाजार, वस्तु बाजार, लेखा–प्रणाली, प्रत्यक्ष और परोक्ष कर, न्यायालयीय, अन्वेषण, अपराध और कंपनी कानून और सूचना प्राद्यौगिकी । गंभीर अपराध कार्यालय को मित्रा समिति की सिफारिशों में उल्लिखित अन्वेषण के सभी अधिकार होने चाहिए। वर्तमान गंभीर अपराध अन्वेषण कार्यालय को इसमें शामिल कर लिया जाना चाहिए ।

घ. ऐसे अपराधों पर अन्वेषण और कानूनी कार्यवाई पर नजर रखने के लिए एक गंभीर अपराध अनुवीक्षण समिति का गठन किया जाना चाहिए । इस समिति में, जिसके अध यक्ष मंत्रिमंडल सचिव होंगे, मुख्य सतर्कता आयुक्त, गृह मंत्री, वित्त सचिव, सचिव, बैंकिंग / वित्तीय क्षेत्र, रिजर्व बैंक आफ इन्डिया के एक उप गवर्नर, सचिव, कंपनी कार्य विभाग, विधि सचिव, अध्यक्ष, सेबी आदि सदस्यों के रूप में होंगे ।

ड. गंभीर अपराध में किसी सरकारी पदाधिकारी के संलिप्त होने के मामले में, गंभीर अपराध कार्यालय एक रिपोर्ट राष्ट्रीय लोकायुक्त को भेजेगा और राष्ट्रीय लोकायुक्त द्वारा दिए गए निदेशों का पालन करेगा (पैरा 4.3.15 को देखें) ।

च. गंभीर अपराधों के सभी मामलों में न्यायालय अभियुक्त में आपराधिक मनः स्थिति को मान कर चलेगा और ऐसा न होने से संबंधी प्रमाण को सिद्ध करने का दायित्व अभियुक्त का होगा ।

3.8 मामलों के पंजीकरण के लिए पूर्व सहमति : दिल्ली विशेष पुलिस स्थापन अधिनियम, 1946 की धारा 6क

3.8.1 दिल्ली विशेष पुलिस स्थापन अधिनियम, 1946 की धारा 6 क के अनुसार

''दिल्ली विशेष पुलिस स्थापन, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988 के अधीन तथाकथित किए गए अपराध की छानबीन या जांच, केन्द्रीय सरकार के पूर्व अनुमोदन के नहीं करेगा, जहां ऐसा अपराध निम्नलिखित से संबंधित हो :–

ख. केन्द्रीय सरकार के संयुक्त सचिव और उसके ऊपर के स्तर के कर्मचारी, और

ग. ऐसे अधिकारी, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा किसी केन्द्रीय अधिनियम के अंतर्गत सरकारी कंपनियों, सोसाइटियों और उस सरकार द्वारा स्वामित्व में या नियंत्रित स्थानीय प्राधिकरणों में नियुक्त किए जाते हैं ।

3.8.2 यह दलील दी गई है कि फैले हुए इस भ्रष्टाचार से ग्रस्त पर्यावरण में, भ्रष्ट वरिष्ठ लोक सेवकों की रक्षा के लिए ऐसे प्रावधान का दुरूपयोग किया जा सकता है, और यदि आखिरकार ऐसी रक्षा देनी ही है तो शक्ति केन्द्रीय सतर्कता आयोग जैसे किसी स्वतंत्र निकाय में निहित होगी, जो एक उद्देश्यपूर्ण कदम उठा सकता है ।

3.8.3 प्रतितर्क यह है कि संयुक्त सचिव और उसके ऊपर के स्तर के अधिकारियों की सरकार में निर्णय लेने की महत्वपूर्ण भूमिका होती है । इन निर्णयों को लेते समय या परामर्श देते समय उन्हें ऐसा बिना किसी भय या पक्षपात के करने में समर्थ होना चाहिए । इन अधिकारियों से बार–बार पूछताछ करते रहने से उनके मनोबल पर असर पड़ सकता है और इससे वे अपने आप को बचाने में ही समय बिताने के लिए प्रेरित होंगे और जनहित में सर्वोत्तम ढंग से काम नहीं करेंगे ।

3.8.4 संतुलन रखते हुए आयोग का मत है कि निष्ठावान सिविल सेवकों को अनुचित उत्पीड़न से बचाना आवश्यक होगा परंतु इसके साथ ही यह सुनिश्चित करने के लिए कि भ्रष्ट व्यक्ति इस बचाव का आश्रय न ले पाएं, यह समुचित होगा यदि यह स्वीकृति केन्द्रीय सतर्कता आयुक्त द्वारा संबंधित सरकार के सचिव के परामर्श से दे दी जाए और यदि सचिव ही संलिप्त हो तो केन्द्रीय सतर्कता आयोग और मंत्रिमंडल सचिव की एक समिति स्वीकृति प्रदान करने पर विचार कर सकती है । मंत्रिमंडल सचिव के मामले में, यह स्वीकृति प्रधान मंत्री द्वारा दी जा सकती है ।

3.8.5 सिफारिश :

क. वर्तमान संवैधानिक प्रबंधों के अन्तर्गत अन्वेषण को हाथ में लिए जाने की अनुमति केन्द्रीय सतर्कता आयोग द्वारा संबंधित सचिव के परामर्श से दी जानी चाहिए । सरकार के सचिव के विरूद्ध अन्वेषण के मामले में, अनुमति मंत्रिमंडल सचिव और केन्द्रीय सतर्कता आयोग को मिला कर बनी समिति द्वारा दी जानी चाहिए । इसमें दिल्ली विशेष पुलिस स्थापन अधिनियम में संशोधन करने की आवश्यकता होगी । अन्तरिम रूप से केन्द्र की शक्तियों को केन्द्रीय सतर्कता आयुक्त को प्रत्यायोजित किया जाना चाहिए जिसे उपयुक्त अनुसार प्रयोग किया जाना चाहिए । इस अनुमति की प्रक्रिया के लिए 30 दिनों की समय सीमा निर्धारित की जानी चाहिए ।

3.9 विधिकर्ताओं द्वारा उन्मुक्ति का उपयोग

3.9.1 संविधान के कार्यकरण की समीक्षा के लिए राष्ट्रीय आयोग ने सिफारिश (पैरा 5.15.6) की है कि अनुच्छेद 105 (2) में यह स्पष्ट करने के लिए संशोधन किया जाए कि संसद सदस्यों द्वारा संसदीय विशेषाधिकारों के अंतर्गत उपयोग की जाने वाली उन्मुक्ति में सदन में या अन्यथा अपने कृत्यों का पालन करने के संबंध में उनके द्वारा किए गए भ्रष्ट कृत्य शामिल नहीं होंगे । ऐसी सिफारिश इसलिए की गई थी क्योंकि भ्रष्ट कृत्यों में किसी विशेष ढंग से बोलने और/या मतदान करने के लिए धन या अन्य मूल्यवान प्रतिफलों को स्वीकार करना शामिल होता है और ऐसे कृत्यों के लिए वे देश के साधारण कानून के अंतर्गत कार्यवाई के पात्र होंगे ।

3.9.2 संविधान के कार्यकरण की समीक्षा के लिए राष्ट्रीय आयोग ने निम्न प्रकार से कहा :–

''संसदीय विशेषाधिकार कानून के अधीन सदस्यों के उन्मुक्ति कानून का परीक्षण पी.वी. नरसिम्हा राव बनाम राज्य (सी.बी.आई./एस.पी.ई.), (ए.आई.आर. 1998 एस.सी. 2120) में किया गया था। आरोप का सार यह था कि कुछ संसद सदस्यों ने संसद में किसी अ–विश्वास प्रस्ताव के विरूद्ध मतदान देने के लिए अन्य कुछ संसद सदस्यों को रिश्वत देने का षड्यंत्र रचा था । बहुमत से लिए गए निर्णय द्वारा न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि रिश्वत देने वाले, जो संसद सदस्य थे, अनुच्छेद 105 के तहत उन्मुक्ति का दावा नहीं कर सकते, जबकि रिश्वत लेने वाले, जो वे भी संसद सदस्य थे, ऐसी उन्मुक्ति का दावा कर सकते थे, यदि वे रिश्वत देने वालों द्वारा बताए गए तरीके से सदन में बोले थे या मतदान किए थे । यह स्पष्ट है कि संसद सदस्यों की उन्मुक्ति का यह अर्थ–निर्णय, न्याय की सभी धारणाओं, संसद सदस्यों से अपेक्षित सदाचार, स्वच्छ व्यवहार पर खरा उतरता है । सदन के अन्दर बोलने की स्वतंत्रता का प्रयोग रिश्वत देकर या स्वीकार करके नहीं किया जा सकता जो देश के दंड कानून के अधीन अपराध है । उपर्युक्त मामले में न्यायायल का निर्णय यह अनिवार्य बना देता है कि संविधान की सत्य मंशा को स्पष्ट कर दिया जाए । संसद और इसके सदस्यों की गरिमा, मर्यादा और सम्मान रखने के लिए यह आवश्यक है कि इसे हम संदेह से परे रखें कि अनुच्छेद 105 के अधीन वैधानिक कार्रवाई के विरूद्ध बचाव की परिधि भ्रष्ट कृत्यों तक नहीं जा सकती ।''

3.9.3 समानता का अधिकार और कानून की समान रक्षा एक मूलभूत अधिकार है और संविधान इस सिद्धांत को सुरक्षित रखता है । उपर्युक्त मामले में फैसला एक विसंगत स्थिति पैदा करता है जहां संसद सदस्य संसद में मतदान करने या बोलने से संबंधित भ्रष्ट कृत्यों के लिए अभियोजन से मुक्त हैं । यह न्याय के प्रतिमानकों और स्वच्छ संचालन के विपरीत जाता है । संसद सदस्यों को, जो कानून निर्माता होते हैं, निष्ठा और ईमानदारी के उच्चतम मानदंडों का निवर्हन करना होता है । अतः यह आवश्यक है कि इस विसंगति को दूर करने के लिए संविधान में संशोधन किया जाए ।

3.9.4 सिफारिशें :

क. यह आयोग, राष्ट्रीय संविधान कार्य समीक्षा आयोग द्वारा दिए गए सुझाव का पालन करते हुए यह सिफारिश करता है कि संविधान के अनुच्छेद 105 (2) में ऐसे समुचित संशोधन किए जाएं जिससे यह प्रावधान किया जा सके कि संसद सदस्यों द्वारा उपभोग की जा रही उन्मक्ति में उनके द्वारा सदन में या अन्यथा अपने कर्तव्यों के संबंध में किए गए भ्रष्ट कार्यों को शामिल न किया जा सके ।

ख. आयोग यह भी सिफारिश करता है कि राज्य विधान मंडलों के सदस्यों के संबंध में संविधान के अनुच्छेद 194 (2) में ऐसे ही संशोधन किए जाएं ।

3.10 सिविल सेवकों को संवैधानिक रक्षण – अनुच्छेद 311

3.10.1 सिविल सेवक संविधान के भाग XIV में विशिष्ट उपबंधों के तहत अद्भुत् रक्षण की सुविधा पाते हैं, जो उनकी सेवा की शर्तों के विनियमन को अधिकृत करती है । अनुच्छेद 309 में यह अनुबंध है कि इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए, समुचित विधान–मंडल के अधिनियम संघ या किसी राज्य के कार्यकलाप से संबंधित लोक सेवाओं और पदों के लिए भर्ती का और नियुक्त व्यक्तियों की सेवा की शर्तों का विनियमन कर सकेंगे । अनुच्छेद 310 के तहत, संघ या किसी राज्य में सेवारत व्यक्ति यथास्थिति राष्ट्रपति या राज्य के राज्यपाल के प्रसादपर्यंत पद धारण करते हैं । तथापि, इस प्रसाद का प्रयोग अनुच्छेद 311 के उपबंधों द्वारा सीमित किया गया है । अनुच्छेद निम्न प्रकार से पठित है :–

''संघ या राज्य के अधीन सिविल हैसियत से नियोजित व्यक्तियों का पदच्युत किया जाना, पद से हटाया जाना या पंक्ति में अवनत किया जाना ––

(1) किसी व्यक्ति को जो संघ की लोक सेवा का या अखिल भारतीय सेवा का या राज्य की लोक सेवा का सदस्य है अथवा संघ या राज्य के अधीन कोई लोक पद धारण करता है, उसकी नियुक्ति करने वाले प्राधिकारी के अधीनस्थ किसी प्राधिकारी द्वारा पदच्युत नहीं किया जाएगा या पद से नहीं हटाया जाएगा ।

(2) यथापूर्वोक्त किसी व्यक्ति को, ऐसी जांच के पश्चात् ही, जिसमें उसे अपने विरूद्ध आरोपों की सूचना दे दी गई है और उन आरोपों के संबंध में सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर दे दिया गया है, पदच्युत किया जाएगा या पद से हटाया जाएगा या पंक्ति में अवनत किया जाएगा, अन्यथा नहीं :

परंतु जहां ऐसी जांच के पश्चात् उस पर ऐसी कोई शास्ति अधिरोपित करने की प्रस्थापना है वहां ऐसी शास्ति ऐसी जांच के दौरान दिए गए साक्ष्य के आधार पर अधिरोपित की जा सकेगी और ऐसे व्यक्ति को प्रस्थापित शास्ति के विषय में अभ्यावेदन करने का अवसर देना आवश्यक नहीं होगा :

परंतु यह और कि यह खंड वहां लागू नहीं होगा ––

(क) जहां किसी व्यक्ति को ऐसे आचरण के आधार पर पदच्युत किया जाता है या पद से हटाया जाता है या पंक्ति में अवनत किया जाता है जिसके लिए आपराधिक आरोप पर उसे सिद्धदोष ठहराया गया है : या

(ख) जहां किसी व्यक्ति को पदच्युत करने या पद से हटाने या पंक्ति में अवनत करने के लिए सशक्त प्राधिकारी का यह समाधान हो जाता है कि किसी कारण से, जो उस प्राधिकारी द्वारा लेखबद्ध किया जाएगा, यह युक्तियुक्त रूप से साध्य नहीं है कि ऐसी जांच की जाए : या

(ग) जहां, यथास्थिति, राष्ट्रपति या राज्यपाल का यह समाधान हो जाता है कि राज्य की सुरक्षा के हित में यह समीचीन नहीं है कि ऐसी जांच की जाए ।

(3) यदि यथापूर्वोक्त किसी व्यक्ति के संबंध में यह प्रश्न उठता है कि खंड (2) में निर्दिष्ट जांच करना युक्तियुक्त रूप से साध्य है या नही तो उस व्यक्ति को पदच्युत करने या पद से हटाने या पंक्ति में अवनत करने के लिए सशक्त प्राधिकारी का उस पर विनिश्चय अंतिम होगा ।''

3.10.2 अनुच्छेद 311 में अधिकथित कार्यप्रणाली और उनके सशर्त परंतुक या अपवादों का आशय है, पहले उन सरकारी कर्मचारियों को सुरक्षा के उपाय सुनिश्चित करना, जो इस अनुच्छेद के अधीन शामिल हैं, और दूसरा, सरकारी कर्मचारी को मनमाने ढंग से पदच्युत करने या पद से हटाने या पंक्ति में अवनत किए जाने के विरूद्ध कुछ सुरक्षण देना । ये उपबंध कानूनी न्यायालय में प्रवर्तन करने योग्य हैं और जहां अनुच्छेद 311 का उल्लंघन होता हो, वहां अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा पारित किए गए आदेश आरंभ से ही शून्य हो जाते हैं । अनुच्छेद 310 और 311 के उपबंध सभी सरकारी कर्मचारियों पर लागू होते हैं ।

अनुच्छेद 311 को जारी रखने के पक्ष में तर्क

3.10.3 संविधान का अनुच्छेद 311 पिछले 50 वर्षों से भी अधिक समय से बहुत अधिक वाद–विवाद का मामला रहा है । इसे वर्तमान रूप में रखे जाने या जहां तक कि इसे और भी सुदृढ़ किए जाने से लेकर इसे पूर्ण रूप से हटा दिए जाने के तर्क–वितर्क दिए जा रहे हैं । जो अनुच्छेद 311 को रखे जाने के पक्ष में हैं, वे यह तर्क देते हैं कि यह अनुच्छेद इससे पिछले अनुच्छेद 310 में समाविष्ट कुछ सुरक्षणों को लेकर प्रसादपर्यंत के सिद्धांत को अपनाता है । वास्तव में, इस अनुच्छेद में पहले भी उपबंध किया गया था, जिसमें अभियुक्त अधिकारी को अवसर दिया जाना था कि यदि उसके विरूद्ध आरोप सिद्ध हो जाते हैं तो वह प्रस्तावित सजा की मात्रा को कम करने के लिए अपना विरोध प्रकट कर सकता है – तथापि, संविधान के 42वें संशोधन द्वारा इस आवश्यकता का समाधान कर लिया गया है ।

3.10.4 यह भी तर्क दिया जा रहा है कि अनुच्छेद 311 के अधीन सुरक्षण केवल केन्द्र बिंदु हैं और यह कि संविधान के निर्माताओं ने इस बात को ध्यान में रखा था कि ऐसी संभाव्यताएं बहुत ही कम होंगी जहां इतने छोटे सुरक्षणों की भी आवश्यता नहीं होगी । वास्तव में, सुनवाई के अवसर देने वाले सुरक्षण को नैसर्गिक न्याय का मूलभूत सिद्धांत बना दिया गया है । यह आवश्यकता कि केवल वह प्राधिकारी जो नियुक्ति प्राधिकारी है या इससे उच्च अन्य प्राधिकारी पदच्युत करने या पद से हटाए जाने की सजा दे सकता है, युक्तियुक्त जान पड़ती है, क्योंकि सरकार राजतंत्र की ऐसी रूपरेखा अपनाती है, जहां कर्मचारियों की विभिन्न श्रेणियों की नियुक्ति प्राधिकारियों को विभिन्न स्तरों का काम दिया जाता है – जिसमें एक स्पष्ट सिद्धांत यह होता है कि जहां जितने ऊंचे उत्तरदायित्व के पद होंगे, वहां नियुक्ति प्राधिकारी भी उतने ही ऊंचे पद पर होंगे।

3.10.5 यदि अनुच्छेद 310 को अनुच्छेद 311 के कार्यप्रणाली वाले सुरक्षण के बिना रखा जाता है तो इस बात की बहुत अधिक संभावना है कि अनुशासनिक प्रणालियों पर नियंत्रण रखने वाले नियमों और विभागीय जांच–पड़तालों को इस आधार पर ताक पर रख दिया जाएगा कि राष्ट्रपति या राज्यपाल को उचित छानबीन के बाद आरोपों को बिना सिद्ध किए किसी कर्मचारी को सेवा से पदच्युत करने का अधिकार है । ऐसी स्थिति में, केवल एक ही परिणाम होगा कि सेवा से संबंधित मामलों की मुकदमेबाजी में वृद्धि होगी ।

3.10.6 इसके अलावा, न्यायिक समीक्षा हमारे संविधान का एक एकीकृत भाग है और उच्चतम न्यायालय के अपीलीय काम का पर्याप्त हिस्सा अनुच्छेद 311 से संबंधित होता है । उच्चतम न्यायालय की अनुक्रमणिका टिप्पणियों से निर्णय लिए गए वादों पर एक सरसरी नजर मारने से विविध ऐसे निर्णय सामने आते हैं जिनसे यह प्रकट होता है कि दोषी लोक सेवकों से निपटने में यह अनुच्छेद बाधक नहीं बन रहा है :

(i) अनुशासनिक प्राधिकारी, जांच अधिकारी द्वारा 'दोषी नहीं' निर्णय के विपरीत अपना मत लेने में स्वतंत्र होता है । (*उच्च न्यायालय बनाम श्रीकांत पाटिल 2000* 1 एस.सी.सी 416)

(ii) जहां विभागीय जांच में आरोप सिद्ध कर लिए जाते हैं जबकि आपराधिक अभियोजन में उन्हीं आरोपों में दोषमुक्त पाया जाता है, तो उस दोषमुक्ति का अनुशासनिक कार्रवाई पर कोई प्रभाव नहीं होगा क्योंकि दो कार्यवाहियों में जरूरी सबूत का दर्जा बिल्कुल भिन्न होता है । (*वरिष्ठ पर्यवेक्षक बनाम ए. गोपालन* ए.आई.आर. 1999 एस.सी.1514)

(iii) जहां नियुक्ति प्राधिकारी राष्ट्रपति या राज्यपाल होता है वहां इन पदधारियों के लिए यह आवश्यक नहीं होता कि वे अनुशासनिक दंड के लिए न्यायोचित्य के बारे में व्यक्तिगत रूप से संतुष्ट हों । (*संघ बनाम श्रीपति रंजन* 1975 4 एस.सी. 699)

(iv) जहां अनुच्छेद 311 (2) के दूसरे परंतुक में तीन संभाव्यताएं आकर्षित हो रही हों, वहां सुनवाई का अवसर दिए जाने के लिए अनुच्छेद 14 का सहारा नहीं लिया जा सकता । (*संघ बनाम तुलसीराम पटेल* 1985 3 एस.सी.सी. 398)

(v) जहां गवाहों के साथ अभित्रास किया जाए, वहां अनुशासनिक प्राधिकारी के लिए यह बात खुली है कि वह यह मत ले कि जांच ''युक्तियुक्त रूप से व्यवहार्य'' नहीं है (*सत्यवीर बनाम संघ* 1985 4 एस.सी.सी 252)

(vi) यदि अवकाश प्राप्ति की आयु घटा दी गई हो तो वहां भी अनुच्छेद 311 आकर्षित नहीं होगा (*आंध्र प्रदेश बनाम मोहनुददीन* ए.आई.आर. 1994 एस.सी. 1474)

(vii) अनिवार्य रूप से ली गई अवकाश प्राप्ति भी उपर्युक्त अनुच्छेद को आकर्षित नहीं करती (*बिश्वनाथ बनाम बिहार* 2001 एस.सी.सी. 2 305)

(viii) न्यायालय विभागीय जांचों के निर्णयों पर अपीलों के मामलों में विलंब नहीं करते हैं । उच्चतर न्यायालयों की भूमिका केवल यह सुनिश्चित करने तक ही प्रतिबंधित होती है कि क्या जांच स्वच्छ और उचित रूप से हुई है । एक बार यह सिद्ध हो जाता है तो न्यायालय अन्तिम निर्णय के साथ हस्तक्षेप नहीं करेगा । न्यायालय केवल उन्हीं मामलों में ही हस्तक्षेप करेगा जहां दोषी के बारे में निर्णय को समर्थन देने के लिए कोई भी किसी भी तरह का साक्ष्य न हो । (*कुलदीप बनाम पुलिस आयुक्त 1999* 2 एस.सी.सी. 10)

3.10.7 यह तर्क दिया जा रहा है कि अनुशासनिक जांच को नियंत्रित करने वाले नियम ही उसमें होने वाले विलंबों और यहां तक कि दोषी सरकारी कर्मचारियों को पद से हटाए जाने के लिए जिम्मेदार होते हैं, न कि स्वयं अनुच्छेद 311. अधिकतर संगत प्रक्रियाएं संविधान से पहले की होती हैं और उनके मूल के बारे में नाममात्र सूचना होती है या कुछ मामलों में उनके अस्तित्व का भी पता नहीं होता । उपर्युक्त निर्णयों से यह स्पष्ट होगा कि उच्चतम न्यायालय ने अनुच्छेद 311 के लिए एक विवेकपूर्ण दृष्टि अपनाई है और यह मत लेना कि उक्त अनुच्छेद दोषी सरकारी कर्मचारियों के लिए एक रामबाण की दवा साबित हो गया है, बुद्धिमत्तापूर्ण नहीं होगा।

अनुच्छेद 311 को निरस्त करने के पक्ष में तर्क

3.10.8 उपर्युक्त तर्क अनुच्छेद 311 को निरस्त करने के पक्ष में तर्क का एक आरंभिक बिन्दु है । यह तर्क दिया जा सकता है कि यदि न्यायपालिका के निर्णय दोषी अधिकारियों के विरूद्ध कार्यवाई करने की आवश्यकता का निराकरण नहीं करते हैं तो इस अनुच्छेद को किसी अनैच्छिक निर्वचन के माध्यम से भ्रष्ट कर्मचारियों का बचाव करने की शक्यता के साथ क्यों रखा जाए? वास्तव में, ऐसा नहीं है कि अनुच्छेद 311 में संलिप्त सभी मामलों में उच्चतम न्यायालय ने एक 'सरकार समर्थित' प्रवृत्ति अपना ली हो । ऐसे भी मामले हुए हैं, जहां उच्चतम न्यायालय ने अनुशासनिक प्राधिकारी या सरकार की कार्रवाइयों को अस्वीकार कर दिया हो । कुछ उदाहरण दृष्टांतों के साथ दिए जा सकते हैं :

(i) जहां एक अस्थायी कर्मचारी रिश्वत लेने का दोषी था, वहां यह निर्णय दिया गया कि मामले को अनुच्छेद 311 के अनुसार निपटा दिया जाना चाहिए था और यदि दोषी सिद्ध हो जाता तो सेवा से हटा दिए जाने की बजाय पदच्युत किए जाने का दंड लगाया जाना चाहिए था (*मदन गोपाल बनाम पंजाब* ए.आई.आर. 1963 एस.सी. 531)

(ii) जहां एक अस्थायी महिला हवलदार को सेवा से मुक्त कर दिया गया, वहां यह निर्णय दिया गया कि ''यद्यपि सेवा मुक्ति का आदेश अहानिकर शब्दों में व्यक्त किया गया था और इसे नियमों के अनुसार बताया गया है, फिर भी, उस महिला की अनुपस्थिति में आरोपों की जांच किए जाने के बाद उसे कदाचार के आधार पर सेवा से निलंबित करने का आदेश वास्तव में एक छलावरण ही था । यह एक दंडित प्रकृति का था क्योंकि अपीलकर्त्ता के सेवा वृत्ति पर एक कलंक था । अपीलकर्ता को किसी आरोप पत्र के जारी किए बिना, उससे कोई स्पष्टीकरण मांगे बिना, सेवा से निलंबित करने के तात्पर्यित आदेश के विरूद्ध कारण बताओ नोटिस का कोई अवसर दिए बिना और गवाहों की कोई प्रतिपरीक्षा करने का अवसर दिए बिना यह आदेश दिया गया था । अतः यह संविधान के अनुच्छेद 311 (2) का उल्लंघन करता है और इसे अभिखंडित और अपास्त किया जाता है ।'' (*श्रीमती राजेन्द्र कौर बनाम पजाब राज्य और अन्य,* ए.आई.आर. 1986 एस.सी. 1790)

(iii) जहां एक जांच का आयोजन ऐसी जगह पर किया गया जो तैनाती के स्थान से दूर थी और अभियुक्त कर्मचारी पैसा न होने के कारण कार्यवाही में उपस्थित नहीं हो सका क्योंकि उसे कोई निर्वाह भत्ते का भुगतान (निलंबन अवधि के दौरान) नहीं किया गया था, यह निर्णय दिया गया कि जांच विकृत हो गई ।

(iv) अनुशासनिक प्राधिकारी के लिए यह आवश्यक है कि वह आरोपित अधिकारी को जांच अधिकारी की रिपोर्ट की प्रति दे दे और उसे आरोपों पर निर्णय लिए जाने से पहले इसके विरूद्ध प्रतिवेदन देने का अवसर प्रदान करे (*भारत संघ बनाम मोहम0 रमजान खान,* 1991 (1) एसएलआर एस.सी. 159 : ए.आई.आर. 1991 एस.सी. 471)

(v) (क) किसी कर्मचारी को दी गई विपरीत प्रविष्टियां उस कर्मचारी की पदोन्नति के बाद अपना महत्व खो देती हैं और उन पर कर्मचारी को समय से पहले सेवा–निवृत्त करने के लिए विचार में नहीं लिया जा सकता ।

(ख) ऐसी टिप्पणियों, जिनके बारे में कर्मचारी को सूचित न किया गया हो या प्रतिवेदन निपटान के लिए लंबित पड़ा हो, को समय से पूर्व सेवा–निवृत्त किए जाने का आधार नहीं बनाया जा सकता । (*ब्रज मोहन सिंह चोपड़ा बनाम पंजाब राज्य,* 1987 (2) एस. एल.आर एस.सी. 54)

3.10.9 उच्चतम न्यायालय ने टिप्पणी दी है, ''परंतु यदि सरकार को संविदा पर या नियमों के तहत कर्मचारी को पदच्युत करने या पद से हटाए जाने या पंक्ति में कमी करने की सजा देने के लिए निर्धारित प्रक्रिया को अपनाए बिना सेवा मुक्त करने का अधिकार है, फिर भी, सरकार कर्मचारी को सजा देने के लिए चुन सकती है और यदि सेवा से हटाया जाना कदाचार, बेपरवाही, अकुशलता या अन्य अयोग्यताओं पर आधारित है तो यह एक दंड है और अनुच्छेद 311 की आवश्यकताओं का पालन किया जाना चाहिए ।'' (*पी.एल.ढींगरा बनाम भारतीय संघ,* 1958 एस.सी.आर. पृ. 828 से 862 तक) यह तर्क दिया जाता है कि निचली अदालतों के अनेक निर्णय हैं, जिन्होंने अनुशासनिक प्राधिकारियों को तकनीकी ब्यौरों के साथ जोड़ दिया है जहां प्रक्रिया का विषय वस्तु से अधिक महत्व होता है ।

3.10.10 वर्तमान समय में, भारत में व्याप्त स्थिति को अन्य देशों में अपनाई जा रही प्रवृत्ति की दृष्टि से देखा जाना चाहिए जहां, ऐसी दंडात्मक कार्रवाई समुचित प्राधिकारी के विवेक पर एक सुनवाई की मंजूरी देकर सभंव हो जाती है, जिसे अधिकार के रूप में नहीं लिया जाता । बल्कि यूनाईटेड किंगडम में जिसकी प्रशासनिक व्यवस्थाओं को भारत में अपनाया गया था, ऐसी स्वतंत्रता नहीं होती । शायद, भारत उन कुछ ही देशों में से एक है जहां पर लोक सेवक, जो यद्यपि सरकार का एक एजेंट होता है और सरकार उसकी नियोजक होती है, सरकार के विरूद्ध संवैधानिक अधिकारों का अवलंब लेने की शक्ति रखता है ।

3.10.11 संविधान में समय समय पर अनुभव की जा रही शासन की आवश्यकताओं को मान्यता देने के लिए संशोधन किए गए हैं । भारतीय संविधान और इसके भाग XIV का प्रारूप ऐसे समय पर बनाया गया था, जब, विभाजन के बाद और उपनिवेश के बाद की प्रशासनिक क्रांति के बाद, यह आवश्यक महसूस किया गया था कि नौकरशाही के लिए कुछ गारंटियों का निर्धारण किया जाए । वर्तमान परिदृश्य में वह संरक्षण बिल्कुल आवश्यक प्रतीत नहीं होता । किसी एक के लिए, अर्थव्यवस्था में हाल ही में हुए विकास ने यह सुनिश्चित कर दिया है कि केवल सरकार ही रोजगार का महत्वपूर्ण स्रोत नहीं है । वास्तव में, उच्च पदों के लिए परिणामोन्मुख संविदाकारी नियुक्तियों को प्रदान करने के लिए वर्तमान तर्क–वितर्क में, लोक सेवाओं में स्थायितत्व के प्रश्न पर एक नया बिंदु केन्द्रित किया जा रहा है । नौकरशाही के भीतर कई दशकों से निर्मित हठीलापन और खंडन की प्रवृत्ति उन कर्मचारियों को केवल स्थानान्तरण करने में भी आने वाली मुश्किल

से प्रेरित रही है, जो अपने स्थानान्तरण के विरोध में न्यायालय में चले गए; ऐसा करना संविधान की नींव रखने वालों की शायद मंशा नहीं थी । सरकार में भ्रष्टाचार और अकुशलता में वृद्धि से ऐसा अनुभव किया जा रहा है कि जैसे किसी ''बड़ी शल्य चिकित्सा'' की जरूरत हो । एक माडल नियोजक के रूप में सरकार की भूमिका इस तथ्य से परे नहीं जा सकती कि जन हित व्यक्तिगत अधिकार – निश्चित रूप से भ्रष्ट और अकुशल लोक सेवक – से ऊपर होगा ।

3.10.12 निसंदेह यह आवश्यक है कि सरकारी अधिकारी को उस कार्यवाई के विरूद्ध युक्तियुक्त अवसर प्रदान किया जाए, जिसे मनमाना या प्रतिशोधी कहा जा सकता है । परंतु यह केवल युक्तियुक्त होना चाहिए, न कि बहुत अधिक और यही वैधानिक संरक्षण की प्रकृति का आकलन करने के लिए मानदंड होना चाहिए जो कर्मचारी को मिल सके । लोक सेवा में कार्यकाल या स्थायित्व की दृष्टि से सुरक्षा के लिए आवश्यक संरक्षण के कारण ऐसी कोई स्थिति नहीं बननी चाहिए, जिससे विलंब से की गई कार्रवाई से उत्साहित त्रुटिपूर्ण अधिकारियों को जनहित के खिलाफ कृत्यों को करने का आम बहाना मिल जाएं ।

3.10.13 यह निर्णय दिया गया है कि 'युक्तियुक्त अवसर' की आवश्यकता के उचित अनुपालन के लिए जैसाकि अनुच्छेद 311 (2) में परिकल्पना की गई है, ऐसे किसी सरकारी कर्मचारी को, जिसके विरूद्ध कोई कार्यवाई करना विचाराधीन हो, उसे सबसे पहले आरोपों का खंडन करने का अवसर प्रदान किया जाना चाहिए । यदि, जांच के बाद, आरोप सिद्ध कर लिए जाते हैं और उसे पदच्युत किए जाने या पद से हटाए जाने या पंक्ति में अवनत किए जाने में से कोई शास्ति अधिरोपित किए जाने का प्रस्ताव है, तो ऐसी शास्ति को जांच के दौरान दिए गए साक्ष्य के आधार पर अधिरोपित किया जाए । 3 जनवरी, 1977 से प्रभावी संविधान के अनुच्छेद 311 के खंड (2) में संशोधन के बाद ऐसे व्यक्ति को प्रस्तावित शास्ति के विषय में अभ्यावेदन करने का अवसर देना आवश्यक नहीं है । संविधान की भावना के अनुसार जांच किए जाने के लिए संथानम समिति ने उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों द्वारा निर्धारित किए गए 15 मानदंडों को सूचीबद्ध किया था । उच्चतम न्यायालयों द्वारा निर्धारित किए गए निर्वचन और आवश्यकताओं ने प्रमुख शास्तियों के लिए अनुशासनिक कार्यवाईयों को बहुत ही जटिलताओं से भरा, थकाऊ और समय लगने वाला बना दिया है जिसमें इससे पहले कि किसी व्यक्ति को आरोपों का दोषी पाया जाए और उसको सजा दी सके, बड़ी संख्या में क्रमबद्ध कदम लिप्त हो जाते हैं । दुर्भाग्यवश, प्रक्रिया वहीं समाप्त नहीं हो जाती । इसके बाद अपील करने, संशोधन करने और समीक्षा करने के प्रावधान विद्यमात होते हैं, जिनके खत्म हो जाने पर ही दोषी अधिकारी शास्ति से ग्रस्त हो पाएगा । अभियुक्त अधिकारी को भी यह अधिकार होता है कि वह प्रशासनिक अधिकरण के समक्ष अनुशासनिक प्राधिकारी की कार्रवाई की वैधानिकता को चुनौती दे, कार्यवाहियों पर अन्तरिम रोक लगवा ले और फिर राहत ले सके, और उसके बाद अनुशासनिक प्राधिकारी या सरकार के निर्णय के विरूद्ध पर्याप्त रूप से अधिकरण में अपील कर सके । इसके अतिरिक्त, उसके पास उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय में रिट अधिकार–क्षेत्र का अवलंब लेने का मूलभूत अधिकार उसके पास सुरक्षित है जिसमें वह जांच के आयोजन में ऐसे अधिकारों के अतिक्रमण के लिए अपना विरोध जता सकता है ।

3.10.14 स्वभावतः, इससे लोक सेवक के उसके नियोजन से संबंधित अधिकारों को कम करने की मांग को बढ़ावा मिला है । पर्याप्त प्रकृति का अगर कोई संशोधन हुआ है तो वह केवल यह कि कारण बताओ नोटिस के लिए दूसरे अवसर की आवश्यकता को समाप्त कर दिया गया है । संथानम समिति ने यह पाया था किः–

''. . . . . संवैधानिक आवश्यकताओं और न्यायिक घोषणाओं को ध्यान में रखते हुए, हमारा विचार है कि कार्य–पद्धति को मूल रूप में सरल करना तब तक संभव नहीं होगा जब तक कि संविधान में उचित रूप से संशोधन न किया जाएं । तथापि, अनुशासनिक कार्यवाहियों से संबंधित कार्य पद्धति को सरलीकृत करने की संभावना की उस सीमा तक हम ने जांच की है, जिस सीमा तक विद्यमान वैधानिक ढांचे के अन्दर यह संभव हो सका है ।''

3.10.15 होता समिति ने, सिविल सेवाओं को सहानुभूतिपूर्ण, नागरिक से मैत्रीपूर्ण और नैतिकतावादी बनाने के लिए अपने उपायों की सिफारिश करते हुए निम्न प्रकार से कहा है :–

'' हम सिफारिश करते हैं कि संविधान के अनुच्छेद 311 में यह उपबंध करने के लिए संशोधन किया जाना चाहिए कि यदि किसी लोक पद पर रहते हुए किसी लोक सेवक/व्यक्ति के विरूद्ध गैर कानूनी परितोषण स्वीकार करने या आय के ज्ञात स्रोतों के अनुपात में संपत्तियां रखने के आरोप हों और राष्ट्रपति अथवा राज्यपाल संतुष्ट हों कि लोक पद पर रहते हुए उस लोक सेवक/व्यक्ति को जनहित में सेवा से हटा दिया जाना चाहिए तो राष्ट्रपति या राज्यपाल लोक पद पर रहने वाले लोक सेवक/व्यक्ति को सेवा से हटाए जाने के आदेश पारित कर सकता है और उसे निर्णय लेने के बाद स्वयं का बचाव करने का अवसर प्रदान कर सकता है ।

यदि सेवा से हटाए गए किसी व्यक्ति को कानूनी न्यायालय में अभियोजित किया जाता है तो राष्ट्रपति या राज्यपाल आदेश द्वारा यह विशेष उल्लेख कर सकते हैं कि कानूनी न्यायालय द्वारा उस व्यक्ति को अभियुक्त करने का निर्णय अन्तिम और निर्णायक हो जाने के बाद ही सेवा से हटाए गए व्यक्ति को निर्णय उपरांत सुनवाई की जाए । इस प्रकार से हटाए गए व्यक्ति को स्वयं को आरोप से बचाव करने के लिए एक नियमित विभागीय जांच में निर्णय उपरांत सुनवाई दी जाए । यदि वह आरोप से मुक्त कर दिया जाता है तो उसकी सेवा शर्तों को पूर्ण रूप से वापस लागू करके बहाल किया जाना चाहिए, जिसमें उसकी वरिष्ठता भी शामिल हो और उसे देय पूर्ण वेतन और भत्तों की बकाया राशि का पूरा भुगतान किया जाना चाहिए ।

हमारे विचार में, ऐसे संविधान संशोधन से :

- *किसी भ्रष्ट अधिकारी को सेवा से तुरंत हटाया जा सकेगा :*
- *आम लोगों के मन में यह विश्वास जागेगा कि लोक पद पर रहने वाले लोक सेवा के सदस्यों/लोक पदों पर बैठे व्यक्तियों द्वारा भ्रष्ट वृत्ति को सहन नहीं किया जाएगा ।*
- *इस प्रकार से हटाए गए अधिकारी को निर्णय उपरांत सुनवाई में न्याय सुनिश्चित हो सकेगा।*

3.10.16 संविधान के संचालन की समीक्षा पर राष्ट्रीय आयोग ने यह सिफारिश की थी कि :

''मनमाने और दंडस्वरूप कार्रवाई के विरूद्ध संवैधानिक गारंटी होने से जो जटिल कार्य–पद्धतियां विकसित हो गई हैं, उनके कारण अभी भी सेवाएं शास्तियों को अधिरोपित करने से अधिकतर मुक्त

रह गई हैं । (अनुच्छेद 311) संवैधानिक सुरक्षण व्यवहार्य में दोषियों को सरकारी पद का निजी लाभ के लिए दुरूपयोग करने से तत्काल कुछ दंड दिए जाने से बचाव का काम करते रहे हैं । इसका प्रमुख परिणाम है जवाबदेही का निष्फल हो जाना । तदनुसार, यह आवश्यक हो गया है कि अनुच्छेद 311 के अधीन संवैधानिक सुरक्षणों के मुद्दे पर फिर से सोचा जाए ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि ईमानदार और कुशल अधिकारी को अपेक्षित संरक्षण मिल सके परंतु बेईमान अधिकारियों को पद पर पनपने न दिया जाए । प्रशासनिक और विधिक कार्रवाई की कार्य–पद्धति का उदारीकरण और सरलीकरण करने के लिए और सुरक्षा तथा अवधि के सिद्धांत और व्यवहार को पिछले 50 वर्षों से अधिक अनुभव के साथ एक रूप करने में पूरे विधि समूह की एक बृहत् परीक्षा करनी होगी ।''

3.10.17 अनुच्छेद 311 को हटाए जाने के पक्ष में मत रखने वालों की यह दलील है कि काफी समय से अनुच्छेद 311 के उपबंधों ने ऐसी असंख्य न्यायिक घोषणाओं में वृद्धि की है जिसके कारण निवर्चन में बहुत अधिक असमंजस और अनिश्चितता हो गई है । इन घोषणाओं का अनुच्छेद 311 के अस्तित्व को जारी रखने की मजबूती पर कोई महत्व या प्रभाव जारी नहीं रहना चाहिए । यदि इस अनुच्छेद को हटा दिया जाता है तो इस अनुच्छेद पर आधारित न्यायिक घोषणाएं प्रभावी और बाध्यकारी नहीं रहेंगी । इसे संविधान में प्रस्तावित किसी संशोधन के उद्देश्य और कारणों के कथन में स्पष्ट किया जा सकता है ताकि किसी ऐसे बचाव का दावा करने के लिए इन निर्णयों का आश्रय न लिया जा सके, जो अभिप्रेत नहीं था ।

सारांश में – अनुच्छेद 311 को हटाया जाना

3.10.18 आयोग ने भारत के संविधान में अनुच्छेद 311 को रखे जाने के पक्ष में और उसके विरोध के मामले पर गहराई से विचार किया है । किसी अन्य संविधान में इस प्रकार की गारंटियों का समावेश होना प्रतीत नहीं होता जो इस अनुच्छेद में है । भारत सरकार अधिनियम 1919 एक ऐसा प्रथम अधिनियम था जिसमें इसकी धारा 96 ख के माध्यम से भारत में 'सुख का सिद्धांत' लागू किया गया था । इसे 'नियमों के अधीन रहते हुए' लागू किया गया था और इस अधिनियम के अधीन न्यायालय शास्तियों को दी जाने वाली चुनौतियों की जांच करते समय यह निर्धारण करने के लिए कि इन्हें लगाना सही था या नहीं, वर्तमान नियमों को लागू किया करते थे । दूसरे शब्दों में, जब इस सिद्धांत को पहली बार भारत में लागू किया गया था, 'सुख' के किसी अन्यायपूर्ण प्रयोग के विरोध में बचाव प्रदान करने को पर्याप्त समझा जाता था । हमारे संविधान में अब उपलब्ध न्यायिक समीक्षा के उपबंधों के साथ सरकारी कर्मचारियों को उपलब्ध संरक्षण का वास्तव में अनुच्छेद 311 के बाहर भी निषेध है । यह इस तथ्य द्वारा जाना जा सकता है कि अनिवार्यतः अवकाश प्राप्ति में लिप्त मामलों में न्यायिक हस्तक्षेप का अवलंब लेने में सरकारी कर्मचारियों को बहुत अधिक राहत उपलब्ध है यद्यपि अनुच्छेद 311 ऐसे मामलों में विस्तृत नहीं है ।

3.10.19 जब सरदार पटेल ने लोक सेवकों के संरक्षण के लिए तर्क किया था तब उनकी मंशा स्पष्ट रूप से राजनीतिक कार्यपालक को बिना प्रतिशोध के भय के निष्पक्ष रूप से और साफ तौर से परामर्श देने के लिए वरिष्ठ लोक सेवकों की हिम्मत बढ़ाने की थी । परंतु, सभी लोक सेवकों को समान व्यवहार दिए जाने की विवशताओं के कारण और न्यायिक घोषणाओं के कारण ऐसे संरक्षण को सार्वजनिक क्षेत्र के प्रतिष्ठानों,

अर्ध–सरकारी संगठनों और सहकारिता जैसे निकाय निगमनों तक लागू किया जा चुका है और इससे असक्षम या गलत काम करने वाले व्यक्तियों के लिए शास्ति के भय के बिना सुरक्षा आधिक्य का वातावरण बन गया है । राष्ट्र के समक्ष अब यह चुनौती है कि निष्पादन का बिना विचार किए, जीवन भर के लिए बढाचढ़ा कर दी गई इस सुरक्षा का कैसे सामना किया जाए और सुरक्षा की युक्तियुक्त अवधि के साथ सेवाओं की प्रभावशाली सुपुर्दगी के अनुरूप वातावरण बने और जवाबदेही भी हो सके ।

3.10.20 आयोग का विश्वास है कि संविधान के अधीन किसी लोक सेवक के अधिकार, जनहित की कुल आवश्यकता और देश के संविदागत अधिकार के अधीनस्थ हों । यह तर्क नहीं दिया जा सकता कि किसी भ्रष्ट लोक सेवक के अधिकार, एक ईमानदार, कुशल और भ्रष्टाचार मुक्त प्रशासन को सुनिश्चित करने की आवश्यकता की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण हैं । अन्ततः लोक सेवक, जो देश का एक एजेंट है, देश से ऊंचा नहीं हो सकता और यह उसका मूलभूत कर्तव्य है कि वह देश की सत्यनिष्ठा, समर्पण, ईमानदारी, निष्पक्षता, विषयनिष्ठता, पारदर्शिता और जवाबदेही के साथ सेवा करे ।

3.10.21 यह सत्य है कि सरकार से एक नियोजक के रूप में यह अपेक्षित है कि वह एक स्वच्छ ढंग से कार्य करे और आदर्श नियोजक बन कर रहे, और अन्य के द्वारा प्रतिस्पर्द्धा के योग्य हो । यह भी सुनिश्चित किया जाना होता है कि ईमानदार और कुशल लोक सेवकों से उनके उच्च अधिकारियों द्वारा अपनी मन मर्जी से काम न लिया जाए । किसी सरकार से यह आशा नहीं की जा सकती कि वह किसी सरकारी कर्मचारी की सेवाओं को स्वेच्छा से या बिना जांच किए समाप्त कर दे । अपनी इच्छा से सेवा से हटाया जाना निजी क्षेत्र में भी संभव नहीं है । सच तो यह है कि अनुच्छेद 310 की कोई आवश्यकता नहीं होनी चाहिए और वैधानिक सुरक्षणों को अनुच्छेद 309 के अधीन विधान द्वारा उपबंधित किया जा सकता है ।

3.10.22 अनुच्छेद 309, 310 और 311 एक साथ जुड़े हुए हैं । यदि ''सेवा की शर्तों'' को पूर्ण रूप से एक साथ संहिताबद्ध कर दिया जाए जैसाकि अनुच्छेद 309 के वास्तविक भाग द्वारा अपेक्षित है, तो इसमें अनुशासनिक कार्यवाईयों और शास्तियों के अधिरोपन को शामिल किया जा सकता है । फिर, जैसा कि ऊपर कहा गया है, संविधान के आधारभूत ढांचे के एकीकृत भाग के रूप में स्वीकृत कानूनी नियम को लेकर अनुच्छेद 311 में अब दिया गया युक्तियुक्त संरक्षण 'कानूनी नियम' की अपेक्षा को पूरी करने के लिए उपलब्ध रहना जारी रहेगा ।

3.10.23 इन विचारों को ध्यान में रखते हुए और एक सुस्पष्ट सामान्य प्रत्यक्ष बोध को देखते हुए, जो संविधान में ही ''सुरक्षण'' को व्यक्त करता है, एक असाधारण 'सुरक्षण' होने की धारणा रखता है, आयोग का मत है कि कुल मिला कर अनुच्छेद 311 को संविधान में एक भाग के रूप में जारी रखना आवश्यक नहीं है। इसकी जगह अनुच्छेद 309 के अधीन समुचित और बृहत् विधान का ढांचा, भर्ती और सेवा के सभी पहलुओं के साथ साथ पदच्युत करने, हटाए जाने और पंक्ति में कम करने से संबंधित नियमों को शामिल करते हुए तैयार किया जा सकता है । एक संशोधित संवैधानिक उपबंध के माध्यम से संबंधित विधान मंडलों द्वारा समुचित विधान को भी सुनिश्चित किया जा सकता है । आयोग लोक सेवा सुधारों पर अपनी रिपोर्ट में ऐसे अधिनियमन से संबंधित मुद्दों की विस्तार से जांच करेगा ।

3.10.24 सिफारिशें :

क. संविधान के अनुच्छेद 311 को समाप्त कर दिया जाना चाहिए ।

ख. इसी प्रकार संविधान के अनुच्छेद 310 को समाप्त कर दिया जाना चाहिए ।

ग. लोक सेवकों द्वारा जन हित में की गई नेकनीयती की कार्रवाई की रक्षा करने के लिए, अनुच्छेद 309 के अन्तर्गत प्रदान की गई सेवाओं की सभी आवश्यक नियम और शर्तों को शामिल करने के लिए उपयुक्त कानून बनाया जाना चाहिए : इसे राज्यों के लिए लागू किया जाना चाहिए ।

घ. अनुच्छेद 309 के अन्तर्गत ऐसे विधान के जरिए लोक सेवकों को स्वैच्छिक कार्रवाई किए जाने पर आवश्यक संरक्षण का प्रावधान किया जाना चाहिए ।

3.11 अनुशासिक कार्यवाहियां

3.11.1''अनुशासनिक कार्यवाहियां'' शब्दों की परिभाषा किसी विधान या नियमों में नहीं दी गई है । तथापि, एक संचालन परिभाषा कुछ इस प्रकार दी जाती है : यह पता लगाने के लिए कि किसी कर्मचारी ने एक विहित या अन्तर्निहित नैतिक संहिता और व्यावसायिक आचार का अतिक्रमण किया है या नहीं ताकि नियोजक द्वारा सिद्धदोषी पर उसे नौकरी से बेहाल करने या नौकरी से संबंधित लाभों से बेदखल करने की शास्तियां लगाई जा सकें । लोक सेवकों द्वारा किए जाने वाले कदाचार से निपटने के संपूर्ण उपायों के रंगपटल में से अनुशासनिक कार्यवाही का विशेष स्थान है क्योंकि सारी प्रक्रिया लोक सेवा व्यवस्था के भीतर रह कर चलती है । यह एक स्वयं तथ्य है कि एक कुशल अनुशासनिक व्यवस्था कार्यकुशलता और व्यावसायिकता में वृद्धि करती है और बाहरी न्यायिक प्रक्रियाओं का आश्रय लेने में सशक्त रूप से बचाती है ।

3.11.2 भारत सरकार अधिनियम, 1919 के अधिनियमन से पहले, अनुशासनिक कार्यवाई को किए जाने से पहले विभागीय जांच की कोई औपचारिक व्यवस्था नहीं थी । पुलिस नियम पुस्तिकाएं और विनियम जो वन विभागों पर नियंत्रण करने के लिए थे, उनमें पदच्युत करना, आर्थिक दंडों और वेतन–वृद्धि पर रोक लगाना आदि का ही प्रावधान था । ऐसी शास्तियों को स्पष्टीकरण मांगने के बाद और उन पर विचार करने के बाद ही लगाया जाता था । 1920 के शुरू में रेलवे विभाग में मौखिक रूप से जांच करने की व्यवस्था पहली बार आरंभ की गई प्रतीत होती है, यद्यपि, उस समय भारतीय रेल व्यवस्था निजी और सार्वजनिक आरंभन का गठजोड़ हुआ करता था । जहां तक अनुशासनिक कार्यवाही की व्यवस्था का संबंध है, भारत सरकार अधिनियम, 1919 को एक मोड़दार बिन्दु ठीक ही समझा गया है । उस अधिनियम की धारा 96ख इस निर्धारण के साथ कि ''ताज की सेवा में पदेन प्रत्येक लोक सेवक तब तक उस पद पर रहेगा जब तक कि हिज मजस्टी का शासन होगा ।'' यह भी उपबंध करती है कि ''इस अधिनियम के उपबंधों और उनके अधीन बनाए गए नियमों की शर्त पर'' । इन उपबंधों का महत्व इसलिए था कि शास्तियों के दंड समेत सेवा शर्तों को नियमित करने के लिए पहली बार विशिष्ट नियम बनाए गए थे ।

3.11.3 उपर्युक्त उपबंधों के अनुसरण में, सिविल सेवा वर्गीकरण नियम, 1920 बनाए गए थे । इन नियमों के नियम XIV में पहली बार अनुशासनिक कार्यवाही आयोजित करने के लिए एक कार्य प्रक्रिया निर्धारित

की गई थी । इन नियमों के उपबंधों में 1930 के संशोधित सिविल सेवा विनियमों के रूप में विस्तार किया गया था । इस समय जो मूल उपबंध प्रचलन में हैं, वे अनिवार्य रूप से अपरिवर्तित पड़े हुए हैं । {इन उपायों का पूर्व इतिहास अनेक न्यायिक घोषणाओं में देखा जा सकता है जैसे कि : **आर. वेंकटा राव बनाम भारत के लिए राज्य सचिव,** *ए.आई.आर. (1937) पीसी 31* में प्रिवी कांउसिल का न्याय और क्रमशः कलकत्ता और रंगून उच्च न्यायालयों का निर्णय **सतीश चंद्र दास बनाम सचिव, राज्य सचिव** *आई.एल.आर. (54) कल. 44* और **जे.आर. बरोनी बनाम राज्य सचिव** *ए.आई.आर. (1929) रंगू. 207*}

3.11.4 यह देखना भी उल्लेखनीय होगा कि संविधान के भाग XIV में ''संघ और राज्यों के अधीन सेवाओं'' से संबंधित उपबंधों को, खास तौर से उसके अनुच्छेद 309 से अनुच्छेद 313 तक को भारत सरकार अधिनियम 1935 के उपबंधों से लेकर शब्दशः उद्धृत किया गया है । अतः, केन्द्रीय सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील) नियम, 1965 में अन्तर्निहित शास्तियों और उन्हें दंडित करने के निर्धारण के लिए विद्यमान ढांचा संथानम समिति की सिफारिशों के अनुसरण में किए गए कुछ संशोधनों को छोड़कर स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व बनाए गए प्रतिरूप को अनिवार्य रूप से जारी किया गया है । राज्य सरकार द्वारा भी इस विषय में बनाए गए नियम बिल्कुल ही केन्द्रीय नियमों जैसे हैं (इसके पश्चात् ''सीसीए नियम'' से जाना जाए), जिसका स्पष्ट कारण यह है कि वे 'सामान्य परंपरा' के सहभागी होते हैं क्योंकि 1920 के 'मूल नियम' स्थानीय सरकारों को शामिल करते हुए समस्त भारत में लागू होते हैं ।

3.11.5 स्वतंत्रता के बाद जो एक प्रमुख परिवर्तन लाया गया है, वह यह है कि आचार संहिता को सीसीए से अलग कर दिया गया है और केन्द्रीय सिविल सेवाएं (आचार) नियम और अखिल भारतीय सेवाएं (आचार) नियम आदि के रूप में सदृश नियमों को संथानम समिति द्वारा सुझाई गई तर्ज पर अधिसूचित कर दिया गया है । उस समिति ने, अखिल भारतीय सेवाओं, केन्द्रीय सिविल सेवाओं, रेलवे और रक्षा सेवाओं में सिविलियनों के लिए अनुशासन और अपील से संबंधित उस समय में प्रचलित पृथक नियमों के अध्ययन के बाद, नियमों के एक–समान सैट की सिफारिश की । समिति ने कहाः– ''हमारी इच्छा यह थी कि आचार नियम, विशेष तौर से सत्यनिष्ठा से संबंधित नियमों को एकीकृत किया जा सके । यदि किसी कारणवश, किसी विभाग या सेवा के लिए अलग से नियमों को प्रख्यापित करना आवश्यक हो तो अलग से नियमों को प्रख्यापित करने में कोई आपत्ति नहीं की जानी चाहिए बशर्ते कि नियम, विशेष रूप से सत्यनिष्ठा से संबंधित नियम एक–समान हों ।'' तदनुसार, विद्यमान प्रतिरूप में, व्यावसायिक मानदंड, और कुछ सीमित परिमाण में व्यक्तिगत व्यवहार के मानदंडों का निर्धारण आचार नियमों में अधिकथित हैं, जबकि इन मानदंडों के अतिक्रमण के परिणामों को सीसीए और उसके सदृश नियमों में निपटा गया है ।

3.11.6 सीसीए नियमों में दो प्रकार की शास्तियों का प्रावधान है । **लघु शास्तियों में** ''परिनिन्दा'' , ''विशिष्ट अवधि के लिए पदोन्नति को रोके रखना'' और ''वेतन–वृद्धि को रोके रखना और वेतन में से कर्मचारी द्वारा की गई धनीय हानि को पूर्ण या आंशिक रूप से वसूल करना'' शामिल है । लघु शास्तियों से अभियुक्त कर्मचारी को स्पष्टीकरण लेने के बाद और उस पर विचार करने के बाद ही दंडित किया जाता है । **मुख्य शास्तियों** में वेतनमान से निम्न या मूल काडर में प्रत्यावर्तन द्वारा दर्जे को कम करना, अनिवार्य अवकाश–प्राप्ति, सेवा से हटाया जाना या सेवा से पदच्युत करना शामिल हैं । ऐसी शास्तियों से दंडित केवल एक विस्तृत जांच के बाद ही किया जा सकता है अलावा इसके कि अनुच्छेद 311 (2) के दूसरे परंतुक में शामिल मामलों में, अर्थात् देश की सुरक्षा से संबंधित आधारों पर और जहां जांच करना समीचीन न समझा जाए ।

3.11.7 अनुशासनिक कार्यवाहियों के आरंभन को नियंत्रित करने वाली विस्तृत कार्य–पद्धतियों और उनकी प्रगति और पराकाष्ठा को आकृत्ति 3.1 में आरेखन द्वारा समझाया गया है । राज्यों और संघीय सरकार में भी अराजपत्रित स्थापना के संबंध में इस प्रतिरूप में थोड़ी सी विभिन्नताएं हैं, जबकि मुख्य तौर पर उनमें प्रदर्शित 'प्रवाह' केन्द्र और राज्य सरकारों के कर्मचारियों तथा लोक क्षेत्र और राष्ट्रीयकृत बैंकों के कर्मचारियों के समूचे समुदाय को छूते हैं । ऐसी कार्य–पद्धतियों के विस्तार में न जाते हुए परंतु लिप्त मामलों का अहसास करने के लिए, उस समय सीमा के साथ, जो केन्द्रीय सतर्कता आयोग (सीवीसी) इस पर ध्यान देने के लिए अपेक्षा करता है, निम्नलिखित कार्यपद्धति की रूपरेखा को ध्यान में रख लेना ही पर्याप्त होगा :–

- प्राप्त हुई शिकायतों या पाए गए दोषों की यह निर्धारित करने के लिए जांच करना कि क्या उनमें 'सतर्कता बिंदु' लिप्त है (अनिवार्य रूप से आचार नियमों का उल्लंघन) – 1 माह
- यह निर्णय लेना कि शिकायतों को यह निर्धारित करने के लिए सीबीआई को भेजा जाए या विभागीय एजेंसियों को, कि क्या उनमें कोई सार्थकता है – 3 माह
- जांच के निष्कर्षों को प्रस्तुत करना – 3 माह
- विभाग/सीबीआई रिपोर्ट को **'पहली अवस्था सूचना'** के लिए सीवीसी को भेजना – संदर्भ की तारीख से एक माह
- सीवीसी की सूचना का निर्धारण – 1 माह
- यदि विभागीय जांच कराए जाने का निर्णय लिया गया है तो आरोप पत्र जारी करना, कदाचार के आरोपण का कथन और गवाहों और प्रलेखों की सूचना – सीवीसी सूचना की प्राप्ति से 1 माह
- अभियुक्त कर्मचारी के बचाव कथन पर विचार – 15 दिन
- लघु शस्तियों में अन्तिम आदेशों का जारी किया जाना – बचाव कथन की प्राप्ति से 2 माह
- जांच प्राधिकारी (आईए) और प्रस्तुति अधिकारी (पीओ) की नियुक्ति जहां पर 'प्रथम स्थिति सूचना' मुख्य शास्ति की सिफारिश करती हो, जिसमें विस्तृत जांच की आवश्यकता हो – बचाव कथन की प्राप्ति के तत्काल बाद ।
- जांच पूरी करना – जांच अधिकारी और प्रस्तुति अधिकारी की नियुक्ति की तिथि से 6 माह
- आरोपित अधिकारी को प्रतिवेदन, यदि कोई हो, के लिए जांच रिपोर्ट की एक प्रति भेजना (जहां अभियुक्त को सिद्धदोषी पाया गया हो या अनुशासनिक प्राधिकारी जांच रिपोर्ट से असहमति दिखाते हुए उसके कारणों को यह निर्णय देते हुए अभिलेखित कर दे कि आरोपों को सिद्ध नहीं किया जा सका।)
- अभियुक्त कर्मचारी के प्रतिवेदन पर विचार करते हुए और जांच रिपोर्ट को **'सीवीसी को दूसरी अवस्था सूचना'** का अग्रेषित करना – प्रतिवेदन प्राप्त होने की तिथि से 1 माह

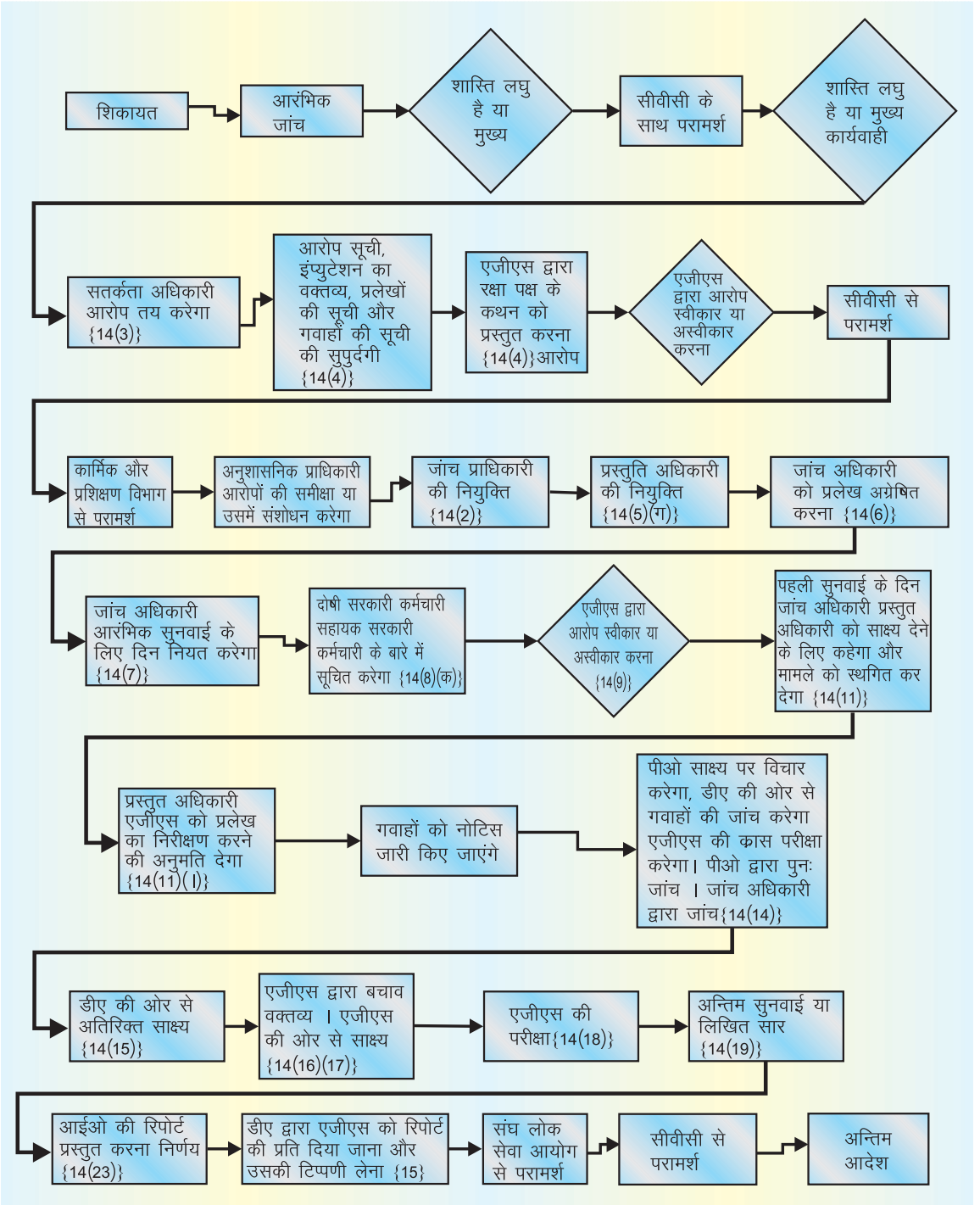

आकृति 3.1 – अनुशासनिक कार्यवाही की स्थितियां

- जांच रिपोर्ट पर आदेश जारी करना – सीवीसी की दूसरी अवस्था सूचना' की प्राप्ति से 1 माह (या जांच रिपोर्ट की तारीख से 2 माह जहां ऐसी सूचना आवश्यक न हो) ।

(इस बात पर ध्यान दिया जाए कि उपर्युक्त अनुसूची में किसी 'गलत काम' को किए जाने और इसके पता लग जाने या इसके बारे में शिकायत मिलने के बीच लिया गया समय शामिल नहीं है ।) इसके एक बहुत ही कच्चे आकलन से यह भी पता चल पाएगा कि उपर्युक्त समय अनुसूची का पालन भी किया जाए तो लघु और मुख्य शास्तियों में लिप्त चरम बिंदु के मामलों में लिया गया अनुमानित समय क्रमशः 10 माह 15 दिनों और 16 महीनों का होगा । यह भी बताना आवश्यक है कि इस अनुसूची में संघ लोक सेवा आयोग के साथ यथावश्यकता परामर्श के लिए आवश्यक समय शामिल नहीं है।)

3.11.8 वास्तविक कार्यवाहियों के आयोजन में लिप्त समस्याओं का अहसास करने के लिए विभागीय जांच–पड़तालों पर अतिक्रमण के निम्नलिखित घटकों की ओर ध्यान आकृर्षित करना भी आवश्यक होगा, विशेष रूप से संघ सरकार में :–

- सीवीसी सतर्कता प्रशासन पर एक नोडल, सांविधिक प्राधिकरण के रूप में निगरानी करने और केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के संचालन में कुछ सीमा तक निगरानी करने के लिए सामने आया है। जांच को आरंभ करने और पूर्ण करने के लिए इस प्राधिकरण से स्वीकृति आवश्यक है ।

- संघ सरकार के प्रत्येक मंत्रालय/विभाग या अन्य संगठन में अब एक पूर्णकालीन या अंशकालीन मुख्य सतर्कता अधिकारी (सीवीसी) के अधीन एक आंतरिक सतर्कता का गठन है, जिसका शिकायतों की प्रारंभिक जांच करने या उन पर निरीक्षण रखने, आरोप पत्र आदि तैयार करने, कार्यवाही की प्रगति पर निगरानी रखने और जांच रिपोर्टों की परीक्षा करने के अलावा रोकथाम सतर्कता और निगरानी आदि का उत्तरदायित्व है ।

- भारत सरकार की कुल सिविल स्थापना में मुख्य रूप से वर्ग ''ग'' और ''घ'' के कर्मचारी शामिल होते हैं । तथापि, सीवीसी की अनुवीक्षण और निरीक्षण भूमिका केवल वर्ग ''क'' और राजपत्रित ''ख'' तक ही सीमित है । दूसरे शब्दों में, अधिकांश अनुशासनिक मामले सीवीसी की निगरानी का लाभ नहीं उठा पाते ।

- अनुशासनिक कार्यवाही का विकल्प प्रायः उन मामलों में अपनाया जाता है जो मूल रूप से आपराधिक अभियोजन के लिए सीबीआई द्वारा जांच किए गए हों, यदि जांच द्वारा उचित हो परंतु जहां जांच एजेंसी इस निष्कर्ष तक पहुंचती है कि एकत्र किया गया अपराध का साक्ष्य सिद्धदोष प्राप्ति के लिए पर्याप्त नहीं है परंतु विभागीय कार्यवाहियों में दोष प्राप्ति के लिए कुछ अंश तक सही है । (किसी अपराधिक मामले में आवश्यक सबूत का अंश विभागीय कार्यवाहियों में 'युक्तियुक्त संदेह से परे' प्रमाणित होना चाहिए जबकि सिविल मामलों में 'संभावना की प्रधानता' पर्याप्त है ।)

- ऐतिहासिक रूप से, विभागीय कार्यवाहियों का काम जांच के लिए संगठन के भीतर से ही उन अधिकारियों के सुपुर्द किया जाता था जो मनमाने ढंग से चुने जाते थे, केवल इस शर्त के साथ

कि जांच अधिकारी दर्जे में अभियुक्त से वरिष्ठ हो । वर्तमान प्रवृत्ति में सीवीसी में आयुक्त, विभागीय जांच के रूप में कार्यरत पूर्णकालीन जांच अधिकारी होते हैं । तथापि, यह केवल अंशकालीन जांच अधिकारियों की व्यवस्था को ही पूरी करता है क्योंकि विभागीय जांचों की संख्या पर्याप्त रूप से बड़ी होती है ।

- कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग की विभागीय जांच–पड़तालें आयोजित कराने में अब बहुत ही सीमित भूमिका रह गई है सिवाय अखिल भारत सेवाओं के मामलों में और अधिकतर रूप में, विविध मंत्रालय/विभाग अनुशासनिक प्राधिकारियों के कृत्यों का प्रयोग उनके अपने स्थापना में नियुक्त किए हुए अधिकारियों के संबंध में स्वयं करते हैं ।

  1980 में केन्द्रीय प्रशासनिक अधिकरण (कैट्स) के गठन से विभागीय जांचों से निकलने वाली न्यायिक कार्यवाहियों में से अधिकतर इन अधिकरणों में की जाती हैं, जो तकनीकी आधार पर अनुशासनिक कार्यवाहियों पर रोक की याचिकाओं को स्वीकार करते हैं बल्कि अर्न्तवर्ती आदेश के विरूद्ध याचिकाओं को भी स्वीकार करते हैं । लोक सेवक अधिकरण के आदेशों को उच्च न्यायालयों में चुनौती देने के लिए सक्षम हैं । इसके अलावा, उच्चतम न्यायालय के पास भी संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन ''अपील के लिए विशेष इजाजत'' का विकल्प है ।

3.11.9 आयोग ने इस तथ्य को ध्यान से देखा है कि अनुशासनिक कार्यवाहियों की प्रक्रिया का जिस प्रकार से प्रचालन हो रहा है, उसके बारे में दावाधारियों के सभी वर्गों के बीच काफी असंतोष है । होता समिति ने भी, जिसने ऐसी कार्यवाहियों के कुछ पहलुओं पर विचार किया था, उसमें होने वाले विलंबों और कार्य–पद्धति संबंधी पहलुओं पर ध्यान आकर्षित किया था, जो कार्यकुशलता और ईमानदारी को सुनिश्चित करने के लिए एक अस्त्र बनने से अनुशासनिक शास्तियों को रोकते हैं । उस समिति ने लघु शास्तियों के लिए और अधिक अंतराल पर अनुशासनिक कार्यवाहियां करने, जांच अधिकारी को जांच के आयोजन के दौरान सभी अन्य कृत्यों से मुक्त रखने और अभियुक्त कर्मचारी के विरूद्ध मामला साबित करने के लिए आरोप पत्र आदि सहित उपयोग किए जाने वाले प्रस्तावित प्रलेखों की प्रतियां प्रस्तुत करने जैसे उपायों का भी सुझाव दिया था ।

3.11.10 हाल ही के अध्ययन[49] से कुछ उद्घाटित सूचना मिली है । कुछ मुख्य निष्कर्ष (अध्ययन किए गए मामले) इस प्रकार हैं :–

- अध्ययन किए गए 116 मामलों में, सी.वी.सी. को 'प्रथम अवस्था सूचना' के लिए भेजे गए और अध्ययन किए गए मामलों में सूचना की प्राप्ति के बीच लिया गया औसतन समय 170 दिनों का था । (ये मामले स्पष्टतः लघु शास्ति के अधिरोपन में लिप्त थे) ।

- मुख्य शास्ति के लिए कार्यवाहियों मे लिप्त 234 मामलों में जांच अधिकारी की नियुक्ति और जांच के पूर्ण हो जाने के बीच लिया गया औसतन समय 584 दिनों का था ।

- 56 मामलों में जांच रिपोर्ट प्राप्त होने और सी.वी.सी. को 'दूसरी अवस्था सूचना' के लिए मामला भेजे जाने के लिए लिया गया औसतन समय 288 दिनों का था ।

[49] स्रोत : ''भ्रष्टाचार निरोध रणनीति के उपकरण के रूप में अनुशासनिक कार्यवाहियां'' – डबलू. आर. रेड्डी(भारतीय लोक प्रशासन संस्थान नई दिल्ली 2005)

- 33 मामलों में, 'कदाचार होने की तिथि' और मामलों को सी.वी.सी. को 'प्रथम अवस्था सूचना' के लिए भेजे जाने में लिया गया औसतन समय 1284 दिनों का था ।

- विविध एजेंसियों द्वारा कुछ पूर्ण किए गए मामलों के विश्लेषण से लिए गए समय के निम्नलिखित 'ब्यौरों' का पता चला है :

प्रशासनिक विभाग	– 69%
जांच अधिकारी	– 17%
सी.वी.सी.	– 9%
संघ लोक सेवा आयोग	– 5%

- दिए गए स्रोत पर निर्भर करते हुए प्रायः एक ही प्रकार की अवस्थाओं में लिए गए समय में काफी विभिन्नता थी, अर्थात् कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग के प्रशासनिक सतर्कता खंड की अनुशासनिक मामला अनुवीक्षण और प्रबंधन सूचना प्रणाली (डी.सी.एम.एम.आई.एस.) 'प्रथम अवस्था सूचना' के सी.वी.सी. आंकड़ों अर्थात् वे मामले जो नजदीकी या लघु शास्तियों के परिणामस्वरूप थे, और उसी संगठन के 'दूसरी अवस्था सूचना' अर्थात् विभागीय जांच के बाद पुनः भेजे गए मामले थे ।

('कदाचार होने की तिथि' की अवधारणा का, यद्यपि यह एक नवीन तल चिन्ह है, प्रयोग ऐसी स्थिति में सावधानी से किए जाने की आवश्यकता है, जहां कदाचार को 'ढूंढना' भविष्य की किसी तारीख पर ही आवश्यक रूप से संभव हो)

3.11.11 उपर्युक्त आंकड़ों से दो तथ्य स्पष्ट रूप से निकलते हैं : पहला, विविध अवस्थाओं के पूर्ण होने में लिए गए समय और सी.वी.सी. द्वारा उनके पूर्ण होने के लिए विहित अनुसूची के बीच कोई संगति नहीं है और दूसरा, जहां ऐसे मामलों में 'अपराध की तुरंत रिपोर्ट' की आशा करना अवास्तविक होगा, वहीं 'कदाचार' के कृत्य को ढूंढने में दहला देने वाले विलंब किए जाते हैं । वास्तव में, कुल मिला कर यह बिल्कुल स्पष्ट नहीं है कि ऐसे 'कदाचार' किस प्रकार से प्रकाश में आते हैं – क्या संगठन के भीतर मामलों की पर्याप्त संख्या की छानबीन की गई थी अथवा क्या ऐसे अधिकतर मामलों को 'प्रभावित बाहरी व्यक्तियों' की शिकायतों द्वारा प्रकट किया जाता था । ये ऐसे पहलु हैं, जिन पर और अधिक शुद्धता और प्रयोगाश्रित साक्ष्य की स्पष्ट रूप से आवश्यकता होती है ।

3.11.12 आयोग का मत है कि अनुशासनिक कार्यवाहियों को नियंत्रित करने वाले विद्यमान विनियमों को पुनः निर्धारित किया जाए और नए विनियमों को निर्धारित करने में निम्नलिखित सामान्य सिद्धांतों का पालन किया जाए :–

क. कार्य–पद्धति को सरल बनाए जाने की आवश्यकता है ताकि कार्यवाही को कम समय के भीतर पूरा किया जा सके ।

ख. प्रलेखों के साक्ष्यों पर जोर दिया जाना चाहिए और यदि प्रलेखों के साक्ष्य पर्याप्त न हों, केवल तब ही मौखिक साक्ष्य का सहारा लिया जाना चाहिए ।

ग. अपीलीय तंत्र को विभाग के भीतर ही प्रदान किया जाना चाहिए ।

घ. विषयनिष्ठता को सुनिश्चित करने के लिए मुख्य शास्तियों के अधिरोपण की सिफारिश एक समिति द्वारा की जानी चाहिए ।

आयोग इन पहलुओं पर सिविल सेवा सुधार पर अपनी रिपोर्ट में विस्तार से विचार करेगा ।

3.12 सांविधिक रिपोर्ट देने की बाध्यताएं

3.12.1 कानूनी उपबंधों ने नागरिकों पर रिपोर्ट देने की बाध्यताएं लाद रखी हैं । ऐसे उपबंध नागरिकों और लोक सेवकों दोनों पर लागू होते हैं और ऐसी बाध्यताओं का अनुपालन करने में विफल हो जाने पर दंड के उपबंध किए गए हैं । दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 39 किसी भी व्यक्ति के लिए यह अनिवार्य करती है कि वह किसी लोक सेवक द्वारा आरोपित भ्रष्ट अपराध की रिपोर्ट मजिस्ट्रेट को दे, जिसके न दिए जाने पर वह अभियोजन का भागी होगा । तथापि, यह उपबंध एक व्यर्थ में पड़े पत्र की तरह बन कर रह गया है क्योंकि सूचना देने वाले के सुरक्षण के लिए कोई तंत्र उपलब्ध नहीं हैं । स्पष्ट तौर पर, सीटी बजाने वाले अर्थात् भ्रष्टाचार की सूचना देने वाले को भ्रष्ट कार्य के अपराधकर्ताओं द्वारा प्रतिशोध लिए जाने के भय और ऐसी धमकियों की स्थिति में उनकी जान और माल की रक्षा करने के लिए सरकार की असमर्थता, ऐसी शक्तिशाली बाधाएं हैं, जो नागरिक के रूप में बहुत दूर तक प्रभाव डालती हैं । एक लोक सेवक के मामले में ये धमकी रिपोर्ट किए गए अपराधकर्ताओं के वास्तविक एजेंटों की ओर से ही नहीं दी जाती, बल्कि सरकारी तंत्र की ओर से भी दी जाती है, जहां मिलीभगत से भ्रष्टाचार हो रहा होता है । अतः वह बाहरी शारीरिक धमकी और आंतरिक सरकारी उत्पीड़न दोनों से ही पीड़ित होता है ।

3.12.2 जैसाकि कानून द्वारा अपेक्षित है, भारतीय दंड संहिता की धारा 176 या 202 के अधीन सूचना न दिया जाना एक अपराध माना जाता है । ये धाराएं लोक सेवक द्वारा रिपोर्ट देने में हुई चूक के नोटिस को उस व्यक्ति द्वारा, जो ऐसा करने के लिए कानूनी तौर से बाध्य था, दिए जाने में विफलता और अन्तर्राष्ट्रीय रूप में, किसी उस व्यक्ति द्वारा अपराध सूचना देने में हुई चूक, जिसके लिए सूचना देना बाध्यकर था, से संबंधित है । भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 125 में अपराधों के संबंध में दी गई सूचना की अभिरूचि और ईमानदारी के पहलु भी शामिल हैं । अपराध से संबंधित सरकारी सूचना प्राप्त होना एक प्राधिकार होता है और पुलिस अधिकारी या मजिस्ट्रेट उसके द्वारा अपराध के कृत्य से संबंधित प्राप्त सूचना के स्रोत को बताने के लिए विवश नहीं किया जा सकता । इन उपबंधों को देखने से पता चलता है कि विधि निर्माताओं को एक शताब्दी पहले कैसे अपराधों या भ्रष्टाचार के अपराध किए जाने की मंशा को सार्वजनिक और सरकारी सूचना देने की आवश्यकता के महत्व का अहसास हो गया था । इस संदर्भ में, मलेशिया ने यह अनुबंधित किया हुआ है कि लोक अधिकारी जिसे रिश्वत देने का प्रस्ताव किया जाता है और वह सूचना देने में विफल हो जाता है तो उसे दोषसिद्ध करार देते हुए दस वर्षों तक की सजा दी जानी चाहिए। आयोग यह अनुभव करता है कि सीटी बजाने वाले (अर्थात् किसी घोटाले या भ्रष्टाचार की सूचना देने वाले को) के सुरक्षण पर कानून बनाने से उसे विभागीय उत्पीड़न से आवश्यक संरक्षण प्रदान हो सकेगा (पैरा 4. 7.4)। इससे एक ऐसा वातावरण बनेगा जिससे लोक सेवक आगे आएंगे और अपने संगठनों के भीतर भ्रष्ट वृत्तियों के ब्यौरे देंगे ।

4 संस्थागत ढांचा

4.1 वर्तमान संस्थान/एजेंसियां

संघ सरकार

4.1.1 कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग का प्रशासनिक सतर्कता खंड, सतर्कता और भ्रष्टाचार–निवारण के काम के लिए एक नोडल एजेंसी है । इसके काम, अन्य बातों के साथ साथ अनुशासन बनाए रखने और लोक सेवाओं से भ्रष्टाचार हटाने के सरकार के कार्यक्रमों पर निरीक्षण रखना और आवश्यक निदेश प्रदान करना है । केन्द्र के स्तर पर अन्य संस्थान और एजेंसियां हैं – (i) केन्द्रीय सतर्कता आयोग (सीवीसी) (ii) भारत सरकार के मंत्रालयों/विभागों, केन्द्रीय लोक उद्यमों और अन्य स्वयंसेवी संगठनों में सतर्कता युनिट और (iii) केन्द्रीय जांच ब्यूरो (सीबीआई)

केन्द्रीय सतर्कता आयोग

4.1.2 भ्रष्टाचार निवारण समिति, जो संथानम कमेटी के नाम से लोकप्रिय है, द्वारा की गई सिफारिशों के अनुसरण में, भारत सरकार द्वारा केन्द्रीय सतर्कता आयोग का गठन दिनांक 11.2.1964 के संकल्प द्वारा किया गया था । विनीत नारायण बनाम भारतीय संघ वाद में उच्चतम न्यायालय के निर्णय के फलस्वरूप इसे केन्द्रीय सतर्कता आयोग अधिनियम, 2003 द्वारा सांविधिक दर्जा दिया गया था । केन्द्रीय सतर्कता आयोग (सीवीसी) भारतीय संघ को प्रशासन में सत्यनिष्ठा बनाए रखने से संबंधित सभी मामलों पर परामर्श देता है । यह केन्द्रीय जांच ब्यूरो के काम–काज की और संघ सरकार के विविध मंत्रालयों और अन्य संगठनों के सतर्कता प्रशासन पर निगरानी करता है ।

भारत सरकार में सतर्कता युनिटें

4.1.3 भारत सरकार के सभी मंत्रालयों/विभागों में एक मुख्य सतर्कता अधिकारी (सीवीओ) होता है जो संबंधित संगठन के सतर्कता खंड के अध्यक्ष के रूप में सचिव या कार्यालय अध्यक्ष को सतर्कता से संबंधित सभी मामलों पर सहायता और सलाह देता है । वह एक ओर अपने संगठन और केन्द्रीय सतर्कता आयोग के बीच तथा दूसरी ओर संगठन और केन्द्रीय जांच ब्यूरो के बीच एक संपर्क प्रदान करता है । मुख्य सतर्कता अधिकारी द्वारा निष्पादित सतर्कता के कृत्यों में अपने संगठन के कर्मचारियों की भ्रष्टाचार के व्यवहारों के संबंध में सूचना एकत्र करना, उसे सूचित किए गए आरोपों की सत्यापित जांच करना, संबंधित अनुशासनिक प्राधिकारी को आगे विचार के लिए जांच रिपोर्टों की प्रक्रिया करना और यथावश्यक परामर्श के लिए केन्द्रीय सतर्कता आयोग को मामले भेजना शामिल है ।

केन्द्रीय जांच ब्यूरो

4.1.4 केन्द्रीय जांच ब्यूरो (सीबीआई) संघीय सरकार की भ्रष्टाचार निवारण मामलों की प्रधान जांच एजेंसी है । यह भ्रष्टाचार से संबंधित कुछ विशिष्ट अपराधों अथवा अपराध के वर्गों और अन्य प्रकार के अनाचारों की, जिसमें लोक सेवक लिप्त हों, जांच करने के लिए अपनी शक्तियों को दिल्ली विशेष पुलिस स्थापन अधिनियम, 1946 (डीएसपीई अधिनियम) से प्राप्त करता है । विशेष पुलिस स्थापन की, जो केन्द्रीय जांच ब्यूरों के एक खंड का गठन करता है, तीन यूनिटें हैं : अर्थात् (i) भ्रष्टाचार निवारण खंड, (ii) आर्थिक अपराध स्कंध और (iii) विशेष अपराध खंड । भ्रष्टाचार निवारण खंड भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988 के अन्तर्गत पंजीकृत सभी मामलों, और भारतीय दंड संहिता की अन्य धाराओं अथवा अन्य कानून के अन्तर्गत अपराधों, यदि उन्हें घूसखोरी तथा भ्रष्टाचार के अपराधों के साथ किया गया हो, के मामलों की भी जांच करता है । भ्रष्टाचार निवारण खंड लोक सेवकों द्वारा की गई गंभीर अनियमितताओं से संबंधित आरोपित किए गए मामलों की जांच करता है । यह राज्य सरकारों के लोक सेवकों के विरूद्ध मामलों की भी जांच करता है, यदि मामला सीबीआई को सौंपा जाता है । विशेष अपराध खंड आर्थिक अपराधों और परंपरागत अपराधों के सभी मामलों की जांच करता है जैसे कि आन्तरिक सुरक्षा, जासूसी, तोड़–फोड़, नारकोटिक्स और मनोरोग पदार्थ, पुरातन अवशेष, हत्या, डकैतियां/लूट, धोखाधड़ी, विश्वास का आपराधिक भंग होना, जालसाजी, दहेज के कारण मौतें, संदेहास्प्रद मौतें और अन्य अपराध और भारतीय दंड सहिता के अंतर्गत अन्य अपराध और डीएसपीई अधिनियम की धारा 3 के अंतर्गत अधिसूचित अन्य कानून ।

राज्य सरकारों में सतर्कता प्रणालियां

4.1.5 राज्य सरकारों के स्तर पर, इसी प्रकार की सतर्कता और भ्रष्टाचार निवारण संगठन विद्यमान हैं, यद्यपि राज्य सरकारों के बीच इन संगठनों की प्रकृति और कर्मचारी वर्ग में अन्तर होता है । जहां एक ओर कुछ राज्यों में सतर्कता आयोग और भ्रष्टाचार निवारण ब्यूरो हैं, वहीं दूसरे राज्यों में लोकायुक्त हैं । आंध्र प्रदेश में एक भ्रष्टाचार निवारण ब्यूरो, एक सतर्कता आयोग और एक लोकायुक्त हैं । तमिल नाडु और पश्चिम बंगाल में सतर्कता कृत्यों पर निरीक्षण रखने के लिए सतर्कता आयोग है । तमिल नाडु का सतर्कता आयुक्त सरकार का सेवारत सचिव होता है जो वह सचिव के रूप में कार्य करता है, यद्यपि वह सतर्कता आयुक्त की हैसियत से वार्षिक रिपोर्ट पेश करता है । महाराष्ट्र में लोकायुक्त नाम से कहा जाने वाला ओम्बड्समैन (प्रशासन के विरूद्ध शिकायतों की जांच करने वाला अधिकारी) और सतर्कता आयुक्त का एक संयुक्त बहु–सदस्यीय निकाय होता है, जिसका अध्यक्ष के रूप में उच्चतर न्यायपालिका का अवकाश प्राप्त सिविल सेवक उपाध्यक्ष के रूप में होता है । असम, बिहार, गुजरात, जम्मू और कश्मीर, मेघालय और सिक्किम में सतर्कता आयुक्त हैं । संघ शासित क्षेत्रों में मुख्य सचिव स्वयं सतर्कता आयुक्त ही होता है । कुछ राज्यों ने संघ सरकार का प्रतिरूप अपनाया हुआ है और आन्तरिक सतर्कता संगठनों का दो तरफा रिपोर्ट के उत्तरदायित्व के साथ गठन किया गया है जिसमें सतर्कता आयुक्त और विभागाध्यक्षों के कार्यालयों में संबद्ध युनिटों के साथ विभागीय अध्यक्ष को रिपोर्ट देना तथा जिले की रिपोर्ट उच्चतर संघटकों और सतर्कता आयुक्त को दी जानी होती है ।

4.2 भारत में भ्रष्टाचार निवारण व्यवस्था का मूल्यांकन

4.2.1 अनेक ऐसे भ्रष्टाचार निवारण निकायों के संचालन में बहुत कुछ करना अपेक्षित है । भ्रष्टाचार निरोध कानूनों और उनके प्रवर्तन में लिप्त एजेंसियों के संचालन का विश्लेषण करने के लिए आयोग ने राष्ट्रीय अपराध अभिलेख ब्यूरो द्वारा प्रकाशित वार्षिक आंकड़ों पर आधारित पिछले तीन दशकों में जांच किए गए, सुनवाई किए गए और दोषी पाए गए मामलों के ब्यौरों का अध्ययन किया है । इस विश्लेषण का संक्षिप्त रूप आकृत्ति 4.1 से आकृत्ति 4.4 में नीचे दिया गया है ।

आकृति 4.1 : भ्रष्टाचार निरोध अधिनियम के अंतर्गत सीबीआई द्वारा अभियोजित मामलों का विश्लेषण

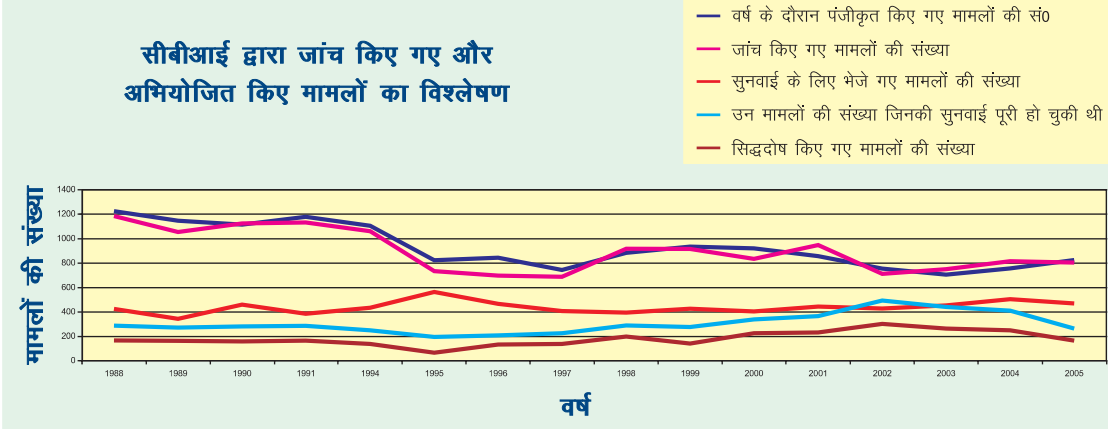

आकृति 4.2 : राज्य भ्रष्टाचार निरोध खंडों द्वारा जांच किए गए और अभियोजित किए गए मामलों का विश्लेषण

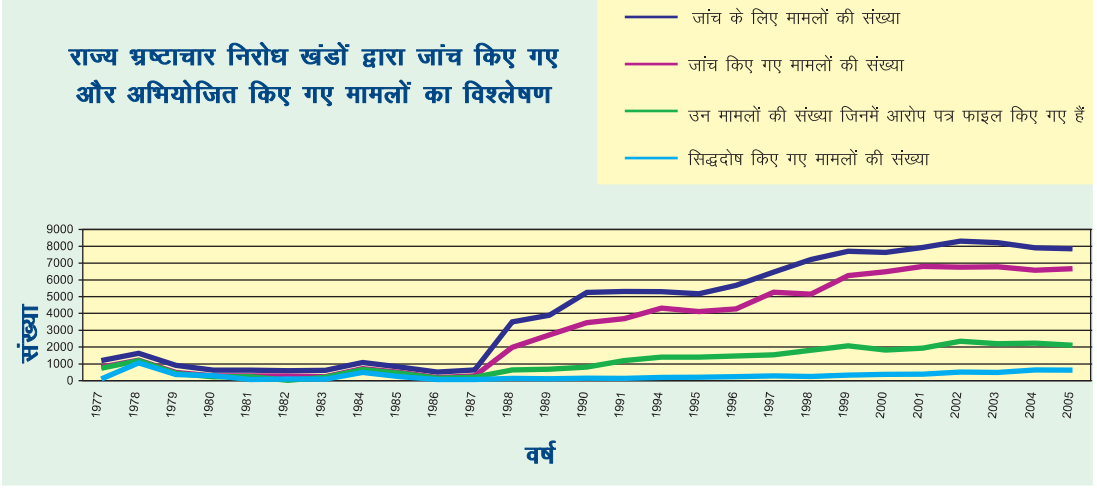

आकृति 4.3 : सीबीआई और राज्य भ्रष्टाचार निरोध संगठनों के सिद्धदोष दरों की तुलना

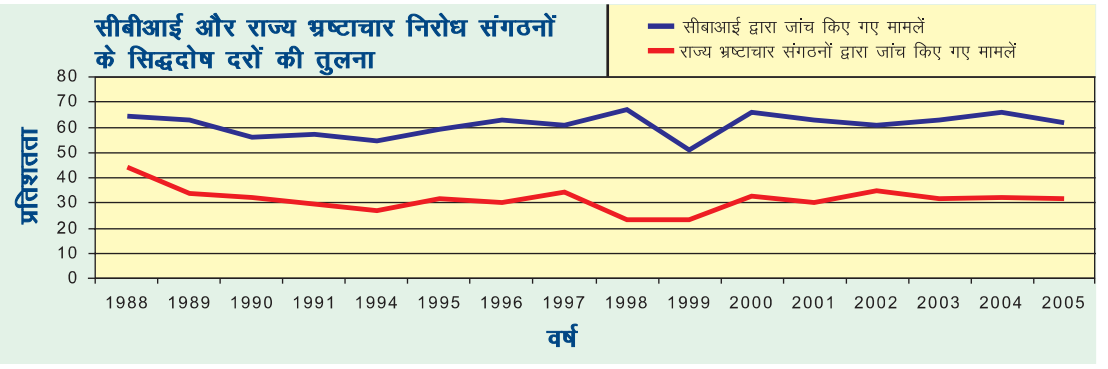

आकृति 4.4 : न्यायालयों में लंबित मामलें

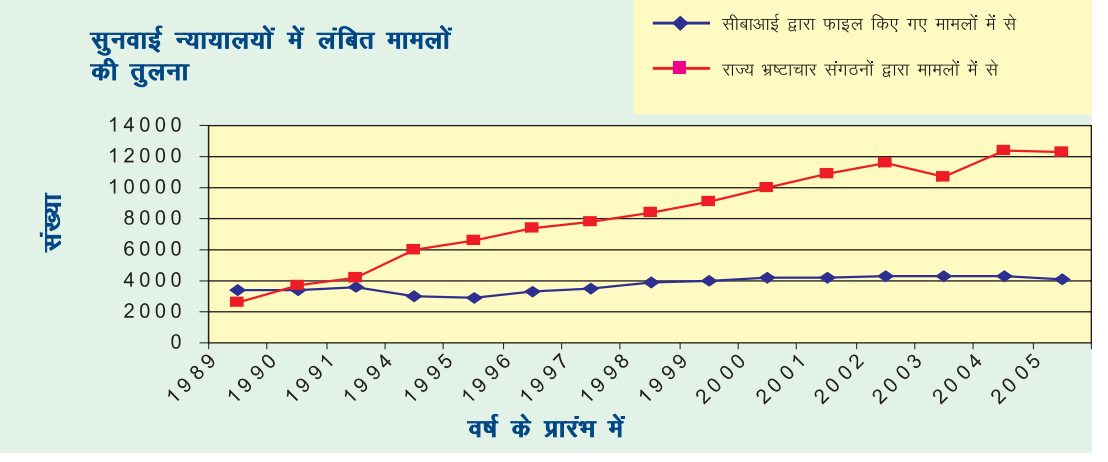

4.2.2 उपलब्ध आंकड़ों के विश्लेषण से निम्नलिखित मुख्य निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं :

क. सीबीआई द्वारा मामलों में पंजीकृत मामलों की तुलना में दोषसिद्धि की दर कम है, जो राज्य भ्रष्टाचार निरोध संगठनों से दोगुनी है । सीबीआई में वर्ष 2005 के शुरू में सुनवाई के लिए लंबित मामलों की संख्या 4130 थी और इस वर्ष के दौरान 471 और मामले जुड़ गए थे । परंतु वर्ष के दौरान केवल 265 मामलों का निपटारा किया गया । इसी प्रकार से, राज्यों में 2005 के शुरू में 12285 मामले लंबित पड़े थे और 2111 मामले वर्ष के दौरान जुड़ गए थे । परंतु केवल 2005 मामलों का ही वर्ष के दौरान निपटारा हुआ था । यदि ऐसा मान लिया जाए कि अब से आगे कोई मामले फाइल नहीं किए जाएंगे तो राज्यों में पिछले बकाया को निपटाने में लगभग छः वर्ष लगेंगे ।

ख. 1988 के बाद राज्य भ्रष्टाचार निरोध संगठनों द्वारा पंजीकृत किए और जांच किए गए मामलों की संख्या में तेजी से वृद्धि हुई है ।

ग. राज्य भ्रष्टाचार निरोध संगठनों के समक्ष जांच के लिए लंबित मामलों की संख्या बढ़ती जा रही है ।

घ. हर वर्ष सुनवाई के मामलों के निपटान की संख्या फाइल किए जा रहे मामलों की संख्या से कम है जो यह दर्शाता है कि सुनवाई की जाने वाली अदालतों में बकाया मामलों की संख्या में वृद्धि हो रही है ।

4.2.3 रिश्वत के अपराध के लिए दोषसिद्धि दर की अन्तर्राष्ट्रीय तुलना जो आकृति 4.5 में दिखाई गई है, से पता चलता है कि अधिकतर देशों में दोषसिद्धि की दर भारत[50] से बहुत ऊंची हैं ।

तालिका 4.1 : घूसखोरी के लिए सिद्धदोष करार दिए गए व्यक्तियों की अंतर्राष्ट्रीय तुलना

	वर्ष			दर प्रति 100,000 निवासी		
देश	**1998**	**1999**	**2000**	**1998**	**1999**	**2000**
अलबानिया			1			0.03
अरमीनिया	13	12	28	0.34	0.32	0.74
अजरबैजन	45	45	45	0.57	0.56	0.56
बेलारस	246	224	220	2.44	2.24	2.20
बुलगारिया	32	26	38	0.39	0.32	0.47
चिली	5	8	7	0.03	0.05	0.05
चीन	8770	8568	9729	0.71	0.69	0.77
कोस्ता रिसा	10	4	4	0.27	0.11	0.10
कोतारिया	31	55	44	0.71	1.26	1.00
साइप्रस	1	1	–	0.13	0.13	–
चैकोस्वलवाकिया						
गणतंत्र	111	110	118	1.08	1.07	1.15
ईजिप्त		528	1225	–	0.84	1.92
ऐसतोनिया	28	20	43	1.99	1.44	3.14
फिनलैंड	5	3	3	0.10	0.06	0.06
फ्रांस	193	314	279	0.33	0.54	0.47
जारजिया	11	2	18	0.20	0.04	0.36
जर्मन	427	395	–	0.52	0.48	–
गवाटेमाला	380	369	600	3.52	3.32	5.26
हांग कांग, चीन(एसएआर)	130	74	107	1.96	1.10	1.57
हंगरी	278	297	294	2.75	2.94	2.94
भारत	654	684	–	0.07	0.07	–
इंडोनेशिया	136	391	232	0.07	0.19	0.11
इटली	963	723	723	1.67	1.26	1.24
जापान	187	153	119	0.15	0.12	0.09
कोरिया गणराज्य	803	1466	960	1.73	3.13	2.03
लातविया	17	32	10	0.69	1.33	0.42
लिथुनिया	44	43	51	1.19	1.16	1.38
मैकदोनिया एफ.वाई.आर.	11	23	19	0.55	1.14	0.94
मलेशिया	230	641	800	1.04	2.82	3.43
मैक्सिको	49	239	247	0.05	0.25	0.25

जनसंख्या स्रोत : विश्व बैंक

[50] 2001–2002 की अवधि को शामिल करते हुए आपराधिक न्याय व्यवस्थाओं की अपराध प्रवृत्तियां और प्रचालनों का आंठवां संयुक्त राष्ट्र सर्वेक्षण; http://www.unodc.org/pdf/crime/eighthsurvey/8pv.pdf

4.3 लोकपाल

4.3.1 पहले प्रशासनिक सुधार आयोग ने लोक पाल व्यवस्था के गठन के लिए सिफारिश की थी । लोक पाल बिल अनेक बार पेश हो चुका है परंतु विविध कारणों से यह कानून नहीं बन पाया है । लोक पाल मंत्रियों और संसद सदस्यों की सत्यनिष्ठा पर निगरानी रखेगा । भारतीय लोक पाल को स्कैंडेनेवियाई देशों में विद्यमान ओमबडस्मान संस्थान से मिलता–जुलता बनाए जाने की मंशा थी । ओमबडस्मान संस्था 'सरकारी तंत्र के अत्याचार के विरूद्ध एक बुलवर्क लोकतांत्रिक सरकार के रूप में' उभर कर आई है । लोक पाल बिल में लोक पदाधिकारियों के खिलाफ भ्रष्टाचार के मामलों की जांच करने के लिए एक स्वतंत्र निकाय के रूप में लोक पाल के गठन का उपबंध किया गया है, जिसमें शिकायतों को फाइल करने और जांच आयोजित करने आदि की व्यवस्था की गई है ।

4.3.2 आयोग का मत है कि लोक पाल बिल न्यूनतम संभव विलंब के साथ कानून बनाया जाना चाहिए । जैसा कि बिल में सिफारिश की गई है, लोक पाल मंत्रियों और संसद सदस्यों के खिलाफ भ्रष्टाचार के आरोपों का निपटारा करेगा ।

4.3.3 सरकारी अधिकारियों के विरूद्ध भ्रष्टाचार के आरोप विभागीय तौर से और केन्द्रीय सतर्कता आयोग के अधीन केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा भी निपटाए जाते हैं । भ्रष्टाचार के कुछ मामलों में, मंत्रियों और अधिकारियों के बीच में सांठगांठ हो सकती है । अतः लोक पाल और केन्द्रीय सतर्कता आयुक्त के बीच सुव्यवस्थित संपर्क होना चाहिए । इसका कारण यह है कि उच्च स्थानों में भ्रष्टाचार से लड़ने के लिए एक अति प्रधानता रखने वाले दृष्टिकोण की आवश्यकता है । राजनीतिक स्तर पर भ्रष्टाचार कभी कभी अधिकारियों के साथ मिली–भगत से होता है । अधिकारियों के भ्रष्टाचार में लिप्त होने के कुछ मामले राजनीतिक संरक्षण और लिप्तता की ओर संकेत कर सकते हैं । अतः सीवीसी और लोक पाल के बीच संपर्क होने से आलिप्त सभी लोगों के खिलाफ सूचना लेने और शीघ्र कार्यवाई करने में सहायता मिलेगी । यह भी उपबंध किया जा सकता है कि मंत्रियों और संसद सदस्यों को लिप्त करने वाले भ्रष्टाचार के उन सभी मामलों में, जिनमें अधिकारियों की सांठ–गांठ या मिलीभगत के तत्व हो सकते हो, उनकी जांच केवल लोकपाल द्वारा की जानी चाहिए । यद्यपि केन्द्रीय सतर्कता आयोग अपने कार्य का संचालन पूर्ण स्वायत्तता के साथ करेगा, फिर भी, यह लोक पाल के मार्गदर्शन और पर्यवेक्षण के अधीन कार्य करेगा ।

4.3.4 आयोग का यह मत है कि लोक पाल एक तीन–सदस्यों का निकाय होना चाहिए । इससे एक से अधिक व्यक्तियों की विशेषज्ञता और निगरानी हो पाएगी, जिसका पारदर्शिता और विषयनिष्ठता के लिए होना आवश्यक होगा । इसके साथ ही, बहु–सदस्यता का लक्षण होने से किसी बाहरी दबाव से बचाव हो पाएगा। आयोग का यह भी मत है कि तीन सदस्यों में से, अध्यक्ष का पद न्यायपालिका से (सेवारत या अवकाश प्राप्त उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश), दूसरा सदस्य एक ख्याति प्राप्त विधिवेत्ता और तीसरा सदस्य केन्द्रीय सतर्कता आयुक्त (पदेन) होना चाहिए ।

4.3.5 एक मुद्दा, जिस पर लंबे समय से बहस चल रही है, वह यह है कि प्रधान मंत्री के कार्यालय को भी लोक पाल के क्षेत्राधिकार में लाया जाना चाहिए । जो लोग यह विश्वास करते हैं कि प्रधान मंत्री का आचार लोक पाल के संवीक्षाधीन होना चाहिए, वे लोग इस बात को लेकर सही दलील दे रहे हैं कि सभी लोक सेवकों को जवाबदेह होना चाहिए । लोकतंत्र में, नागरिक सर्वसत्तासम्पन्न होता है और प्रत्येक लोक सेवक नागरिकों की सेवा करने के लिए पदासीन होता है, कर के धन का व्यय करता है और नागरिकों की ओर से अथवा संविधान के अधीन बनाए गए कानूनों के अंतर्गत प्राधिकार का प्रयोग करता है, जो हमने, लोगों ने स्वयं को दे रखे हैं । अतः किसी भी पदाधिकारी को, चाहे वह कितने बड़े पद पर क्यों न हो, लोक पाल द्वारा संवीक्षा से मुक्त नहीं किया जाना चाहिए ।

4.3.6 संवैधानिक सिद्धांत में, वैस्टमिंस्टर मॉडल के अनुसार, प्रधान मंत्री मंत्रिपरिषद में सभी समान लोगों में से एक होता है जो सामूहिक उत्तरदायित्व का प्रयोग करता है । अतः जो नियम अन्य मंत्रियों पर लागू होते हैं, वे नियम प्रधान मंत्री पर भी लागू होंगे ।

4.3.7 तथापि, ऐसे गंभीर मुद्दे भी हैं जिनकी सावधानी से जांच करने की आवश्यकता है । जहां प्रधान मंत्री का कार्यालय अवधारणा की दृष्टि से एक समान लोगों में से मात्र पहला था, वहीं दूसरी ओर प्रधान मंत्री सरकार की कार्यपालिका की शाखा का नेता भी बना । एक बार निर्णय हो जाने पर मंत्रिमंडल सामूहिक उत्तरदायित्व को स्वीकार करता है । यही कारण है कि सभी नीतिगत वाद–विवाद जनता से परे रिवाज स्वरूप मंत्रिपरिषद के भीतर से होते हैं और मंत्री अपने संशयों या मतभेदों को जनता में अभिव्यक्त करने के लिए स्वतंत्र नहीं होता । यह प्रधान मंत्री का ही कृत्य है कि वह मंत्रियों के बीच नीतियों के निर्धारण, निर्णय लेना और उन नीतियों और निर्णयों को कार्यान्वित करने के लिए नेतृत्व और समन्वय करे । प्रधान मंत्री का चुनौती न किए जा सकने वाला प्राधिकार और नेतृत्व सरकार में प्रयोजन की भावना को सुनिश्चित करने के लिए और हमारी संवैधानिक योजना को उसकी मर्यादा में संचालित करने के लिए छिद्रान्वेशी है । प्रधान मंत्री संसद के प्रति जवाबदेह होता है और उसके अस्तित्व में रहने या न रहने पर ही सरकार का रहना या न रहना निर्भर करता है । यदि प्रधान मंत्री का आचरण अतिरिक्त–संसदीय प्राधिकारियों के लिए खुला रहता है तो सरकार की व्यवहार्यता का पतन हो जाता है और संसद की सर्वोच्चता खतरे में पड़ जाती है ।

4.3.8 हमारी संवैधानिक योजना में, प्रधान मंत्री की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा उसका संसद में स्पष्ट बहुमत समर्थन देखे जाने के निर्णय के आधार पर की जाती है । सभी मंत्री फिर प्रधान मंत्री की सलाह पर नियुक्त किए जाते हैं । राष्ट्रपति प्रधान मंत्री को सामान्यतया तब तक बर्खास्त नहीं कर सकता जब तक कि उसका लोक सभा में बहुमत है । परंतु अन्य मंत्रियों को प्रधान मंत्री की सलाह पर किसी समय भी हटाया जा सकता है । ऐसे मंत्रियों को हटाने के लिए कोई कारण देने की आवश्यकता नहीं होती। सत्यनिष्ठा और सक्षमता ही मंत्रियों को पद पर बने रहने के लिए पर्याप्त शर्तें नहीं हैं । उन्हें मंत्री के रूप में पद पर बने रहने के लिए उन्हें प्रधान मंत्री को विश्वास में रखना चाहिए । इस योजना को प्रधान मंत्री के प्राधिकार को सुरक्षित रखने के लिए और सरकार के संचालन में संबद्धता और समन्वय को सुनिश्चित करने के लिए संविधान में जान बूझ कर रखा गया है । संसद को छोड़कर किसी

प्राधिकारी द्वारा प्रधान मंत्री के पदेन आचरण की किसी जांच से प्रधान मंत्री द्वारा सरकार को चलाने की क्षमता को क्षति पहुंच सकती है । प्रधान मंत्री के प्राधिकार के इस प्रकार कमजोर पड़ने से शासन गंभीरता के साथ विफल हो सकता है और इससे सामंजस्य और समन्वय में कमी आएगी और लोक हित इससे बुरी तरह से क्षतिग्रस्त होंगे ।

4.3.9 जो लोग यह तर्क देते हैं कि प्रधान मंत्री किसी अन्य संसद सदस्य या किसी अन्य मंत्री की तरह ही होता है, वे तकनीकी रूप से सही हैं । वास्तव में, संसदीय कार्यपालिका मॉडल, जो मंत्रिमंडल को विधान–मंडल से लेते हैं, को अपनाने वाले सभी देशों में, प्रधान मंत्री देश और सरकार का नेता होता है । प्रधान मंत्री का प्राधिकार, जब तक उसे संसद का समर्थन प्राप्त है, देश गरिमा और प्रतिष्ठा का पर्यायवाची बन गया है । प्रधान मंत्री की किसी लोक पाल द्वारा औपचारिक जांच का सामना करने से सरकार डगमगा सकती है । कोई यह तर्क दे सकता है कि ऐसी जांच के दौरान पदधारी को अपने विरूद्ध निराधार आरोपों से स्वयं को बचाने का अवसर मिल सकता है और अपना नाम आरोपों से मुक्त करवा सकता है । परंतु वास्तविकता यह है कि एक बार आरोपों पर, चाहे वे कितनी भी निराधार हों, लोक पाल द्वारा औपचारिक जांच शुरू करने पर प्रधान मंत्री के प्राधिकार को बुरी तरह से धक्का पहुंच सकता है और सरकार गिर सकती है । प्रधान मंत्री को बाद में निरापराध घोषित करने से देश को हुई हानि या प्रधान मंत्री के पद को पहुंची क्षति की पूर्ति नहीं की जा सकती है । यदि प्रधान मंत्री वास्तव में ही किसी गंभीर अविवेकपूर्ण अपराध का दोषी है तो इस मामले में संसद ही न्यायाधीश होगी और लोक सभा प्रधान मंत्री को अपने पद से हटा देगी। अतः इस योजना में किसी लंबी जांच या महाभियोग लगाए जाने का विचार नहीं किया जाता और सरकार बदलने के लिए बिना कोई कारण बताए मात्र अविश्वास प्रस्ताव पारित करना पर्याप्त होता है । सरकार के प्रत्यक्ष रूप में निर्वाचित कार्यपालिका मॉडल में, संसद राष्ट्रपति को नहीं हटा सकती जो मुख्य कार्यपालक होता है और इसलिए महाभियोग की जटिल प्रक्रिया और ऐसे महाभियोग से पूर्व विशेष अभियोजकों द्वारा जांच कराया जाना अनिवार्य हो गया है ।

4.3.10 यह तर्क दिया जा सकता है कि क्योंकि किसी मंत्री को प्रधान मंत्री की सलाह पर या संसद के कहने पर हटाया जा सकता है, अतः लोकपाल का क्षेत्राधिकार मंत्री के आचरण पर भी नहीं होना चाहिए । परंतु संसद किसी मंत्री के आचरण पर वास्तव में निर्णय नहीं ले सकती । यह तो प्रधान मंत्री और कुल मिला कर मंत्रिपरिषद् ही है जिसके भाग्य का निर्धारण संसद की इच्छा पर होता है । और प्रधान मंत्री के पास इतना समय और ताकत नहीं होती कि वह किसी मंत्री के आचरण की व्यक्तिगत रूप से जांच करे । सरकार की जांच एजेंसियों पर नियंत्रण और उन पर दबाव मंत्रियों का होता है और इसलिए प्रधान मंत्री के लिए मंत्रियों के पद के आचरण का प्रयोजनमूलक मूल्यांकन ले पाना कठिन होता है । अतः मंत्रियों में नैतिक आचार के उच्च मानदंडों को लागू करने में उच्च प्रतिष्ठा प्राप्त स्वतंत्र और निष्पक्ष निकाय बड़ी मूल्यवान सिद्ध होगी । इसी प्रकार के कारण संसद सदस्यों पर भी लागू होते हैं क्योंकि संसद का समय और ताकत किसी सदस्य के आचरण की विस्तृत जांच करने में नहीं लगाए जा सकते । परंतु, सदस्यों को हटाए जाने का अन्तिम निर्णय संसद में ही निहित है और मंत्री को हटाए जाने का काम प्रधान मंत्री की सलाह से ही होना चाहिए । संसद अपने निर्णयों के लिए राष्ट्र के प्रति उत्तरदायी है और प्रधान मंत्री अपने निर्णयों के लिए संसद के प्रति

उत्तरदायी है । संसद और प्रधान मंत्री के ये उत्तरदायित्व किसी गैर–निर्वाचित निकाय को अंतरित नहीं किए जा सकते ।

4.3.11 अन्त में, जहां प्रधान मंत्री संवैधानिक सिद्धांत की दृष्टि से एक और संसद सदस्य होता है, वहीं राजनीतिक विकास ने उसे देश के नेता के रूप में बदल दिया है । सिद्धांत रूप में, विधान मंडल का प्रत्येक सदस्य हमारी सरकार के मॉडल में अपने निर्वाचन क्षेत्र द्वारा निर्वाचित किया जाता है । परंतु पिछली शताब्दी से, संसदीय प्रणाली में भी चुनाव जनमत संग्रह की प्रकृति के हो गए हैं । अक्सर, प्रधान मंत्री का व्यक्तित्व, दृष्टि और नेतृत्व ही ऐसे मुद्दे हैं जो निर्वाचन के निष्कर्ष का निर्धारण करते हैं । इसी प्रकार से, विपक्ष भी अपनी ताकत और आशाओं को अपने नेता पर केन्द्रित करता है । निर्वाचन मुकाबला नेताओं की स्वीकृति के परीक्षण में रूपांतरित हो गई है । इस प्रकार से निर्वाचन मुकाबले बड़ी तेजी के साथ इस बड़े प्रश्न पर निर्भर होने लगे हैं कि लोग उस विशेष समय बिंदु पर सरकार के किस नेतृत्व में विश्वास करते हैं या किस नेतृत्व को वे लाना चाहते हैं । इस बड़ी भारी राजनीतिक वास्तविकता के चलते, प्रधान मंत्री के पद को किसी गैर–निर्वाचित पदाधिकारी द्वारा लंबे समय तक लोक जांच में लिप्त कर देना नासमझी होगी । अंत में, संसद ही वह सर्वोत्तम मंच है, जहां पर हम प्रधान मंत्री के पद में सत्यनिष्ठा को लागू करने में विश्वास कर सकते हैं ।

4.3.12 ठीक ऐसे ही सिद्धांत और तर्क राज्य के मुख्य मंत्री के संबंध में उचित बैठते हैं । अतः मुख्य मंत्री को लोकायुक्त के क्षेत्राधिकार में शामिल करना नासमझी होगी । अनेक राज्यों ने मुख्य मंत्री को लोकायुक्त की परिधि से बाहर रख दिया है यद्यपि कुछ राज्यों में मुख्य मंत्री को अभी भी शामिल रखा गया है । परंतु, यदि मुख्य मंत्री उच्च प्रतिष्ठा के फेडरल संस्थान के क्षेत्राधिकार के अधीन लाए जाते हैं तो जोखिमों को कम किया जा सकता है । आयोग का मत है कि एक बार लोक पाल या उसके सदृश संस्थान अस्तित्व में आ जाते हैं तो सभी मुख्य मंत्रियों को लोक पाल के अधिकार क्षेत्र में लाया जाना चाहिए । इस प्रावधान से लोक पाल को एक संवैधानिक प्राधिकारी बनाना और संविधान में उस क्षेत्राधिकार की परिभाषा देना आवश्यक हो जाएगा जब कि नियुक्ति के ब्यौरे और संरचना संसद द्वारा कानून के माध्यम से नियत करने पर छोड़ दिया जाएगा ।

4.3.13 लोक पाल को अपनी प्रभावशीलता को बढ़ाने में सहायता देने और इस संस्थान में जनता के विश्वास को और बढ़ाने के लिए, लोकपाल के लिए यह आवश्यक है कि वह जनता के साथ आम तौर पर और निजी क्षेत्र और सिविल सोसाएटी के साथ विशेष रूप से प्रभावशाली बातचीत के लिए व्यवस्था का गठन करे । ऐसी संबद्धता से वातावरण को और अच्छे ढंग से समझने में सहायता मिलेगी, इसके संचालन में जांच और संतुलन बनाने और जांच एजेंसियों द्वारा प्राधिकार के दुरूपयोग को लोक पाल के ध्यान में लाने से इसे रोकने में सहायता मिलेगी । हांग कांग में आईसीएसी के अनुभव, जिसका विस्तार से वर्णन पैरा 5.1.2 में किया जा चुका है, से यह पता चला है कि किसी भी भ्रष्टाचार निरोध रणनीति के लिए शिक्षा और जागरूकता के कार्य बहुत आवश्यक हैं यदि इसे प्रभावकारी बनाया जाए । बोट्सवाना के डीसीईसी, सिंगापुर के सीपीआईबी और न्यू साउथ वेल्स, आस्ट्रेलिया के आईसीएसी का भी इसी प्रकार का अधिदेश हैं । वास्तव में, न्यू साउथ वेल्स की आईसीएसी को भ्रष्टाचार को प्रकाश में लाने के

लिए लोक सुनवाई के लिए नोट किया जाता है । सामान्य रूप से जनता की सहायता द्वारा और विशेष रूप से निजी क्षेत्र और सिविल समाज की सहायता द्वारा भ्रष्टाचार निरोध प्रयासों के साथ इन देशों के सफलतापूर्वक अनुभव के प्रकाश में, आयोग यह सिफारिश करना चाहेगा कि ऐसी गतिविधियों को लोक पाल द्वारा ले लिया जाना चाहिए ।

4.3.14 उच्च स्थानों पर नैतिक आचार में लोक पाल की भूमिका पर अत्यधिक जोर नहीं दिया जा सकता । आयोग यह सिफारिश करना चाहेगा कि लोक पाल को एक संवैधानिक दर्जा दिया जाए । इससे ऐसे महत्वपूर्ण संस्थान के लिए समुचित प्रतिष्ठा, दर्जा और संवैधानिक सुरक्षण मिलेगा, जिससे उच्च सार्वजनिक प्राधिकारियों द्वारा गलत काम करने वालों के विरूद्ध एक निगरानी रखे जाने की आशा है ।

एक अन्य छोटा मुद्दा नाम का ही है । संघ से राज्यों को ऊपर से लेकर सबसे निचले तबके तक भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ाई में सांतत्यक का तत्व प्रदान करने के लिए, यह राज्य लोकायुक्तों के साथ संपर्क बनाए जाने के लिए और प्रस्तावित लोक पाल को 'राष्ट्रीय लोकायुक्त' का नाम दिए जाने के लिए यह लाभकारी हो सकता है। अतः आयोग लोक पाल बिल में परिवर्तन लाने के लिए निम्नलिखित सिफारिश करना चाहेगा।

4.3.15 सिफारिशें :

क. राष्ट्रीय लोकायुक्त के नाम से जाना जाने वाला एक राष्ट्रीय विधि प्रतिनिधि का प्रावधान करने के लिए संविधान में संशोधन किया जाना चाहिए । राष्ट्रीय लोकायुक्त की भूमिका और उसका कार्य क्षेत्र संविधान में परिभाषित किया जाना चाहिए जब कि रचना, नियुक्ति के प्रकार और अन्य ब्यौरों का निर्णय संसद द्वारा कानून के माध्यम से लिया जा सकता है ।

ख. राष्ट्रीय लोकायुक्त का कार्य क्षेत्र केन्द्र के सभी मंत्रियों (प्रधान मंत्री को छोड़कर), सभी राज्यों के मुख्य मंत्रियों, वे सभी लोग, जो केन्द्रीय मंत्री के पद के समकक्ष सार्वजनिक पद पर आसीन हों, और संसद सदस्य तक बढ़ा देना चाहिए । यदि किसी लोक पदाधिकारी के विरूद्ध जांच से यह पता चलता है कि उस लोक पदाधिकारी के साथ–साथ कोई अन्य लोक अधिकारी भी संलिप्त हो तो राष्ट्रीय लोकायुक्त को ऐसे लोक सेवक(सेवकों) के विरूद्ध भी जांच करने का अधिकार होगा ।

ग. पैरा 4.3.7 से 4.3.11 में उल्लिखित कारणों से प्रधान मंत्री को राष्ट्रीय लोकायुक्त के कार्य क्षेत्र से बाहर रखा जाना चाहिए ।

घ. राष्ट्रीय लोकायुक्त में अध्यक्ष के रूप में सर्वोच्च न्यायालय का एक सेवारत या अवकाश–प्राप्त न्यायाधीश, सदस्य के रूप में एक विशिष्ट विधिक और पदेन सदस्य के रूप में केन्द्रीय सतर्कता आयुक्त ।

ड. **राष्ट्रीय लोकायुक्त के अध्यक्ष का चयन, भारत के उप राष्ट्रपति, प्रधान मंत्री, विपक्ष के नेता, लोक सभा के अध्यक्ष और भारत के मुख्य न्यायाधीश की एक समिति द्वारा सर्वोच्च न्यायालय के उन आसीन न्यायाधीशों के पैनल में से किया जाएगा, जिनकी तीन वर्ष से अधिक की सेवा हो गई हो । यदि किसी आसीन न्यायाधीश की नियुक्ति करना संभव न हो सके तो समिति सर्वोच्च न्यायालय के किसी अवकाश प्राप्त न्यायाधीश की नियुक्ति कर सकती है । यही समिति राष्ट्रीय लोकायुक्त के सदस्य (अर्थात् किसी विशिष्ट विधिक) का चयन कर सकती है । राष्ट्रीय लोकायुक्त के अध्यक्ष और सदस्य को तीन वर्ष की केवल एक ही अवधि के लिए नियुक्त किया जाना चाहिए और उसके बाद वे सरकार के किसी सार्वजनिक पद पर आसीन न हों । केवल एक ही अपवाद के रूप में, यदि उनकी सेवाओं की आवश्यकता हो, तो वे भारत के मुख्य न्यायाधीश बनाए जा सकते हैं ।**

च. **राष्ट्रीय लोकायुक्त को सार्वजनिक जीवन में नैतिकता के मानदण्डों में वृद्धि करने के लिए एक राष्ट्रीय अभियान चलाने के काम को भी सौंपा जाना चाहिए ।**

4.4 लोकायुक्त

4.4.1 पहले प्रशासनिक सुधार आयोग की सिफारिशों को देखते हुए, अनेक राज्य सरकारों ने लोक सेवकों के आचार से उत्पन्न आरोपों या शिकायतों की जांच करने के लिए, जिसमें राजनीतिक अधिकारी, विधायक, राज्य सरकार के अधिकारी, स्थानीय निकाय, सरकार के लोक उद्यम और अन्य सहायक संस्थाएं, जिनमें सहकारिता सोसाएटियां और विश्वविद्यालय शामिल हैं लोकायुक्त के गठन के लिए कानून अधिनियमित किया । ऐसे कानून की हैसियत से जनता कोई सदस्य किसी लोक सेवक के विरूद्ध जांच के लिए विशिष्ट आरोपों को लोकायुक्त के पास फाइल कर सकता है । लोकायुक्त के लिए भी यह खुला होगा कि वह स्वप्रेरणा से लोक सेवकों के आचार की जांच शुरू कर सकता है । लोकायुक्त सामान्यतः उच्च न्यायालय या उच्चतम न्यायालय का अवकाश प्राप्त न्यायाधीश होता है और सामान्य रूप से 5 वर्ष की अवधि के लिए मुख्य मंत्री, मुख्य न्यायाधीश, सदन का अध्यक्ष और विपक्ष के नेता के संयुक्त निर्णय के आधार पर नियुक्त किया जाता है । तथापि, कई राज्यों में लोकायुक्त के पास अपना कोई स्वतंत्र जांच प्राधिकार नहीं होता और इसलिए उसे जांच करने के लिए सरकारी एजेंसियों पर निर्भर रहना पड़ता है। महाराष्ट्र और उड़ीसा के लोकायुक्तों के पास भ्रष्टाचार के मामलों के लिए ओमबड्समैन के बजाय शिकायत निवारण संगठन के लक्षण अधिक हैं।

4.4.2 इस समय 17 से अधिक राज्यों में लोकायुक्त हैं परंतु उनके कृत्यों के संबंध में मूलभूत अन्तर के साथ अधिनियमनों के उपबंधों में कोई एकरूपता नहीं है । जहां एक ओर सभी राज्यों में लोकायुक्त भ्रष्टाचार के मुद्दों को देखते हैं, वहीं दूसरी ओर कुछ में, वे अन्य शिकायतों को भी देखते हैं । कुछेक राज्यों में, पदाधिकारियों की व्यापक संख्या को लोकायुक्त के क्षेत्राधिकार में ला दिया गया है, जिनमें मुख्य मंत्री, उप कुलपति और सहकारिताओं के पदाधिकारी शामिल हैं । दूसरे राज्यों में, बिल्कुल प्रतिबंधित रूप में

शामिल किया गया है । कुछ राज्यों में, उनमें जांच करने की व्यवस्था के साथ जांच करने की शक्तियां निहित की हुई हैं । कुछ राज्य जांच के दौरान तलाशी और अभिग्रहण की शक्तियां प्रदान करते हैं । कुछ राज्यों में लोकायुक्तों पर व्यय संस्थान के लिए अपेक्षित वित्तीय स्वतंत्रता प्रदान करते हुए राज्य समेकित निधि पर प्रभारित किया जाता है । कुछ लोकायुक्तों के पास न्यायालय की मानहानि के लिए दंड की शक्तियां हैं ।

4.4.3 जो कुछ भी हो, लोकायुक्तों के संचालन से संबंधित अनुभव दुर्भाग्यशाली रहे हैं जैसाकि निम्नलिखित उदाहरणों में दिखाया गया है । यद्यपि, महाराष्ट्र 1972 में इस संस्थान का गठन करने वाला पहला राज्य था, इसकी सार्वजनिक साख समाप्त हो गई जब पदधारी को अपना पद छोड़ने के लिए कहा गया और उसने अनेक महीनों तक अपने पद पर बने रहना जारी रखा । उड़ीसा ने यह संस्थान बना कर फिर उसे खत्म कर दिया । हरियाणा में, लोक पाल का संस्थान रातों रात एक अध्यादेश को लाकर समाप्त कर दिया गया क्योंकि एक सेवारत उच्च न्यायालय का न्यायाधीश जो लोक पाल के पद पर था, को तुरंत बर्खास्तगी के लिए सुरक्षा थी । पंजाब सरकार ने भी एक अध्यादेश द्वारा अधिनियम को निरस्त कर दिया था क्योंकि एक मामले में अनबन हो गई थी जिसमें लोक पाल के पास राज्य में पिछले मंत्रालय में भूतपूर्व मंत्रियों के खिलाफ 8 शिकायतें प्राप्त हुईं थीं । राजस्थान लोकायुक्त 1996 में अपनी वार्षिक रिपोर्ट में सरकार को सिफारिश करने में बड़ा स्पष्ट था कि इस संस्थान को जारी रखने का कोई लाभ नहीं है क्योंकि यह संस्थान प्रभावशाली साबित नहीं हो सका है । यद्यपि मध्य प्रदेश लोकायुक्त ने दो मंत्रियों को भूमि सौदे के बारे में आरोपित कर लिया था और कुछ अन्य मंत्री भी गलत काम करने के लिए जिम्मेदार पाए गए थे, फिर भी इनमें से किसी के विरूद्ध भी किसी प्रकार की कोई कार्यवाई नहीं की गई । यहां भी, लोकायुक्त ने अपनी 1997–98 की वार्षिक रिपोर्ट में सरकार को सलाह दी थी कि जब तक इसे पर्याप्त शक्तियां नहीं दी जाएंगी तब तक इस संस्थान को जारी रखने की आवश्यकता नहीं है । आंध्र प्रदेश और बिहार में, सतर्कता आयोग की वार्षिक रिपोर्टों को विधान मंडल के पटल पर नहीं रखा गया जैसाकि आयोग के गठन पर आदेश में अपेक्षित था ।

4.4.4 कर्नाटक लोकायुक्त जो कि एक बहुत ही सक्रिय संस्थान रहा है, के अध्यक्ष उच्चतम न्यायालय के अवकाश प्राप्त न्यायाधीश हैं और सभी लोक सेवक उनके क्षेत्राधिकार में आते हैं, जिनमें मुख्य मंत्री और मंत्री शामिल हैं । राज्य के भ्रष्टाचार निरोध ब्यूरो जो संस्थान का एक भाग है, के साथ कदाचार के मामलों की छानबीन करने या जांच करने की शक्ति से अलग कर दिया गया है और आरोपों और शिकायतों दोनों को देखते हैं । तथापि, यद्यपि कर्नाटक अधिनियम में मुख्य मंत्री, मंत्रियों और सभी विधायकों द्वारा लोकायुक्त को संपत्तियों की विवरणी देने का उपबंध है, अब तक कुछेक ने ये विवरणियां भेज दी हैं और उनके खिलाफ कोई कार्यवाई नहीं की गई है जिन्होंने ये विवरणियां नहीं भेजी हैं ।

4.4.5 इस संदर्भ में, लोकायुक्तों के सम्मेलन[51] में, प्रत्येक राज्य में संवैधानिक पृष्ठभूमि के साथ केन्द्रीय विधान पर आधारित लोकायुक्त के एकसमान संस्थान के लिए बृहत् बिल लाने का प्रस्ताव किया गया था । ड्राफ्ट बिल में, जांच को सुविधाजनक बनाने के लिए कुप्रशासन की परिभाषा इसे और अधिक व्यापकता पर आधारित बनाने के लिए की गई है और संस्थान की परिधि में आने वाले लोक पदाधिकारी की परिभाषा को

[51] 17 और 18 जनवरी, 2003 को बंगलौर में आयोजित हुई थी ।

बड़ा किया गया है । लोकायुक्त को मजबूत करने के लिए विविध शक्तियों का प्रस्ताव किया गया है । सबसे अधिक महत्वपूर्ण यह प्रस्ताव किया गया है कि लोकायुक्त के समक्ष कार्यवाही को इसके क्षेत्राधिकार में न्यायिक कार्यवाही समझा जाना चाहिए और उच्च न्यायालय के समान ही इसकी अवमानना के लिए दंड देने की इसे शक्तियां और प्राधिकार होने चाहिए । प्रस्तावों में उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के समान संवैधानिक दर्जा दिया जाना शामिल है ।

4.4.6 राज्यों में भ्रष्टाचार निरोध तंत्र के संपूर्ण ढांचे पर पुनः विचार करने की आवश्यकता है । भ्रष्टाचार की लड़ाई में पूरी शक्ति के प्रयास में यह आवश्यक होगा कि इस समस्या को सभी स्तरों पर समुचित रूप से निपटा जाए । एक ओर, निचले स्तर पर भ्रष्टाचार को रोकने के लिए ऐसी व्यापक पकड़ वाली व्यवस्था की आवश्यकता है जो भ्रष्टाचार के बड़ी संख्या मे मामलों की जांच प्रभावी ढंग से कर सकें । दूसरी ओर, उच्चतम स्तर पर भ्रष्टाचार को रोकने के लिए एक पर्याप्त शक्तियों, विशेषज्ञता और दर्जे वाली ऐसी व्यवस्था की आवश्यकता है जो मंत्रियों जैसे उच्च लोक पदाधिकारियों के विरूद्ध मामलों की जांच कर सके । यदि लोकायुक्त को प्रभावी होना है तो इस संस्थान को प्राथमिक प्रयास के रूप में छोटे पदाधिकारियों के विरूद्ध छोटे मामलों की जांच करना न तो समुचित ही होगा और न ही संभव ही । अतः राज्य स्तर पर लोक सेवकों के बीच भ्रष्टाचार के मामलों से निपटने के लिए केन्द्रीय सतर्कता आयोग के सदृश कोई संस्थान लेना होगा। लोकायुक्त तब उच्चतम स्तर पर वरिष्ठतम लोक पदाधिकारियों को शामिल करते हुए भ्रष्टाचार से निपट सकता है । तथापि, प्रायः भ्रष्टाचार का धागा अनेक स्तरों से गुजरता है, जिसमें मंत्रियों और लोक अधिकारियों की सांठगांठ दिखाई देती है । अतः लोकायुक्त और राज्य सतर्कता आयुक्त के बीच में संपर्क रहना आवश्यक है । आयोग ने पैरा 4.3.15 में यह सिफारिश की है कि केन्द्रीय सतर्कता आयुक्त लोक पाल का एक सदस्य बना दिया जाए । आयोग ने बहु–सदस्यीय लोक पाल की भी सिफारिश की है ताकि इसे बाहरी दबाव से और अच्छी प्रकार से मुक्त रखा जा सके और इसलिए भी कि बहु–सदस्यीय आयोग का निर्णय और अधिक उद्देश्यपूर्ण होगा क्योंकि इसे विभिन्न सदस्यों से इन्पुट मिल पाएंगे । इसी प्रकार का दृष्टिकोण राज्य स्तर पर भी समुचित होगा । बहु–सदस्यीय लोकायुक्त का अध्यक्ष उच्चतम न्यायालय का एक अवकाश प्राप्त न्यायाधीश होगा या उच्च न्यायालय का एक अवकाश–प्राप्त मुख्य न्यायाधीश होगा, राज्य सतर्कता आयोग इसका सदस्य और एक ख्याति प्राप्त विधिवेत्ता या त्रुटिहीन प्रत्यय–पत्र वाला ख्याति–प्राप्त प्रशासक इसका सदस्य होगा । मुख्य मंत्री, विपक्ष का नेता और उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश की एक समिति लोकायुक्त के अध्यक्ष और सदस्यों को नियुक्त करेगी ।

4.4.7 राज्य सतर्कता आयोगों को भ्रष्टाचार निरोध ब्यूरो के कृत्यों पर निगरानी रखनी चाहिए । इसे अनुशासनिक और अनुशासनिक मामलों में अन्य प्राधिकारियों जिसमें विभिन्न स्थितियों पर सतर्कता के दृष्टिकोण आलिप्त हों, जैसे जांच, छानबीन, अपील, समीक्षा आदि, पर स्वतंत्र और निष्पक्ष सलाह देनी चाहिए और राज्य सरकार के विभागों और राज्य सरकार के नियंत्रणाधीन अन्य संगठनों में सतर्कता और भ्रष्टाचार निरोध के काम पर सामान्य देखरेख और निरीक्षण का प्रयोग करना चाहिए ।

4.4.8 आयोग का यह मत है कि लोकायुक्त के संस्थान को राजनीतिक औचित्य की उस घट–बढ़ से अलग रखने के लिए, लोकायुक्त को एक संवैधानिक दर्जा देना आवश्यक होगा, जो पिछले समय में देखी गई है जैसाकि लोक पाल के मामले में हुआ था । सभी राज्यों में लोकायुक्त की स्थापना के लिए संविधान में संशोधन करना आवश्यक होगा । यह सारे राज्यों में कुछ समान रूप वाली शक्तियों, उत्तरदायित्वों और कृत्यों के साथ इस प्राधिकार को निहित करने के लिए अवसर भी प्रदान करेगा । इस दृष्टि से, आयोग का विश्वास है कि लोकायुक्त राष्ट्रीय लोकायुक्त के एक राज्य के दर्जे के समकक्ष हो सकता है ।

4.4.9 सिफारिशें :

क. एक ऐसा प्रावधान लाने के लिए संविधान में संशोधन किया जाना चाहिए, जिसमें राज्य सरकारों के लिए लोकायुक्त का स्थापन करना अनिवार्य हो और इसकी संरचना, अधिकार और कार्यों के बारे में सामान्य सिद्धांतों का नियतन करे ।

ख. लोकायुक्त में एक बहु–सदस्यीय निकाय होना चाहिए, जिसमें अध्यक्ष पद पर न्यायिक सदस्य, सदस्य के रूप में एक निर्दोष प्रत्यय–पत्र वाला एक विशिष्ट विधिक या प्रशासक और पदेन–सदस्य के रूप में राज्य सतर्कता आयोग का अध्यक्ष (जैसा कि नीचे पैरा 4.4.9 (ड़) में उल्लिखित है) । लोकायुक्त के अध्यक्ष का चयन मुख्य मंत्री, उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश और विधान सभा में विपक्ष के नेता की एक समिति द्वारा सर्वोच्च न्यायालय के अवकाश प्राप्त न्यायाधीशों अथवा उच्च न्यायालय के अवकाश प्राप्त मुख्य न्यायाधीशों के पैनल से किया जाना चाहिए । यही समिति, दूसरे सदस्य का यन विशिष्ट विधिकों/प्रशासकों में से करेगी । उप लोकायुक्त का चयन करने की कोई आवश्यकता नहीं होगी ।

ग. लोकायुक्त का कार्य क्षेत्र केवल भ्रष्टाचार में संलिप्त मामलों तक ही रहेगा । उन्हें सामान्य लोक शिकायतों की जांच नहीं करनी चाहिए ।

घ. लोकायुक्त को मंत्रियों और विधायकों के विरूद्ध भ्रष्टाचार के मामलों को निपटाना चाहिए ।

ड. प्रत्येक राज्य को राज्य सरकार के अधिकारियों के विरूद्ध भ्रष्टाचार के मामलों की जांच करने के लिए एक राज्य सतर्कता आयोग का गठन किया जाना चाहिए । इस आयोग में तीन सदस्य होने चाहिएं और इसके कार्य केन्द्रीय सतर्कता आयोग के समान ही होने चाहिए ।

च. भ्रष्टाचार निवारण ब्यूरो को राज्य सतर्कता आयोग के नियंत्रण में ले आना चाहिए।

छ. लोकायुक्त का अध्यक्ष और सदस्यों की नियुक्ति सख्ती के साथ केवल एक ही अवधि के लिए होनी चाहिए और उन्हें उसके बाद सरकार के अधीन किसी सार्वजनिक पद को ग्रहण नहीं करना चाहिए ।

ज. लोकायुक्त के पास जांच के लिए अपनी ही एक व्यवस्था होनी चाहिए । आरंभ में, ये राज्य सरकार से अधिकारियों को प्रतिनियुक्ति पर ले सकते हैं परंतु पांच वर्षों की अवधि के बाद, इसे अपना एक संवर्ग भर्ती करने के लिए कदम उठाना चाहिए और उन्हें उचित रूप से प्रशिक्षण देना चाहिए ।

झ. भ्रष्टाचार के सभी मामलों को राष्ट्रीय लोकायुक्त या लोकायुक्त को भेजे जाने चाहिए और इन्हें किसी जांच आयोग को नहीं भेजा जाना चाहिए ।

4.5 स्थानीय स्तर पर ओमबड्समैन

4.5.1 संविधान के 73वें और 74वें संशोधनों में सरकार के तीसरी पालिका की शक्तियों और कृत्यों के विकेन्द्रीयकरण को सरकार को लोगों के नजदीक लाने और स्थानीय प्रशासन की जवाबदेही को बढ़ाने के लिए एक लोकतांत्रिक उपाय के रूप में सांविधिक आधार पर दृढ़ता के साथ स्थापित किया गया है । तथापि, यह चिंता व्यक्त की गई है कि बिना उचित सुरक्षण के विकेन्द्रीकरण से भ्रष्टाचार बढ़ सकता है यदि इस प्रक्रिया के साथ साथ अनुकूल जवाबदेही के गठन की व्यवस्थाएं नहीं की जातीं जो अन्यथा संघ सरकार और राज्य सरकारों के स्तर पर उपलब्ध होती हैं । इससे बड़े भ्रष्टाचार की संभावना बढ़ेगी । एक रूकावट पैदा करने वाला रूझान उन स्थानीय राजनीतिज्ञों द्वारा, जिनकी सत्यनिष्ठा पर प्रश्नवाचक निशान लगा हो, बढ़ता हुआ भ्रष्टाचार और शक्ति को हथियाना दिखाई पड़ता है ।

4.5.2 आयोग का मत है कि स्थानीय निकायों (निर्वाचित सदस्य और अधिकारी) के विरूद्ध भ्रष्टाचार की शिकायतों को सुनने के लिए स्थानीय निकाय ओम्बडसमैन की व्यवस्था गठित की जानी चाहिए । ऐसे ओम्बडसमैन का गठन जिलों के वर्ग के लिए गठित किया जाना चाहिए । स्थानीय निकाय ओम्बडस्मैन को स्थानीय निकायों में लोक पदाधिकारियों के विरूद्ध भ्रष्टाचार के आरोपों की जांच करने की शक्ति दी जानी चाहिए । उन्हें निर्वाचित सदस्यों के विरूद्ध कार्यवाई करने के अधिकार दिए जाने चाहिएं यदि वे कदाचार के दोषी पाए जाते हैं । इसके लिए राज्य पंचायती राज अधिनियमों और नगरपालिका अधिनियमों में ब्यौरों का निर्धारण करने के लिए संशोधन करना होगा । स्थानीय निकाय ओम्बडस्मैन पर संपूर्ण रूप से निगरानी रखने का काम राज्य के लोकायुक्त में निहित होगा जिसे स्थानीय निकाय ओम्बडस्मैन पर पुनरीक्षण की शक्तियां दी जानी चाहिएं ।

4.5.3 केरल सरकार ने केरल पंचायत राज (संशोधन) अधिनियम, 1999 के अधीन ओम्बड्स्मैन की नियुक्ति की थी । यह केरल पंचायत राज अधिनियम 1994 (1994 का अधिनियम संख्या 13) के उपबंधों के अनुसार

स्थानीय स्वायत्तशासी संस्थानों द्वारा प्रशासनिक कृत्यों के निष्पादन में अथवा किसी निर्वाचित प्रतिनिधि द्वारा या किसी स्थानीय स्वायत्तशासी सरकारी संस्थानों में काम कर रहे अधिकारी द्वारा भ्रष्टाचार, कुप्रशासन या अनियमितताओं में लिप्त किसी कार्रवाई के संबंध में और ऐसी कार्रवाई से संबंधित किसी शिकायत के निपटान के लिए जांच आयोजित करता है ।

4.5.4 विकेन्द्रीकृत स्थानीय सरकारों के लिए अब बड़ी संवैधानिक भूमिका को देखते हुए, निर्वाचित अधिकारियों और इन स्थानीय निकायों के तीन पालिकाओं के सदस्यों और उनके वेतनभोगी कर्मचारियों के विरूद्ध भ्रष्टाचार और कुप्रशासन के आरोपों की जांच पर अलग से सतर्कता निगरानी रखने के लिए यह एक अच्छी पहल होगी । ऐसे निर्वाचित कार्मिकों की कुल संख्या इतनी बड़ी है कि राज्य लोकायुक्तों के लिए स्पष्ट रूप से इन निकायों पर प्रभावकारी सतर्कता का प्रयोग करना असंभव है ।

4.5.5 आयोग का मत है कि ओम्बड्स्मैन की नियुक्ति संबंधित जिलों के एक वर्ग के लिए सभी राज्यों/संघ शासित क्षेत्रों में संबंधित पंचायत राज/शहरी स्थानीय निकाय अधिनियमों के अधीन की जानी चाहिए । ओम्बड्स्मैन को अधिकार होना चाहिए कि वह स्थानीय स्वायत्तता प्राप्त सरकारी संस्थानों के पदाधिकारियों द्वारा भ्रष्टाचार या कुप्रशासन के मामलों की जांच करे । यह अक्सर तर्क दिया जाता है कि स्थानीय ओम्बड्स्मैन के गठन से दो बार प्रयास करने पड़ेंगे क्योंकि लोकायुक्त पहले से ही मौजूद है । आयोग ने पहले ही सिफारिश की है कि लोकायुक्त को मंत्रियों या उसके समकक्ष दर्जे के लोग पदाधिकारियों और विधायकों के विरूद्ध ही मामलों की जांच करनी चाहिए । अतः स्थानीय ओम्बड्स्मैन और लोकायुक्त के बीच क्षेत्राधिकार का कोई संघर्ष नहीं होना चाहिए । तथापि, स्थानीय ओम्बड्स्मैन को उचित मार्गदर्शन देने के लिए उन्हें लोकायुक्त के संपूर्ण मार्गदर्शन और निगरानी में रखा जाना चाहिए ।

4.5.6 सिफारिशें :

क. स्थानीय निकायों के पदाधिकारियों के विरूद्ध मामलों की जांच करने के लिए जिलों के समुह के लिए एक स्थानीय निकायों के कानूनी प्रतिनिधि का गठन किया जाना चाहिए । इस प्रावधान को शामिल करने के लिए राज्यों के पंचायत राज अधिनियमों और शहरी स्थानीय निकायों के अधिनियम में संशोधन किया जाना चाहिए ।

ख. स्थानीय निकायों के प्रतिनिधि को स्थानीय स्वायत्तशासी सरकारों के पदाधिकारियों द्वारा भ्रष्टाचार और कुप्रशासन के मामलों की जांच करने के लिए सशक्त किया जाना चाहिए और रिपोर्टों को सक्षम प्राधिकारियों के पास कार्रवाई के लिए प्रस्तुत किया जाना चाहिए । सक्षम प्राधिकारियों को सामान्यतः वही कार्रवाई करनी चाहिए जिसकी सिफारिश की गई हो । यदि वे सिफारिशों से सहमत न हों तो उन्हें इनके कारणों को लिखित रूप में बताना चाहिए और इन कारणों को सार्वजनिक कर देना चाहिए।

4.6 जांच और अभियोजन को सुदृढ़ करना

4.6.1 अभियोजन प्रायः भ्रष्टाचार निरोध कानून प्रवर्तन श्रृंखला की एक कमजोर कड़ी होता है और ऐसे उदाहरण हैं जहां अभियोजकों ने दोषी अधिकारी के निष्पादन को सुविधाजनक बनाया है । अतः यह आवश्यक है कि भ्रष्टाचार के मामले ऐसे कुशल अभियोजकों द्वारा निपटाए जाएं जिनकी सत्यनिष्ठा और व्यावसायिक सक्षमता स्पष्ट हो । उच्चतम न्यायालय ने भ्रष्टाचार के मामलों में एक महत्वपूर्ण सुरक्षण का अधिदेश देते हुए एक डिक्री दी है कि भ्रष्टाचार के मामलों के अभियोजन की समीक्षा करने के लिए वकीलों का ऐसा पैनल गठित किया जाना चाहिए जो युनाईटेड किंगडम में अभियोजनों के निदेशक के समान जवाबदेह हो । जैसाकि उच्चतम न्यायालय ने अवलोकन किया, यह पैनल ''अनुभव प्राप्त और निर्दोष प्रतिष्ठा के सक्षम विधिवक्ताओं को महान्यायवादी की सलाह पर तैयार किया जाना चाहिए'' । उच्चतम न्यायालय के अनुसार, सीबीआई द्वारा अभियोजन के प्रत्येक मामले की समीक्षा पैनल के विधिवक्ता द्वारा करवानी होगी और असफलता प्राप्त अभियोजन के लिए जिम्मेदारी नियत की जानी चाहिए । यह अपेक्षित होगा कि लोकायुक्त/राज्य सतर्कता आयोगों से संबंधित मामलों के अभियोजन पर निरीक्षण करने के लिए सशक्त किया जाए । यह एक ओर अभियोजकों पर निगरानी की जाने की अत्यंत आवश्यकता को पूरा करेगा, वहीं दूसरी ओर अभियोजकों को मार्गदर्शन देगा ।

4.6.2 सरकारी संस्थानों में और बाहर दोनों जगह तेजी से बढ़ते हुए इलैक्ट्रानिक वातावरण में भ्रष्टाचार की रोकथाम और प्रवर्तन के लिए जांच एजेंसियों को इलैक्ट्रानिक जांच करने के उपकरण और ऐसी जांच करने का सामर्थ्य प्रदान करने के लिए विशिष्ट उपायों की आवश्यकता होती है । इस क्षेत्र में अधिकारियों का व्यवस्थित रूप से प्रशिक्षण राज्य के स्तर पर और भी विशेष तौर पर आवश्यक है ।

4.6.3 आज के आधुनिक भ्रष्टाचार में लिप्त जटिलताओं को ध्यान में रखते हुए, जांच एजेंसियों को आर्थिक, लेखा और लेखा परीक्षा, कानूनी, तकनीकी और वैज्ञानिक जानकारी, कौशल और जांच के उपकरण के साधन उपलब्ध कराए जाने चाहिएं । उन्हें विशिष्ट रूप से न्यायालयीय लेखों की, मामले की प्रकृति पर निर्भर करते हुए अभियांत्रिकी जैसे विभिन्न क्षेत्रों में लेखा परीक्षा की विशिष्ट जानकारी की आवश्यकता है । जांच करने वाली एजेंसियों के लिए अधिकारियों को सरकार की विभिन्न शाखाओं से लिए जाने की सलाह दी जाती है ।

4.6.4 प्रवर्तन निदेशालय, आर्थिक आसूचना एजेंसियां जैसी विविध प्रवर्तन और जांच एजेंसियों के बीच, जिनमें प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष कर से संबंधित और राज्य की जांच एजेंसियां शामिल हैं, अन्तर–एजेंसी सूचना का विनिमय और परस्पर सहायता कपट और आर्थिक अपराधों के गंभीर मामलों का पर्दाफाश करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं । इस तथ्य को स्वीकार करते हुए, वित्त मंत्रालय ने इस प्रयोजन के लिए एक विस्तृत नोडल एजेंसी का गठन किया है । विद्यमान प्रणाली में, महत्वपूर्ण मंत्रालयों और जांच और आसूचना एजेंसियों से राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिनिधियों को श्शामिल करते हुए केन्द्रीय वित्त मंत्री की अध्यक्षता में एक आर्थिक आसूचना परिषद् काम कर रही है । 18 क्षेत्रीय आर्थिक आसूचना समितियों (आरईआईसी) का गठन

भी 1996 में हुआ था और 2003 में इसे पुनः सक्रिय किया गया है, ताकि अन्य बातों के अलावा यह भी सुनिश्चित किया जा सके कि विविध प्रवर्तन और आर्थिक आसूचना एजेंसियों और उसी प्रकार की राज्य स्तर की एजेंसियों के बीच प्रचालन समन्वय बन सके । आरईआईसी के लिए मासिक आधार पर बैठक करना आवश्यक है । शायद, वित्त मंत्रालय के लिए आरईआईसी के काम पर निगरानी रखना आवश्यक है ताकि वे आर्थिक और संबंधित अपराधों से उत्पन्न होने वाले कपट और भ्रष्टाचार पर नियंत्रण करने के लिए और अधिक प्रभावी नोडल एजेंसियां बन सकें ।

4.6.5 यह भी देखा गया है कि दर्ज किए गए अधिकतर मामले शिकायतों या प्रैस रिपोर्टों पर आधारित हैं, जो भ्रष्टाचार निरोध एजेंसियों की ओर से प्रतिक्रियास्वरूप कार्रवाई हैं । कुछ मामले विभाग के अपने प्रयासों से निकले हैं । भ्रष्टाचार प्रभावित विभागों में धारा–प्रवाहित भ्रष्टाचार ऊपर से नीचे तक सरकारी तंत्र के विविध स्तरों में व्याप्त है और इसकी ओर जो ध्यान दिया जाना चाहिए वह नहीं दिया जा रहा है । अतः सरकारी तंत्र में फैले भ्रष्टाचार की शृंखला में लिप्त विशेष रूप से लक्ष्य किए गए अधिकारियों के सूचना के स्रोतों को मजबूत किए जाने की आवश्यकता है । भ्रष्टाचार निरोध एजेंसियों को अत्यधिक रूप से प्रभावित भ्रष्टाचार के विशेष संदर्भ में सूचना एकत्र करने और शंकास्पद प्रतिष्ठा के ऊंचे स्तरों के अधिकारियों पर नजर रखने के लिए व्यवस्थित रूप से सर्वेक्षण करना चाहिए ।

4.6.6 सिफारिशें :

क. राज्य सतर्कता आयोगों/लोकायुक्तों को भ्रष्टाचार संबंधी मामलों की कानूनी कार्रवाई पर निगरानी रखने के लिए सशक्त किया जाना चाहिए ।

ख. जांच संबंधी एजेन्सियों को विविध विषयों में दक्षता प्राप्त होनी चाहिए और वे विविध कार्यालयों/विभागों के कार्य संचालन से पूरी तरह से अवगत हों । उन्हें सरकार के विभिन्न स्कंधों से अधिकारियों को लेना चाहिए ।

ग. जांच पड़ताल की आधुनिक तकनीकों, जैसे कि इलैक्ट्रानिक निगरानी, अचानक निरीक्षणों, घेरा डालना, तलाशी लेना और जब्ती की आडियो और विडियो रिकार्डिंग का प्रयोग किया जाना चाहिए ।

घ. विभिन्न प्रकार के मामलों की जांच करने के लिए जांच एजेंसियों के लिए एक यथोचित समय सीमा नियत की जानी चाहिए ।

ड. पता लगाए गए और जांच किए गए मामलों की संख्या में निरन्तर वृद्धि होनी चाहिए। भ्रष्टाचार के 'बड़े' मामलों पर केन्द्रित रहते हुए प्राथमिकताओं को पुनः चुनने की आवश्यकता है ।

च. भ्रष्टाचार के मामलों का अभियोजन यथास्थिति राष्ट्रीय लोकायुक्त या लोकायुक्त के परामर्श से महान्यायवादी अथवा महा अधिवक्ता द्वारा तैयार किए गए अधिवक्ताओं के पैनल द्वारा किया जाना चाहिए ।

छ. भ्रष्टाचार निवारण एजेंसियों को बहुत बड़े भ्रष्टाचार में लिप्त होने का विशेष संदर्भ देते हुए विभागों के व्यवस्थित सर्वेक्षण का आयोजन करना चाहिए ताकि आसूचना को एकत्र करके संदेहास्पद छवि वाले अधिकारियों पर नजर रखी जा सके ।

ज. राज्यों के आर्थिक अपराध युनिट को मामलों की प्रभावशाली जांच को मजबूत करने की आवश्यकता है और वर्तमान एजेंसियों के बीच बेहतर समन्वय होना चाहिए ।

5

सामाजिक ढांचा

5.1 नागरिकों की पहल

5.1.1 नागरिकों की आवाज को भ्रष्टाचार की कलाई खोलने, उसे खत्म करने और उसपर रोक लगाने के लिए प्रभावकारी ढंग से प्रयोग किया जा सकता है । इसमें नागरिकों को भ्रष्टाचार की बुराइयों के बारे में शिक्षा देने, उनके जागरूकता के स्तरों को बढ़ाने और उन्हें 'आवाज' देकर उनकी भागीदारी प्राप्त करने में सिविल सोसाएटी और मीडिया को काम में लगाने की आवश्यकता है । इससे वैधानिक पारम्परिक अनुप्रस्थ व्यवस्थाओं और कार्यपालिका की कानूनी जवाबदेही और आंतरिक अनुलंब जवाबदेही के माध्यम से इतर सरकार की लोगों के प्रति जवाबदेही की अवधारणा के एक नए आयाम का आगम होता है । सिविल सोसाएटी से आशय यहां औपचारिक और अनौपचारिक अस्तित्वों से है और इसमें निजी क्षेत्र, मीडिया, गैर सरकारी संगठन, व्यावसायिक संस्थाएं और जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से जुड़े लोगों के अनौपचारिक वर्ग शामिल हैं।

5.1.2 हांग कांग के इंडिपेंडेंट कमीशन एगेंस्ट कोरप्यान (आईसीएसी) ने पिछली एक चौथाई शताब्दी से भ्रष्टाचार को खत्म करने के लिए सिविल सोसाएटी की योग्यता को सुदृढ़ करने के लिए अनुकरणीय परिणाम दिए हैं । हांग कांग में भ्रष्टाचार से लड़ने के बारे में समाज की चेतना को जगाने का श्रेय अधिकतर आईसीएसी द्वारा चलाए गए शक्तिशाली लोक शिक्षा अभियानों को जाता है । आईसीएसी ने भ्रष्टाचार को दूर करने के लिए नवीन सामाजिक रणनीतियों को प्रयोग किया है परंतु इसका मुख्य जोर भ्रष्टाचार के प्रति लोक व्यवहार में परिवर्तन लाने पर रहा है । हांग कांग में भ्रष्टाचार ने आईसीएसी के आने से पहले अपने पांव जमा लिए थे । उस समय, लोग भ्रष्टाचार को अपरिहार्य और उसके साथ लड़ने के प्रयास को निरर्थक समझते थे ।

बाक्स 5.1 : हांग कांग की आईसीएसी

आईसीएसी ने भ्रष्टाचार निरोध के संदेश को जटिल प्रचालन में समाज के हर क्षेत्र में पहुंचाया है जिससे प्रत्येक संभव अवसर में इसके कौशलपूर्वक प्रयोग की अपेक्षा हुई है । विशाल मीडिया भ्रष्टाचार निरोध संदेश का प्रचार करने में एक अत्यंत प्रभावशाली चैनल है । हर वर्ष आईसीएसी भ्रष्टाचार के मुद्दे को जनता की जागरूकता में सबसे आगे रेडियो और दूरदर्शन विज्ञापनों की शृंखलाएं प्रस्तुत करता है । आईसीएसी स्थानीय दूरदर्शन स्टशनों पर 'आईसीएसी इनवैस्टीगेटर' नाम से एक दूरदर्शन नाटक की शृंखला भी प्रस्तुत करता है । वास्तविक मामलों पर आधारित ये शृंखलाएं भ्रष्टाचार के बारे में समाज को यह दिखाकर शिक्षित करती हैं कि किस प्रकार आईसीएसी के अन्वेषक भ्रष्टाचार का पर्दाफाश करके दंड देता है । समाचार पत्रों और पत्रिकाओं में छपने वाले विज्ञापन, कलात्मक लेख और रिपोर्टें लोगों को भ्रष्टाचार के बारे में और आईसीएसी द्वारा किए गए काम के बारे में बताती हैं । आईसीएसी भ्रष्टाचार निरोधी संदेश का प्रचार करने और जीवन के सभी क्षेत्रों से जुड़े हुए आम लोगों को शिक्षित करने के लिए समाज के साथ आमने सामने हो कर संपर्क का प्रयोग भी करता है । प्रतिदिन, आईसीएसी के कर्मचारी भ्रष्टाचार निरोधी संदेश देने और जनता का समर्थन प्राप्त करने के लिए समाज के विविध स्तरों के घर जाकर शिक्षा सेवाओं को पहुंचाते हैं । आईसीएसी विविध आयु वर्ग के छात्रों को वीडियो और गेम्स के साथ विशेष रूप से डिजाइन किए हुए शिक्षा पैकेजों को प्रस्तुत करता है । ये पैकेज हांग कांग में भ्रष्टाचार निरोधी काम के बारे में छात्रों को सूचना देते हैं । वे लोग सकारात्मक मूल्यों को विकसित करने के बारे में बताते हैं जैसेकि पैसे के सही प्रयोग के बारे में और अच्छे काम करने का महत्व। भ्रष्टाचार किस प्रकार से परिवारों के लिए, समाज के लिए और अर्थव्यवस्था के लिए हानिकारक है, इसे ऐसे अभियानों, संगीत समारोहों, खेल के घटना–क्रमों में चित्र आदि बनाकर दिखाया जाता है ।

परंतु आईसीएसी द्वारा सुनियोजित जन संपर्क अभियान ने इस अवधारणा को चकनाचूर कर दिया । आईसीएसी ने वास्तव में एक ऐसा सकर्मक सामाजिक वातावरण बना दिया है जिसने भ्रष्टाचार को खत्म करके इसे इस प्रक्रिया में सहायक बना दिया है। यह अपने अद्‌भुत उन्नत कार्यक्रम के लिए जाना जाता है जिसमें प्रैस रिलीजें सार्वजनिक घोषणाएं साक्षात्कार, वृत्त–चित्र, इश्तहार, पर्चे, बैठकें और जनता को भ्रष्टाचार निरोधी संदेश देने के लिए स्कूलों और कालेजों में काम करना शामिल हैं । यह खेलों, सांस्कृतिक और मनोजरंन कार्यक्रमों को भी प्रायोजित करता है जिसमें युवाओं का ध्यान आकर्षित करते हुए भ्रष्टाचार निरोधी लक्ष्यों पर जोर दिया जाता है । इसके संचालन की एक विशेषता में निगमित शासन में नैतिकता को बढ़ाने के लिए हांग कांग नैतिकता विकास केन्द्र को विकसित करने के लिए मुख्य चैंबर्स आफ कामर्स के साथ सहयोगी प्रयत्न करना शामिल हैं । यह अनुरोध किए जाने पर किसी भी व्यक्ति को उन तरीकों के बारे में अनुदेश भी देता है, सलाह भी देता है और सहायता भी देता है, जिनसे भ्रष्टाचार की प्रवृत्तियों को खत्म किया जा सके और यह सरकारी विभागों या लोक निकायों के अध्यक्षों को कार्य–पद्धतियों या व्यवहारों में ऐसे परिवर्तन करने की सलाह देता है जो उनके कर्त्तव्यों के प्रभावशाली निष्पादन से मेल खाते हों ।

5.1.3 भारत में, सिविल सोसाएटी अनेक उत्कृष्ट मामलों में आलिप्त रही है । वास्तव में, भारत में शासन सुधार करने में सिविल सोसाएटी की ओर से की जाने वाली पहलों का आकार और विषयवस्तु में 1990 के शुरू से वृद्धि हुई है । वर्तमान रूपों को चुनौती देने, वैकल्पिक दृष्टिकोणों का परीक्षण करने और पिछले अनुभवों से कुछ सबक लेने के लिए देश के विभिन्न भागों में प्रयत्न हुए हैं । सफलतापूर्वक लिप्त हुई कुछ सिविल सोसाएटी के नाम इस प्रकार हैं :–

1) जन कार्य द्वारा लोक हित वाद, दिल्ली और उपभोक्ता शिक्षा और अनुसंधान केन्द्र, अहमदाबाद, अहमदाबाद लोकतंत्र सुधार संघ ;

2) लोक कार्य केन्द्र, बंगलौर का प्रगति कार्ड सर्वेक्षण ;

3) मजदूर किसान शक्ति संगठन द्वारा जन सुनवाई, राजस्थान और परिवर्तन, दिल्ली ;

4) लोक सत्ता द्वारा निर्वाचन सुधार और नागरिक चार्टर, हैदराबाद ;

5) राष्ट्रीय वकालत अध्ययन केन्द्र, पुणे द्वारा वकालत के लिए क्षमता निर्माण;

6) सिविक, बंगलौर द्वारा प्रभावकारी नगरपालिका विकेन्द्रीकरण के लिए अभियान ;

7) बंगलौर की 'दिशा' और 'प्रूफ' द्वारा नगरपालिका पर लोक चर्चा और राज्य के बजट तथा जनाग्रह, बंगलौर द्वारा सहभागी नगरपालिका बजटिंग ;

8) मुम्बई की 'प्रजा' द्वारा नागरिक चार्टर के लिए अभियान ।

9) कैटालिस्ट टस्ट, चेन्नई, लोक कार्य केन्द्र, बंगलौर और लोक सत्ता, हैदराबाद द्वारा मतदाता जागरण अभियान ; और

10) सूचना अधिकार पर नेशनल कंपेन फार पीपल्स राइट टु इन्फोर्मेशन/परिवर्तन, नई दिल्ली ।

5.1.4 इन संगठनों में से केवल दो का उदाहरण ले लेने से पता चलता है कि इन के द्वारा और अन्य सिविल सोसाएटी संगठनों द्वारा कितना श्रेष्ठ कार्य किया जा रहा है । राजस्थान में एक प्रख्यात गैर सरकारी संगठन मजदूर किसान शक्ति संगठन (एमकेएसएस) ने नियोजन नामावलियों, वाउचरों, लाभार्थी सूचियों और पूर्ण और उपयोग किए गए प्रमाण पत्रों तक अपनी पहुंच द्वारा और फिर उसे 'जन सुनवाई' नामक लोक सुनवाई में छानबीन के लिए संबंधित ग्रामवासियों को सौंप कर, स्थानीय लोक निर्माण में भ्रष्टाचार का पर्दाफाश करना शुरू किया । मिथ्या मस्टर नामावलियां, मिथ्या बिलों और वाउचरों और मिथ्या पूर्णता और उपयोग कर लिए प्रमाण पत्रों के संबंध में इन लोक सुनवाईयों में भ्रष्टाचार के बड़े पैमाने पर मामलों का पता लगाया गया । एमकेएसएस की सुविधा से इन लोक सुनवाईयों के परिणामस्वरूप, राजस्थान में सरकार को वार्डसभा के गठन जैसे गंभीर सुधारों को लागू करने के लिए अन्तिम रूप से मना लिया गया था । इस वार्ड सभा को सरकारी कार्यक्रमों की सामाजिक लेखा परीक्षा को आयोजित किए जाने, सार्वजनिक निर्माण के लिए प्रस्ताव अनुमोदित किए जाने और काम के उचित निष्पादन को प्रमाणित करने के लिए सशक्त किया गया था । दिल्ली में स्थित एक गैर सरकारी संगठन 'परिवर्तन' ने उचित मूल्य की दुकानों द्वारा रखे गए स्टॉक रजिस्टरों पर पहुंच के लिए बार बार जोर दे कर लोक वितरण प्रणाली में भ्रष्टाचार का पर्दाफाश करने के लिए सूचना अधिकार कानून का प्रयोग किया और यह पता लगाया कि चावल, गेहूं और तेल जो जनता के लिए थे, उन्हें खुले बाजार में भेज दिया गया था ।

5.1.5 इन पहलों को किए जाने का क्या महत्व है ? सिविल सोसाएटी वर्गों ने भ्रष्ट वृत्तियों को सुधारने के लिए गलत काम कर रही सरकारों पर दबाव डाला है । इन सोसाएटियों ने जनता को शिक्षा देकर और उन्हें भ्रष्टाचार निरोध के प्रयत्नों में सहायता करके भ्रष्टाचार का पता लगाने के लिए निगरानी की प्रणालियां भी प्रदान कराई हैं । उन्होंने भ्रष्टाचार को कम करने के लिए अपनी मांग बताने और सर्वांगी सुधार लाने के लिए सहायता की है । कुल मिला कर, इन सिविल सोसाएटियों की लिप्तता ऐसी मार्गदर्शी पहलों के रूप में रहीं हैं, जो आम आदमी की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए एक आग्रह बन कर सामने आईं हैं और लोगों को बड़े पैमाने पर शिक्षित करने और उन्हें साधन उपलब्ध कराने में जुटी है ।

5.1.6 सिविल सोसाएटी वर्गों की सफलतापूर्वक पहलों ने भ्रष्टाचार के साथ लड़ने में लोगों को शिक्षित करने और उनकी जागरूकता बढ़ाने में नाजुकता को रेखांकित किया है । यद्यपि, ऐसी पहलें सोसाएटी की ओर से की जाती हैं, फिर भी सरकार एक ऐसा वातावरण बना सकती है जिसमें नागरिकों के वर्ग भ्रष्टाचार को जड़ से समाप्त करने के प्रयासों में प्रभावकारी ढ़ंग से भागीदार बन सकते हैं । इसे आसान करने के लिए कुछ उपाय इस प्रकार के हो सकते हैं :–

क. सरकारी कार्यक्रमों पर निगरानी रखने के लिए सिविल सोसाएिटयों को आमंत्रित करना ;

ख. सेवा के मानदंडों को स्थापित करना और उनका प्रचार–प्रसार करना ;

ग. विश्वास योग्य शिकायतों की व्यवस्थाओं का गठन करना ;

घ. भ्रष्टाचार निरोधी संस्थानों, न्यायपालिका और कानून प्रवर्तन में जनता का विश्वास जगाना और न्यास के स्तरों में सुधार करने के लिए कार्यक्रम निर्धारित करना ;

ड. सूचना तक पहुंच को लागू करके ;

च. भ्रष्टाचार के घटना क्रमों पर सोसाएटी को शिक्षित करना और सत्यनिष्ठा में नैतिक वचनबद्धता को जगाना;

छ. सरकार की गतिविधियों का लेखा जोखा करने के लिए लोक सुनवाई का प्रयोग करना जहां पर श्रोता सार्वजनिक निर्माण कार्य के ब्यौरों को सुनने के लिए इकट्ठे होते हों और निवासी अपनी अवधारणा को रखते हों ;

ज. रेडियो, समाचार–पत्रों और दूरदर्शन के माध्यम से सरकार या निजी क्षेत्र द्वारा प्रायोजित लोक शिक्षा और जागरूकता अभियानों की पहल करना ;

झ. राष्ट्रीय और स्थानीय स्तरों पर नियमित अंतरालों पर समस्याओं पर विचार करने और सभी भागीदारों को लिप्त करते हुए परिवर्तनों के सुझाव देने के लिए सत्यनिष्ठा की कार्यशालाएं और लोक सुनवाई का आयोजन करना ;

ञ. समय समय पर सार्वजनिक सेवा सुपुर्दगी का सर्वेक्षण करना और निर्धारण करना ;

ट. सरकारी संचालन के सामान्य या विशिष्ट क्षेत्रों में भ्रष्टाचार की अवधारणाओं का सर्वेक्षण करना;

ठ. शिक्षा के पाठ्यक्रमों में भ्रष्टाचार को एक विषय के रूप में लाना ;

ड. भ्रष्टाचार पर वैबसाइट बनाना – जिसमें भ्रष्टाचार के विरूद्ध सूचना, बातचीत की सुविधा देना और नागरिकों से फीडबैक लेना और भूतपूर्व लोक सेवकों द्वारा लॉबी में सहायता करना ।

5.1.7 नागरिकों का चार्टर प्रशासन को जवाबदेह और नागरिक–मित्र दोनों बनाता है । कुछ वर्षों पहले लगभग प्रत्येक सरकारी विभाग और संगठन ने अपना नागरिक चार्टर निकाला था । चार्टर एक घोषणा पत्र होता है जिसमें लोक सेवा संगठन नागरिकों को आश्वासन देता है कि वह घोषणा में निहित मानदंडों को पूरा करते हुए सेवा के उच्च स्तर को प्रदान करेगा । बड़ी संख्या में अनेक कार्यालयों में काफी समय से नागरिक चार्टरों का प्रयोग नहीं हो पाया है । चार्टरों में दिए गए वचन अब लोक व्यापी घोषणाएं बन गई हैं जिन्हें लागू करने के लिए कोई व्यवस्थाएं नहीं हैं । नागरिकों के चार्टर में लोक सेवाओं के लिए विशिष्ट उपबंधों और निर्धारित विशिष्ट दायित्वों का समावेश होना चाहिए तथा निर्धारित समय होना चाहिए जिसके भीतर विभाग किसी सेवा को प्रदान करने या किसी प्रश्न या शिकायत का उत्तर देने के लिए बाध्य होगा । आयोग का अनुभव है कि इन चार्टरों को प्रभावकारी उपकरण बनाने के लिए जिससे कि लोक सेवकों को जवाबदेह ठहराया जा सके, इन चार्टरों में स्पष्ट रूप से उस उपचार/दंड/क्षतिपूर्ति का उल्लेख होना चाहिए जो चार्टर में निर्धारित मानदंडों को पूरा करने में चूक की स्थिति में दिए जाएंगे ।

यह बेहतर होगा कि घोषणाओं में कुछ ऐसे वचन ले लिए जाएं जिन्हें पूरा होने की उम्मीद हो बजाए इसके कि ऊंची घोषणाओं की लंबी सूची बना ली जाए, जो कि अव्यवहार्य होती हैं ।

5.1.8 मुख्य सरकारी कार्यालयों और संस्थानों में जहां बड़ी संख्या में जन संपर्क होता हो, वहां पर नैतिकता का मूल्यांकन करने और उनका रखरखाव करने में नागरिकों को लिप्त किया जा सकता है । यह मूल्यांकन राज्य, जिला और उप–जिले के स्तरों पर किया जा सकता है । यह मूल्यांकन उन नागरिकों की अवधारणा से पेशेवर एजेंसियों की सहायता से किया जाए जो ऐसे कार्यालयों के संपर्क में रहे हों । सरकारी कार्यालयों में ऐसी व्यवस्था किए जाने की आवश्यकता है जिससे सभी आगंतुकों के डाटा बेस को रखा जा सके । पेशेवर एजेंसी को इन लोगों से संपर्क रखना चाहिए और उनका फीडबैक लेना चाहिए । इस फीडबैक के आधार पर लोक कार्यालय को एक रेटिंग दी जानी चाहिए ।

5.1.9 नागरिकों की भागीदारी को प्रोत्साहन देने की नीति का सक्रिय रूप से अनुसरण किया जाना चाहिए। मिथ्या दावा कानून (पैरा 5.2) का अधिनियमन करना नागरिकों की भागीदारी को प्रोत्साहन दिए जाने का एक साधन है । भ्रष्टाचार के मामलों की सूचना देने के लिए एक पारितोषिक की व्यवस्था करने से भी भ्रष्टाचार के मामलों को प्रकाश में लाने में मदद मिल सकती है । नागरिकों की शिकायतों पर शीघ्र कार्रवाई होने से न केवल शिकायत का निपटारा होता है बल्कि दूसरों को भी प्रेरणा मिलती है कि वे भी अपनी शिकायतों को प्राधिकारियों के ध्यान में ला सकें ।

5.1.10 समाज में अभिवृत्तीय परिवर्तन लाने के बारे में स्कूल जागरूकता कार्यक्रम बहुत प्रभावी हो सकते हैं। ऐसे कार्यक्रम उच्च विद्यालयों में आदर्शतः लिए जाते हैं और इन्हें लोकतंत्र में नागरिकों की भूमिका के संबंध में, सिविल सोसाएटी की भूमिका, भ्रष्टाचार के हानिकारक प्रभाव, भ्रष्टाचार के विरूद्ध लड़ाई में सामूहिक कथनों के सिद्धांत, लोक संस्थानों के संचालन को सामने लाने आदि के संबंध में छात्रों को शिक्षित किया जाना चाहिए ।

5.1.11 भ्रष्टाचार पर सूचना देने पर इनाम देने या सकरात्मक प्रलोभनों का सरकार द्वारा प्रयोग करने के प्रश्न से संबंधित एक विविध पहलु है । कर विभागों में ऐसी इनाम की योजनाएं हैं जहां सूचना के आधार पर सामने लाई गई आय की प्रतिशतता शिकायतकर्त्ताओं को ईनाम में दी जाती है । इनाम देने के ऐसे मामलों को वहां भी लागू किया जाना चाहिए जहां पर भ्रष्ट वृत्तियों के बारे में सूचना दी जाती हो । नए प्रोत्साहन शुरू किए जाने की आवश्यकता है ताकि लोग भ्रष्ट लोक अधिकारियों के गलत कामों को सामने लाने में प्रेरित हो सकें। ऐसा परिवर्तन आएगा जब एक भ्रष्ट व्यवस्था को उखाड़ फेंकने में मिलने वाले प्रोत्साहन उन प्रोत्साहनों से अधिक सुदृढ़ होंगे जिन्हें ऐसी व्यवस्था को रखने में मिलते हैं । समय की यह आवश्यकता है कि भ्रष्टाचार के प्रति हमारी सहनशीलता शून्य हो ।

5.1.12 सिफारिशें :

क. नागरिकों के चार्टर को सेवा स्तरों का निर्धारण करके असरदार बनाया जाना चाहिए और यदि ये सेवा स्तर खरे नहीं उतरते हैं तो उसके उपचार ।

ख. महत्वपूर्ण सरकारी संस्थानों और कार्यालयों में नैतिकता का आकलन और उसे बनाए रखने में नागरिकों को शामिल रहना चाहिए ।

ग. नागरिकों की पहल किए जाने को बढ़ावा देने के लिए पारितोषिक योजनाओं को लाना चाहिए ।

घ. स्कूल जागरूकता कार्यक्रमों को अमल में लाया जाना चाहिए, जिसमें नैतिकता के महत्व पर और भ्रष्टाचार कैसे खत्म किया जा सकता है इस पर प्रकाश डाला जाना चाहिए ।

5.2 मिथ्या दावा अधिनियम

5.2.1 भारतीय दंड संहिता में विद्यमान उपबंध और अन्य अधिनियम इतने पर्याप्त नहीं हैं कि जिससे इच्छुक नागरिकों और सिविल सोसाएटी वर्गों द्वारा भ्रष्टाचार के भुगतान की वसूली के लिए न्यायालय जाया जा सके और भुगतान का हिस्सा लिया जा सके । अमेरिका में, मिथ्या दावा अधिनियम इच्छुक नागरिकों के लिए यह संभव करवाता है कि भ्रष्टाचार के भुगतान की वसूली के लिए वे किसी न्यायालय या किसी न्यायिक जिले में जा सकते हैं ।

बाक्स 5.2 : संयुक्त राष्ट्र मिथ्या दावा अधिनियम के अधीन वसूलियां

अमेरिका में सितम्बर 30, 2003 को समाप्त राजकोषीय वर्ष के लिए मुकदमों और जांचों मे वसूलियां 2.1 बिलियन डालर आंकी गई । यह पिछले वर्ष की वसूलियों से (1.1 बिलियन डालर) 75 प्रतिशत अधिक थीं और कांग्रेस द्वारा पर्याप्त रूप से सिविल मिथ्या दावा अधिनियम को 1986 में सुदृढ़ करने के बाद से कुल वसूलियां 12 बिलियन डालर तक पहुंच गई हैं ।

स्रोतः अमेरिका का न्याय विभाग :

http://www.usdoj.gov/opa/pr/2003/November/03_civ_613.htm (दिनांक 10–11–2003)

5.2.2 संघीय मिथ्या दावों के अधीन, कोई भी व्यक्ति जिसे किसी दूसरे व्यक्ति या अस्तित्व द्वारा किए गए कपट के बारे में जानकारी है, संघीय सरकार की ओर से मुकदमा फाइल कर सकता है। और यदि कपट कानून की न्यायालय में सिद्ध हो जाता है तो कपट करने वाले व्यक्ति को दंडित किया जाता है और प्रार्थी को वसूली की प्रतिशतता का इनाम दे दिया जाएगा । इस कानून को संघीय संविदाओं में कपट को नियंत्रण करने के लिए सिविल युद्ध[52] के दौरान अधिनियमित किया गया था। इसे 1986 में संशोधित किया गया था और इसे और विस्तृत किया गया । अमेरिका में मिथ्या दावा अधिनियम को 1986 में संशोधित करने का कारण यह था कि वहां की कांग्रेस ने यह अनुभव किया कि सरकार अकेले कपट के विरूद्ध लड़ाई को नहीं लड़ सकती और निजी नागरिकों को आगे आने और सरकार के प्रयत्नों को बढ़ाने के लिए प्रोत्साहनों का गठन किया । इस कानून की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि सीटी बजाने वाले को सुरक्षा प्रदान करती है । आयोग ने सीटी बजाने वाले के लिए कानून को अधिनियमित करने की सिफारिश की है (पैरा 3.6.4) । यह समुचित होगा कि इस तथ्य पर यहां जोर दिया जाए कि सरकारी कार्यालयों में मिथ्या दावों के संबंध में ''आन्तरिक सूचना'', सांठगांठ के मामले में उस कानून के पारित होने पर और अधिक आ पाएगी।

बाक्स 5.3 : मिथ्या दावा अधिनियम का उद्देश्य

सरकार को मदद की जरूरत है – बहुत सी सहायता – खजाने को तेजी के साथ बढ़ते हुए उलझन भरे कपट से पर्याप्त बचाव के लिए . . . . आंशिक हल – कपट को कम करने में किसी अर्थपूर्ण सुधारों को मैं आवश्यक समझता हूं – वह है लोक कानून का लागू करने वालों और लोक करदाताओं के बीच एक ठोस साझेदारी का गठन । संघीय सरकार के पास एक बहुत बड़ा काम है क्योंकि यह लगभग 1 ट्रिलियन डालर की सत्यनिष्ठा को सुनिश्चित करने का प्रयत्न कर रही है जो हम विविध कार्यक्रमों और वसूलियों पर हर वर्ष खर्च करते हैं । यह काम सरल रूप से इतना बड़ा है यदि सरकारी अधिकारी अकेले काम कर रहे हैं ।

सीनेटर चार्ल्स ग्रासले मिथ्या दावा अधिनियम के संशोधनों को 1985 में पेश करते समय अधिनियम के पीछे उद्देश्य को समझाते हुए ।

5.2.3 अमेरिका के मिथ्या दावा कानून की केन्द्रीय विशेषताएं निम्न प्रकार से हैं :–

- लोक वसूली में माल और सेवाओं के प्रदाता को संघीय सरकार को

[52] इस कानून को, जिसे मूलतः 1863 में अधिनियमित किया गया था, लिन्कन कानून भी कहा जाता है ।

सर्वोत्तम मूल्य प्रस्तावित करना चाहिए । यदि किसी अन्य ग्राहक को उसी गुणवत्ता के लिए अधिक हितकर मूल्य दिया जाता है तो संविदाकार मूल्य के अन्तर की कमी पूरी करने के लिए उत्तरदायी होगा ।

- संयुक्त राज्य की ओर से नागरिकों को संघीय न्यायालयों में सिविल मुकदमा फाइल करने का अधिकार है । संयुक्त राज्य सरकार को ऐसी घटना की सूचना दी जाती है और सरकार को ऐसे मामलों में एक वादी की तरह से स्वयं मुकदमा लड़ना चाहिए ।

- जनता द्वारा उठाई गई हानि का मूल्यांकन न्यायालय करेगा । ऐसी हानि में वास्तविक पैसे की हानि और समाज को हुई माल और सेवाओं की घटिया किस्म के रूप में, प्रदूषण और अन्य सामाजिक लागतों के रूप में गैर–आर्थिक हानियां । न्यायालय, की गई हानि या परिकलित हानि के तीन गुना के बराबर जुर्माना लगाने के लिए सशक्त है ।

- सिविल मुकदमा फाइल करने वाले नागरिक को उस मामले में उसके लिप्त होने पर निर्भर करते हुए जुर्माने की 15 से 35% तक की रकम उसके प्रयासों के लिए क्षतिपूर्ति के रूप में मिलेगी। ये नागरिकों और सिविल सोसाएटी संगठनों को मिथ्या दावों और भ्रष्टाचार को सामने लाने में और सिविल मुकदमा फाइल करने का मजबूत प्रोत्साहन देता है ।

- संपूर्ण कार्य–पद्धति सिविल वाद नियमों द्वारा नियंत्रित की जाती है और सिविल न्यायालय प्रतिमानकों को पूरा करने के लिए सबूत का मानदंड ही आवश्यक होता है और युक्तियुक्त संदेह से परे सबूत की आवश्यकता नहीं होती ।

5.2.4 संयुक्त राज्य मिथ्या दावा अधिनियम की तर्ज पर ही ऐसे कानून की आवश्यकता है जो अभिरूचि रखने वाले नागरिकों और सिविल सोसाएटी वर्गों के लिए भ्रष्टाचार के भुगतान की वसूली के लिए वैधानिक राहत पाने और अंश का दावा करने के लिए संभव कर सके । ऐसा कानून उस भ्रष्टाचार पर रोक लगाने में सहायता करेगा जहां कपट को किसी लोक सेवक की सांठगांठ के साथ किया गया हो । परंतु इससे अधिक महत्वपूर्ण यह है कि ऐसा कानून निजी और निजी संगठनों में स्वच्छ कार्य करने की संस्कृति को बनाने में सहायता करेगा।

5.2.5 सिफारिशें :

क. संयुक्त राष्ट्र मिथ्या दावा अधिनियम की तर्ज पर कानून लाया जाना चाहिए जिसमें नागरिकों और नागरिक सामाजिक वर्गों के लिए सरकार के विरूद्ध कपटपूर्ण दावों के लिए कानूनी राहत लेने के लिए प्रावधान हो । इस कानून में निम्नलिखित घटक होने चाहिए :

i. किसी भी नागरिक को सरकार के विरूद्ध झूठे दावे के लिए किसी व्यक्ति या एजेंसी के विरूद्ध मुकदमा करने के योग्य होना चाहिए ।

ii. यदि झूठे दावे को कानूनी अदालत में सिद्ध कर लिया जाता है तो उत्तरदायी व्यक्ति/एजेंसी, राजस्व या समाज की हुई हानि के पांच गुना के बराबर जुर्माना देने के लिए जिम्मेदार होगा ।

iii. यह हानि आर्थिक भी हो सकती है अथवा प्रदूषण के रूप में अनार्थिक अथवा अन्य सामाजिक लागतों में हो सकती है । अनार्थिक हानि के मामले में, न्यायालय को अधिकार होगा कि वह इस हानि का आर्थिक रूप में आकलन करे।

iv. मुकदमा करने वाला व्यक्ति वसूल की गई क्षति में से उपयुक्त प्रतिपूर्ति पा सकता है ।

5.3 मीडिया की भूमिका

5.3.1 एक स्वतंत्र मीडिया की भ्रष्टाचार रोकने, अनुवीक्षण करने और नियंत्रण करने में महत्वपूर्ण भूमिका होती है । ऐसा मीडिया जनता को भ्रष्टाचार पर सूचना और शिक्षा दे सकता है, सरकार में, निजी क्षेत्र में और सिविल सोसाएटी संगठनों में भ्रष्टाचार का पर्दाफाश करता है और भ्रष्टाचार के विरूद्ध अपने को नीतिबद्ध करते हुए आचार संहिता पर निगरानी में सहायता करता है ।

5.3.2 मीडिया द्वारा जांच की रिपोर्ट देना और भ्रष्टाचार की घटनाओं की वैसी ही सूचना देना जैसी वे घटी हों तो वह भ्रष्टाचार पर सूचना का एक महत्वपूर्ण स्रोत हो सकती है । भ्रष्टाचार की घटनाओं की ठीक वैसी ही दैनिक सूचना देना दूसरा योगदान है । ऐसी रिपोर्टों का उत्तर देने के लिए प्राधिकारियों को समय पर कार्रवाई कर लेनी चाहिए, सही तथ्यों से अवगत करा देना चाहिए, दोषियों को पकड़ने के लिए कदम उठाने चाहिए और प्रैस तथा जनता को समय समय पर ऐसी कार्रवाई की प्रगति की सूचना देते रहना चाहिए । यह आम अनुभव रहा है कि अक्सर ऐसे आरोपों पर ध्यान देकर उनका अनुसरण करने के कोई व्यवस्थित प्रबंध नहीं किए जाते । मीडिया के विभिन्न क्षेत्रों में आने वाली रिपोर्टों का मिलान करना और उनका अनुसरण करना सभी सार्वजनिक कार्यालयों में शिकायतों के अनुवीक्षण करने वाली व्यवस्थाओं का एक अभिन्न हिस्सा होना चाहिए ।

5.3.3 यह देखा गया है कि कभी कभी प्रतिस्पर्द्धा के दबाव में मीडिया आरोपों और सूचनाओं को जनता के सामने रखने से पहले उनका सत्यापन नहीं करता है । कभी कभी ऐसे आरोप/शिकायतें दुष्प्रेरित होते हैं। यह आवश्यक है कि इन प्रतिमानकों और व्यवहारों को अपनाया जाए कि सभी आरोपों/शिकायतों की उचित छानबीन की जाएगी और वह व्यक्ति जिसके विरूद्ध ऐसे आरोप लगाए गए हैं अपनी बात कहने का एक अच्छा अवसर दिया गया है ।

5.3.4 भारत में समाचार पत्रों और समाचार एजेंसियों के मानकों को सुधारने और रखरखाव के लिए प्रैस परिषद् को पुनर्गठित किया गया था । भारतीय प्रैस परिषद् ने मुद्रण मीडिया के लिए आचार संहिता निर्धारित की है । तथापि, ऐसी कोई संहिता इलैक्ट्रॉनिक मीडिया के लिए अस्तित्व में नहीं है । सूचना और प्रसारण मंत्रालय ने एक ड्राफ्ट प्रसारण सेवाएं विनियामक बिल तैयार किया है, जिसमें भारतीय प्रसारण विनियामक

प्राधिकरण गठन करने का प्रस्ताव है, जिसमें इलैक्ट्रॉनिक मीडिया सहित लाइसेंस और निगरानी दोनों कार्यों को शामिल किया जाएगा । इस बिल में उदार संतुष्टि संहिता के अनुपालन को सुनिश्चित करने के लिए स्वतः नियंत्रक तंत्र प्रदान करने के लिए और प्रतिमानकों को निर्धारित करने का प्रस्ताव है । मीडिया आयोग के गठन करने का भी प्रस्ताव है । आयोग इन प्रस्तावों के ब्यौरों का अध्ययन नहीं कर रहा है । आयोग का यह मत है कि क्योंकि इलैक्ट्रॉनिक मीडिया प्रिंट मीडिया की तरह ही महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है, अतः इलैक्ट्रॉनिक मीडिया के लिए, उसके संचालन के विभिन्न पहलुओं को शामिल करते हुए एक संहिता बनाने की आवश्यकता है ।

5.3.5 सिफारिशें :

क. मीडिया द्वारा सभी आरोपों/शिकायतों के लिए आवश्यक समुचित जांच के लिए मानदंड और प्रणाली को अपनाया जाना और उन्हें जनता के सामने लाने के लिए कार्रवाई करना आवश्यक है ।

ख. इलैक्ट्रॉनिक मीडिया को एक आचार संहिता और स्वयं नियंत्रण व्यवस्था अपनानी चाहिए ताकि आचार संहिता का दुर्भाव कार्रवाई के विरूद्ध एक सुरक्षण के रूप में पालन किया जा सके ।

ग. मीडिया को भ्रष्टाचार मामलों के बारे में नियमित रूप से ब्यौरे देकर सरकारी एजेंसियां भ्रष्टाचार के विरूद्ध लड़ाई में सहायता कर सकती हैं ।

5.4 सामाजिक लेखा–जोखा

5.4.1 ग्राहक अथवा लाभार्थी वर्गों या सिविल सोसाएटी वर्गों के माध्यम से सामाजिक लेखा–जोखा करवाना, सरकार के लिए उत्पादों और सेवाओं की वसूली में, कल्याण के लिए किए जाने वाले भुगतान के वितरण में, विद्यालयों और छात्रावासों में अध्यापकों और छात्रों तथा चिकित्सालयों में कर्मचारियों की उपस्थिति की जांच करने और सरकार की इसी प्रकार की अन्य नागरिक सेवा–उन्मुख गतिविधियों के आतिथेय में गलत काम होने की रोकथाम और उनपर सूचना को प्रकाश में लाने का एक और साधन है । विभागीय निरीक्षकों की ओर से आकस्मिक निरीक्षणों के लिए यह एक लाभदायक अतिरिक्त साधन होगा । आयोग, इन सभी के विस्तार में जाए बिना यह सुझाव देना चाहेगा कि सामाजिक लेखा जोखा के लिए उपबंध सभी योजनाओं के प्रचालन मार्गदर्शी सिद्धांतों का एक हिस्सा बनाया जाना चाहिए ।

5.4.2 सिफारिशें :

क. सभी विकासशील स्कीमों के प्रचालन के दिशा–निर्देश और नागरिक केन्द्रस्थ कार्यक्रमों में सामाजिक लेखापरीक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए ।

5.5 सामाजिक सर्वसम्मति बनाना

5.5.1 भ्रष्टाचार से लड़ते समय, समाज को भ्रष्टाचार–मुक्त बनाने के महत्व पर व्यापक सर्वसम्मति बनाना आवश्यक होता है । उस दृष्टि से, यह आवश्यक है कि राजनीतिक दल जिनकी शासन में महत्वपूर्ण भूमिका और उत्तरदायित्व रहे हैं, भ्रष्टाचार–निरोधी एजेंडों को तैयार करें । यह जान कर बड़ा संतोष होता है कि 2004 में लोक सभा के चुनावों के लिए अधिकतर बड़े राजनीतिक दलों ने भ्रष्टाचार के विरूद्ध लड़ाई को अपने चुनाव घोषणा पत्रों में एक मुख्य मुद्दे के रूप में शामिल किया था । उदाहरण के लिए, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के चुनाव घोषणा पत्र में यह कहा गया था :–

- *कांग्रेस भ्रष्टाचार के मूल कारणों और काले धन की उत्पत्ति का निराकरण करेगी । उन विनियम और कानूनों को हटा देना, जिनकी उपयोगिता अब नहीं रही या जिनसे सामाजिक उद्देश्य पूरे नहीं होते, दल द्वारा धन एकत्र करने पर पारदर्शिता और चुनावों के लिए सरकारी धन देना, ये बड़ी सीमा तक सहायक होंगे । यहां तक कि कांग्रेस इस बरबादी से भी अवगत है कि सभी स्तरों पर भ्रष्टाचार आम आदमी के लिए और भी उत्पीड़न ला देता है और देश को इस संकट से छुटकारा दिलाने के लिए दृढ़ संकल्प है ।*

राष्ट्रीय लोकतांत्रिक गठबंधन ने कहा :

- *एनडीए सरकार सभी स्तरों पर भ्रष्टाचार–मुक्त शासन देने के लिए प्रतिबद्ध है ।*

उपर्युक्त प्रशासनिक सुधार आयोग में उपलब्ध सामग्रियों के आधार पर केवल दृष्टांत मात्र हैं । ऐसे प्रतिज्ञान सही दिशा में हैं । आयोग यह सिफारिश करना चाहेगा कि भ्रष्टाचार के विरूद्ध लड़ाई में और अधिक विस्तृत और व्यापकता पर आधारित सामाजिक सर्वसम्मति उभर कर आनी चाहिए ।

6

सर्वांगी सुधार

''कितने ही ''आयोगों'' और नैतिकता एजेंसियों और नए कानूनों, डिक्रियों और आचार संहिता की लगातार रूपरेखा तैयार करने के बाद, भ्रष्टाचार निरोध के क्षेत्र में कुछ लोगों ने और कभी कभी अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय ने भी एक और भ्रष्टाचार निरोध अभियान के रूप में भ्रांति जगाई है – ''भ्रष्टाचार की भ्रष्टाचार से ही लड़ाई'' । कुल मिलाकर ऐसी पहलों का असर न के बराबर ही प्रतीत होता है और ये केवल दबाव में आकर प्रायः राजनीतिक रूप से समुचित औचित्य को दिखाते हुए मूलभूत और सर्वांगी शासन सुधारों की आवश्यकता के स्थान पर भ्रष्टाचार के बारे में कुछ करने की प्रतिक्रिया बन कर रह जाते हैं ।'' [53]

एकाधिकार + विवेक – जवाबदेही = भ्रष्टाचार[54]

6.1 सर्वांगी सुधारों का महत्व

6.1.1 भ्रष्टाचार का मुकाबला करने के लिए दंडात्मक और रोकथाम उपायों के अनुकूलतम मिले जुले रूप की आवश्यकता है । दंडात्मक उपाय निवारण का काम करते हैं जबकि रोकथाम के उपाय व्यवस्था में पारदर्शिता लाकर, जवाबदेही बढ़ाकर, विवेक को कम करके, कार्य–पद्धतियों को तर्कसंगत करने आदि से भ्रष्टाचार के अवसर कम कर देते हैं । बेहतर रोकथाम उपाय 'सर्वांगी सुधारों' का काम करते हैं क्योंकि वे प्रणालियों और प्रक्रियाओं में सुधार लाते हैं । इस दिशा में हाल ही के वर्षों में पहल किए गए कुछ कदमों की सूची नीचे दी गई है :

- **रेलवे यात्री आरक्षण (भारतीय रेलवे)** : रेलवे यात्री आरक्षण, जिसमें 'आन–लाइन' आरक्षण और ई–टिकटिंग शामिल हैं, के कंप्युट्रीकरण ने मध्यस्थों को हटा दिया है, आरक्षण कार्यालयों को कम भीड़भाड. वाला कर दिया है और रेलवे आरक्षण प्रक्रिया में पर्याप्त पारदर्शिता ला दी है ।

- **सामान्य प्रवेश परीक्षा (कर्नाटक)** : इससे व्यावसायिक कालेजों में योग्यता–आधारित चयन को समय पर और पारदर्शी तरीके से सुनिश्चित किया जाता है ।

- **अध्यापकों की नियुक्ति की स्कीम (कर्नाटक)** : यह अद्भुत प्रयास अध्यापकों को नियुक्त करने के लिए एक सुस्पष्ट, उद्देश्यपूर्ण और पारदर्शी व्यवस्था प्रदान करता है।

- **पंजीकरण और स्टैंप (महाराष्ट्र)** : इसमें और अधिक पारदर्शी सम्पत्ति मूल्यांकन तालिकाएं, रिकार्डों का कंप्यूट्रीकरण, पंजीकरण प्रलेख को वापस करने के लिए समय सीमा निर्धारित करना, फिंगर प्रिंटिंग और फोटो खींचने के लिए डिजीटल कैमरों का प्रयोग करने के लिए रूपरेखा बनाने की मंशा थी । 'मूल्यांकन तालिकाओं' के समय पर आ जाने से स्टैंप डयूटी के

[53] स्रोत : वित्त और विकास; अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, सितंबर 2005 खंड 42, संख्या 3; http://www.imf.org/pubs/ft/fandd/2005/09/basics.htm
[54] अमेरिकन अर्थशास्त्री राबर्ट क्लिटगार्ड

मनमाने ढंग से निर्धारण करने पर स्पष्ट रूप से रोक लगी है और इससे भ्रष्टाचार को कम करने के अनेक उद्देश्य प्राप्त किए जा सकें हैं, अचल संपत्ति के खरीदारों के साथ उत्पीड़न समाप्त हुआ है और कर संग्रह में वृद्धि हुई है ।

- **युनिट क्षेत्र स्कीम (दिल्ली)** : इसने स्वयं निर्धारण और गणना के नियामक आधार से संबंधित संपत्ति कर और संपत्ति पंजीकरण के भुगतान के लिए एक व्यवस्था प्रदान की है ।

- **ई–पुलिस (पंजाब)** : इसमें शिकायतों के आन–लाईन पंजीकरण और उनका व्यवस्थित रूप से अनुवर्तन सुनिश्चित किया जाना है जिससे शिकायत–कर्त्ताओं को शिकायत के नतीजे का और उनकी शिकायतों पर ऊंचे स्तर के पुलिस अधिकारी किस प्रकार से निपटान करते हैं, इस पर 'वास्तविक समय' की निगरानी रखने के लिए उच्च पुलिस स्तरों का पता चल सके ।

- **आंध्र प्रदेश में ई–गवर्नेंस (ई–सेवा), और केरल (फ्रेंड्स अर्थात् फास्ट, रिलाइएबल, इन्स्टैंट, इफैक्टिव नेटवर्क फार डिट्रब्यूशन आफ सर्विसेस)** : इनके द्वारा सरकार और नागरिकों के बीच लेनदेन को सरलीकृत करते हुए, जिसमें उपयोगिता बिलों के भुगतान अथवा विभिन्न सेवाओं को एक ही प्लेटफार्म पर देने हेतु सूचना तकनीक का प्रयोग करके सुधरी हुई सेवा सुपुर्दगी प्रदान की जाती है । किसानों को अपने उत्पादन बेचने के लिए लाभदायक मध्य प्रदेश में 'ई–चौपाल' की पहल भी उल्लेखनीय है ।

- **आन्ध्र प्रदेश में आरएसडीपी (रूरल सर्विस डेलीवरी प्वाइंट्स) के नाम से ग्रामीण क्विस्क** : यह ई–सेवा की पहुंच इंटरनेट के माध्यम से बिलों के भुगतान, सूचना, प्रपत्र की डाउनलोडिंग आदि की सुविधा दे कर लोक असुविधा को कम करने और कर्मचारियों को और अधिक 'पर्याप्त' लोक कर्तव्यों का पालन करने के लिए राहत देना सुनिश्चित करता है ।

6.1.2 ऐसे 'सर्वोत्तम व्यवहारों' से इस नुक्ते को बल मिलता है कि समस्या निदान के लिए व्यावहारिक दृष्टिकोण, उचित नेत्त्व और आयोजन, प्रभावशाली नतीजे, सेवा की गुणवत्ता को बढ़ाने के लिए और भ्रष्टाचार को कम करने के लिए प्राप्त किए जा सकते हैं । परंतु, भ्रष्टाचार के विद्यमान परिमाण को देखते हुए ये पहलें बहुत ही कम हैं । सरकारी परिचालनों और कार्यक्रमों में जो पारदर्शिता का अभाव दिखाई देता है, वह भ्रष्टाचार पनपने का आधार तैयार करता है । जवाबदेह व्यवस्थाओं में दुर्बलताएं भी भ्रष्टाचार के अवसर बढ़ाती हैं । अधिकारी तंत्र जटिलता और कार्य–पद्धतियां साधारण नागरिक के लिए व्यवस्था का लाभ उठाना मुश्किल कर देती हैं । आवश्यकता इस बात की है कि व्यवस्थाओं और कार्य–पद्धतियों दोनों में बड़े पैमाने पर सुधार किए जाएं ।

6.1.3 सरकार द्वारा की जाने वाली गतिविधियों की श्रेणियां इतनी विशाल हैं कि किसी अर्थपूर्ण सर्वांगी सुधारों के लिए इन कृत्यों में से प्रत्येक का गहराई से अध्ययन करने की आवश्यकता है । तथापि, कुछ सामान्य सिद्धांत सरकार के सभी कामों और सभी स्तरों पर लागू होंगे और इनका विवेचन इस अध्याय में किया जा चुका है ।

6.2 प्रतिस्पर्द्धा को विकसित करना :

6.2.1 भारत में अधिकतर सार्वजनिक सेवाएं सरकार द्वारा एकाधिकारिक वातावरण में प्रदान की जाती है । ऐसी स्थिति अपनी प्रकृत्ति से ही भ्रष्टाचार के लिए 'विभागीय प्रधानता' का लाभ उठाते हुए पदाधिकारी वर्ग की उच्च संभाव्यता के साथ मनमाना ढंग अपनाने और आत्मसंतोष से प्रेरित होती है । अतः भ्रष्टाचार को रोकने के लिए सार्वजनिक सेवाओं की व्यवस्था में प्रतिस्पर्द्धा के घटक का आरंभ कर देना एक बहुत ही लाभदायक हथियार है । इस संबंध में दो सफलतापूर्वक आरंभन का उल्लेख किया जा सकता है : पहला, दूरसंचार क्षेत्र का धीरे धीरे एकाधिकार से मुक्त होनाः दूसरा, मध्य प्रदेश में सरकारी नियंत्रण की मंडियों के बाहर किसानों को प्रत्यक्ष बाजार की सेवाएं प्रदान करने में निजी क्षेत्रों की बढ़ती हुई भूमिका ।

6.2.2 दूरसंचार का मामला प्रतिस्पर्द्धा के आगमन के कारण भ्रष्टाचार को रोकने की सबसे बड़ी सफलता का एक उदाहरण है । हमारा दूरसंचार क्षेत्र कल तक सरकार के हाथों का एक मोहरा बना हुआ था । ऐसा एकाधिकार नियंत्रण भ्रष्टाचार को बढ़ावा देता है । भारतीय तार अधिनियम, 1885 में अनुबंध था कि यह केवल दूरसंचार विभाग ही है जो दूरसंचार के क्षेत्र में नीति निर्माता, सेवा प्रदाता और लाइसेंस दाता के रूप में परिचालन कर सकता था । नीति सुधारों के परिणामस्वरूप प्रतिस्पर्द्धा को प्रारंभ किया गया जिसके कारण निजी पार्टियों को अन्तर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय लम्बी दूरी के क्षेत्रों में और निजी सेलुलर सेवाओं के रूप में काम करने की अनुमति दे दी गई है । नीति निर्माण को इस प्रकार से सेवाओं के प्रावधान से अलग कर दिया गया है । इसका नतीजा यह है कि सेवाओं की लागत में बहुत बड़ी कमी आई है और भ्रष्ट प्रवृत्तियों में बड़ी गिरावट को सर्वजनीय तौर पर माना जा रहा है ।

6.2.3 मध्य प्रदेश के कृषि उपज विपणन अधिनियम, 1972 ने सरकारी तौर पर अभिहित की गई मंडियों के व्यापारियों को ही किसानों की उपज को खरीदने की अनुमति दी है । मंडी समितियों के अधिकारियों और व्यापारियों ने किसानों को उनकी उपज के बदले उचित दामों से कम मूल्य अदा करके उन्हें धोखा देने के लिए एक एकाधिकार अंतर्बधंन बना लिया । इस अधिनियम में बाद में संशोधन किया गया और अब किसानों और व्यापारियों को अपना व्यापारिक लेन देन अभिहित मंडियों में ही करने के लिए लाचार नहीं होना पड़ता। इससे व्यापारियों और अधिकारियों द्वारा आसक्त विनियमित बाजारों में भ्रष्टाचार कम हुआ है ।

6.2.4 स्पष्ट रूप से सेवा क्षेत्रों की बड़ी संख्या में सरकारी एकाधिकार खत्म होने से और दूसरों को प्रतिस्पर्द्धा में भाग लेने देने से भ्रष्टाचार को कम करने में एक बड़ी भूमिका अदा की जा सकती है । अतः काफी सीमा तक एकाधिकार का विघटन और प्रतिस्पर्द्धा का आगमन दोनों एक साथ चलते हैं । तथापि, एक क्षेत्र में विनियमन खत्म हो जाने से कहीं ओर भ्रष्टाचार बढ़ सकता है । यहां तक कि प्रक्रिया को ही नष्ट किया जा सकता है और कभी कभी निजी एजेंसियां जो सेवा सुपुर्दगी में सरकारी एजेंसियों का स्थान लेती हैं, और भी अधिक भ्रष्ट हो सकती हैं । अतः यह आवश्यक है कि ऐसे एकाधिकार को हटा कर प्रतिस्पर्द्धा लाते समय 'विनियमन व्यवस्था' भी की जानी चाहिए जिससे कार्य का निष्पादन विहित मानदंडों के अनुसार सुनिश्चित किया जा सके और लोक हित की रक्षा की जा सके ।

6.2.5 सिफारिशें :

क. प्रत्येक मंत्रालय/विभाग को उन इलाकों का पता लगाने के लिए एक तत्काल प्रयोग करना चाहिए, जहां वर्तमान 'कार्यों के एकाधिकार' को प्रतिस्पर्द्धा के साथ संयमित किया जा सके । इसी प्रकार का प्रयोग राज्य सरकारों और स्थानीय निकायों के स्तर पर किया जा सकता है । इस प्रयोग को एक समय सीमा में जैसे कि एक वर्ष के लिए बांध कर और कार्यों के एकाधिकार को कम करने के लिए एक नक्शा बनाया जाना चाहिए । कार्य–निष्पादन को निर्धारित मानकों के अनुसार सुनिश्चित करने के लिए नियंत्रण की व्यवस्था के साथ साथ प्रतिस्पर्द्धा को भी लाना चाहिए ताकि जन हित के साथ कोई समझौता न किया जा सके ।

ख. कुछ केन्द्रीय प्रायोजित स्कीमों का पुनर्गठन किया जा सकता है ताकि उन राज्यों को प्रोत्साहन दिया जा सके जो सेवा सुपुर्दगी में प्रतिस्पर्द्धा को विकसित करने के लिए कदम उठाते हों ।

ग. उन विषयों पर सभी नई राष्ट्रीय नीतियां, जिनमें जनता के साथ बड़ा समन्वय होता हो, (और ऐसे विषयों पर वर्तमान नीतियों में संशोधन से), स्पष्ट रूप से प्रतिस्पर्द्धा को जन्म देने के मुद्दे को निपटाएगी ।

6.3 लेनदेनों को सरलीकृत करना

6.3.1 भ्रष्टाचार के शुरू होने और उसमें बढ़ोतरी होने के बीच औचक संबंध और कार्य के तौर तरीकों की जटिल प्रकृति को विस्तार से बताने की आवश्यकता नहीं है । आम नागरिक जिसने सरकार को किसी बिल का भुगतान करना हो तो उसे सरकारी कार्यालयों के कई चक्कर लगाते हुए देखा जा सकता है । ऐसे नागरिक को उत्पीड़न से बचने के लिए कर्मचारियों को पैसे देकर अपना काम करवाने की बड़ी संभावना हो जाती है। इसी प्रकार से अधिकारियों का उच्च धर्म–तंत्र काम के तौर तरीकों में न केवल जटिलता लाता है बल्कि जिम्मेदारी का भी हनन करता है । समयबद्ध वृत्तियां जैसे कि काम का ''क्षेत्रीय'' वितरण भी भीड़–भाड़ को जन्म देता है और फलस्वरूप गति धन को अदा करके या दलाल और मध्यस्थों के जरिए ''पंक्तिबद्धता को तोड़कर'' काम शीघ्र करवाने को बल मिलता है । नियम पुस्तिकाओं के माध्यम से कार्य–पद्धतियों का निर्धारण कुछ काम नहीं आया । ऐसे प्रलेखों का उचित तरीके से प्रयोग करके और नियमित रूप से उसका उन्नयन करके प्रशासनिक पद्धतियों के रहस्य खोलने और जवाबदेही का विकास करने का एक बड़ा साधन हो सकता है । सूचना तकनीक और सूचना अधिकार के युग में, ऐसे प्रलेख 'लेनदेनों का सरलीकरण' करने के लिए एक सर्वश्रेष्ठ स्रोत हो सकते हैं जहां तक वे शिक्षित प्रयोगकर्त्ता को स्पष्टता के दरजे का निवर्हन कर पाएंगे ।

6.3.2 भारत में प्रशासन की भ्रांतियों में से एक है प्रत्येक निर्णय निर्माण प्रक्रिया में कई गुना परतों का खुल जाना । विलंबों के अतिरिक्त, इससे भ्रष्टाचार भी होता है । जब कभी भी प्राधिकार का दुरूपयोग देखा जाता है, प्रशासन की एक और परत को इस आशा के साथ जोड़ दिया जाता है कि यह एक जांच का कार्य करेगा। न के स्थान पर प्रायः और अतिरिक्त परत को फिर से विलंब करने और मूल समस्या का समाधान किए बिना

जोड़ दिया जाता है । इसका एक उत्कृष्ट उदाहरण यह है कि जब किसी अचल संपत्ति के लेनदेनों में बड़े पैमाने पर काला धन पाया गया तो एक 'सक्षम प्राधिकारी' का कुछ मूल्य से अधिक सभी बिक्री के लेनदेनों का निपटारा करने के लिए आय कर विभाग में गठन किया गया । इस 'सक्षम प्राधिकारी' को उन संपत्तियों को जब्त करने की शक्ति दी गई थी, जिसका कम मूल्य आंका गया था । कुछ संपत्तियों को जब्त तो किया गया परंतु यह प्रबंध भी कारगर सिद्ध नहीं हुए क्योंकि इससे 'सक्षम प्राधिकारी' से स्वीकृति लेने की प्रक्रिया से बचने के लिए अवमूल्यांकन के लिए एक और प्रोत्साहन की परत का दौर चल पड़ा । परीक्षण के दो दशकों से अधिक समय के बाद अब इस उपबंध को नियमपुस्तक से हटा दिया गया है ।

6.3.3 केवल एक ही खिड़की पर सभी आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाने से या एक ही स्थान पर रूक कर सेवा केन्द्र की सुविधा देना एक ऐसा कदम है जो भ्रष्टाचार को कम कर सकता है क्योंकि इससे कार्य–पद्धति का सरलीकरण हो जाता है और भ्रष्टाचार की परतें भी कम खुलती है । उदाहरण के लिए, कनाडा में, एकल खिड़की पर सभी अनुमोदन केवल दो दिनों के भीतर दे दिए जाते हैं । इससे न केवल एक खिड़की की ही आवश्यकता होती है बल्कि सभी संबंधित कार्यालयों का पूर्णतः स्वतः संचालन भी मिल जाता है । एक और प्रशासनिक तरीका है, जिसे कहते हैं 'सकरात्मक चुप्पी' मंजूरियां, जिसका एक उदाहरण है किसी अनुबंधित अवधि की समाप्ति पर दिए गए आवेदन को प्रशासन की चुप्पी पर मंजूर किया हुआ समझ लेना, जैसे कि भवन निर्माण की मंजूरी पाने के मामले में (फिर भी भवन निरीक्षक द्वारा परेशान किए जाने से बचने के लिए सावधानी की जरूरत है, जो रिश्वत पाने के लिए उप कानून के उल्लंघन की कोई गलती अवश्य ही निकाल सकता है) । एक ही स्थान पर खड़े होकर सेवा केन्द्रों का सबसे अधिक सफल उदाहरणों में एक है आंध्र प्रदेश की ई–सेवा का माडल । ई–सेवा के अन्तर्गत एक ही छत के नीचे कुछ 13 राज्य और स्थानीय सरकारी संगठन, तीन केन्द्रीय सरकारी संगठन और नौ निजी क्षेत्र के संगठन आते हैं । ई–सेवा के अंतर्गत जो सेवाएं दी जाती हैं उनमें सार्वजनिक सेवा बिलों के भुगतान, जन्म और मृत्यु के प्रमाण पत्र प्रदान करना, संपत्ति कर के भुगतान, रेल और बस आरक्षण, निजी मोबाईल दूरभाष बिल भुगतान, पासपोर्ट के लिए आवेदन पत्रों की रसीदें और शेयरों के हस्तांतरण भी शामिल हैं । भारतीय प्रशासनिक स्टाफ कालेज द्वारा किए गए उपभोक्ता सर्वेक्षण में यह दर्शाया गया है कि ई–सेवा द्वारा अपेक्षित लाभ दिए जा रहे हैं और भ्रष्टाचार पर्याप्त रूप से कम हुआ है ।

6.3.4 अनुमतियों, लाइसेंसों और पंजीकरण से संबंधित अधिकतर कार्य–पद्धतियों को वर्षों पहले अधिकथित किया गया था । ये कार्य–पद्धतियां अत्यंत जटिल हैं और इनमें प्रलेखों की आवश्यकता पड़ती है जिसे एक आम नागरिक पूरे करने में कठिनाई का अनुभव करता है । अतः यह आवश्यक है कि ऐसी सभी कार्य–पद्धतियों की समीक्षा की जाए ताकि अनावयक कार्य–पद्धति संबंधी आवश्यकताओं को दूर किया जा सके ।

6.3.5 सिफारिशें :

क. प्रशासनिक सुधार के केन्द्र बिन्दु में कार्य–प्रणालियों को आसान बनाने की आवश्यकता है । विशिष्ट क्षेत्रीय आवश्यकताओं को छोड़ कर ऐसे सुधारों के मुख्य सिद्धांत होने चाहिएं : 'एक खिड़की' की व्यवस्था को अपनाना, राजतंत्र की कतारों को कम करना, निपटान के लिए समय सीमा निर्धारित करना आदि ।

ख. वर्तमान विभागीय नियम पुस्तकों और कोडों की, विभागाध्यक्ष पर इस उत्तरदायित्व के साथ समीक्षा और उन्हें सरलीकृत किया जाना चाहिए कि वे ऐसे कागजातों को समय समय पर अद्यतन करेंगे और साट प्रतियों को आन–लाइन पर और हार्ड प्रतियों की बिकी के लिए उपलब्ध करेंगे । इन नियम पुस्तकों को बहुत ही संक्षेप में लिखा जाना चाहिए और 'के विवेक पर छोड़ा गया' 'यथासंभव' 'उपयुक्त निर्णय ले लिया जाए' आदि जैसे उप–वाक्यों को लिखने से बचें । इस बात को अनुमतियों, लाइसेंसों आदि के जारी करने के सभी नियमों और विनियमों के लिए अपनाया जाना चाहिए ।

ग. प्रत्येक सरकारी संगठन में कार्य–प्रणालियों के सरलीकरण और उन्हें धारा प्रवाह में लाने के लिए पुरस्कार और मानदेयों की व्यवस्था को आरंभ किया जाना चाहिए।

घ. 'सकारात्मक चुप्पी' के सिद्धांत का सामान्यतः प्रयोग किया जाना चाहिए, यद्यपि यह सिद्धांत सभी मामलों में नहीं अपनाया जा सकता । जहां कहीं भी अनुमतियों/लाइसेंसों आदि को जारी किया जाना हो, उनकी प्रक्रिया के लिए एक समय सीमा होनी चाहिए जिसके पश्चात् अनुमति को प्रदान किया गया समझा जाना चाहिए, यदि यह पहले से न दी गई हो । तथापि, नियमों में यह व्यवस्था होनी चाहिए कि ऐसे किसी प्रत्येक मामले में विलंब किए जाने में जिम्मेदार अधिकारी के विरूद्ध कार्यवाई हो ।

6.4 सूचना तकनीक का प्रयोग किया जाना

6.4.1 सरकार का अपने संघटकों, नागरिकों और व्यवसायियों के साथ संबंधों और इसके अपने भागों के बीच संबंधों को आधुनिक तकनीकों जैसे कि सूचना और संचार तकनीक (आईसीटी) के यंत्रों का प्रयोग करके देखा जा सकता है । डिजिटल क्रांति में शासन में परिवर्तन करने और प्रक्रियाओं और व्यवस्थाओं को पुनः अर्थपूर्ण बनाने की शक्ति है । इसका सबसे बड़ा दिखने वाला प्रभाव सूचना और डाटा तक इसकी पहुंच में, प्रबंध सूचना प्रणालियों का निर्माण करने में और इलैक्ट्रॉनिक सेवा सुपुर्दगी के क्षेत्र में है । ई–गवर्नेंस शासन की प्रणालियों में आईसीटी के प्रयोग में अगला तर्कपूर्ण कदम है ताकि शासन की निर्णय निर्माण प्रक्रिया में नागरिकों, संस्थानों, सिविल सोसाएटी वर्गों और निजी क्षेत्र की व्यापक भागीदारी और गहराई से आलिप्त किया जाना सुनिश्चित किया जा सके । **आयोग का अपनी अनुवर्ती रिपोर्ट में सुधारों के इस क्षेत्र की जांच करने का प्रस्ताव है और इसलिए वह यहां पर भ्रष्टाचार को कम करने के संदर्भ में कुछ मुख्य पहलुओं तक ही सीमित रहेगा ।**

6.4.2 हाल ही की कुछ पहलें स्पष्ट तौर पर यह दिखलाती हैं कि ऐसे अनुप्रयोगों से क्या–क्या प्राप्त किया जा सकता है । मध्य प्रदेश में ज्ञानदूत परियोजना एक ऐसा उदाहरण है । इसमें नीलामी केन्द्रों पर विद्यमान कृषि उपज मूल्यों के बारे में सूचना देना और भूमि अभिलेखों की प्रतियां प्राप्त करने के लिए सरल प्रक्रियाएं प्रदान की जाती हैं । इसमें विविध बाजार केन्द्रों और ग्रामों से निम्न लागत पर इंटरनेट संपर्क प्रतिष्ठापित करना लिप्त है । परियोजना में, व्यापारिक तर्ज पर क्विस्कों के परिचालन के लिए स्थानीय युवक उपक्रमी के रूप में कार्य करता है और प्रयोगकर्त्ता शुल्क लेता है । क्विस्कों में प्रदान की गई सेवाओं में कृषि उपज

नीलामी केन्द्रों की दरें, भूमि अभिलेखों की प्रतियां, आवेदन पत्रों का आन–लाइन पंजीकरण, आन–लाइन लोक शिकायत निवारण, ग्राम नीलामी स्कीम और सामाजिक सुरक्षा पेंशन के लाभार्थियों, ग्राम विकास स्कीमों, विविध प्रकार की सरकारी अनुदानों आदि के बारे में अद्यतन सूचना शामिल हैं । इससे स्थानीय समुदायों को सशक्त करने का असर पड़ा है । कुछ क्विस्कों ने फोटोकापी मशीनें लगा ली हैं । ज्ञानदूत का एक रोचक पहलु यह है कि परियोजना का सारा खर्च पंचायतों और स्थानीय समुदाय द्वारा उठाया गया है । प्रत्येक ग्राम समुदाय द्वारा खर्च की गई औसतन लागत 75000/– रूपए थी । मूल्यांकन बताता है कि कृषि उपज की दरें, भूमि अभिलेख और शिकायत सेवाएं सर्वाधिक लोकप्रिय थीं जो कुल प्रयोग का 95 प्रतिशत थीं और भ्रष्टाचार के अवसर बहुत ही कम हो गए हैं ।

6.4.3 दूसरा उदाहरण, कर्नाटक में भूमि परियोजना है जिसके अंतर्गत राज्य में 6.7 मिलियन किसानों के भू–स्वामित्व के 20 मिलियन अभिलेखों का कंप्युट्रीकरण किया गया था । इससे पहले, किसानों को अधिकारों, किराएदारी और फसलों (आरटीसी) के अभिलेखों की प्रति लेने के लिए ग्राम राजस्व अधिकारी के पास जाना पड़ता था । इन प्रतियों की अनेक जगह जरूरत पड़ती रहती है, जैसेकि ऋणों के लिए आवेदन पत्र और इसके लिए प्रायः रिश्वत देनी पड़ती थी । आज 15/– रूपए का शुल्क देकर उद्धरण की मुद्रित प्रति 177 कार्यालयों में कंप्युट्रीकृत भूमि अभिलेख क्विस्क (भूमि केन्द्र) से आन–लाइन ली जा सकती है । जब स्वामित्व में कोई परिवर्तन हो जाता है तो भूमि केन्द्र पर जाकर किसान भूमि रिकार्ड के परिवर्तन के लिए आवेदन कर देता है । कंप्युटर स्वतः ही सूचनाएं इकट्ठी कर देता है और फील्ड पर तैनात राजस्व निरीक्षक 30 दिनों के बाद इस परिवर्तन को, यदि कोई आपत्ति प्राप्त नहीं होती है तो अनुमोदित कर देता है । क्विस्कों की संख्या को सार्वजनिक–निजी सहभागिता के माध्यम से बढ़ाने की योजनाएं चल रही हैं । 2002 में आयोजित किए गए स्वतंत्र मूल्यांकन से सुपुर्दगी में कुशलता पर व्यापक प्रभाव का पता चला और भ्रष्टाचार में कमी आई ।

6.4.4 तथापि, सर्वदा यह सत्य नहीं होता कि सूचना तकनीक से अपने आप ही भ्रष्टाचार में कमी लाने में सहायता मिल जाती है । उदाहरण के लिए, आंध्र प्रदेश के पंजीकरण विभाग के कंप्युटर सहायता प्रशासन कार्यक्रम (कार्ड) योजना ग्रामीण उप–पंजीकार कार्यालयों[55] में भ्रष्टाचार को रोकने में विफल रही, कंप्युट्रीकृत और गैर–कंप्युट्रीकृत उप पंजीकार कार्यालयों के बीच भ्रष्टाचार स्तरों में कोई अंतर नहीं आया । यदि उपर्युक्त पथदर्शी तथ्यों और इसी प्रकार के आरंभनों को मुख्य धारा में ला दिया जाता है तो प्राद्यौगिकी को 'प्राप्त' करने और 'रूपांतर' करने लिए विद्यमान प्रशासनिक ढांचों के रूपांतर के रूप में काफी बड़ी तैयारी किए जाने की आवश्यकता है । प्राद्यौगिकी इन्पुट को प्रदान करने वाले और लोक सेवाओं के प्रबंधक को ऐसी प्राद्यौगिकी के अनुप्रयोग को समझने की आवश्यकता है जिसमें अपेक्षित परिणामों को प्राप्त करने के लिए उनकी सीमाएं भी शामिल हैं । इंटरनेट के विकास ने डाटा और सूचना को लंबी दूरी से किसी भी लागत के बिना अंतरित करने के एक और आयाम को जोड़ दिया है । यह सूचना तकनीक के संग्रहण, पुनः प्राप्ति, प्रक्रिया और पारेषण की शक्ति है, यदि उचित रूप से काम में लाया जाए तो यह सरकारी प्रक्रियाओं को और अधिक पारदर्शी और उद्देश्यपूर्ण बना सकती है और भ्रष्टाचार के क्षेत्र को भी कम कर सकती है । परंतु, सूचना तकनीक का इस्तेमाल करने से पहले यह आवश्यक है कि विद्यमान कार्य–पद्धतियों को उचित रूप से पुनर्गठित कर लिया जाए और कंप्युटर के अनुकूल कर लिया जाए ।

[55] स्रोतः रमेश रामानाथन और सुरेश बाल कृष्णन की पब्लिक अफेयर सैंटर, जून 2000, पृ0 13 में प्रकाशित ''स्टेट आफ दी आर्ट एज आर्ट आफ दी स्टेट, इवैल्युएटिंग ई–गवर्ननेंस इनिशिएटिंग थ्रू सिटीजन फीड बैक''

6.4.5 ई–गवर्नेंस के आगमन से अनेकानेक सफलताएं मिली हैं । परंतु सबसे बडी चुनौती उसकी मौलिकता की और उसके खर्चीला होने की है । ई–गवर्नेंस के देश व्यापी प्रभाव के बहुत ही कम उदाहरण मिले हैं (रेलवे आरक्षण व्यवस्था उनमें से एक है) अच्छे आधारित संरचना के अभाव और कर्मचारियों की अपर्याप्त क्षमता ई–गवर्नेंस के प्रचार में मुख्य बाधा सिद्ध हुई है । विभागीय अधिकारियों को संगत प्रक्रियाओं से परिचित कराने और उनकी क्षमताओं की ओर बहुत अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। आन–दी जॉब प्रशिक्षण देने के अलावा, ऐसी रणनीतियों के आयोजना और कार्यान्वयन में आलिप्त विभागीय अधिकारियों को संगठनों में, जिनमें कुछ निजी क्षेत्र भी शामिल हैं, भेजा जाना चाहिए जहां ये पहले से ही मुख्य धारा में हों ।

6.4.6 राष्ट्रीय सूचना केन्द्र (एनआईसी) ने ई–गवर्नेंस को आसान बनाने में एक लाभदायक भूमिका अदा की है । आयोग यह महसूस करता है कि राष्ट्रीय सूचना केन्द्र अपने कार्मिकों में निपुणता निर्माण और अधिकार क्षेत्र की विशेषज्ञता लाने के लिए ठोस कदम उठाए ताकि विशिष्ट संगठनात्मक आवश्यकताओं को प्राद्यौगिकी प्रदाताओं द्वारा पूरी तरह से समझा जा सके । सूचना प्राद्यौगिकी मंत्रालय को स्वयं ही देश में कंप्युट्रीकरण के लिए नए क्षेत्रों का पता लगाना चाहिए ।

6.4.7 सिफारिशें :

क. सरकार के प्रत्येक मंत्रालय/विभाग/संगठन को शासन में सुधार लाने के लिए सूचना प्रौद्योगिकी के प्रयोग के लिए एक योजना बनानी चाहिए । किसी भी सरकारी प्रक्रिया में सूचना प्रौद्योगिकी का प्रयोग वर्तमान कार्यप्रणालियों को पूरी तरह से पुनः अभियंत्रिकृत करने के बाद ही किया जाना चाहिए ।

ख. सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय को कुछ सरकारी प्रक्रियाओं का पता लगा कर फिर उन्हें राष्ट्रीय पैमाने पर कंप्यूट्रीकृत करने की परियोजना को हाथ में लेने की आवश्यकता है ।

ग. कंप्यूट्रीकरण को सफल बनाने के लिए विभागीय अधिकारियों की कंप्यूटर के संबंध में जानकारी को बढ़ाने की आवश्यकता होती है । इसी प्रकार, राष्ट्रीय सूचना केन्द्र को भी विभाग विशिष्ट गतिविधियों में प्रशिक्षित होने की आवश्यकता होती है, ताकि वे एक दूसरे के विचारों को समझ सकें और यह भी सुनिश्चित कर सकें कि प्रौद्योगिकी को प्रदान करने वाले प्रत्येक विभाग की रचना को समझ सकें ।

6.5 पारदर्शिता को बढ़ावा देना

6.5.1 लोक प्रशासन में पारदर्शिता शब्द का प्रयोग खुलापन और जवाबदेही के अर्थ में प्रयोग किया जाता है । एक संगठन को पारदर्शी माना जाता है जब इसके निर्णय निर्माण और काम करने का ढंग जनता के लिए, मीडिया की छानबीन के लिए और सार्वजनिक चर्चा के लिए खुला हो । प्रशासन की एक पारदर्शी व्यवस्था सरकार के निर्णय निर्माण में जनता द्वारा सहभागी होने में सहायता करती है और इस प्रकार उसका निचले स्तर तक योगदान और प्रजातांत्रिक कार्य हो जाता है ।

6.5.2 भारत ने सूचना अधिकार अधिनियम 2005 के अधिनियमन के साथ प्रशासन में पारदर्शिता की ओर एक मुख्य कदम उठाया । आयोग ने 'सूचना का अधिकार : उत्तम शासन के लिए मास्टर कुंजी' शीर्षक से अपनी पहली रिपोर्ट में 'सूचना की स्वतंत्रता' के सभी पहलुओं की जांच की है और बृहत् सिफारिशें की हैं ।

6.6 सत्यनिष्ठा के लिए करार

6.6.1 'सत्यनिष्ठा के लिए समझौता' एक ऐसी व्यवस्था है जो पारदर्शिता बढ़ाने और जनता के साथ अनुबंध में विश्वास पैदा करने में सहायता प्रदान कर सकती है । इन शब्दों का प्रयोग सामान और सेवाओं की वसूली में लिप्त सार्वजनिक एजेंसियों और सार्वजनिक संविदा के लिए बोली लगाने वाले के बीच में इस बात का करार करने में किया जाता है कि बोली देने वालों ने विचाराधीन संविदा को प्राप्त करने में किसी गैर कानूनी पारितोषिक का भुगतान नहीं किया है और न ही वह यह भुगतान करेगा । बोली का प्रबंध करने वाली सार्वजनिक एजेंसी अपनी ओर से वसूली की प्रक्रिया में एक–समान व्यवहार करने और निष्पक्षता का पालन करने को सुनिश्चित करने के लिए वचन देती है । ऐसे करारों का एक महत्वपूर्ण लक्षण यह है कि उनमें स्वतंत्र, बाहरी पर्यवेक्षकों द्वारा निगरानी और छानबीन प्रायः आलिप्त रहती है । ऐसे करारों से सुधरी हुई पारदर्शिता और लोक विश्वास पर्याप्त रूप में उसी प्रकार से अपना योगदान देते हैं जिस प्रकार से सरकार और सार्वजनिक क्षेत्र के संगठनों में मुख्य सौदे सम्पन्न किए जाते हैं । अनेक राष्ट्रीय विधि प्रणालियां अब ऐसे करारों को काफी प्रश्रय दे रही हैं । (स्रोत : ट्रांसपेरेंसी इंटरनेशनल इंडिया की वेबसाइट)

6.6.2 ओएनजीसी ऐसा पहला सार्वजनिक क्षेत्र उद्यम है जिसने ट्रांसपेरेंसी इंटरनेशनल इंडिया और सीवीसी के साथ 17 अप्रैल 2006 को एक समझौते पर हस्ताक्षर किए हैं । परिशोधित रक्षा वसूली कार्यविधि नियम पुस्तिका 2006 में 300 करोड़ रूपए से अधिक की सभी रक्षा संविदाओं और वसूलियों में ''सत्यनिष्ठा करार'' को अपनाने के लिए एक उपबंध रखा गया है (स्रोत : रक्षा मंत्रालय, भारत सरकार, http://mod.nic.in की वेबसाइट पर दी गई रक्षा वसूली कार्यविधि नियम पुस्तिका 2006)

6.6.3 आयोग को पता चला है कि देश में सरकारी संगठनों ने अभी तक इस स्वस्थ वृत्ति को अपनाने में कोई ज्यादा रूचि नहीं दिखाई है । ऐसा न करने का कारण भी हमारे कानूनी ढांचे में ऐसे करारों के स्थान के बारे में अनिश्चितता बताया गया है । आयोग यह महसूस करता है कि इस व्यवस्था को प्रोत्साहित किया जाए और जितने भी क्षेत्रों में संभव हो सके, वहां पर सरकारी लेनदेनों में इस व्यवस्था को एकीकृत किया जाए।

6.6.4 सिफारिश :

क. आयोग 'सत्यनिष्ठा समझौते' की व्यवस्था को प्रोत्साहन देने की सिफारिश करता है। वित्त मंत्रालय को विधि और कार्मिक मंत्रालयों के प्रतिनिधियों के साथ एक कार्य दल का गठन करना चाहिए जो ऐसे समझौतों के लिए अपेक्षित व्यवहारों के प्रचार का पता लगा कर ऐसे समझौते करने के लिए एक नयाचार का प्रावधान करे । विशेष रूप से यह कार्यदल यह सिफारिश कर सकता है कि क्या ऐसे समझौतों को लागू करने के लिए वर्तमान कानून के ढांचे जैसे कि भारतीय संविदा अधिनियम और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम में कोई संशोधन करने की जरूरत है ।

6.7 विवेकशीलता को कम करना

6.7.1 जिस व्यवस्था में विवेकशीलता का आधिक्य हो वहां पर भ्रष्टाचार के अवसर सरकारी तंत्र के हाथों में अधिक हो जाते हैं, विशेषकर निचले स्तरों पर । विवेकशीलता को घटा कर और व्यवस्था में अधिकतम पारदर्शिता लाकर और किए गए कृत्यों के लिए कड़ी जवाबदेही को बनाकर ऐसे अवसरों को न्यूनतम किया जा सकता है । सबसे अधिक सफल भ्रष्टाचार निरोध के सुधार वे हैं जो ऐसे विवेकशीलता के लाभों को कम कर देते हैं जो लोक अधिकारियों द्वारा नियंत्रित किए जाते हों । सुधारी गई पारदर्शिता का एक रोचक उदाहरण कर्नाटक में अध्यापकों के हस्तांतरण को प्रभावित करने के लिए लागू की गई व्यवस्था है । पुरानी व्यवस्था में, यह प्रथा थी कि हर वर्ष कुछ 15000 स्कूली अध्यापक विविध प्राधिकारियों को लिखित आवेदन देकर अपनी पसंद के स्थान पर हस्तांतरण के लिए अपने अनुरोध भेजा करते थे जिसमें भिन्न–भिन्न स्तरों पर कार्रवाई की पहल की आवश्यकता होती थी । प्रायः निर्णय लेने की प्रक्रिया पारदर्शी नहीं होती थी और भ्रष्टाचार की दोषी थी । परिवर्तित व्यवस्था के अंतर्गत आवेदकों को हस्तांतरण के लिए अनुरोध के कारण देने होते हैं और इन आवेदनों को केन्द्रीय रूप से प्राथमिकता दी जाती है । कंप्युटर द्वारा तैयार की गई सूची जिसमें हस्तांतरण चाहने वाले लोगों के नाम उनके हैसियत के साथ शामिल होते हैं, को विभाग के सूचना पटल पर प्रकाशित कर दिया जाता है और यदि कोई आपत्तियां हों तो उनका निमंत्रण किया जाता है । यह सूचना मिली है कि इस स्कीम से भ्रष्टाचार कम करने में काफी योगदान मिला है ।

6.7.2 ऐसी बहुत बड़ी संख्या में सरकारी गतिविधियां हैं, जहां विवेक को बिल्कुल समाप्त किया जा सकता है । ऐसी सभी गतिविधियों को सूचना प्राद्यौगिकी की सहायता से स्वचालित कर दिया जाता है । 'जन्म और मृत्यु' का पंजीकरण और अध्यापकों की योग्यता परीक्षाओं में प्राप्त किए गए अंकों पर आधारित भर्ती इसके उदाहरण हैं । जहां विवेक को समाप्त करना संभव नहीं होता है वहां विवेक को न्यूनतम करने के लिए शक्तियों के प्रयोग को सुपरिभाषित मार्गदर्शी सिद्धांतों द्वारा सीमित होना चाहिए । विवेक के प्रयोग पर प्रभावी निरीक्षण और संतुलन रखे जाने चाहिए ।

6.7.3 सिफारिशें :

क. ऐसे सभी सरकारी कार्यालयों को, अपनी गतिविधियों की समीक्षा करनी चाहिए जिनकी जनता के साथ बातचीत होती हो तथा उन गतिविधियों की एक सूची बना लेनी चाहिए जिनमें विवेक का प्रयोग संलिप्त रहता हो । जहां ऐसा करना संभव न हो सके, वहां पर सुपरिभाषित नियमों से विवेक को, बंधित किए जाने का प्रयत्न होना चाहिए । मंत्रालयों और विभागों को कहा जाना चाहिए कि वे इस काम को लेकर अपने संगठनों/कार्यालयों के साथ समन्वय करें और इसको एक वर्ष के अन्दर पूर्ण करें ।

ख. महत्वपूर्ण मामलों पर निर्णय लेने का काम किसी व्यक्ति विशेष को सौंपने के बजाय एक समिति को दिया जाना चाहिए । तथापि, इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि इस प्रवृत्ति का प्रयोग तब नहीं किया जाना चाहिए जब तुरंत ही निर्णय लिए जाने की आवश्यकता हो ।

ग. राज्य सरकारों को भी इसी प्रकार का रूख अपनाना चाहिए, विशेष रूप से स्थानीय निकायों और प्राधिकरणों में, जिनमें अधिकतम 'लोक संपर्क' होते हों ।

6.8 पर्यवेक्षण

6.8.1 अधिकतर सरकारें और उनकी एजेंसियों के पास धमार्धिकारी तंत्र का ढांचा होता है । ऐसे ढांचे में, प्रत्येक पदाधिकारी के महत्वपूर्ण कामों में से एक यह होता है कि वह ठीक अपने नीचे के अधीनस्थ अधिकारी के कार्य पर निरीक्षण रखे, जो उसे रिपोर्ट करता हो/करती हो । जैसाकि पिछले पैरों में कहा गया है, लोक पदाधिकारियों में निहित विवेकशीलता के प्रति प्रभावकारी निरीक्षण और संतुलन होना चाहिए । निरीक्षण एक ऐसी ही व्यवस्था प्रदान करता है । केवल यह तथ्य कि भ्रष्ट अधिकारियों के विरूद्ध विभाग द्वारा कई मामलों की कार्रवाई की पहल नहीं की जाती, इस बात का द्योतक है कि निरीक्षण के कार्य पर उतना ध्यान नहीं दिया जा रहा जितना कि दिया जाना चाहिए ।

6.8.2 किसी कार्यालय या संगठन में भ्रष्टाचार पर नियंत्रण करना कार्यालय के अध्यक्ष की प्राथमिक जिम्मेदारी होनी चाहिए । फिर, सभी सरकारी कार्यालयों/एजेंसियों में अधिकारी वर्गीय ढांचा होता है, प्रत्येक स्तर पर विद्यमान अपने नीचे के स्तर के लिए भ्रष्टाचार की गुंजाइश को न्यूनतम करने के लिए रोकथाम के कदम लिए जाने के लिए उत्तरदायी होना चाहिए । प्रायः यह देखा गया है कि भ्रष्टाचार को रोकने के लिए स्वतंत्र एजेंसियों के गठन से विभागीय अधिकारी यह महसूस करने लगे हैं कि उनके कार्यालयों/अधीनस्थ कर्मचारियों में भ्रष्टाचार रोकने की जिम्मेदारी उनकी नहीं है अथवा वे इस समस्या को नजरअंदाज कर देते हैं । इस बात पर जोर देने की आवश्यकता है कि बाहरी भ्रष्टाचार निरोध व्यवस्था अपने सीमित संसाधनों और पहुंच से किसी भी प्रकार से अग्रणीय पदों पर बैठे अधिकारियों द्वारा किए गए भ्रष्टाचार निरोध उपायों की जगह नहीं ले सकती । ऐसे उपाय इस प्रकार के हो सकते हैं : अंधाधुंध निरीक्षण, आकस्मिक निरीक्षण, नागरिकों/ग्राहकों से गोपनीय सूचना लेना, ऐसी कार्य–पद्धति अपनाना जिससे रिश्वत लेना कठिन हो जाए, फर्जी लालच दे कर पकड़ने वाले ग्राहकों का प्रयोग करना आदि । अतः यह सुझाव दिया जाता है कि रिपोर्ट लिखने वाले अधिकारियों को चाहिए कि वे अपने अधीन अधिकारियों के कार्य निष्पादन का आकलन करते समय उनके द्वारा भ्रष्टाचार को रोकने के लिए किए गए प्रयासों पर स्पष्ट रूप से टिप्पणी करें । वार्षिक निष्पादन रिपोर्ट के स्वतः मूल्यांकन भाग में एक स्तंभ होना चाहिए जिसमें प्रत्येक निरीक्षण अधिकारी को उन उपायों के बारे में लिखना चाहिए जो उस अधीनस्थ अधिकारी ने अपने कार्यालय में और अपने अधीनस्थ कर्मचारियों के बीच भ्रष्टाचार को रोकने के लिए उठाए हों और ऐसे उपायों का क्या परिणाम हुआ । रिपोर्ट लिखने वाला अधिकारी फिर इस स्वतः मूल्यांकन पर अपनी टिप्पणी देगा ।

6.8.3 यह देखा गया है कि अधिकारियों की गोपनीय रिपोर्टों को रिपोर्ट लिखने वाले अधिकारी हमेशा सावधानी से और मेहनत से नहीं लिखते । रिपोर्ट लिखने वाले अधिकारी किसी लोक सेवक की सत्यनिष्ठा पर किसी टिप्पणी को न लिखकर 'सुरक्षित' रहना चाहते हैं चाहे उस अधिकारी के ध्यान में कुछ अनैतिक बातें की क्यों न आई हों । ऐसा मुख्यतः इसलिए होता है क्योंकि जिस प्रकार से वे अपने अधीनस्थों का आकलन करते हैं, उससे रिपोर्ट लिखने वाले अधिकारी के लिए बहुत कम ही जवाबदेही रह जाती है । 'कुछ भी विपरीत देखने में नहीं आया' जैसी तटस्थ प्रविष्टियां अति सामान्य होती हैं । तथापि, भ्रष्टाचार को मिटाने के लिए

निरीक्षण को और अधिक सक्रिय बनाने की आवश्यकता है । यह सुनिश्चित करने के लिए रिपोर्ट लिखने वाले अधिकारी अपने अधीनस्थ कर्मचारियों की सत्यनिष्ठा के बारे में अपना मूल्यांकन शुद्धता से रिकार्ड करें, यह अनिवार्य कर दिया जाना चाहिए कि यदि रिपोर्ट लिखने वाला अधिकारी अपने किसी अधीनस्थ अधिकारी की मूल्यांकन रिपोर्ट में 'साफ छवि' दे देता है और ऐसे अधिकारी पर भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अंतर्गत किसी अपराध का आरोप लगता है और वह भ्रष्ट कृत्य पूर्णतः या अंशतः रिपोर्ट लिखे जाने वाले वर्ष के दौरान किया जाता है तो रिपोर्ट लिखने वाले अधिकारी को यह स्पष्टीकरण देना होगा कि उस अधिकारी के बारे में ''सत्यनिष्ठा प्रमाण–पत्र'' क्यों दिया गया था ।

6.8.4 निरीक्षण अधिकारी द्वारा आकस्मिक निरीक्षण करना लोक कार्यालयों में गलत काम करने वाले को पकड़ने के लिए एक और हथियार है । ऐसे निरीक्षण को उन कार्यालयों में अधिक सख्ती से किया जाना चाहिए जिनका जनता के साथ सीधा संपर्क हो, जांच केन्द्र, टोल टैक्स संग्रह बिंदु, पार्किंग स्थल, प्रदूषण जांच स्वचालित गाड़ियां, भार और माप तथा मीटर जांच केन्द्र, खुली खदानें, खानें, कार्य प्रगति पर, वेतन और लेखा कार्यालय, संकट के दौरान राहत वितरण केन्द्र आदि हों । निष्पादित किए जा रहे कामों का स्थल पर ही निरीक्षण और लाभार्थियों की वास्तविकता का सत्यापन, ये ऐसे आकस्मिक निरीक्षण का एक और रूप है । आकस्मिक जांच का काम स्थापना अनुभागों और रोकड़ शाखाओं तक भी बढ़ाया जा सकता है, विशेष तौर पर कर विभागों में प्राप्त हुई नकदी के तुरंत लेखांकन को सत्यापित करने के लिए, चैकों और ड्राफ्टों का सरकारी खातों में जमा करना, वेतन बिलों को तैयार करने में परिशुद्धता, सरकारी कर्मचारियों के वेतनों में से वसूल की गई रकमों को सरकारी खाते में जमा कराना आदि ताकि निधियों के दुर्विनियोजन का पता लगाया जा सके । जनता के साथ अपना सरकारी कार्य सीधे करने वाले अधिकारियों के पास व्यक्तिगत रूप से रोकड़ होने के आकस्मिक सत्यापन से कार्यालय में रहते हुए रिश्वत लेने को हतोत्साहित करने में हितकर है । यह एक ऐसा उपाय है जो सभी कार्यालयों में किया जाना चाहिए, जिसमें वरिष्ठ अधिकारियों के लिए यह अनिवार्य कर दिया जाए कि वे समय समय पर इस काम को करते रहें ।

6.8.5 विभिन्न क्षेत्र विभागों, स्थानीय निकायों और पैरास्टेटल्स द्वारा लेखन–सामग्री, कंप्युटर सहायक सामग्री और कार्यालय यंत्र, उपभोक्ता सामग्री और विभागीय विशिष्ट सामग्री जैसेकि रोशनी और सफाई की आवश्यकताएं, दवाएं और औषधियां, अस्पताल की आवश्यकताएं, अस्पताल की वस्त्र आवश्यकताएं, वर्दी की सेवाएं, शिक्षा संस्थानों और होस्टल की पुस्तकें और अन्य शैक्षिक सहायक वस्तुएं और निर्माण सामग्रियों के लिए व्यापक रूप से खरीदी गई वस्तुओं के लिए अदा किए गए मूल्य से संबंधित सूचना के लिए समीक्षाओं/जांचों को आंतरिक रूप से आयोजित किया जाना चाहिए । इन सत्यापनों को किसी एक कार्यालय में किसी समय के एक बिंदु पर खरीदी गई वस्तुओं के मूल्य की तुलना केवल बाजार मूल्यों के साथ ही करने तक सीमित नहीं रखना चाहिए बल्कि इसका विस्तार एक या दो वर्षों की अवधि के लिए विद्यमान बाजार मूल्य के साथ किया जाना चाहिए । ऐसी तुलना उसी विभाग के विभिन्न कार्यालयों द्वारा उसी अवधि के दौरान अदा किए गए मूल्य और उसी उत्पादन के लिए विभिन्न विभागों द्वारा अदा किए गए मूल्यों के साथ की जानी चाहिए । इसी प्रकार का तुलनात्मक विश्लेषण उन विभागों में लाभदायक हो सकता है जिन्होंने नागरिकों से समय समय पर विवरणियां प्राप्त करनी होती हैं जैसेकि विविध कर विभाग ।

6.8.6 भ्रष्टाचार तब होता है जब कोई लोक सेवक किसी गैर कानूनी काम को करता है ताकि किसी नागरिक को लाभ हो सके । किसी कर निर्धारती को समर्थन देने के लिए एक गैर कानूनी निर्धारण आदेश पारित करना इसका एक उदाहरण है । ''गति से पैसा'' के मामले में भ्रष्टाचार सही काम करते हुए भी हो सकता है । भ्रष्टाचार किसी लोक सेवक की ओर से जान–बूझ कर उपेक्षा बरतने पर भी हो सकता है । चैक–पोस्ट पर किसी गैर कानूनी प्रेषण को जाने की मंजूरी दे देना इसका एक उदाहरण है । भ्रष्टाचार को रोकने के लिए, भ्रष्टाचार के घटना–क्रम के सावधानी से विश्लेषण करने के बाद ही किसी संस्थानागत प्रणाली का गठन करना भ्रष्टाचार से प्रभावशाली ढंग से निपटने का पहला आवश्यक कदम है । यह सभी निरीक्षण अधिकारियों की प्राथमिक जिम्मेदारी होनी चाहिए ।

6.8.7 सिफारिशें :

क. अधिकारियों की निगरानी संबंधी भूमिका पर पुनः जोर दिए जाने की आवश्यकता है। यह पुनः उल्लेख कर देना आवश्यक होगा कि पर्यवेक्षी अधिकारी अपने संबद्ध कर्मचारियों के बीच भ्रष्टाचार को दूर करने के लिए मुख्य तौर पर जिम्मेदार हैं और इस प्रयोजन के लिए उन्हें सभी रोकथाम के उपाय करने चाहिए ।

ख. प्रत्येक पर्यवेक्षी अधिकारी को अपने संगठन/कार्यालय में गतिविधियों का विश्लेषण सावधानी से करना चाहिए, ऐसी गतिविधियों का पता लगाना चाहिए जिनसे भ्रष्टाचार फैलता हो और फिर रोकथाम और सतर्कता के उचित उपाय करने चाहिएं । सरकार अथवा जनता को अधिकारियों के कृताकृत कामों के द्वारा हुए नुकसान के सभी प्रमुख मामलों की जांच की जानी चाहिए और एक निश्चित समयबद्ध अवधि में त्रुटिपूर्ण अधिकारी पर उत्तरदायित्व नियत किया जाना चाहिए ।

ग. प्रत्येक अधिकारी की वार्षिक निष्पादन रिपोर्ट में एक स्तंभ होना चाहिए जहां अधिकारी को यह प्रकट करना चाहिए कि उसने अपने कार्यालय और अपने अधीनस्थ लोगों के बीच भ्रष्टाचार पर नियंत्रण करने के लिए क्या क्या उपाय किए । रिपोर्ट अधिकारी को फिर उसपर अपनी विशेष टिप्पणी देनी चाहिए ।

घ. उन पर्यवेक्षी अधिकारियों को अपनी स्थिति स्पष्ट करने के लिए कहा जाना चाहिए कि जो अपने अधीनस्थ भ्रष्ट अधिकारियों को उनकी वार्षिक निष्पादन रिपोर्टों में साफ छवि का प्रमाण पत्र दे देते हैं, यदि उस अधिकारी पर, जिसकी रिपोर्ट लिखी जा रही है, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अंतर्गत अपराध का आरोप है । इसके अतिरिक्त, उनकी रिपोर्टों में यह तथ्य दर्ज किया जाना चाहिए कि उन्होंने अपने अधीनस्थ भ्रष्ट अधिकारियों की सत्यनिष्ठा के बारे में कोई विपरीत टिप्पणी नहीं दी है ।

ड. पर्यवेक्षी अधिकारियों को सुनिश्चित करना चाहिए कि उनके अधीन सभी कार्यालय सूचना अधिकार अधिनियम के अधीन सूचना के ब्यौरे स्वप्रेरणा से दे देने की नीति का अनुसरण करते हैं।

6.9 पहुंच और दायित्व को सुनिश्चित करना

6.9.1 सरकारी विभागों को जनता की पहुंच में होना चाहिए और उनकी आवश्यकताओं और आकांक्षाओं के प्रति उत्तरदायित्व होना चाहिए । इसके साथ ही उन्हें शिकायतों के तुरंत समाधान के लिए भी उत्तरदायी होना चाहिए । इस बात को सुनिश्चित करने के लिए, यह आवश्यक है कि उन्हें प्रत्येक विभाग में उपलब्ध सुविधाओं, रियायतों और अधिकारों को उन्हें प्राप्त करने और उनकी शिकायतों का समाधान किए जाने की कार्य–पद्धति के साथ सार्वजनिक किया जाना चाहिए और उन प्राधिकारियों के ब्यौरे जनता के अधिकार–क्षेत्र में कर दिए जाने चाहिएं जो इन्हें मंजूर करने के लिए सक्षम हैं । सेवा मानकों की परिभाषा करने की आवश्यकता है । प्रत्येक विभाग के लिए यह आवश्यक होना चाहिए कि वह ग्राहकों की समस्याओं को समझने के लिए कदम उठाए, उन मानदंडों का निर्धारण करे जिसे वह विभाग अपनी सेवाओं के प्रावधान में निर्वाह करेगा और उन शर्तों का अनुबंध करे जिनका अनुपालन करने के लिए ग्राहक उन्हें पूरा करेगा । यदि ग्राहक और भी समाधान चाहे तो अपील की जाने की कार्य–पद्धति का भी संकेत किया जाना चाहिए । यह सुनिश्चित किया जाना भी आवश्यक है कि आवेदनों का समय पर निपटारा कर दिया जाए। इसे करने के लिए, आवेदनों की विभिन्न श्रेणियों के निपटारे के लिए समय सीमा निर्धारित की जानी चाहिए। प्रशासनिक सुधार पर रूस्तमजी समिति ने विभिन्न विभागों में नागरिकों द्वारा अपेक्षित 187 सेवाओं का पता लगाया था और उनके निपटान के लिए समय सीमा नियत की थी । समय की रूपरेखा का संकलन किया गया था और सरकार ने 'समय–रूपरेखा' पर एक पुस्तिका निकाली थी जो सभी सरकारी विभागों और जनता के प्रतिनिधियों को वितरित की गई थी । प्रत्येक विभाग में प्रदान करने के लिए समय–रूपरेखा का निर्धारण और इन ब्यौरों को सभी कार्यालयों में और इंटरनेट पर उपलब्ध कराने के लिए ऐसे प्रयास पर पुनः जोर देने और उसे जारी रखने की आवश्यकता है । विभिन्न सेवाओं के लिए नागरिक चार्टर का अभियान इस दिशा में सही कदम होगा।

6.9.2 सरकारी कार्यालयों में पारदर्शिता को सुधारने के लिए विविध छोटे छोटे उपाय, जिनकी संख्या अधिक होने से यहां पर उल्लेख नहीं किया जा सकता, किए जाने संभव हैं । आगे के स्तर पर सहायता मेज, अधिकारियों के नामों को मुख्य रूप में दिखाना, स्वतः कॉल केन्द्र और सेवा सुपुर्दगी की सरलीकृत कंप्युट्रीकृत प्रणालियां, ये सही दिशा में कदम हैं । उन कामों को कुछ हाथों में केन्द्रित करने से बचना चाहिए जिनसे भ्रष्टाचार प्रभावित होता है । इन कामों को, जहां तक संभव हो, गतिविधियों में बांट दिया जाना चाहिए जिसे विभिन्न लोगों द्वारा किया जाता हो । जनता से बातचीत कार्यालय के अध्यक्ष और कुछ अभिहित अधिकारियों तक सीमित रहनी चाहिए । इसे सूचना प्रदान करने के लिए 'एक ही खिड़की के सामने के कार्यालय' द्वारा कार्यान्वित किया जा सकता है ।

6.9.3 सरकारी सेवकों की जनता तक पहुंच इस तरह से अभिकल्पित की जानी चाहिए कि जिससे नागरिकों और सरकारी पदाधिकारियों के बीच नियमित, समयबद्ध और सहानुभूतिपूर्वक बातचीत को सुनिश्चित किया जा सके । इस ओर से, सरकारी विभागों में व्यापारिक प्रक्रिया को फिर से चाकबंद किया जाना चाहिए ताकि बैंक कार्यालय कृत्यों को पृथक किया जा सके और वह समयबद्ध तरीके से ''पहले आओ, पहले जाओ'' के आधार पर विवेकशीलता के लिए न्यूनतम गुंजाइश के साथ पूरा किया जा सके, जबकि सामने वाले कार्यालय नागरिकों को पूरी जनता के सामने सेवाएं प्रदान करने के लिए ''एकल खिड़की'' होगी ।

6.9.4 सिफारिशें :

क. सेवा प्रदानकर्ताओं को अपनी गतिविधियों को केन्द्रीकृत करना चाहिए ताकि सभी सेवाओं को एक ही बिन्दु पर सुपुर्दगी की जा सके । ऐसे सामान्य सेवा बिन्दुओं को किसी एजेंसी को आउटसोर्स भी किया जा सकता है, जिसे नागरिकों के अनुरोध को संबंधित एजेंसियों के साथ उठाए जाने का काम दिया जा सकता है ।

ख. ऐसे कार्यों को, जिनसे भ्रष्टाचार फेलता हो, विभिन्न गतिविधियों में विभाजित किया जाना चाहिए, जिन्हें विभिन्न लोगों को आगे सौंपा जा सकता है ।

ग. सार्वजनिक संपर्क को अभिहित अधिकारियों तक ही सीमित रखा जाना चाहिए । नागरिकों को फाइल निगरानी व्यवस्था के साथ सूचना और सेवाएं प्रदान करने के लिए 'एक ही खिड़की का मुख्य कार्यालय' सभी विभागों में गठित किया जाना चाहिए।

6.10 शिकायतों पर निगरानी रखना

6.10.1 शिकायतों का विकल्प एक नागरिक के हाथों में अपनी परेशानी का निवारण कराने में एक महत्वपूर्ण साधन होता है । अक्सर इन शिकायतों पर बाकायदा ध्यान नहीं दिया जाता । भारत में अधिकतर लोक कार्यालयों में शिकायत निगरानी प्रणाली है परंतु अक्सर यह प्रणाली काम नहीं करती, क्योंकि शिकायत उस अधिकारी तक पहुंच कर समाप्त हो जाती है जिसके विरूद्ध आरोप लगाए जाते हैं । प्रायः एक शिकायत–कर्त्ता को सरकार से उत्तर मिलने में अनेक महीने लग जाते हैं । (वह भी तब जब कोई उत्तर दे दे ।) इस परिप्रेक्ष्य में कुछ देशों में इसका विरोधाभास दिखाई देता है । उदाहरण के लिए, हांगकांग में आईसीएसी किसी शिकायत का उत्तर 48 घंटों के भीतर दे देती है । इसी प्रकार, सिंगापुर में, आयोग के कार्यालय में शिकायत–कर्ता को पांच मिनट के भीतर निपटा दिया जाता है । शिकायत को 24 घंटों के भीतर देख लिया जाता है और कोई जांच या छानबीन दो महीनों के अन्दर पूर्ण कर ली जाती है । हमारे आकार और जटिलता वाले देश में कुछ प्रयास किए जाने आवश्यक हैं । जब तक लोक निकाय शीघ्रता से उत्तर नहीं देंगे, तब तक नागरिक के सभी प्रयत्न विफल ही होंगे । शिकायतों पर निगरानी रखी जानी चाहिए, उनका अनुपालन किया जाना चाहिए और किसी विशिष्ट अवधि के भीतर, जिसका उल्लेख आम तौर पर किया जाना चाहिए और निरीक्षण अधिकारी द्वारा विशेष मामले में दिया जाना चाहिए, उसके परिणाम आने चाहिए । की गई कार्यवाई का नियमित रूप से मूल्यांकन किया जाना चाहिए ।

6.10.2 सिफारिशें :

क. ऐसे सभी कार्यालयों में, जहां बड़ी संख्या में सार्वजनिक संपर्क होता हो, वहां आन–लाइन शिकायत निगरानी व्यवस्था होनी चाहिए । यदि संभव हो, तो शिकायत निगरानी का काम आउटसोर्स किया जाना चाहिए ।

ख. ऐसे कार्यालयों में जहां बड़ी संख्या में सार्वजनिक संपर्क होता हो, वहां शिकायतों की लेखा परीक्षा का बाहरी, सावधिक तंत्र होना चाहिए ।

ग. प्रत्येक शिकायत की जांच करने और यदि कोई त्रुटियां हों तो उनका उत्तरदायित्व नियत करने के अतिरिक्त, शिकायत काक प्रयोग व्यवस्थित त्रुटियों का विश्लेषण करने के लिए भी किया जाना चाहिए ताकि उपचारी उपाय किए जा सकें ।

6.11 सिविल सेवाओं में सुधार करना

6.11.1 सिविल सेवाओं में सुधार आयोग का एक मूल अधिदेश है और ऐसे व्यापक विषय पर सर्वांगी सुधारों की सिफारिशें इस अध्याय में करना समुचित या व्यवहार्य नहीं होगा । बार–बार और मनमाने ढंग से हस्तांतरण किए जाने के मुद्दे पर इस रिपोर्ट के अध्याय–9 में संक्षेप में विचार हो चुका है इसकी संपूर्णता पर विचार बाद की रिपोर्ट में किया जाएगा । तथापि, यह आवश्यक है कि सिविल सेवकों की जवाबदेही की वर्तमान असंतोषजनक स्थिति पर यहां संक्षेप में विचार कर लिया जाए क्योंकि भ्रष्टाचार और कुशासन के लिए प्रायः एक प्रमुख प्रेरणा घटक के रूप में इसका हवाला दिया जाता है ।

6.11.2 प्रशासनिक व्यवस्था का रूप बदला जाना चाहिए ताकि सिविल सेवा के प्रत्येक स्तर पर ढांचाबद्ध और अन्तः कीलित जवाबदेही के साथ कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों का स्पष्ट आबंटन हो सके जिसमें सरकारी सेवक उस ढंग से जवाबदेह ठहराया जा सके, जिस ढंग से वह अपना कर्तव्य निभाता हो । ऐसा आबंटन विशिष्ट और स्पष्टपूर्वक होना चाहिए और इसमें ठोस रूप में नियंत्रण अधिकारियों का निरीक्षण और निगरानी के उत्तरदायित्व शामिल होने चाहिए । ये सब एक ही पंक्ति में इस प्रकार होना चाहिए कि जिससे अन्तःकीलित जवाबदेही सरकारी नौकरों के प्रत्येक स्तर को कुशलतापूर्वक काम करने के लिए विवश कर सके । इनामों और दंडों की एक अन्तःनिर्मित व्यवस्था होनी चाहिए जिसमें एक ऐसा मानदंड अधिकथित होना चाहिए जो इनामों को प्रदान करने और दंड दिए जाने में मनमाने ढंग और व्यक्तिनिष्ठता को दूर कर सके । इस समय मेहनत और कार्यकुशलता से काम करने के लिए कोई प्रोत्साहन नहीं दिया जाता और काम से जी चुराने, भ्रष्टाचार में लिप्त होने या कार्यकुशलता के स्वीकार्य स्तर को प्राप्त करने में विफल होने पर भी कोई विपरीत परिणाम नहीं भुगतने पड़ते । इस समय, कार्य का केवल लेखा–जोखा ही नहीं होता, बल्कि किसी अधिकारी की शक्ति, कमजोरियों और उसकी प्रतिष्ठा का पता लगाने की पुरानी व्यवस्था भी अब अतीत की बात हो गई प्रतीत होती है । यह सही समय है कि अधिकारियों के कार्य निष्पादन का समय समय पर अनुवीक्षण और उद्देश्यपूर्ण मूल्यांकन करने के लिए काम के लेखे–जोखे की एक यंत्रवत् व्यवस्था सिविल सेवा के हर स्तर के लिए आरंभ की जाए । आयोग सिविल सेवा सुधारों पर अपनी रिपोर्ट में इन सभी पहलुओं की विस्तार से जांच करेगा ।

6.12 रोकथाम के लिए जोखिम प्रबंधन

6.12.1 सरकार में भ्रष्टाचार का जोखिम कार्यालय की पद्धति और इसकी गतिविधि और उस पद पर आसीन व्यक्ति के चरित्र पर निर्भर करता है । अधिक विवेकी शक्तियां रखने वाले और अधिक सार्वजनिक बातचीत रखने वाले पद से उस पद की तुलना में भ्रष्टाचार की अधिक संभावना होती है, जिस पद में विवेकी शक्तियां नहीं होतीं । इससे यह संकेत मिलता है कि सरकार में विविध पदों को 'भ्रष्टाचार का उच्च जोखिम', 'भ्रष्टाचार का मध्यम जोखिम' और 'भ्रष्टाचार का निम्न जोखिम' में वर्गीकृत करना संभव हो सकता है । उदाहरण के

लिए, एक कर निर्धारक अधिकारी या सीमा पर चैक–पोस्ट इंसपैक्टर के पद को 'उच्च जोखिम पद' के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है जबकि पूछताछ खिड़की पर अधिकारी के पद को 'निम्न जोखिम का पद' के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है ।

6.12.2 इसी प्रकार से व्यक्तिगत रूप से सरकारी सेवक की अपनी सत्यनिष्ठा के स्तर में अन्तर होता है । इसमें एकदम पैसा ऐंठने वाली श्रेणी से लेकर उस श्रेणी के लोग होते हैं जो बिल्कुल ईमानदार होते हैं । भ्रष्टाचार रोकने के लिए एक जोखिम प्रबंध व्यवस्था को यह सुनिश्चित करते हुए जोाखिम को कम करना चाहिए कि 'निम्न जोखिम वाले कार्मिक' को 'उच्च जोखिम वाले काम' या इसके विपरीत दिए जाएं । यह काम कुशलतापूर्वक तभी हो पाएगा यदि जोखिम प्रोफाइल का काम विभिन्न कार्यों के लिए किया जाए और सरकारी सेवकों के बारे में ही किया जाए । नियोजन नीति को फिर 'निम्न जोखिम वाले कार्मिकों' को 'उच्च जोखिम वाले कामों' में लगा कर सुनिश्चित किया जा सकता है ।

6.12.3 सरकारी अधिकारियों को जोखिम प्रोफाइल इस दृष्टि से चुनौतीपूर्ण है कि वर्तमान कार्य निष्पादन मूल्यांकन व्यवस्था एक रिपोर्ट लिखने वाले अधिकारी को 'विपरीत टिप्पणी को लिखने में हतोत्साहित करती है । फिर, किसी अधिकारी को उसकी रिपोर्ट लिखने वाले अधिकारी द्वारा दी गई विपरीत टिप्पणी देने के आधार पर उसे 'उच्च' जोखिम वाला अधिकारी वर्गीकृत करना ठीक नहीं होगा । (जब तक कि कोई स्पष्ट कदाचार ध्यान में न आया हो ।) अतः यह ठीक होगा यदि अधिकारियों की जोखिम प्रोफाइल का काम 'प्रतिष्ठित व्यक्तियों' की एक समिति द्वारा किया जाए और ऐसा तब किया जाए जब अधिकारी ने सेवा के 10 वर्ष पूरे कर लिए हों और फिर प्रत्येक पांच वर्षों में एक बार । समिति को अपना निर्णय लेने के लिए निम्नलिखित इन्पुटों का प्रयोग करना चाहिए :

क. रिपोर्ट लिखे जाने वाले अधिकारी का निष्पादन मूल्यांकन

ख रिपोर्ट लिखे जाने वाले अधिकारी द्वारा अपने व्यवसाय में भ्रष्टाचार को रोकने के लिए उसके द्वारा किए गए प्रयासों पर केन्द्रित करते हुए स्वतः मूल्यांकन ।

ग. सतर्कता संगठन से रिपोर्ट ।

घ. समिति द्वारा किसी समकक्ष व्यक्ति का मूल्यांकन पत्र के माध्यम से किया जाने वाला गोपनीय मूल्यांकन ।

6.12.4 किसी व्यक्ति की सत्यनिष्ठा का मूल्यांकन करने का एक तरीका है सत्यनिष्ठा परीक्षा । यह एक सामान्य–सी पेपर–पेन्सिल से की जाने वाली परीक्षा है जिसमें प्रत्याशी ने विविध प्रश्नों के उत्तर देने होते हैं। इन परीक्षाओं का प्रयोग कुछ विकसित देशों में संदिग्ध भ्रष्ट लोगों का पता लगाने के लिए किया जाता है। आर्थिक और पर्यावरण गतिविधियों के लिए समन्वयकर्ता, वीयना, आस्ट्रिया के कार्यालय द्वारा ''भ्रष्टाचार का सामना करने के सर्वोत्तम प्रचलन'' के निम्नलिखित उद्धरण में सत्यनिष्ठा परीक्षा और इसकी वैधानिकता और लाभों की तकनीक का संक्षेप में वर्णन किया गया है । *''सत्यनिष्ठा परीक्षा अब भ्रष्ट पुलिस बलों की छवि सुधारने – और उन्हें साफ रखने के लिए विशेष रूप से एक लाभदायक उपकरण बन कर सामने आई है ।*

इसका उद्देश्य अधिकारी की सत्यनिष्ठा की जांच करनी होती है और न कि किसी ईमानदार व्यक्ति को फंसाए जाने की प्रक्रिया से भ्रष्ट व्यक्ति करार दे देना । अधिकतर देशों के आपराधिक संहिताओं में कुप्रेरक नियम होते हैं जो उस पर न्यायिक जांच रखते हैं जो अनुज्ञेय होता है । इन नियमों में क्षेत्राधिकार के अनुसार अन्तर होता है परंतु इन्हें स्पष्ट रूप से ध्यान में रखा जाता है ।''

6.12.5 न्यूयार्क सिटी पलिस डिपार्टमेंट (एनवाईपीडी) ने 1994 से, सत्यनिष्ठा परीक्षा का एक बहुत ही गहन कार्यक्रम आयोजित किया है । विभाग के आंतरिक कार्य ब्यूरो पुलिस भ्रष्टाचार के ज्ञात कृत्यों के आधार पर कृत्रिम घटना सिलि बनाते हैं जैसे कि एनवाईपीडी अधिकारियों की सत्यनिष्ठा की परीक्षा लेने के लिए दवाओं की चोरी के रूप में और/या गली के स्तर के दवा विक्रेता से उठाई गई नकदी । इन परीक्षाओं की सावधानी से निगरानी रखी जाती है और दृश्य और श्रवय इलैक्ट्रॉनिक निगरानी का प्रयोग करते हुए और दृश्य पर या दृश्य के पास असंख्य ''गवाहियों''को लेकर रिकार्ड किया जाता है । एनवाईपीडी इस दृश्य को विस्तृत आसूचना संग्रह और विश्लेषण के आधार पर जितना संभव हो सके और जितना इसे विकसित किया जा सके वास्तविक रूप देने का प्रयास करता है । सभी अधिकारी इस बात से परिचित हैं कि ऐसा कार्यक्रम चलन में है और यह कि समय समय पर स्वयं उनकी परीक्षा ली जा सकती है । तथापि, उन्हें ऐसी परीक्षाओं की बारंबारता के बारे में नहीं बतलाया जाता है । इससे उनमें यह भावना जागती है कि वास्तव में उन्हें जितनी बार होना चाहिए उससे कहीं अधिक अंतराल में वे किए जाते हैं । लंदन मैट्रोपोलीटन पुलिस ने भी इस प्रकार की सत्यनिष्ठा परीक्षा का कार्यक्रम आरंभ किया है जो कि विशेषज्ञ आंतरिक भ्रष्टाचार निरोध यूनिटों द्वारा किया जाता है । पूर्व की रिपोर्टें यह सूचित करती हैं कि लंदन पुलिस को भी वही लाभ प्राप्त हो रहे हैं जो एनवाईपीडी ने प्राप्त किए थे ।

6.12.6 सभी परीक्षाओं की तरह सत्यनिष्ठा परीक्षाएं भी त्रुटिपूर्ण होती हैं और गलत नतीजे दे सकती हैं और इसलिए वे किसी व्यक्ति की सत्यनिष्ठा का मूल्यांकन करने का सुस्पष्ट तरीका नहीं है । अतः ऐसी परीक्षा के आधार पर अनुशासनिक कार्रवाई करना न्यायालय द्वारा छानबीन का आधार नहीं बनेगा परंतु इन्हें अधिकारी की जोखिम की रूपरेखा के काम के एक इन्पुट के रूप में प्रयोग किया जा सकता है ।

6.12.7 सिफारिशें :

क. नौकरियों की जोखिम की रूपरेखा को सभी सरकारी संगठनों में अधिक व्यवस्थित ढंग से और संस्थागत तरीके से तैयार करने की आवश्यकता है ।

ख. अधिकारियों की जोखिम की रूपरेखा, उसके दस वर्ष की सेवा पूरी कर लेने के बाद और तत्पश्चात् प्रत्येक पांच वर्षों में एक बार 'प्रतिष्ठावान व्यक्तियों' की समिति द्वारा की जानी चाहिए । समिति को किसी निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए निम्नलिखित इन्पुटों का प्रयोग करना चाहिए :–

(i) रिपोर्ट अधिकारी का निष्पादन मूल्यांकन

(ii) रिपोर्ट अधिकारी द्वारा दिए गए स्वतः मूल्यांकन, जिसमें उसने अपने व्यवसाय के दौरान भ्रष्टाचारको रोकने के लिए प्रयासों पर ध्यान केन्द्रित किया हो ।

(iii) सतर्कता संगठन की रिपोर्टें

(iv) समिति द्वारा किसी मूल्यांकन प्रपत्र के माध्यम से गोपनीय रूप से किया गया किसी समकक्ष व्यक्ति का मूल्यांकन ।

6.13 लेखा परीक्षा

6.13.1 लेखा परीक्षा प्राधिकारी प्रायः वह सूचना भ्रष्टाचार निरोधी निकायों को नहीं देते जो गंभीर अनियमितताओं के संबंध में उनकी जानकारी में आती हैं, जिसमें आपराधिक कदाचार लिप्त होता है । यह सूचना भ्रष्टाचार निरोधी निकायों को तब पता लगती है जब नियंत्रक और महालेखापरीक्षक की लेखा परीक्षा रिपोर्ट यथास्थिति संसद या राज्य विधान के समक्ष रखी जाती है ।

जब तक कोई गंभीर अनियमितता (जिसका पता लेखा परीक्षा से चलता है और विभाग को एक लेखा परीक्षा प्रश्न के रूप में उत्तर के लिए सूचना दी जाती है और इसे संसद के समक्ष रखने वाली वार्षिक लेखा परीक्षा रिपोर्ट के एक भाग के रूप में सम्मिलित कर लिया जाता है । भ्रष्टाचार निरोधी निकायों की जानकारी में आती है, तब तक काफी समय निकल चुका होता है । ऐसे विलंब हो जाने से न केवल संगठन में अपराधी चौकन्ने हो जाते हैं बल्कि इससे उन्हें काफी समय भी मिल जाता है कि वे अपनी पकड़ को छिपा लेते हैं और महत्वपूर्ण अभिलेखों को और साक्ष्यों को नष्ट करवा देते हैं जिससे जांच एजेंसियों के लिए अपनी जांच को सफलतापूर्वक पूरा करने में अत्यन्त कठिनाई का सामना करना पड़ता है । इस बात को ध्यान में रखते हुए, नियंत्रक और महालेखापरीक्षक और महालेखाकार के साथ स्थायी तौर से प्रबंध किए जाने अपेक्षित हैं कि वे ऐसी घटनाओं की सूचना तुरंत दें ज्योंहि वे लेखा परीक्षा के समक्ष उनका पता चले । इस संबंध में दूसरा नया कदम यह होगा कि अदालती लेखापरीक्षा की प्रणालियों में यंत्रों से संबंधित एजेंसी को उपलब्ध कराया जाए ताकि ऐसे पहलु जो आपराधिक जांच के लिए आवश्यक हों उनका ठीक से ध्यान रखा जा सके । यह हितकर होगा यदि भ्रष्टाचार निरोध निकायों को सरकारी विभागों की ऐसी अदालती लेखापरीक्षा करने के लिए यंत्रबद्ध कर दिया जाए, जहां उनके ध्यान में मुख्य अनियमितताएं आती हों । विचार यह है कि इस कार्यालयों में एक अन्तःगृह निर्मित अदालती दल होना चाहिए । इसी प्रकार की बुद्धिमत्ता की संरचना स्थानीय लेखापरीक्षा विभाग में की जा सकती है । आरंभ करते हुए, इस संबंध में विशेषज्ञता का विकास करते हुए अदालती लेखा परीक्षा प्रशिक्षण कोर्स का आयोजन किया जाना चाहिए । आयोग 'वित्तीय प्रबंध' पर अपनी रिपोर्ट में लेखापरीक्षा व्यवस्थाओं के ब्यौरों की जांच करेगा। लेखापरीक्षा की संपूर्ण प्रक्रिया को वार्षिक रूप से लंबित लेखापरीक्षा टिप्पणियों के प्रकाशन के माध्यम से जनता के समक्ष लाया जाना चाहिए ।

6.13.2 सिफारिशें :

क. यह निर्धारित किया जाना चाहिए कि ज्योंहि लेखापरीक्षा दल द्वारा किसी बड़ी अनियमितता का पता चले या अंदेशा हो तो सरकार द्वारा तुरंत ध्यान दिया जाना चाहिए । इसके लिए एक समुचित व्यवस्था को बना कर रखा जाना चाहिए । यह कार्यालय प्रमुख का उत्तरदायित्व होगा कि वह किसी ऐसी अनियमितता की जांच करके कार्रवाई शुरू करे ।

ख. लेखापरीक्षा दलों को अदालती लेखापरीक्षा में प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए ।

ग. प्रत्येक कार्यालय को लंबित लेखापरीक्षा के प्रश्नों के बारे में वार्षिक लोक विवरण बनाने चाहिए ।

6.14 भ्रष्टाचार पर सकिय सतर्कता

6.14.1 रोकथाम की सतर्कता अन्ततः भ्रष्टाचार की गुंजाइश को हटाने या कम करने का प्रयास करती है । रोकथाम की सतर्कता का वर्तमान दृष्टिकोण 1964 में संथानम समिति की सिफारिशों पर आधारित है । सक्रिय सतर्कता में मुख्य जोर संदिग्ध भ्रष्ट घटकों का पता लगाने पर होता है और फिर उन्हें समाप्त करने के लिए किसी व्यवस्था को निर्धारित करने का होता है या यह सुनिश्चित करने का होता है कि वे संवेदनशील पदों को ग्रहण न कर सकें । इस संबंध में, निम्नलिखित मुख्य स्रोतों का अपनाया जाता है :–

क. *संदिग्ध निष्ठा वाले अधिकारियों की सूची :* यह संगठन/विभागों में रखी जाने वाली उन अधिकारियों/कार्यपालकों की सूची होती है जिसमें उन सभी अधिकारियों के नाम होते हैं जिनके विरूद्ध किसी सतर्कता से संबंधित मामलों पर अनुशासनिक कार्रवाई लंबित होती है या जो किसी सतर्कता से संबंधित मामले पर दंड भुगत रहे हों ।

ख. *शंकायुक्त अधिकारियों की सहमत सूची :* यह सूची सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों/बैंकों के उन अधिकारियों/कार्यपालकों की होती है जिन पर भ्रष्टाचार में लिप्त होने के सुदृढ़ संदेह होते हैं । यह सूची संगठन के मुख्य सतर्कता अधिकारियों और केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा तैयार की जाती है । इन अधिकारियों पर नजर रखी जाती है ।

ग. *अनापेक्षित लोगों की सूची :* केन्द्रीय जांच ब्यूरो बिचौलियों, दलालों आदि की एक सूची तैयार करता है जो संवेदनशील संगठनों से संबंधित होते हैं और 'जानने की आवश्यकता के आधार' पर संबंधित संगठनों में वरिष्ठ अधिकारियों के साथ सूचना का आदान–प्रदान करते हैं ।

घ. *वार्षिक संपत्ति विवरणी :* संदिग्ध भ्रष्ट तत्वों/वृत्तियों का पता लगाने का यह एक और उपकरण है ।

ङ. *सतर्कता स्वीकृति :* सार्वजनिक क्षेत्रों के उद्यमों और सार्वजनिक क्षेत्रों के बैंकों में बोर्ड स्तर की नियुक्तियों के लिए केन्द्रीय सतर्कता आयोग से सतर्कता स्वीकृति ली जाती है । इसके अलावा, भारत सरकार ने किसी अधिकारी की नियुक्ति से पहले सतर्कता स्वीकृति लेने के लिए कार्य–प्रणाली का गठन किया हुआ है ।

6.14.2 उपर्युक्त सूचीबद्ध किए गए उपायों को कुल मिला कर सतर्कता व्यवस्था की पहल पर अपनाया जाता है । आयोग यह महसूस करता है कि ऐसे उपायों की पहल स्वयं विभागों/संगठनों द्वारा भी की जानी चाहिए क्योंकि इन अधिकारियों के बारे में इन्पुट उनके पास उपलब्ध होते हैं और उनके द्वारा निष्पादित किए जा रहे कार्य भी किसी बाहरी संगठन से अधिक उनके पास होते हैं । निम्नलिखित कुछ उपाय विभागों/संगठनों द्वारा किए जा सकते हैं :–

क. लोक सेवकों की संपत्तियां और दायित्वों की छानबीन को समय पर भेजना सुनिश्चित किया जाना चाहिए ।

ख. इन्हें जनता की पहुंच में रखा जाना चाहिए ।

ग. संदिग्ध निष्ठा वाले लोक सेवकों की वार्षिक सूचियां सभी विभागों में भ्रष्टाचार–निरोध एजेंसियों के परामर्श से तैयार की जानी चाहिएं । इस सूची में उन अधिकारियों के नाम होने चाहिएं जो किसी जांच–पड़ताल के दौरान या जांच–पड़ताल के बाद सत्यनिष्ठा में त्रुटियुक्त पाए गए हैं । उदाहरण के लिए :–

i. जो किसी न्यायालय में सत्यनिष्ठा के अभाव या नैतिक रूप से भ्रष्टता के अपराध में आरोपित हों परंतु जिन पर बरखास्तगी, नौकरी से हटाए जाने या अनिवार्य अवकाश–प्राप्ति को छोड़ कर अन्य कोई शास्ति (दंड) अधिरोपित की गई हो ;

ii वे व्यक्ति जिन पर सत्यनिष्ठा में कमी के लिए या सरकार के हित की रक्षा करने में कर्तव्य की पूर्ण अवहेलना के लिए विभागीय तौर पर मुख्य शास्ति (दंड) अधिरोपित की गई हो ;

iii. वे व्यक्ति, जिनके विरूद्ध सत्यनिष्ठा के अभाव के लिए मुख्य कार्यवाहियां या नैतिक भ्रष्टता में लिप्त विचारण का काम चल रहा हो ; और

iv. वे व्यक्ति, जिनका अभियोजन किया गया था पर उन्हें तकनीकी आधारों पर दोषमुक्त करार दे दिया गया हो ।

घ. उन अधिकारियों की वार्षिक रिपोर्टों, अन्य अभिलेखों और सामान्य प्रतिष्ठा के आधार पर अनिवार्य वार्षिक समीक्षा की जानी चाहिए जिन्होंने 50/55 वर्ष की आयु प्राप्त कर ली हो या सेवा के 25 वर्ष पूरे कर लिए हों ताकि संदिग्ध सत्यनिष्ठा वाले अधिकारियों को अनिवार्य रूप से सेवा–निवृत्त किया जा सके । इसके लिए आवश्यक होगा कि वार्षिक निष्पादन रिपोर्टों में सत्यनिष्ठा से संबधित वास्तविक प्रविष्टियों को अनिवार्य रूप से भरा जाए न कि इस पहलु पर अस्पष्ट और मौन रहने की वर्तमान वृत्ति को अपनाया जाए । सत्यनिष्ठा के स्तरों पर आधारित अधिकारियों को ग्रेड दिए जाने की आवश्यकता है ।

ड. उन सरकारी सेवकों को पारितोषिक दिए जाने चाहिएं जो मुख्य अनियमितताओं और कलंकपूर्ण कृत्यों का पता लगा कर भ्रष्ट तत्वों को सामने लाने में अनुकरणीय क्षमता दिखाते हों और ऐसे बचाव के रास्तों से जोड़ते हों जिनसे सार्वजनिक राजकोष की पर्याप्त हानि होती हो । ऐसे अधिकारियों की उत्पीड़न से रक्षा की जानी चाहिए ।

च. भ्रष्ट अधिकारियों का लोगों के समक्ष अपमान किया जाना चाहिए ।

इनमें से कुछ का आयोग की सिविल सेवा सुधारों पर आने वाली अगली रिपोर्ट में विस्तार से विचार किया जाएगा ।

6.14.3 सिफारिश :

क. सक्रिय सतर्कता उपाय करना कार्यालाध्यक्ष की मुख्य रूप से जिम्मेदारी होगी । कुछ संभव उपायों को पैरा 6.14.2 में दर्शाया गया है ।

6.15 आसूचना एकत्र करना

6.15.1 अपने ही कर्मचारियों के बारे में आसूचना एकत्र करना एक ऐसी वृत्ति जो सुरक्षा और जांच एजेंसियों द्वारा अपनाई जाती है । लोक सेवकों के बारे में आसूचना एकत्र करने के अनेक तरीके हो सकते हैं । इनमें संदिग्ध लोक सेवकों पर निगरानी रखना, उनकी जीवन शैली का अध्ययन करना, उनके द्वारा लिए गए निर्णयों का अध्ययन करना, नागरिकों से उनके बारे में शिकायतों, फीडबैक और समकक्ष व्यक्तियों का विश्लेषण करना शामिल हैं । ऐसी सूचना को एकत्र करने में गुप्त कोषों से प्रोत्साहन पैसे का प्रयोग किया जाता है । यद्यपि, ऐसे सभी उपाय हमेशा अपेक्षित या व्यवहार्य नहीं हो सकते, किसी पर्यवेक्षी अधिकारी को अपने अधीनस्थ कर्मचारी की सत्यनिष्ठा को उसके द्वारा देखे जा रहे मामलों, शिकायतों और विभिन्न स्रोतों से फीडबैक के आधार पर मूल्यांकन करना चाहिए । यह इसके बाद अधिकारियों के जोखिम की रूपरेखा के काम के लिए एक महत्वपूर्ण इन्पुट बन सकता है ।

6.15.2 सिफारिशें :

क. पर्यवेक्षी अधिकारियों को अपने अधीनस्थ कर्मचारियों की निष्ठा का उनके द्वारा मामलों, शिकायतों की देखरेख और विभिन्न स्रोतों से फीडबैक के आधार पर मूल्यांकन किया जाना चाहिए । इससे यह अधिकारियों की जोखिम की रूपरेखा के लिए एक महत्वपूर्ण इन्पुट बन सकता है ।

6.16 सतर्कता जाल–तंत्र (नेटवर्क)

6.16.1 विविध प्राधिकारियों के पास लंबित भ्रष्टाचार से संबंधित अनेक अनुशासनिक मामले और आपराधिक मामले हैं । इनके बड़ी संख्या में लंबित रहने का एक कारण यह है कि निरीक्षण अधिकारियों द्वारा इनकी समीक्षा कम संख्या में की जाती है । ऐसे मामलों के राष्ट्रीय आंकड़े गठित करना और उसे नियमित रूप से अद्यतन करना अपेक्षित होगा जिसे आम जनता के क्षेत्राधिकार में होना चाहिए । इससे, ऐसे सभी मामलों का विभिन्न स्तरों पर प्राधिकारियों द्वारा अनुवीक्षण करने के लिए एक उपकरण प्रदान करने के साथ–साथ ऐसे मामलों में तुरंत कार्यवाई के लिए एक आम मन्तव्य भी बना पाएगा । इन राष्ट्रीय आंकड़ों के गठन से प्रारंभिक जांच की सूचना, सभी जांच करने वाली एजेंसियों और सभी अनुशासनिक प्राधिकारियों के साथ नियमित रूप से पूछताछ करने, छानबीन करने, अभियोजन विचारण, दंडों और शास्तियों, संपत्तियों की वसूली और अनुशासनिक और आपराधिक दोनों मामलों को शामिल करते हुए अपील, समीक्षा और

परिवर्धन प्रक्रियाओं को पूरी सरकारी व्यवस्था और उन सभी विभागों और अन्य संगठनों, जो सत्ता के कार्यपालक के अधिकार में आते हों, के साथ संपर्क जोड़ते हुए सूचनाएं उपलब्ध हो सकेंगी । इस जालतंत्र(नेटवर्क) में निर्वाचित सदस्यों और भुगतान पर लोक सेवक, दोनों के मामले, भ्रष्टाचार निरोध अधिनियम के अन्तर्गत मामले और लोक सेवकों द्वारा अन्य सफेद–पोश आर्थिक अपराध, जिनमें सार्वजनिक संपत्ति या संसाधन लिप्त हों, और भारतीय दंड संहिता के अंतर्गत लोकाचार के मामले शामिल होंगे । इसके अतिरिक्त, इंटरनेट में सभी वार्षिक संपत्तियों के ब्यौरे और अन्य संबंधित सूचना जिसमें हितों के संघर्ष लिप्त हों, शामिल होगी । सरकार द्वारा भ्रष्टाचार के कारण काली सूची में डाले गए संदेहास्प्रद निष्ठा वाले अधिकारियों, संदेहात्मक छवि वाले अधिकारी, ठेकेदारों, पूर्तिकारों के बारे में सभी सूचनाओं, दलालों, संपर्क कर्मचारियों आदि से संबंधित सूचना को जाल–तंत्र (नेटवर्क) में डालना लाभदायक सिद्ध होगा । इस सूचना का कुछ भाग आम जनता की पहुंच में होगा, कुछ भाग सभी विभागों की पहुंच में होगा और संपूर्ण सूचना भ्रष्टाचार निकायों की पहुंच में होगी । जाल–तंत्र में ऐसे आंकड़ों का गठन करने में केन्द्रीय सतर्कता आयोग को सबसे आगे रहना चाहिए ।

6.16.2 सिफारिश :

क. एक ऐसा राष्ट्रीय डाटाबेस तैयार किया जाना चाहिए जिसमें सभी स्तरों के सभी भ्रष्टाचार मामलों के ब्यौरे शामिल होने चाहिएं । यह डाटाबेस जनता के अधिकार क्षेत्र में होना चाहिए । डाटाबेस को नियमित रूप से अद्यतन करने के लिए जाने पहचाने प्राधिकारियों को जिम्मेदार ठहराया जाना चाहिए ।

6.17 क्षेत्र विशिष्ट सिफारिशें

इस अध्याय में कुछ क्रास–क्षेत्र सर्वांगी मुद्दों पर विचार किया गया है । आयोग ने कुछ विशिष्ट सैक्टरों की भी परीक्षा की है, जो भ्रष्टाचार से प्रभावित हैं और कुछ व्यवस्थात्मक सुधारों के लिए सुझाव संलग्नक VII(1) से VII(3) में दिए गए हैं ।

7 ईमानदार लोक सेवक की रक्षा करना

7.1 सतर्कता गतिविधि का मुख्य प्रयोजन संगठन में प्रबंधकीय कुशलता और प्रभावकारिता के स्तर को कम करना नहीं होता बल्कि बढ़ाना होता है । जोखिम उठाना सरकारी काम का एक हिस्सा बनना चाहिए । संगठन को हुई किसी हानि के लिए, चाहे वह हानि आर्थिक हो या आर्थिकेतर, सतर्कता जांच की विषय–वस्तु अनिवार्यतः नहीं बन सकती । व्यक्ति की नेकनीयती को जानने के लिए एक संभव परीक्षण यह हो सकता है कि एक आम बुद्धि रखने वाला विहित नियमों, विनियमों और अनुदेशों की परिधि के भीतर काम करते हुए संगठन के व्यापारिक/प्रचालन हितों में विद्यमान हालातों में निर्णय ले सकता था ।

7.2 सरकार से भी अधिक, सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों में निर्णय लेने और सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में दिन प्रतिदिन के व्यापारिक निर्णयों में वास्तविक गलतियां करने की पर्याप्त गुंजाइश रहती है जो निर्णय लेने वाले की नेकनीयती के बारे में संभव प्रश्न उठा देता है । केन्द्रीय सतर्कता आयोग ने ऐसे वास्तविक व्यापारिक निर्णयों की इस संभावना का पता लगाया है जो बिना किसी प्रयोजन के गलत साबित हो जाते हैं । व्यापारिक बैंकों की भूमिका और कृत्यों में व्यापारिक बदलाव को देखते हुए बैंकिंग क्षेत्र से संबंधित शिकायतों/अनुशासनिक मामलों में सतर्कता के कोण की लिप्तता पर निर्णय लेते समय इस पहलु पर उचित ध्यान दिया जा रहा है। इस प्रयोजन के लिए, बैंक में प्राप्त होने वाली शिकायतों की छानबीन करने और निरीक्षणों और लेखा परीक्षा आदि से उठने वाले मामलों में उन लेनदेनों में सतर्कता कोण की लिप्तता या अन्यथा को जानने के लिए प्रत्येक बैंक ने तीन वरिष्ठ अधिकारियों की एक आन्तरिक सलाहकार समिति का गठन किया हुआ है । समिति ऐसे निर्णयों पर पहुंचने के कारणों को अभिलेखबद्ध करके मुख्य सतर्कता अधिकारी को भेज देती है । मुख्य सतर्कता अधिकारी प्रत्येक मामले में निर्णय लेते समय समिति की सलाह पर विचार करता है । ऐसे रिकार्ड मुख्य सतर्कता अधिकारी द्वारा रखे जाते हैं और केन्द्रीय सतर्कता आयोग के किसी अधिकारी, या अधिकारियों के दल को, छानबीन के लिए उपलब्ध करा दिए जाते हैं, जब कभी वह बैंक में सतर्कता की लेखा परीक्षा के लिए आते हैं । सतर्कता कोण में लिप्त समिति के सभी निर्णयों को सर्वसम्मति से लिए जाने की उम्मीद की जाती है । सदस्यों में कोई मतभेद हो जाता है तो बहुमत का निर्णय ही माना जाता है । मुख्य सतर्कता अधिकारी अपनी सिफारिशों को अनुशासनिक प्राधिकारी के पास भेज देता है । अनुशासनिक प्राधिकारी और मुख्य सतर्कता अधिकारी के बीच में कोई मतभेद हो जाता है तो मामले को परामर्श के लिए केन्द्रीय सतर्कता आयोग के पास भेज दिया जाता है । सतर्कता की दृष्टि से लिप्त लेखा परीक्षा और निरीक्षण की जांच/छानबीन की रिपोर्टों को परामर्श के लिए सतर्कता आयोग को भेजा जाना आवश्यक होता है, भले ही बैंक के सक्षम प्राधिकारी ने, यदि लिप्त अधिकारी उस स्तर का हो जिसके लिए सतर्कता आयोग के परामर्श की आवश्यकता हो, मामले को बन्द करने का निर्णय ले लिया हो ।

7.3 एक ईमानदार लोक सेवक की रक्षा करने में व्यवस्था की योग्यता के बारे में वास्तविक आशंकाएं है । सौभाग्यवश, किसी ईमानदार लोक सेवक की निराधार, गैर–नेकनीयती से, विद्वेषपूर्ण और अभिप्रेरित शिकायतों से बचाव को सुनिश्चित करने के लिए कानून और कार्य–पद्धति में पर्याप्त सुरक्षण विद्यमान हैं । 'एक बिंदु निदेश', जो दिल्ली विशेष पुलिस स्थापन अधिनियम में संशोधनों के परिणामस्वरूप अब एक सांविधिक उपबंध है, के अनुसार भारत सरकार में संयुक्त सचिव और ऊपर के स्तर के अधिकारी या केन्द्रीय सार्वजनिक उद्यमों में इसके समतुल्य पद के अधिकारी के विरूद्ध जांच आरंभ करने के लिए संघ सरकार की पूर्व अनुमति की आवश्यकता होती है । भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988 की धारा 19 के तहत और भारतीय दंड संहिता की धारा 197 के अधीन जो अब तक ऐसे अपराधों से संबंधित हों और पदेन आचार का हिस्सा बने के अन्तर्गत किसी लोक सेवक के अभियोजन के लिए सरकार या किसी सक्षम प्राधिकारी की अनुमति की आवश्यकता होती है । सीबीआई के मामले में संबंधित पुलिस अधीक्षक के पूर्व अनुमोदन से ही जांच का काम संगठन के भीतर किया जा सकता है । भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अंतर्गत कोई मामला सीबीआई के विशेष पुलिस स्थापन द्वारा या राज्य की भ्रष्टाचार निवारण एजेंसी द्वारा ही पंजीकृत किया जा सकता है न कि सिविल पुलिस द्वारा । केवल विशेष न्यायाधीश ही भ्रष्टाचार के अपराध का संज्ञेय लेने के लिए सक्षम है । कार्य–पद्धति से संबंधित अनुदेशों के हवाले से केन्द्रीय सतर्कता आयोग द्वारा अभियोजन की स्वीकृति अपने क्षेत्र–अधिकार के भीतर आने वाले लोक सेवकों के संबंध में सरकार को दी जानी होती है । राज्यों में, जहां सतर्कता आयोग अस्तित्व में है, वहां पर सतर्कता आयोग ही है जो जांच करके अभियोजन के लिए स्वीकृति की सिफारिश करता है ।

7.4 'एकक बिंदु निदेश' और अभियोजन के लिए पूर्व अनुमति की आवश्यकता, दोनों को जांच एजेंसी के सांविधिक अधिकार में बाधक के रूप में एक गंभीर प्रश्न और न्यायिक प्रक्रिया में अनावश्यक हस्तक्षेप कहा गया है । उच्चतम न्यायालय ने, जैन हवाला मामले में संघ सरकार के तत्कालीन कार्यकारी निदेश को रद्द कर दिया था जिसमें संयुक्त सचिव और ऊपर के अधिकारियों के लिप्त होने के मामलों में जांच आरंभ करने से पहले सरकार की पूर्व अनुमति की आवश्यकता चाहिए थी । इसे रद्द करने के लिए ही संघ सरकार दिल्ली विशेष पुलिस स्थापन अधिनियम में इस सांविधिक आवश्यकता को लाई । इसे शामिल करने का आधार यह था कि ईमानदार लोक सेवकों और राष्ट्रीयकृत बैंकों समेत सार्वजनिक क्षेत्रों के अधिकारियों, जो क्रमशः नीति के परामर्श में और व्यापारिक निर्णयों में लगे हुए हैं, का सुरक्षण किया जा सके । जहां एक ओर इसमें कोई संदेह नहीं है कि ईमानदार लोक सेवकों की रक्षा किए जाने की आवश्यकता है, वहीं दूसरी ओर नागरिकों को यह आश्वासन देना भी उतना ही आवश्यक है कि जांच के लिए पूर्व अनुमति और अभियोजन के लिए अनुमति देने के लिए ऐसे उपबंधों का सरकार के हाथों में भ्रष्ट लोक सेवकों का हित करने और उनकी रक्षा करने में एक हथियार के रूप में इस्तेमाल न किया जा सके । केन्द्रीय सतर्कता आयोग ने अपने क्षेत्र अधिकार के भीतर सार्वजनिक क्षेत्रों के अधिकारी वर्ग के मामलों की छानबीन के लिए एक तंत्र का गठन किया है । अब प्रश्न है ईमानदार लोक सेवक की उसे जांच की प्रक्रियाओं में फंसा कर उत्पीड़न करने और उसके सम्मान को हानि पहुंचाने तथा असंख्य वेदनाओं को देने से बचाना ।

7.5 अधिकारियों और प्रबंधकों में यह आम धारणा है कि भ्रष्टाचार निवारण एजेंसियां प्रशासनिक और व्यापारिक जोखिमों का पूर्णतः अहसास नहीं करतीं और वे उन उद्देश्यों का गलत निर्वचन निकालती हैं जिससे

निर्णय दे दिए जाते हैं या किसी व्यापारिक लेन देन में हानि हो जाती है । ऐसी धारणा बिना किसी आधार के तो नहीं है । अतः जांच एजेंसियों के लिए यह आवश्यक है कि वे अपनी कार्यवाइयों को इस प्रकार से करें कि जिससे ईमानदार अधिकारियों की रक्षा हो सके । यह भ्रष्टाचार निवारण एजेंसियों में लगे हुए कार्मिकों के नैतिक मानदंडों और व्यावसायिक सक्षमता पर निर्भर करता है । उन बेईमान अधीनस्थ कर्मचारियों द्वारा आरोप लगाए जा सकते हैं, जिनके विरूद्ध अनुशासनिक कार्यवाहियां आरंभ की जा चुकी हों या वह भ्रष्ट अधीनस्थ कर्मचारियों के बेईमान इरादों के बीच में आ कर खड़ा हो गया हो । इससे भी अधिक अहितकर बात बाहरी ''व्यथित'' लोगों की भूमिका हो सकती है जो अपने गलत काम करवाने में असफल हो गए हों।

7.6 जांच एजेंसियों द्वारा प्रायः यह मान लिया जाता है कि (1) गलत निर्णय के कारण भ्रष्टाचार हुआ है और (2) यह बहुत आसान होता है कि हर किसी को निर्णय लिए जाने की शृंखला में लिप्त कर लिया जाए और 'षडयंत्र' का आरोप लगा दिया जाए, बजाए इसके कि उन व्यक्तियों को ढूंढ लिए जाने के लिए कष्ट उठाया जाए, जो वास्तव में लिप्त हुए हों । इस बात को प्रायः नजर अंदाज कर दिया जाता है कि भ्रष्टाचार तब भी हो सकता है जब निर्णय उचित लिए गए हों और यह भ्रष्टाचार व्यवस्था के अन्दर या बाहर किन्हीं विशिष्ट बिन्दुओं पर भी हो सकता है । जांच की इस प्रकार की पकड़ रखने वाले दृष्टिकोण के कारण दोषसिद्धि की दर निराशाजनक रूप से कम ही रही है, ईमानदार पदाधिकारियों का मनोबल गिरा है और बेईमान प्रायः सही–सलामत निकल जाते हैं ।

7.7 महत्वपूर्ण प्रश्न है कानून की नजरों में समानता और ईमानदार लोक सेवक की रक्षा के बीच संतुलन को सुनिश्चित करना, जिसने अपनी प्रतिष्ठा का सुरक्षण करना होता है । ऐसे संतुलन को किसी निष्पक्ष एजेंसी द्वारा भ्रष्टाचार में लिप्त लोक सेवकों की जांच के लिए पूर्व अनुमति और अभियोजन की अनुमति के मामलों की छानबीन करके ही प्राप्त किया जा सकता है । आयोग ने पहले ही सिफारिश की है कि केन्द्रीय सतर्कता आयोग ऐसी अनुमति देने के लिए सशक्त कर दिया जाना चाहिए ।

7.8 जांच एजेंसियों के विरूद्ध भ्रष्टाचार के आरोपों की जांच करने के लिए प्रस्तावित लोक पाल (राष्ट्रीय लोकायुक्त) को सूचना देने के लिए विशेष जांच एकक की आवश्यकता है । इस एकक को बहु–विषयक होना चाहिए और इसे जांच एजेंसी के विरूद्ध उत्पीड़न के आरोपों के मामलों की जांच करनी चाहिए । इसी प्रकार के एकक राज्यों में राज्य लोकायुक्तों के अधीन विद्यमान होने चाहिए ।

7.9 सिफारिशें :

क. **किसी लोक सेवक के विरूद्ध शिकायतों के द्वारा या जांच एजेंसी द्वारा अपनाए गए स्रोतों से प्राप्त भष्टाचार के प्रत्येक आरोप को कोई छानबीन करने से पहले प्रारंभिक अवस्था में गहराई से परीक्षा कर लेनी चाहिए । ऐसे प्रत्येक आरोप का यह मूल्यांकन करने के लिए विश्लेषण किया जाना चाहिए कि क्या आरोप विशिष्ट है, क्या यह विश्वसनीय है और क्या इसे सत्यापित किया जा सकता है । जब कोई आरोप इन मानदंडों की आवश्यकताओं को पूरा करता है, तभी उसे सत्यापन के लिए सिफारिश की जानी चाहिए और सत्यापन का काम सक्षम प्राधिकारी का अनुमोदन प्राप्त करने**

के बाद ही किया जाना चाहिए । सत्यापनों/छानबीनों को अधिकृत किए जाने के लिए सक्षम प्राधिकारियों के स्तरों का नियतन संदिग्ध अधिकारियों के विभिन्न स्तरों के लिए भ्रष्टाचार निरोध एजेंसियों में किया जाना चाहिए ।

ख. भ्रष्टाचार के आरोपों से संबंधित मामलों में शिकायतों/स्रोत से प्राप्त जानकारी के आधार पर खुले रूप में जांच पड़ताल सीधे ही नहीं की जानी चाहिए । जब सत्यापन/गुप्त छानबीनों को अनुमोदित कर दिया जाए यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि ऐसे सत्यापनों की गोपनीयता बरकरार रहे और सत्यापन ऐसे ढंग से किया जाए जिससे कि न तो संदिग्ध अधिकारी और न कोई और व्यक्ति को इसके बारे में जानकारी हो पाए । ऐसी गोपनीयता न केवल निर्दोषी और ईमानदार अधिकारियों की प्रतिष्ठा बचाने के लिए आवश्यक है, बल्कि खुली आपराधिक जांच की प्रभावकारिता को सुनिश्चित करने के लिए भी जरूरी है । ऐसे सत्यापन/छानबीन की गोपनीयता यह सुनिश्चित करेगी कि यदि आरोप को गलत पाया जाता है तो मामले को बिना किसी को पता लगे समाप्त किया जा सकता है । छानबीन/सत्यापन अधिकारियों को भ्रष्टाचार के आरोपों के साथ निपटने में लिप्त संवेदनशीलताओं का अनुभव करने की स्थिति में होना चाहिए ।

ग. सत्यापन/छानबीनों के नतीजों के मूल्यांकन को सक्षम और न्यायपूर्ण तरीके से किया जाना चाहिए । ऐसे तथ्यों के समर्थन में एकत्र किए गए तथ्य और साक्ष्य के त्रुटिपूर्ण मूल्यांकन के कारण अत्यधिक अन्याय हो सकता है । इस काम की देखरेख कर रहे लोगों को केवल सक्षम और निष्ठावान ही नहीं होना चाहिए बल्कि निष्पक्षपूर्ण और न्याय चेतना से सराबोर भी होना चाहिए ।

घ. जब कभी कोई छानबीन अधिकारी तकनीकी/जटिल मामलों को समझने के लिए किसी विशेषज्ञ से परामर्श करना चाहता हो तो वह ऐसा कर सकता है परंतु प्रत्येक अवस्था में उचित विवेक का प्रयोग करना अनिवार्य आवश्यकता होनी चाहिए ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि निष्ठावान और निर्दोष व्यक्ति के साथ कोई अन्याय न हो सके ।

ड. प्रशिक्षण द्वारा और छानबीन/जांच के दौरान अपेक्षित विशेषज्ञों को संबद्ध करके भ्रष्टाचार निवारण एजेंसियों में शक्ति निर्माण को सुनिश्चित किया जाना चाहिए । उन लोक सेवकों के बीच, जिनसे व्यापारिक/वित्तीय निर्णय लिए जाने की अपेक्षा होती है, उचित प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से शक्ति निर्माण किया जाना चाहिए।

च. जांच एजेंसियों में पर्यवेक्षी अधिकारियों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि केवल उन्हीं लोक सेवकों का अभियोजन किया जा सके जिनके विरूद्ध सुदृढ़ साक्ष्य हों।

छ. अधिकारियों की प्रोफाइलिंग होनी चाहिए । प्रत्येक सरकारी सेवक की क्षमताएं, व्यावसायिक सक्षमता, सत्यनिष्ठा और प्रतिष्ठा के ब्यौरे बनाकर उन्हें अभिलेखबद्ध किया जाना चाहिए । किसी सरकारी सेवक के विरूद्ध कार्यवाही करने से पहले संबंधित सरकारी सेवक की प्रोफाइल बनाई जानी चाहिए ।

ज. जांच करने वाली एजेंसियों के विरूद्ध भ्रष्टाचार के आरोपों की जांच करने के लिए एक विशेष जांच एकक प्रस्तावित लोकपाल (राष्ट्रीय लोकायुक्त)/राज्य लेकायुक्त/सतर्कता आयोग से संबद्ध होना चाहिए । यह एकक बहु विषयक होना चाहिए और इस एकक को जांच एजेंसी के विरूद्ध उत्पीड़न के आरोपों के मामलों की भी जांच करनी चाहिए । ऐसी ही ईकाईयां राज्यों में भी गठित की जानी चाहिए।

8

अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग

8.1 भ्रष्टाचार राष्ट्रीय सीमाओं पर अधिकता से पाया जाता है । अतः राष्ट्रीय भ्रष्टाचार निरोध उपायों को रिश्वत देने और लेने वाले विदेशियों, पारस्परिक वैधानिक सहायता, साक्ष्य को इकत्र करना या अंतरित कर देना, गैर कानूनी ढंग से पैसा बना लेना, तकनीकी सहायता और सूचना के विनिमय द्वारा, प्रत्यर्पण, ट्रेसिंग, फ्रीजिंग, विदेश भेजे गए गैर कानूनी कोषों को पकड़ कर जब्त कर लेना, सम्पत्ति की वसूली और देश–प्रत्यावर्तन आदि जैसे क्षेत्रों में भ्रष्टाचार के खिलाफ पारस्परिक सहायता और सहकारिता कानून प्रवर्तन आरंभन से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सुदृढ़ीकरण की आवश्यकता है । विशेष रूप से, भ्रष्टाचार पर नियंत्रण करने के लिए भ्रष्टाचार के गैर कानूनी पैसे की रोकथाम से संबंधित उपबंधों और किसी बड़े भ्रष्टाचार के पैसे को समुद्र तटीय इलाकों से अपतटीय वित्तीय केन्द्रों पर ले जाने से रोकने के लिए सुरक्षा उपाय करना ।

8.2 दिसंबर 1996 में महासभा द्वारा अपनाई गई अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारिक लेनदेनों में भ्रष्टाचार और रिश्वत के विरूद्ध संयुक्त राष्ट्र घोषणा एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर है । इसमें सार्वजनिक और निजी दोनों क्षेत्रों का समावेश है । यह घोषणा प्रत्येक देश के संविधान, मूलभूत वैधानिक सिद्धांतों, कानूनों और कार्य–पद्धतियों की शर्तों को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय, क्षेत्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तरों पर संस्थानों द्वारा की जाने वाली कार्रवाइयों के साथ राजनीतिक वचनबद्धता की प्रकृति की है । इस घोषणा में अन्तर्राष्ट्रीय लेनदेनों में रिश्वतबाजी को रोकने के लिए कानूनों, विदेशी लोक अधिकारियों को दी जाने वाली रिश्वत के अपराधीकरण के लिए कानूनों और यह सुनिश्चित करने के लिए कानूनों की मांग की गई है कि रिश्वतों को कर योग्य न किया जा सके । इसमें जांच, अभियोजन और प्रत्यर्पण से संबंधित दंडित किए जाने वाले उपायों में अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की मांग भी की गई है । संयुक्त राष्ट्र का एक और आरंभन दिसंबर 1996 में अपनाई गई सदस्य देशों के भ्रष्टाचार के खिलाफ मार्गदर्शी सिद्धांतों के एक सेट के माध्यम से लोक अधिकारियों के लिए एक अन्तर्राष्ट्रीय आचार संहिता है जिसे लोक सेवकों को निष्ठा, ईमानदारी, कुशलता, प्रभावशीलता, स्वच्छता, निष्पक्षता, हित संघर्ष की रोकथाम, सूचना देने के प्रतिमानक, उपहार और समर्थन स्वीकार करना, निष्पक्षता और लोक विश्वास जगाने के साथ मेल खाती हुई राजनीतिक गतिविधि की गोपनीयता और विनियमों के रखरखाव से संबंधित अपने कर्तव्यों का निष्पादन करते हुए अनुपालन किया जाना चाहिए । इसके अतिरिक्त, संयुक्त राष्ट्र ने एक नीति मार्गदर्शी और एक प्रचालन अस्त्र के रूप में भ्रष्टाचार निरोध नीति और भ्रष्टाचार उपकरण किट पर एक नियम पुस्तिका तैयार की है । संयुक्त राष्ट्र ने अवैध रूप से धन प्राप्त करने और अपराध के धन पर एक मॉडल भी तैयार किया है ।

8.3 अक्तूबर 2003 में संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा भ्रष्टाचार के खिलाफ संयुक्त राष्ट्र कंवेंशन में भ्रष्टाचार के खिलाफ एक प्रभावकारी अन्तर्राष्ट्रीय वैधानिक प्रपत्र की व्यवस्था है जिसमें भारत के हस्ताक्षर हैं, परंतु इसे

अभी भी अभिपुष्ट किया जाना है । यह कन्वेंशन हस्ताक्षरकर्त्ताओं को बाध्य करती है कि वे अपराधियों का प्रत्यर्पण करने के लिए न्यायालय द्वारा प्रयोग के लिए साक्ष्य को इकट्ठा करने और अंतरित करने में पारस्परिक कानूनी सहायता के विशिष्ट रूपों को उपलब्ध कराए और भ्रष्टाचार के धन को पकड़ने और उसे जब्त करने, ट्रेसिंग, फ्रीजिंग, भ्रष्टाचार के धन को पकड़ने और जब्त करने में सहायता के उपाय करें । सम्पत्ति वसूली इस कन्वेंशन का एक मूलभूत सिद्धांत है, यद्यपि अवैध सम्पत्तियों को पकड़ने वाले देशों की आवश्यकताओं का उन देशों के वैधानिक और कार्य–पद्धति की सुरक्षा के साथ समाधान किया जाना होगा जिनकी सहायता ली जा रही है । ड्रग्स और क्राइम का संयुक्त राष्ट्र कार्यालय, अवैध रूप से अंतरित किए गए कोषों के देश–प्रत्यर्पण, ऐसे कोषों को ढूंढ निकालने और उनकी पहचान करने और ऐसे कोषों की मूल देशों को वापसी के लिए अपेक्षित कदम और कार्य–पद्धतियों के क्षेत्र में मुख्य चुनौतियों का पता लगा लेने के लिए विशेषज्ञों की बैठकों का समन्वय करता चला आ रहा है । लूटी हुई सम्पत्तियों को वापस मंगवाने के इच्छुक देशों को प्रायः कानूनी प्रणालियों में भिन्नता के कारण, विकसित देशों के प्रमाण संबंधी साक्ष्य और कार्य–पद्धति आवश्यकताओं को पूरा करने में कठिनाईयों, ऐसे धनों का दूसरी सम्पत्तियों के साथ मिल जाना आदि के कारण वसूली करने में कठिन समस्याओं का सामना करना पड़ता है । विकसित देश भी ऐसे मामलों में किसी निष्कर्ष तक पहुंचने के लिए सफलतापूर्वक जांच करने और अभियोजन करने में वित्तीय संसाधनों और विशेषज्ञों के अभाव के कारण अपने इन प्रयासों में अवरूद्ध हो जाते हैं । इस नाजुक क्षेत्र में तेजी लाने के लिए, अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रभावकारी समन्वय, विशेषतः तकनीकी सहायता, समन्वय और संचार के साथ मिलकर देशीय क्षमता निर्माण आवश्यक होगा ।

8.4 प्रशान्त एशिया का आर्थिक सहयोग और विकास संगठन भ्रष्टाचार निरोध कार्य योजना, जिसपर भारत सरकार ने हस्ताक्षर किए हैं, एक बाध्य समझौता नहीं है परंतु भ्रष्टाचार की रोकथाम के मामले में अन्तर्क्षेत्रीय सहयोग को आगे बढ़ाने के लिए यह एक उदात्त सहमति है ।

8.5 सिंगापुर में अनेक अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रीय एजेंसियों की सहमति के एक संयुक्त वक्तव्य का पहले ही पैरा 1. 14 में उल्लेख किया जा चुका है । उस सहमति की पृष्ठभूमि के रूप में नेताओं ने कपट और भ्रष्टाचार की रोकथाम और उसका सामना करने के लिए एकीकृत ढांचे को संघटक अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों द्वारा स्थापित एक भ्रष्टाचार निरोध कार्य दल तैयार करवाया था । संयुक्त वक्तव्य के अनुसार, हस्ताक्षरकर्ता संस्थान ''इस बात को मानते हैं कि भ्रष्टाचार आर्थिक प्रगति को क्षति पहुंचाता है और गरीबी को कम करने के लिए एक बड़ी बाधा है ।'' भ्रष्टाचार प्रचालनों की कुशलता के एक दिए गए स्तर की लागतों में वृद्धि करके और/या कुशलता कम कर के विकास को प्रभावित करता है । गरीबी के लिए, यदि गरीबी का सामना करने के प्रयोजन से लिए गए कोषों का दुरूपयोग या दुर्विनियोजन होता है तो इसका अत्यन्त ही प्रत्यक्ष विपरीत प्रभाव देखा जा सकता है ।

8.6 एकीकृत ढांचे की निम्नलिखित परिभाषाएं दी गई हैं । ''किसी दूसरी पार्टी के कृत्यों को अनुचित रूप से प्रभावित करने के लिए, किसी भी वस्तु को, जिसका कोई मूल्य हो, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से देना, देने का प्रस्ताव करना, प्राप्त करना या प्राप्त करने की याचना करना'' भ्रष्ट वृत्ति है । ''ऐसा कोई कृत्य या अकृत्य, जिसमें अन्यथा कथन शामिल है, जो किसी वित्तीय या अन्य लाभ के लिए या किसी दायित्व को पूरा होने

से रोकने के लिए किसी पार्टी को जानबूझकर या असावधानीपूर्वक गुमराह करे या गुमराह करने की कोशिश करे,'' कपटपूर्ण वृत्ति है । ''किसी पार्टी के कृत्यों को अनुचित रूप से प्रभावित करने के लिए किसी पार्टी या किसी पार्टी की सम्पत्ति को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कम कर देना या क्षति पहुंचाना या कम कर देने या क्षति पहुंचाने की धमकी देना'' प्रपीड़न की वृत्ति है । ''दो या अधिक पार्टियों के बीच में किसी अनुचित उद्देश्य की प्राप्ति के लिए किए गए प्रबंध जिसमें किसी अन्य पार्टी के कृत्यों को अनुचित रूप से प्रभावित करना शामिल है'' दुस्संधिपूर्ण वृत्ति कहलाती है ।

8.7 जांच के लिए सिद्धांत और मार्गदर्शी सिद्धांत एकीकृत ढांचे के अधिकतर प्रलेखों का निर्माण करते हैं । अपेक्षाकृत अधिक महत्वपूर्ण सिद्धांत और मार्गदर्शी सिद्धांत नीचे दिए गए हैं । प्रत्येक संगठन में जांच–पड़ताल आयोजित करने के लिए एक जिम्मेदार जांच कार्यालय होगा । जांच कार्यालय द्वारा की जाने वाली जांच का उद्देश्य संगठन द्वारा वित्तपोषित परियोजनाओं से संबंधित परंतु जो उन तक सीमित न हो भ्रष्ट या कपटपूर्ण वृत्तियों के आरोपों की और संगठन के कार्मिक सदस्यों की ओर से किए गए कदाचार के आरोपों की जांच करके उनकी सत्यता का निर्धारण करना होता है । जांच कार्यालय अपने कर्त्तव्यों का निष्पादन प्रचालन गतिविधियों के लिए उत्तरदायी या उसमें लिप्त लोगों और उन कार्मिक सदस्यों जो जांच के लिए उत्तरदायी होते हैं, से परे स्वतंत्र रूप से करता है और वह अनुचित प्रभाव और प्रतिशोध के डर से मुक्त होता है । जांच के निष्कर्ष उन तथ्यों और विश्लेषण पर आधारित होंगे जिनमें युक्तियुक्त अनुमान शामिल हों । ऐसे निष्कर्षों पर ही सिफारिशें आधारित होंगी ।

8.8 इस ढांचे में एक महत्वपूर्ण उपबंध शिकायतों के स्रोत के बारे में है । जांच कार्यालय सभी शिकायतों को स्वीकार करेगा, भले ही उनका स्रोत कुछ भी हो, जिनमें गुमनाम या गोपनीय स्रोतों की शिकायतें शामिल हैं। क्योंकि गुमनाम शिकायतें भी स्वीकार की जाती हैं, अतः इन शिकायतों की संख्या में तेजी का उछाल आने की आशा है । सिद्धांत और मार्गदर्शी सिद्धांत केवल सामान्यीकरण तक ही सीमित नहीं होते । इनमें अत्यन्त विशिष्टता और विस्तार के भी उदाहरण होते हैं । उदाहरण के लिए, पैरा 37 में यह कहा गया है कि जांच कार्यालय द्वारा किए जाने वाले साक्षात्कार यथासंभव दो व्यक्तियों द्वारा आयोजित किए जाने चाहिएं, जबकि पैरा 38 में यह उपबंध है कि जिस व्यक्ति का साक्षात्कार लिया जा रहा है उस व्यक्ति की भाषा में साक्षात्कार लिया जाना चाहिए ।

8.9 अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग केवल सरकारों के बीच में ही नहीं किया जाता है बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय निजी क्षेत्र व्यापार और व्यावसायिक निकायों और राष्ट्रीय अध्ययनों के बीच भी होता है ; और सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों में भ्रष्टाचार निवारण के काम में सिविल सोसाएटियों के बीच अन्तर्राष्ट्रीय नेटवर्क और पारस्परिक सहायता भी होती है । निजी और सार्वजनिक क्षेत्र परस्पर साफ–सुथरे या भ्रष्ट संबंध रख सकते हैं । भारतीय निजी क्षेत्र, व्यावसायिक वर्ग और सिविल सोसाएटियों की ओर से प्रारंभन भी ऐसे क्षेत्र हैं, जहां अनुसरण की आवश्यकता है ।

9 राजनीतिक कार्यपालक और स्थायी लोक सेवा में संबंध

9.1 भारतीय संविधान विधायी, कार्यपालिका और न्यायपालिका के बीच शक्तियों को पृथक रूप से प्रदान करता है जिसमें उनमें से प्रत्येक के लिए सुपरिभाषित भूमिकाओं और उत्तरदायित्वों का उल्लेख किया गया है । क्योंकि भारत एक संसदीय लोकतंत्र है, अतः विधायिका और कार्यपालिका के बीच मंत्रिपरिषद् के स्तर पर बातचीत होती है, जो विधायिका के प्रति सामूहिक रूप से जिम्मेदार होती है । संविधान कार्यपालिका को दो भागों में विभाजित करता है । अनुच्छेद 53 और अनुच्छेद 154 के अनुसार, संघ और राज्यों की कार्यपालिका शक्ति राष्ट्रपति या राज्यपाल में अथवा उनके अधीनस्थ अधिकारियों द्वारा निहित होगी । ये अधिकारी स्थायी लोक सेवा का गठन करते हैं और संविधान के भाग 14 द्वारा नियंत्रित किए जाते हैं ।

9.2 कार्यपालिका का दूसरा भाग है 'राजनीतिक' । राष्ट्रपति या राज्यपाल को संविधान के अनुच्छेद 73 और अनुच्छेद 163 के अधीन अपनी मंत्रिपरिषद् की सहायता और सलाह के अनुसार कार्य करना होता है। क्योंकि सलाह साधारण तौर पर बाध्य होती है, ऐसी सलाह अधिकारियों के लिए एक आदेश बन जाती है जिसका उन्हें क्रमशः अनुच्छेद 77 और 166 के अधीन पालन करना चाहिए । राष्ट्रपति और राज्यपाल सरकार में काम–काज चलाने के लिए नियमों का गठन करते हैं । यह काम–काज मंत्रियों के बीच भारत सरकार (कामकाज का बंटवारा) नियमों के अनुसार तथा उस ढंग से किया जाता है जिस प्रकार से पदाधिकारियों से भारत सरकार (कारोबार का संचालन) नियमों के तहत राष्ट्रपति या राज्यपाल को अपने कार्यपालिका कृत्यों का प्रयोग करते हुए सहायता करने की अपेक्षा की जाती है । इसका अर्थ यह है कि यद्यपि ये पदाधिकारी राष्ट्रपति या राज्यपाल से अधीनस्थ होते हैं, वे मंत्रिपरिषद् के आदेशों को इस संबंध में निर्धारित नियमों के अनुसार संचालित करते हैं । भारत सरकार का सचिव सरकारी कारोबार नियमों के अंतर्गत किसी विशेष मामले में प्रस्तावित कार्यवाई के बारे में अपने मंत्री को सलाह देता है और उसे एक टिप्पणी प्रस्तुत करके उसके आदेशों के औचित्य या वैधता के बारे में अवगत कराता है और यह सुझाव देता है कि या तो ऐसे आदेश जारी न किए जाएं और या इन आदेशों में उचित रूप से संशोधन किए जाएं। सचिव और मंत्री के बीच का संबंध अंतर्वर्ती होता है । मंत्री को शासन करने का जनादेश प्राप्त होता है परंतु सचिव को भी मंत्री को सलाह देने का एक समकक्ष संवैधानिक अधिदेश प्राप्त होता है । एक बार सचिव की सलाह पर उचित रूप से विचार कर लिया जाए तो जब तक मंत्री कोई गैर–कानूनी आदेश जारी नहीं करता, तब तक सचिव इसका कार्यान्वयन करने के लिए बाध्य होगा । मंत्री से अपनी ओर से सचिव का समर्थन करने के लिए अपेक्षा की जाती है जो उसके आदेश को कार्यान्वित करता है । यदि एक बार कानून बन जाता है या नियम और विनियम अनुमोदित कर दिए जाते हैं, तो वह सभी पर लागू

होते हैं, चाहे वह राजनीतिक कार्यपालक हो या स्थायी लोक सेवक । एक लोक सेवक को सरकारी आदेशों को बिना किसी पक्षपात के, ईमानदारी के साथ और बिना किसी भय या पक्षपात के जारी करना आवश्यक है । यही संक्षेप में एक कारण है जिससे राजनीतिक कार्यपालक और लोक सेवकों के बीच मतभेद का अंश निकल कर सामने आता है ।

9.3 ऐसा इसलिए होता है क्योंकि जवाबदेही को उल्लिखित करने के लिए कोई व्यवस्था नहीं है, इस प्रकार राजनीतिक कार्यपालक और स्थायी लोक सेवकों के बीच संबंध विवाद–परक हो जाते हैं । यह मंत्री और लोक सेवक के बीच संबंधों की परिभाषा को अधिक उद्देश्यपूर्ण बनाने की गंभीरता को रेखांकित करता है । यह तभी संभव है यदि हम इस संबंध को उत्पाद और परिणाम के ढांचे में रखें । उत्पाद या मुख्य परिणाम वे विशिष्ट सेवाएं होती हैं जो लोक सेवक तैयार करके सुपुर्द करते हैं और इसीलिए लोक सेवक को मुख्य परिणामों की सुपुर्दगी के लिए उत्तरदायी ठहराया जाना चाहिए जो उनके कार्य निष्पादन के आधार बनते हैं । दूसरी ओर परिणाम सामाजिक लक्ष्य प्राप्ति की सफलता होते हैं और राजनीतिक कार्यपालक यह निर्णय लेता है कि कौने से अपेक्षित परिणाम या उत्पादों को शामिल किया जाए ताकि अपेक्षित परिणाम या सामाजिक लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके । ऐसी स्कीम में, राजनीतिक कार्यपालक परिणामों के लिए विधानमंडल और निर्वाचन के प्रति जवाबदेह हो जाता है । राजनीतिक कार्यपालक का आकलन इस आधार पर किया जाता है कि क्या उसने सामाजिक लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सही उत्पाद या आउटपुट चुने हैं । यदि ऐसा कर दिया जाए तो राजनीतिक कार्यपालक और स्थायी लोक सेवक के बीच संबंधों की परिभाषा उद्देश्यपूर्ण की जा सकती है ।

9.4 एक और मुद्दा जो संबंधों में तनाव लाता है वह है मंत्रियों और अन्य राजनीतिक नेताओं, विशेषकर राज्यों में, के आदेश पर लोक सेवकों के मनमाने ढंग से स्थानान्तरण और तैनातियां । आंध्र प्रदेश के अपने अध्ययन में राबर्ट वाडे ने दिखलाया है कि यह प्रक्रिया कैसे काम करती है । वाडे कहते हैं:–

> *''स्थानान्तरण राजनीतिज्ञों का नौकरशाही पर नियंत्रण करने का एक मूलभूत हथियार है । स्थानान्तरण के इस हथियार से राजनीतिज्ञ केवल सीधे धन ही नहीं एकत्र कर लेते बल्कि इससे वे किसी ऐसे व्यक्ति को भी निकाल सकते हैं जो पैसे कमाने की मांग पर खरा न उतरता हो या जिससे वे धन और चुनावी समर्थन पाते हों, उसके हित में अनुरोध को न स्वीकारता हो – विशेष रूप से संविदाकारों को। अतः लेनदेनों को विशेष रूप से इस तरह करना पड़ता है कि जिनमें नौकरशाही कोषों पर नियंत्रण करती है ..... फिर इसका एक भाग वह विधायक या विशेष रूप से मंत्रियों को दे देता है जो बदले में इन कोषों को चुनावी समर्थन लेने के लिए लघुकालिक माल की लालच के रूप में वितरित कर देते हैं । यह देखा जा सकता है कि ये कोष जनता के अधिकार–क्षेत्र से ही आते हैं परंतु वे न तो लोक छानबीन के लिए खुले होते हैं और न ही सार्वजनिक व्यय कार्यक्रमों के लिए उपलब्ध होते हैं ।''*

9.5 वास्तव में, लोक सेवकों के स्थानान्तरण इतने लाभदायक होते हैं कि ये स्थानान्तरण उद्योग के नाम से लोकप्रिय जाने जाते हैं । एक अवकाश प्राप्त लोक सेवक एन.एन. वोहरा ने टिप्पणी की है कि :

''अनेक राज्यों में सरकारी पदाधिकारियों के स्थानान्तरण ने साफ तौर पर एक उद्योग का दर्जा ले लिया है। समय अवधि की नीतियों की पूर्णतः अनदेखी किए हुए या लोक सेवाओं की सुपुर्दगी के छिन्न–भिन्न हो जाने की बिना कोई परवाह किए हुए और विकास कार्यक्रमों के कार्यान्वयन पर विपरीत प्रभाव को अनदेखा करते हुए सभी स्तरों के अधिकारियों का बार बार एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्थानान्तरण कर दिया जाता है।''

मोहसिना बेगम के मामले में इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने दुःख व्यक्त करते हुए कहा कि *'जब कभी एक नई सरकार बनाई जाती है, सरकारी सेवकों को जाति या समुदाय या धन के प्रतिफल के आधार पर स्थानान्तरण किए जाने की एक समुद्री लहर सी आ जाती है जिससे 'नौकरशाही का संपूर्ण नैतिक पतन और इसका जाति और समुदाय के आधार पर विभाजन हो जाता है तथा साथ में भ्रष्टाचार भी फैलता है' और प्रशासन के सभी मानदंडों को तोड़ दिया जाता है ।'*

9.6 जन हित के एच. डी. शौरी ने उच्चतम न्यायालय में एक जन हित याचिका दायर की थी जिसमें लोक सेवकों के स्थानान्तरण की प्रक्रिया को नियंत्रण करने वाले नियम बनाए जाने के निर्देश देने की मांग की गई थी । परंतु उच्चतम न्यायालय ने इस आधार पर ऐसा करने से इंकार कर दिया कि –

हम इस रिट याचिक के स्वीकार करना आवश्यक नहीं समझते क्योंकि ऐसे प्रशासनिक निर्णय लेने के लिए सुस्थापित मार्गदर्शी सिद्धांत हैं और यह स्पष्ट है कि सभी प्रशासनिक निर्णय गैर मनमाने ढंग के नियम की संतुष्टि करेंगे और ईमानदार और निष्पक्ष होंगे । ऐसे व्यक्तिगत मामले, जिनमें निर्णय निर्माण की प्रक्रिया ऐसे किसी कारण से विकृत की जाती है तो उसे हमेशा समुचित ढंग से चुनौती दी जा सकती है ।

9.7 पांचवें वेतन आयोग को 'स्थानान्तरण उद्योग' के बारे में कुछ विपरीत टिप्पणियां करनी पड़ीं थीं । आयोग ने घोषित किया कि :

निश्चित रूप से यह महसूस किया जा रहा है कि स्थानान्तरण के यंत्र का इस देश में सरकारी कर्मचारियों को अपने काबू में रखने के लिए व्यापक दुरूप्योग किया जा रहा है, विशेष रूप से सत्ता के राजनीतिज्ञों द्वारा । स्थानान्तरण का प्रयोग एक सजा के हथियार के रूप में भी किया जा रहा है । अतः यह मांग की जा रही है कि किसी भी पद पर तीन वर्षों की समाप्ति से पूर्व कोई स्थानान्तरण अपील योग्य नहीं किया जाना चाहिए विशेषतः यदि स्थानान्तरण राजनीतिज्ञों के आदेश पर किया जाना हो ।

9.8 पांचवें वेतन आयोग ने विस्तृत, स्पष्ट और पारदर्शी स्थानान्तरण नीति अपनाए जाने के बारे में अनेक सिफारिशें की थीं । पहली, आयोग ने यह सिफारिश की कि प्रत्येक विभाग द्वारा एक बृहत् स्थानान्तरण नीति के भाग के रूप में विस्तृत मार्गदर्शी सिद्धांत बना कर प्रचारित किए जाने चाहिएं ताकि स्थानान्तरण में मनमानेपन को बिल्कुल हटाया जा सके और स्थानान्तरण को जितना संभव हो सके उतना पारदर्शिता के रूप में प्रभावी बनाया जाना चाहिए ।

9.9 दूसरी, पदधारियों को प्रशासनिक निरंतरता और अस्थिरता सुनिश्चित करने के लिए बार बार स्थानान्तरण किए जाने को हतोत्साहित किया जाना चाहिए और अधिकारियों की पद पर बने रहने की न्यूनतम अवधि पूर्व

निर्धारित की जानी चाहिए और सामान्यतः यह तीन से पांच वर्ष होनी चाहिए सिवाय उन मामलों के जहां लम्बी अवधियों को कृत्यों के आधार पर न्यायसंगत ठहराया जाए जैसे कि किसी विशेषज्ञता कौशलों का उपलब्ध होना । संवेदनशील पदों के मामले में जहां निहित स्वार्थों के विकसित होने के अवसर विद्यमान होते हों, वहां अवधि को कम समय के लिए ही निर्धारित किया जाना चाहिए जो दो से तीन वर्ष हो सकता है ।

9.10 तीसरी, निर्धारित अवधि के पूरा होने से पहले कोई भी कालपूर्व स्थानान्तरण ठोस प्रशासनिक कारणों पर आधारित होना चाहिए जिसका उल्लेख स्थानान्तरण आदेश में ही कर दिया जाना चाहिए । लोक सेवक को ऐसे आदेश के विरूद्ध अपील करने का अधिकार दिया जाना चाहिए यदि वह इससे व्यथित महसूस करता है और ऐसी स्थिति से निपटने के लिए संक्षिप्त कार्य–पद्धति का प्रत्येक विभाग में प्रावधान होना चाहिए । आपात्काल में यदि ऐसा आदेश लोक हित में शीघ्रता को देखते हुए जारी किया जाता है और उसका कार्यान्वयन तुरंत होना होता है तो उस स्थानान्तरण आदेश के विरूद्ध प्रतिवेदन का निपटान ऐसे प्राधिकारी द्वारा किया जाना चाहिए जो उस अधिकारी से वरिष्ठ हो और यथासंभव उसी दिन व्यक्तिगत विचारविमर्श के बाद स्थानान्तरण का आदेश दे दे ।

9.11 चौथी, स्थानान्तरण के सोपान की न तो नौकरशाहों द्वारा और न ही सत्ता के राजनीतिज्ञों द्वारा दुरूपयोग की अनुमति दी जानी चाहिए । इसका प्रयोग अनुशासनिक कार्यवाही के लिए अधिकथित कार्य–पद्धति में फंसाकर सजा के साधन के रूप में नही किया जाना चाहिए ।

9.12 यह मामला प्रत्येक लोक सुनवाई में और प्रैस सम्मेलन में कई लोगों द्वारा उठाया गया था । इस मामले पर आयोग द्वारा प्राप्त किए गए अनेक पत्रों/टिप्पणियों में से एक कर्नाटक के लोकायुक्त द्वारा लिखा गया एक विस्तृत पत्र है । वे कहते हैं :–

> *वर्षों से अधिवक्ता, न्यायाधीश और अब लोकायुक्त के रूप में मेरे अनुभव ने मुझे अहसास करा दिया है कि सरकार को अपने अधिकारियों को स्थानान्तरण करने संबंधी नीति पर पुनः विचार करने की गंभीर आवश्यकता है । मुझे राज्य और केन्द्र सरकार के विविध अधिकारियों से मिलने के अनेक अवसर मिले हैं और उनके साथ मेरे विचारविमर्श के दौरान मैंने पाया है कि उनके बीच उनकी संबंधित सरकारों की स्थानान्तरण नीतियों को लेकर काफी असंतोष है । आम शिकायत यह प्रतीत होती है कि कोई एक उचित नीति बिल्कुल भी नहीं है और स्थानान्तरणों को निर्णय लेने वाले प्राधिकारी की मन मर्जी से कर दिया जाता है जो कि अधिकतर राजनीतिज्ञों की गुहारों के दबाव से प्रभावित होते हैं । ऐसे स्थानान्तरणों से स्वयं सरकार की कुशलता पर गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की संभावना होती है । अन्यथा भी, एक स्वतंत्र अभिरूचि रखने और शांत मन से काम करने के लिए एक सरकारी कर्मचारी को किसी पद पर तैनाती के समय वहां से स्थानान्तरण किए जाने से पहले कुछ समय तक काम करते रहने का आश्वासन दिया जाना चाहिए । ऐसे व्यक्तियों की सिफारिशों पर आधारित स्थानान्तरण किए जाने से, जो सरकार के काम में किसी प्रकार से संबंधित नहीं है, जिसमें निर्वाचित प्रतिनिधि भी शामिल होते हैं, निश्चित रूप से भ्रष्टाचार फैलेगा और इससे ऐसे लाभार्थियों के हित में दिए जाने वाले अनुचित पक्षपात को बढ़ावा मिलेगा । इसके साथ साथ, ऐसे स्थानान्तरण जिन्हें यद्यपि प्रशासनिक कारणों से दिखाया जाता है, प्रायः किसी की व्यक्तिगत शिकायत का परिणाम प्रतीत होता है । ऐसे अवसरों से निश्चित रूप से सरकार के कार्य निष्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा ।*

लोगों में यह बात होती रहती है कि कुछ शक्तिशाली तैनातियां कपटपूर्ण विचारों के लिए की जा रही हैं जिनमें भ्रष्टाचार संलिप्त है । इसी पृष्ठभूमि के कारण, मैं आपको लिखते हुए प्रशासनिक सुधार आयोग से अनुरोध करता हूं कि वह केन्द्र सरकार में और राज्य सरकार दोनों के स्तरों पर स्थानान्तरण नीतियों से संबंधित अनुकूल सिफारिशें करे । इस संबंध में मेरा एक सुझाव है, जो प्रारंभ में कठोर प्रतीत हो सकता है, कि स्थानान्तरण को मंत्रालय के बिना किसी प्रकार के हस्तक्षेप के नौकरशाही पर ही छोड़ देना चाहिए । मेरे विचार में, जहां तक राज्य के स्थानान्तरण का संबंध है, स्थानान्तरण एक समिति की सिफारिशों पर किया जाना चाहिए जिसमें राज्य के मुख्य सचिव, अगले वरिष्ठतम सचिव और उस विभाग के सचिव जिसमें स्थानान्तरण को प्रभावी किया जाना है । यदि इस समिति को अपने कार्य–निष्पादन को पारदर्शिता के साथ करने के निदेश दिए जाते हैं तो मंत्रालय के लिए यह खुला रहेगा कि वह समिति की कार्रवाई पर प्राप्त शिकायतों पर निगरानी कर सके और उपचारात्मक कार्रवाई कर सके । इससे निश्चित रूप से लोगों में यह धारणा दूर हो पाएगी कि स्थानान्तरणों को राजनीतिक या संपार्श्विक प्रतिफलों पर किया जाता है । इसी प्रकार से, प्रभागीय और जिलों के स्तरों पर अधिकारियों के स्थानान्तरण के संबंध में भी यह काम एक समिति द्वारा प्रभावी किया जाना चाहिए जिसमें उस प्रभाग या जिले के वरिष्ठतम अधिकारी और उस विभाग के अगले वरिष्ठतम अधिकारी जहां स्थानान्तरण को प्रभावी किया जाना है ।

अंत में और यह बहुत महत्वपूर्ण है कि किसी विशेष पद पर अधिकारियों की तैनाती न्यूनतम तीन वर्षों की अवधि के लिए रखी जानी चाहिए जिसे सामान्यतः कम नहीं किया जाना चाहिए या बढ़ाया नहीं जाना चाहिए सिवाय इसके कि इसके लिए लिखित में सही कारणों को दिया गया हो ।

9.13 संविधान के संचालन की समीक्षा के लिए राष्ट्रीय आयोग ने भी इस पर अपनी टिप्पणी दी है । आयोग ने कहा है कि :

कार्मिक नीति के प्रश्नों का प्रबंध, जिसमें तैनातियां, प्रोन्नतियां, स्थानान्तरण और तीव्र उन्नत तौर–तरीके शामिल हैं, आगे आने वाली प्रोन्नति प्रबंधन नीति और तकनीकों के आधार पर उच्च स्तरीय राजनीतिक प्राधिकारियों को महत्वपूर्ण निर्णयों में मदद करने के लिए स्वायत्तशासी कार्मिक बोर्डों द्वारा किया जाना चाहिए । ऐसे लोक सेवा बोर्डों का गठन सांविधिक उपबंधों के तहत किया जाना चाहिए । उन्हें संघ लोक सेवा आयोग की तरह प्रकार्य करने की अपेक्षा की जानी चाहिए । लोक सेवाओं के प्रबंधन में सामान्य रूप से और उच्च लोक सेवाओं के प्रबंधन में विशेष रूप से काम कर रहे अस्वस्थ और अस्थिरता लाने वाले प्रभावों के सार्वजनिक रूप से ज्ञात प्रवृत्तियों को समाप्त करने के लिए अनुच्छेद 309 के तहत संसदीय विधानमंडल की गरिमा की आवश्यकता है ।

9.14 ड्राफ्ट लोक सेवा बिल, 2006 में अच्छे शासन के लिए एक केन्द्रीय लोक सेवा प्राधिकरण के गठन के विचार का प्रस्ताव किया जा रहा है । बिल के अनुच्छेद 19 (ड.) के अनुसार, प्राधिकरण को यह सुनिश्चित करने के उत्तरदायित्व का प्रभार दिया गया है कि ''लोक सेवकों के स्थानान्तरण और तैनातियां एक स्वच्छ और उद्देश्यपूर्ण तरीके से की जाएं और किसी पद पर लोक सेवक की अवधि उचित रूप से निर्धारित की जाती है और उसका रखरखाव निरंतरता को बनाए रखने की आवश्यकता और अच्छे शासन की अपेक्षाओं से मेल

खाता हुआ होना चाहिए।'' तथापि, प्राधिकरण की इन मामलों में सिफारिशें अनिवार्य नहीं हो सकतीं परंतु केवल परामर्शी होंगी ।

9.15 मंत्री और अधिकारियों के बीच में एक और संभावित संघर्ष का मुद्दा है अधीनस्थ अधिकारियों के दैनिक प्रकृत्यों में मंत्री द्वारा प्रयोग किए जाने वाला प्रभाव । किसी मंत्रालय या विभाग की गतिविधियों को कुशलतापूर्वक चलाने में नौकरशाही के विविध स्तरों पर शक्तियों और प्रकृत्यों के प्रत्यायोजन की आवश्यकता है । एक बार यह प्रत्यायोजन हो जाने पर, नौकरशाही को अपने कामों का निष्पादन प्रत्यायोजित प्राधिकार के अनुसार करने की अनुमति दे दी जानी चाहिए । प्रायः यह देखा गया है कि मंत्री अपने अधीनस्थ अधिकारी तंत्र के निर्णयों को प्रभावित करने के लिए अनुदेश जारी कर देते हैं, चाहे वे औपचारिक हों या अनौपचारिक। यह भी देखा गया है कि अधिकारी, कोई निर्णय अपने आप लेने के बजाय मंत्रियों के अनौपचारिक अनुदेश लेने के लिए उनका इन्तजार करते हैं । अनेक राज्यों ने 'जिला प्रभारी मंत्री' का एक संस्थान जिले में विकास गतिविधियों की समीक्षा करने के लिए गठित कर रखा है । ऐसे उदाहरण हैं जब जिला मंत्री अपने पत्रसार की सीमा पार कर गए और ऐसे मुद्दों पर अनुदेश दे डाले, जो पूरी तरह से अधिकारी के अधिकार–क्षेत्र में आते हैं । इस प्रकार की वृत्तियां हानिकर हैं क्योंकि उन्हें अधिकारी की पहल की देखभाल करने की प्रवृत्ति लानी चाहिए और उसे प्रत्यायोजित प्राधिकार पर टकराव करना चाहिए । इससे ऐसे निर्णय लिए जा सकते हैं जो जनहित में न हों और एक जागरूक लोक सेवक का नैतिक भंग कर सकते हैं ।

9.16 यह आवश्यक है कि राजनीतिक कार्यपालक और अधिकारी तंत्र के बीच संबंध का निर्धारण व्यापक रूप से किया जाना चाहिए । राजनीतिक कार्यपालक और अधिकारी तंत्र के बीच में एक स्वस्थ संबंध बनाने के लिए संस्थागत और विधिक ढांचे के लिए आवश्यक ब्यौरों का सुझाव आयोग लोक सेवा सुधार पर अपनी आने वाली रिपोर्ट में देगा ।

निष्कर्ष

इस रिपोर्ट को आशावाद पर एक टिप्पणी करते हुए समाप्त किया जाना चाहिए । भारतवासियों ने सर्वदा विश्व को भौतिकवाद से परे माना है और आध्यात्मवाद को अपने जीवन के रूप में गले से लगाया है । हमारे यहां महागाथाओं में सदाचार, अच्छाई की बुराई पर विजय, मनीषियों की विवेकशीलता के प्रकरण व्याप्त हैं। विक्रमादित्य जैसे पौराणिक राजाओं की ईमानदारी, उदारता और धर्मनिष्ठा की कहानियां आज भी बच्चों को सुनाई जाती हैं । ऐसा कोई कारण नहीं है कि राम–राज्य लाने का प्रयत्न न किया जा सके ।

आधुनिक भारत में गरीबी, अभावग्रस्तता और वर्गों में संघर्षों का स्थान धीरे–धीरे विश्वासपात्र पूर्णरूपेण और शक्तिशाली भारत को मिल रहा है । पारदर्शिता अर्न्राष्ट्रीय भ्रष्टाचार सूचकांक में भारत की स्थिति में पर्याप्त रूप से सुधार आया है और ऐसा आगे भी जारी रहने की उम्मीद है । हमारे जागरूक लोग इसको सुनिश्चित करेंगे ।

आयोग का विश्वास है कि शासन में नैतिकता पर यह रिपोर्ट उन बातों पर अत्यधिक महत्वपूर्ण सिद्ध होगी जिन पर आयोग को यह रिपोर्ट लिखने के लिए कहा गया है क्योंकि शासन में बढ़ती हुई ईमानदारी भारत के लोगों की रोजमर्रा जिन्दगी में मुख्य रूप में प्रभाव डालेगी । यदि इस रिपोर्ट की सिफारिशों को कार्यान्वित कर लिया जाता है तो सरकारी काम में बड़ी कुशलता और जवाबदेही को प्राप्त कर लिया जाएगा क्योंकि पहले से अधिक लोक–सेवक अपने निजी हितों को लेकर नहीं बल्कि जनता की बड़ी भलाई के लिए काम करेंगे । यह भी उतना ही महत्वपूर्ण है कि और अधिक भ्रष्टाचार मुक्त प्रशासन, हमारे कुल राष्ट्रीय उत्पाद की विकास दर को और ऊंचा ले जाएगा, हमारी अर्थव्यवस्था में कुल मिलाकर सुधार लाएगा और लोगों की सेवा करने में सरकारी काम में और अधिक पारदर्शिता आएगी । इन सब के बदले में, लोगों को और अधिक शक्तियां मिल पाएंगी जो कि गुंजायमान लोकतंत्र की मूल आवश्यकता है ।

सिफारिशों का सारांश

1. (2.1.3.1.6) राजनीतिक निधियों में सुधार

   क. चुनावों में खर्च किए जाने वाले धन के अनुचित और अनावश्यक कोष की गुजांइश को कम करने के लिए आंशिक राज्य कोष की व्यवस्था को लागू किया जाना चाहिए।

2. (2.1.3.2.4) दल–बदल कानून को कड़ा किया जाना

   क. दल–बदल के आधार पर सदस्यों को अयोग्य ठहराए जाने के मामले पर राष्ट्रपति/राज्यपाल द्वारा निर्वाचन आयोग की सलाह पर निर्णय लिया जाना चाहिए।

3. (2.1.3.3.2.) अयोग्यता

   क. लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8 में निर्वाचन आयोग द्वारा सुझाए संशोधन के साथ गंभीर और जघन्य अपराधों से संबंधित आरोपों का सामना कर रहे सभी लोगों को अयोग्य ठहराए जाने के लिए संशोधन किए जाने की आवश्यकता है।

4. (2.1.4.3.) गठबंधन और नैतिकता

   क. यह सुनिश्चित करने के लिए संविधान में संशोधन किया जाना चाहिए कि यदि एक या अधिक दल निर्वाचन मंडल द्वारा आदेशित सामान्य कार्यक्रम के गठबंधन में चुनाव से पूर्व स्पष्ट रूप से अथवा सरकार बनाते समय निहित रूप में, बीच में ही गठबंधन से बाहर किसी एक या अधिक दलों में पुनः शामिल हो जाते है तो उस दल या दलों के सदस्यों को निर्वाचन मंडल से नया आदेश लेना होगा ।

5. (2.1.5.4.) मुख्य निर्वाचन आयुक्त/आयुक्तों की नियुक्ति

   क. प्रधान मंत्री की अध्यक्षता में, लोक सभा के अध्यक्ष, लोक सभा में विपक्ष के नेता, कानून मंत्री और राज्य सभा के उपाध्यक्ष को सदस्यों के रूप में साथ लेकर बनी परिषद् को मुख्य निर्वाचन आयुक्त और निर्वाचन आयुक्तों की नियुक्ति के लिए राष्ट्रपति के विचारार्थ सिफारिशें करनी चाहिए ।

6. (2.1.6.3.) चुनाव याचिकाओं का निपटान किया जाना

   क. संविधान के अनुच्छेद 323 ख के अन्तर्गत क्षेत्रीय स्तर पर विशेष निर्वाचन

न्यायाधिकरण बनाए जाने चाहिए ताकि चुनाव याचिकाओं और विवादों का छः महीनों की विर्निदिष्ट अवधि के भीतर गति से निपटान किया जा सके । प्रत्येक न्यायाधिकरण में उच्च न्यायालय का एकन्यायाधीश और एक वरिष्ठ सिविल सेवक जिसे चुनावों के आयोजन में कम से कम 5 वर्ष का अनुभव हो (भारत सरकार के अपर सचिव/राज्य सरकार के प्रधान सचिव के स्तर से नीचे के पद का नहीं होना चाहिए)। इसके शासनादेश में यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि सभी चुनाव याचिकाओं पर छः महीनों के भीतर निर्णय ले लिया जाए जैसा कि कानून में प्रावधान है । न्यायाधिकरणों को सामान्यतः केवल एक वर्ष के लिए ही गठित किया जाना चाहिए जिसे अपवादस्वरूप स्थितियों में 6 महीनों की अवधि के लिए बढ़ाया जा सकता है ।

7. (2.1.7.3.) सदस्यता के लिए अयोग्यता के आधार

क. संविधान के अनुच्छेद 102 (ड़) के अन्तर्गत समुचित विधान अधिनियमित किया जाए जिसमें किसी संसद सदस्य की अयोग्यता की शर्तों का सर्वांगीण ढंग से उल्लेख किया जाना चाहिए। इसी प्रकार, राज्यों को भी अनुच्छेद 198 (ड़) के अन्तर्गत विधान बनाना चाहिए ।

8. (2.4.5.) मंत्रियों के लिए नैतिकता का ढ़ांचा

*क. मंत्रियों के लिए वर्तमान आचार संहिता के अतिरिक्त एक नैतिक संहिता होनी चाहिए जिसमें ये दिशा–निर्देश होने चाहिए कि किस प्रकार मंत्री अपने कर्तव्यों के निष्पादन में संवैधानिक और नैतिक आचरणों के उच्चतम मानदंडों को बनाए रख सकते हैं ।

*ख. प्रधान मंत्री और मुख्य मंत्रियों के कार्यालयों में नैतिक संहिता और आचार संहिता के अनुपालन के अनुवीक्षण के लिए समर्पित एककों का गठन किया जाना चाहिए । इस एकक को आचार संहिता के उल्लंघन से संबंधित जनता की शिकायतो को प्राप्त करने का भी अधिकार दिया जाना चाहिए ।

*ग. प्रधान मंत्री अथवा मुख्य मंत्री को इस कर्तव्य द्वारा आबद्ध होना चाहिए कि मंत्रियों द्वारा नैतिक संहिता और आचार संहिता का अनुपालन सुनिश्चित किया जाए । ऐसा गठबंधन सरकारों के मामले में भी लागू होगा, जहां मंत्री विभिन्न दलों से हो सकते हैं ।

*घ. इन संहिताओं के अनुपालन से संबंधित एक वार्षिक रिपोर्ट समुचित विधानमंडल को प्रस्तुत की जानी चाहिए । इस रिपोर्ट में अतिक्रमण के विशिष्ट मामलों, यदि कोई हों, और उन पर की गई कार्यवाई को शामिल किया जाना चाहिए ।

*ड़ नैतिक संहिता में, अन्य बातों के अलावा, मंत्री–सिविल सेवक संबंधों पर व्यापक सिद्धांतों को शामिल किया जाना चाहिए और आचार संहिता में पैरा 2.4.3 में दिखाए गए विवरणों का उल्लेख होना चाहिए ।

*च. नैतिक संहिता, आचार संहिता और वार्षिक रिपोर्ट को जनता की पहुंच मे रखा जाना चाहिए।

9. (2.5.7.6) विधानों में नैतिक मानदंडों का प्रवर्तन करना

क. संसद के प्रत्येक सदन द्वारा 'नैतिक आयुक्त' पद का गठन किया जाना चाहिए । यह पद अध्यक्ष/उपसभापति के अन्तर्गत कार्य करते हुए नैतिकता पर समिति के अपने कामों का निष्पादन करने में सहायता करेगा और सदस्यों को यथा–आवश्यकता सलाह देगा और आवश्यक अभिलेखों को रखेगा ।

ख. राज्यों के बारे में आयोग निम्नलिखित की सिफारिश करता है:–

i सभी राज्य विधान मंडलों को अपने सदस्यों के लिए नैतिक संहिता और आचार संहिता को अपना लेना चाहिए ।

ii विधायकों द्वारा नैतिकता आचार को सुनिश्चित करने के लिए अतिक्रमण के मामले में मंजूरियों की कार्यप्रणालियों की उत्तम परिभाषा बना कर नैतिकता समितियों का गठन किया जाना चाहिए ।

iii राज्यों के विधायकों द्वारा अभिरूचियों की घोषणा के साथ 'सदस्यों की अभिरूचि के रजिस्टर' को बनाया रखा जाना चाहिए ।

iv संबंधित सदनों के पटल पर वार्षिक रिपोर्टों को, विवरण देते हुए, जिनमें अतिक्रमण शामिल हों, रखा जाना चाहिए ।

v राज्य विधान मंडलों के प्रत्येक सदन द्वारा 'नैतिकता आयुक्त' के पद का गठन किया जाए । यह पद अध्यक्ष/सभापति के तहत उस आधार पर काम करेगा जैसा कि संसद के लिए सुझाया गया है ।

10. (2.6.12) लाभ का पद

क. कानून में लाभ पद की परिभाषा बनाने के लिए निम्नलिखित सिद्धांतों के आधार पर संशोधन किया जाना चाहिए :–

(i) सम्पूर्ण रूप से सलाहकारी निकायों के ऐसे सभी पदों को लाभ के पद नहीं समझा जाना चाहिए, जहां विधायक का अनुभव, दृष्टि और विशेषज्ञता सरकारी नीति के लिए इन्पुट का काम करे, चाहे ऐसे पद से संबद्ध पारिश्रमिक और सुविधाएं ही क्यों न दी गई हों ।

(ii) ऐसे सभी पदों, जिनमें सार्वजनिक निधियों पर कार्यपालक का निर्णय और नियंत्रण संलिप्त हों, जिसमें सार्वजनिक उपक्रमों के शासी निकायों और संवैधानिक तथा असंवैधानिक प्राधिकरणों में पदों पर रहना शामिल हो और जहां प्रत्यक्ष रूप से नीति का निर्णय लेने और प्रबंध संस्थानों या खर्चों का अधिकार और अनुमोदन शामिल हो, को लाभ के पद समझा जाना चाहिए और विधायक को किसी भी ऐसे पद पर बने रहना नहीं चाहिए ।

(iii) यदि मंत्री पद पर रहते हुए, कोई मंत्री किंचित् संगठनों जैसे कि योजना आयोग, जहां पर मंत्रिमंडल और संगठनों, प्राधिकरण या समिति के बीच नजदीकी समन्वय और एकीकरण सरकार के रोजमर्रा के कामों के लिए आवश्यक होता हो तो इसे लाभ का पद नहीं समझा जाना चाहिए ।

(विधायकों के अधिकार में विवेकाधीन निधियों का प्रयोग, विशिष्ट परियोजनाओं और स्कीमों के निर्धारण की शक्ति या लाभार्थियों का चयन करना या व्ययों को अधिकृत करना कार्यपालक कार्यों का निष्पादन करना माना जाएगा और अनुच्छेद 102 और 191 के तहत अयोग्यता को निमंत्रण होगा, चाहे नये पद को अधिसूचित करके उस पर रहा गया हो या नहीं)

ख. संसद सदस्य स्थानीय क्षेत्र विकास योजना और विधायक स्थानीय क्षेत्र विकास योजना जैसी स्कीमों को समाप्त कर दिया जाना चाहिए ।

ग. संसद सदस्यों और विधायकों को सूचना अधिकार अधिनियम के अन्तर्गत 'सार्वजनिक प्राधिकारियों' के रूप में घोषित किया जाना चाहिए सिवाय इसके कि जब वे विधायी कामों का निष्पादन कर रहे हों ।

11. (2.7.12) सिविल सेवकों के लिए नैतिक संहिता

*क. 'लोक सेवा मूल्यों' जिन्हें सभी सार्वजनिक कर्मचारियों को ऊंचा उठाना चाहिए, को परिभाषित किया जाना चाहिए और सरकार और अर्ध–सरकारी संगठनों की सभी श्रेणियों पर लागू किया जाना चाहिए । इन मूल्यों का उल्लंघन किए जाने पर इसे कदाचार और दंड को निमंत्रण समझा जाना चाहिए ।

*ख. अभिरूचियों के संघर्ष को अधिकारियों के लिए नैतिक संहिता और आचार संहिता में विस्तृत रूप से शामिल समझा जाना चाहिए । सेवारत अधिकारियों को भी सरकारी उपक्रमों के मंडलों में नामांकित नहीं किया जाना चाहिए । तथापि, यह गैर–लाभ के सरकारी संस्थानों और परामर्शी निकायों पर लागू नहीं होगा ।

12. (2.8.5) नियंत्रकों के लिए नैतिक संहिता

क. एक बृहत् और लागू करने योग्य आचार संहिता संवैधानिक पृष्ठभूमि वाले सभी संव्यवसायों के लिए निर्धारित की जानी चाहिए ।

13. (2.9.23) न्यायपालिका के लिए नैतिकता की संरचना

क. एकरूपता से स्वीकृत सिद्धांतों की तर्ज पर एक ऐसी न्यायिक परिषद् का गठन किया जाना चाहिए, यहां न्यायपालिका के सदस्यों की नियुक्ति एक मंडल के रूप में की जानी चाहिए, जिसमें कार्यपालक, विधानमंडल और न्यायपालिका का प्रतिनिधित्व हो। इस परिषद् में निम्नलिखित शामिल होंगे :–

- परिषद् के अध्यक्ष के रूप में उप राष्ट्रपति
- प्रधान मंत्री
- लोक सभा के अध्यक्ष
- भारत के मुख्य न्यायमूर्ति
- कानून मंत्री
- लोक सभा में विपक्ष के नेता
- राज्य सभा में विपक्ष के नेता

उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति और निरीक्षण से संबंधित मामलों में परिषद् में निम्नलिखित सदस्य भी शामिल होंगेः

- संबंधित राज्य के मुख्य मंत्री
- संबंधित उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति

ख. राष्ट्रीय न्यायिक परिषद् को अधीनस्थ न्यायपालिका सहित न्यायधीशों के लिए आचार संहिता बनाए जाने के लिए अधिकृत किया जाना चाहिए ।

ग. राष्ट्रीय न्यायिक परिषद् को उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय के न्यायधीशों की नियुक्तियों की सिफारिश करने का काम सौंपा जाना चाहिए । इस परिषद् को न्यायधीशों के निरीक्षण के काम को भी सौंपा जाना चाहिए और उन्हें अभिकथित कदाचार की छानबीन करने और लघु दंड देने का भी अधिकार दिया जाना चाहिए । यदि आवश्यक हो तो यह न्यायाधीश को हटाए जाने की भी सिफारिश कर सकती है।

घ. राष्ट्रीय न्यायिक परिषद् की सिफारिशों के आधार पर राष्ट्रपति को उच्चतम न्यायालय अथवा उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को हटाने का अधिकार होना चाहिए ।

ड. राष्ट्रीय न्यायिक परिषद् का प्रावधान करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 124 को संशोधित किया जाना चाहिए । इसी प्रकार का संशोधन अनुच्छेद 217 में भी किया जाना होगा । क्योंकि परिषद् को न्यायाधीशों पर निरीक्षण करने और उन्हें अनुशासन में रखने का भी अधिकार होगा, अतः अनुच्छेद 217 (खंड 4) में और आगे परिवर्तन करने आवश्यक होंगे ।

च. उच्चतम न्यायालय के किसी एक न्यायाधीश को न्यायिक मूल्य आयुक्त पर पदासीन किया जाना चाहिए । उसे आचार संहिता को प्रभावी करने का काम दिया जाना चाहिए। इसी प्रकार के प्रबंध उच्च न्यायालय में भी किए जाने चाहिए ।

14. (3.2.1.10) भ्रष्टाचार की परिभाषा

क. भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अन्तर्गत निम्नलिखित को अपराधों के रूप में वर्गीकृत किया जाना चाहिए :

- संविधान और लोकतांत्रिक संस्थानों का संपूर्ण दुरूपयोग शपथ पद का जानबूझ कर किया गया अतिक्रमण होगा ।
- किसी व्यक्ति का अनुचित पक्षपात करके या उसे हानि पहुंचा कर अधिकार का दुरूपयोग करना ।
- न्याय में बाधा
- सार्वजनिक पैसे का अपव्यय

15. (3.2.2.7) कपटपूर्ण रिश्वतखोरी

क. भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 में 'कपटपूर्ण रिश्वतखोरी' के विशेष अपराध का प्रावधान करने के लिए संशोधन की आवश्यकता है । यदि किसी लेन देन के परिणामस्वरूप अथवा इच्छित परिणाम से राज्य, जनता या जनता के हित की हानि होती है तो ऐसे अपराध को 'कपटपूर्ण रिश्वतखोरी' के रूप में वर्गीकृत किया जाएगा;

ख. ऐसे सभी मामलों में यदि यह सिद्ध कर लिया जाता है कि किसी लोक सेवक के काम के कारण राज्य के हित या जनता की हानि हुई है तो न्यायालय यह मान लेगा कि लोक सेवक और निर्णय के लाभार्थी ने 'कपटपूर्ण रिश्वतखोरी' का अपराध किया है;

ग. कपटपूर्ण रिश्वतखोरी के ऐसे सभी मामलों के लिए दंड रिश्वतखोरी के अन्य मामलों की अपेक्षा दोगुना होगा । इस सबंध में कानून में अनुकूल संशोधन किया जाना चाहिए ।

16. (3.2.3.2) अभियोजन के लिए स्वीकृति

क. ऐसे किसी लोक सेवक के विरूद्ध कानूनी कार्यवाई करने के लिए पूर्व स्वीकृति की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए, जिसे रंगे हाथों पकड़ा गया हो अथवा आय के ज्ञात स्रोतों से अधिक की सम्पत्ति के मामले हों ।

ख. भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम में यह सुनिश्चित करने के लिए संशोधन किया जाना चाहिए कि स्वीकृति देने वाले प्राधिकारियों को बुलाना न पड़े और इसके बजाय समुचित प्राधिकारी द्वारा कागजात प्राप्त करके न्यायालयों के समक्ष पेश कर दिए जाएं ।

ग. संसद अथवा विधान मंडल के पीठासीन अधिकारी को क्रमशः संसद सदस्य और विधायकों की स्वीकृति दिए जाने के लिए पदासीन किया जाना चाहिए ।

घ. सेवारत लोक सेवकों पर अब तक लागू कानूनी कार्यवाई के लिए पूर्व अनुमति की आवश्यकता अवकाश प्राप्त लोक सेवकों पर भी उनके द्वारा सेवा के दौरान निष्पादित किए गए काम के लिए लागू होगी ।

ड. ऐसे सभी मामलों में जहां भारत सरकार कानूनी कार्यवाई करने की स्वीकृति प्रदान करने के लिए अधिकृत हो, वहां इस अधिकार को केन्द्रीय सतर्कता आयुक्त और सरकार के विभागीय सचिव की अधिकारिक समिति को प्रत्यायोजित कर दिया जाना चाहिए । दोनों व्यक्तियों के बीच मतभेद हो जाने के मामले में इसे पूरे केन्द्रीय सतर्कता आयोग के समक्ष रख कर सुलझाया जा सकता है । यदि स्वीकृति भारत के सचिव के विरूद्ध आवश्यक हो तो अधिकारिक समिति में मंत्रिमंडल सचिव और केन्द्रीय सतर्कता आयोग शामिल होंगे । इसी प्रकार के प्रबंध राज्य स्तर पर भी किए जा सकते हैं । सभी मामलों में कानूनी कार्यवाई या अन्यथा स्वीकृति प्रदान करने वाला आदेश दो माह के भीतर जारी किया जाएगा । अस्वीकृति के मामले में, अस्वीकृति के कारणों को संबंधित विधायी मंडल के समक्ष वार्षिक रूप से प्रस्तुत किया जाना चाहिए ।

17. (3.2.4.3) भ्रष्ट लोक सेवकों का हर्जाना अदा करने का दायित्व

क. आपराधिक मामलों में दंड के अतिरिक्त, कानून में प्रावधान होना चाहिए कि ऐसे लोक सेवकों को, जो अपने भ्रष्ट क्रियाकलापों से राज्य या नागरिकों को हानि पहुंचाते हैं, वे इस हानि को पूरा करने के लिए जिम्मेदार हों और, इसके अतिरिक्त हर्जाने के लिए जिम्मेदार हों । इस बात को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम में एक अध्याय को जोड़ कर किया जा सकता है ।

18. (3.2.5.6) भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अन्तर्गत सुनवाई में तेजी लाना ।

क. सुनवाई के विविध चरणों के लिए समय सीमा नियत करने के लिए एक कानूनी प्रावधान लाने की आवश्यकता है । ऐसा आपराधिक दंड संहिता में संशोधन करके किया जा सकता है ।

ख. इस बात को सुनिश्चित करने के लिए कदम उठाए जाने चाहिए कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के प्रावधानों के अन्तर्गत जिन न्यायाधीशों को विशेष न्यायाधीशों के रूप में घोषित किया गया हो, वे अधिनियम के अन्तर्गत मामलों के निपटारे की ओर प्राथमिक ध्यान दें । जब अधिनियम के अन्तर्गत अपर्याप्त काम हों, केवल तभी विशेष न्यायाधीशों को अन्य उत्तरदायित्व सौंपे जाने चाहिए ।

ग. यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अन्तर्गत मामलों की सुनवाई किए जाने वाले न्यायालयों की कार्यवाही को दैनिक आधार पर किया जाए और किसी विचलन की स्वीकृति न दी जाएं ।

घ. उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय अवांछित स्थगनों और परिहार्य विलंबों को रोकने के लिए दिशा–निर्देश अधिकथित कर सकता है ।

19. (3.3.7) निजी क्षेत्र में लिप्त भ्रष्टाचार

क. सार्वजनिक उपयोगिता सेवाओं को प्रदान करने वाले निजी क्षेत्र को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधिकार–क्षेत्र में लाने के लिए इस अधिनियम में अनुकूल संशोधन किए जाने चाहिए ।

ख. ऐसी गैर–सरकारी एजेंसियों को जिन्हें कोष की पर्याप्त राशि प्राप्त होती हो, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अन्तर्गत शामिल किया जाना चाहिए । ऐसे मानदंड अधिकथित किए जाने चाहिए कि यदि किसी संस्थान या निकाय को पिछले किन्हीं तीन वर्षों के दौरान अपनी वार्षिक प्रचालन लागतों से 50 प्रतिशत अधिक राशि मिली हो या एक करोड़ के बराबर या उससे अधिक राशि प्राप्त हुई हो तो उसे उस अवधि के दौरान 'पर्याप्त कोष' प्राप्त करने वाला समझा जाना चाहिए और ऐसे कोष का उद्देश्य भी बताया जाना चाहिए ।

20. (3.4.10) भ्रष्ट साधनों द्वारा गैर कानूनी ढंग से प्राप्त की गई संपत्तियों का जब्त किया जाना।

क. विधि आयोग द्वारा दिए गए सुझाव के अनुसार भ्रष्ट लोक सेवक (सम्पत्ति का समपहरण) बिल को बिना किसी और विलंब के अधिनियमित किया जाना चाहिए ।

21. (3.5.4) 'बेनामी' लेनदेनों का निषेध

क. बेनामी लेनदेन (प्रतिषेद) अधिनियम, 1988 के तत्काल कार्यान्वयन के लिए कदम उठाए जाने चाहिए ।

22. (3.6.4) भ्रष्टाचार या घोटाले की सूचना देने वाले को संरक्षण

क. भ्रष्टाचार या घोटाले की सूचना देने वाले को संरक्षण प्रदान करने के लिए विधि आयोग द्वारा सुझाई गई निम्नलिखित बातों पर तत्काल ही विधान को अधिनियमित किया जाना चाहिएः

- भ्रष्टाचार या घोटाले की सूचना देने वाले द्वारा झूठे दावों, धोखाधड़ी या भ्रष्टाचार की सूचना देने पर उसे शारीरिक रूप से हानि पहुंचाने से रोकने के लिए गोपनीयता और गुमनाम रखने, व्यवसाय में सताए जाने से रक्षा करना और अन्य प्रशासकीय उपायों को सुनिश्चित करते हुए बचाव किया जाना चाहिए ।

- विधान में किसी निगम के भ्रष्टाचार या घोटाले की सूचना देने वाले द्वारा धोखाधड़ी या जानबूझ कर चूक करने या गलत कार्य करने से जन हित को गंभीर क्षति पहुंचाने की बात का पर्दाफाश करने वाले को भी शामिल किया जाना चाहिए ।

- भ्रष्टाचार या घोटाले की सूचना देने वाले के विरूद्ध कष्ट पहुंचाने, सताए जाने का काम करने या बदला लेने के काम को पर्याप्त जुर्माने और सजा के साथ दंडनीय अपराध माना जाएगा ।

23. (3.7.19) गंभीर आर्थिक अपराध :

क. 'गंभीर आर्थिक अपराध' पर एक नया कानून लाया जाना चाहिए ।

ख. गंभीर आर्थिक अपराध को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है :

(i) वह अपराध जिसमें 10 करोड़ रूपयों से अधिक की राशि संलिप्त हो ।

(ii) वह अपराध जिससे जनता में व्यापक चिन्ता की संभावना हो : या

(iii) वह अपराध जिसकी जांच और कानूनी कार्यवाई में वित्तीय बाजार की उच्च स्तर की विशिष्ट जानकारी अथवा बैंकों या अन्य वित्तीय संस्थानों के व्यवहार को जानने की आवश्यकता पड़े।

(iv) वह अपराध जिसमें महत्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय आयाम संलिप्त हों ।

(v) वह अपराध जिसकी जांच में कानूनी, वित्तीय, निवेश संबंधी और जांच संबंधी कौशलों को एक साथ लेने की आवश्यकता हो : या

(vi) जो केन्द्रीय सरकार, नियंत्रकों, बैंकों या किसी अन्य वित्तीय संस्थानों को पेचीदा लगे ।

ग. एक गंभीर अपराध कार्यालय (एसएफओ) का गठन किया जाना चाहिए (नए कानून के अन्तर्गत), जो ऐसे अपराधों की जांच और उन पर कानूनी कार्यवाई करे । यह कार्यालय मंत्रिमंडल सचिवालय के अधीनस्थ होगा । इस कार्यालय को, इस उद्देश्य से गठित, विशेष अदालतों में, सभी ऐसे मामलों की जांच करने और कानूनी कार्यवाई करने का अधिकार होगा । गंभीर अपराध कार्यालय को अपने कर्मचारियों को शिक्षा के विविध विषय क्षेत्रों में से विशेषज्ञों को लेना चाहिए, जैसे कि वित्तीय क्षेत्र, पूंजी और भविष्य बाजार, वस्तु बाजार, लेखा–प्रणाली, प्रत्यक्ष और परोक्ष कर, न्यायालयीय, अन्वेषण, अपराध और कंपनी कानून और सूचना प्राद्यौगिकी । गंभीर अपराध कार्यालय को मित्रा समिति की सिफारिशों में उल्लिखित अन्वेषण के सभी अधिकार होने चाहिए। वर्तमान गंभीर अपराध अन्वेषण कार्यालय को इसमें शामिल कर लिया जाना चाहिए।

घ. ऐसे अपराधों पर अन्वेषण और कानूनी कार्यवाई पर नजर रखने के लिए एक गंभीर अपराध अनुवीक्षण समिति का गठन किया जाना चाहिए । इस समिति में, जिसके अध्यक्ष मंत्रिमंडल सचिव होंगे, मुख्य सतर्कता आयुक्त, गृह मंत्री, वित्त सचिव, सचिव, बैंकिंग / वित्तीय क्षेत्र, रिजर्व बैंक आफ इन्डिया के एक उप गवर्नर, सचिव, कंपनी कार्य विभाग, विधि सचिव, अध्यक्ष, सेबी आदि सदस्यों के रूप में होंगे ।

ड. गंभीर अपराध में किसी सरकारी पदाधिकारी के संलिप्त होने के मामले में, गंभीर अपराध कार्यालय एक रिपोर्ट राष्ट्रीय लोकायुक्त को भेजेगा और राष्ट्रीय लोकायुक्त द्वारा दिए गए निदेशों का पालन करेगा (पैरा 4.3.15 को देखें) ।

च. गंभीर अपराधों के सभी मामलों में न्यायालय अभियुक्त में आपराधिक मनः स्थिति को मान कर चलेगा और ऐसा न होने के प्रमाण को सिद्ध करने का दायित्व अभियुक्त का होगा ।

24. (3.8.5) मामलों के पंजीकरण के लिए पूर्व सहमति : दिल्ली विशेष पुलिस स्थापन अधिनियम, 1946 की धारा 6 क

क. वर्तमान संवैधानिक प्रबंधों के अन्तर्गत अन्वेषण को हाथ में लिए जाने की अनुमति केन्द्रीय सतर्कता आयोग द्वारा संबंधित सचिव के परामर्श से दी जानी चाहिए । सरकार के सचिव के विरूद्ध अन्वेषण के मामले में, अनुमति मंत्रिमंडल सचिव और केन्द्रीय सतर्कता आयोग को मिला कर बनी समिति द्वारा दी जानी चाहिए । इसमें

दिल्ली विशेष पुलिस स्थापन अधिनियम में संशोधन करने की आवश्यकता होगी । अन्तरिम रूप से केन्द्र की शक्तियों को केन्द्रीय सतर्कता आयुक्त को प्रत्यायोजित किया जाना चाहिए जिसे उपयुक्त अनुसार प्रयोग किया जाना चाहिए । इस अनुमति की प्रक्रिया के लिए 30 दिनों की समय सीमा निर्धारित की जानी चाहिए ।

25. (3.9.4) विधिकर्त्ता द्वारा उपभोग की जाने वाली उन्मुक्ति

क. यह आयोग, राष्ट्रीय संविधान कार्य समीक्षा आयोग द्वारा दिए गए सुझाव का पालन करते हुए यह सिफारिश करता है कि संविधान के अनुच्छेद 105 (2) में ऐसे समुचित संशोधन किए जाएं जिससे यह प्रावधान किया जा सके कि संसद सदस्यों द्वारा उपभोग की जा रही उन्मक्ति में उनके द्वारा सदन में या अन्यथा अपने कर्तव्यों के संबंध में किए गए भ्रष्ट कार्यों को शामिल न किया जा सके ।

ख. आयोग यह भी सिफारिश करता है कि राज्य विधान मंडलों के सदस्यों के संबंध में संविधान के अनुच्छेद 194 (2) में ऐसे ही संशोधन किए जाएं ।

26. (3.10.24) सिविल सेवकों को संवैधानिक संरक्षण – अनुच्छेद 311

क. संविधान के अनुच्छेद 311 को समाप्त कर दिया जाना चाहिए ।

ख. इसी प्रकार संविधान के अनुच्छेद 310 को समाप्त कर दिया जाना चाहिए ।

ग. लोक सेवकों द्वारा जन हित में की गई नेकनीयती की कार्यवाई की रक्षा करने के लिए, अनुच्छेद 309 के अन्तर्गत प्रदान की गई सेवाओं की सभी आवश्यक नियम और शर्तों को शामिल करने के लिए उपयुक्त कानून बनाया जाना चाहिए : इसे राज्यों के लिए लागू किया जाना चाहिए ।

घ. अनुच्छेद 309 के अन्तर्गत ऐसे विधान के जरिए लोक सेवकों को स्वैच्छिक कार्रवाई किए जाने पर आवश्यक संरक्षण का प्रावधान किया जाना चाहिए ।

27. (4.3.15) लोकपाल

क. राष्ट्रीय लोकायुक्त के नाम से जाना जाने वाला एक राष्ट्रीय विधि प्रतिनिधि का प्रावधान करने के लिए संविधान में संशोधन किया जाना चाहिए । राष्ट्रीय लोकायुक्त की भूमिका और उसका कार्य क्षेत्र संविधान में परिभाषित किया जाना चाहिए जब कि रचना, नियुक्ति के प्रकार और अन्य ब्यौरों का निर्णय संसद द्वारा कानून के माध्यम से लिया जा सकता है ।

ख. राष्ट्रीय लोकायुक्त का कार्य क्षेत्र केन्द्र के सभी मंत्रियों (प्रधान मंत्री को छोड़कर), सभी राज्यों के मुख्य मंत्रियों, वे सभी लोग, जो केन्द्रीय मंत्री के पद के समकक्ष

सार्वजनिक पद पर आसीन हों, और संसद सदस्य तक बढ़ा देना चाहिए । यदि किसी लोक पदाधिकारी के विरूद्ध जांच से यह पता चलता है कि उस लोक पदाधिकारी के साथ–साथ कोई अन्य लोक अधिकारी भी संलिप्त हो तो राष्ट्रीय लोकायुक्त को ऐसे लोक सेवक(सेवकों) के विरूद्ध भी जांच करने का अधिकार होगा ।

ग. पैरा 4.3.7 से 4.3.11 में उल्लिखित कारणों से प्रधान मंत्री को राष्ट्रीय लोकायुक्त के कार्य क्षेत्र से बाहर रखा जाना चाहिए ।

घ. राष्ट्रीय लोकायुक्त में अध्यक्ष के रूप में सर्वोच्च न्यायालय का एक सेवारत या अवकाश–प्राप्त न्यायाधीश, सदस्य के रूप में एक विशिष्ट विधिक और पदेन सदस्य के रूप में केन्द्रीय सतर्कता आयुक्त ।

ड. राष्ट्रीय लोकायुक्त के अध्यक्ष का चयन, भारत के उप राष्ट्रपति, प्रधान मंत्री, विपक्ष के नेता, लोक सभा के अध्यक्ष और भारत के मुख्य न्यायाधीश की एक समिति द्वारा सर्वोच्च न्यायालय के उन आसीन न्यायाधीशों के पैनल में से किया जाएगा, जिनकी तीन वर्ष से अधिक की सेवा हो गई हो । यदि किसी आसीन न्यायाधीश की नियुक्ति करना संभव न हो सके तो समिति सर्वोच्च न्यायालय के किसी अवकाश प्राप्त न्यायाधीश की नियुक्ति कर सकती है । यही समिति राष्ट्रीय लोकायुक्त के सदस्य (अर्थात् किसी विशिष्ट विधिक) का चयन कर सकती है । राष्ट्रीय लोकायुक्त के अध्यक्ष और सदस्य को तीन वर्ष की केवल एक ही अवधि के लिए नियुक्त किया जाना चाहिए और उसके बाद वे सरकार के किसी सार्वजनिक पद पर आसीन न हों । केवल एक ही अपवाद के रूप में, यदि उनकी सेवाओं की आवश्यकता हो, तो वे भारत के मुख्य न्यायाधीश बनाए जा सकते हैं ।

च. राष्ट्रीय लोकायुक्त को सार्वजनिक जीवन में नैतिकता के मानदण्डों में वृद्धि करने के लिए एक राष्ट्रीय अभियान चलाने के काम को भी सौंपा जाना चाहिए ।

28. (4.4.9) लोकायुक्त :

क. एक ऐसा प्रावधान लाने के लिए संविधान में संशोधन किया जाना चाहिए, जिसमें राज्य सरकारों के लिए लोकायुक्त का स्थापन करना अनिवार्य हो और इसकी संरचना, अधिकार और कार्यों के बारे में सामान्य सिद्धांतों का नियतन करे ।

ख. लोकायुक्त में एक बहु–सदस्यीय निकाय होना चाहिए, जिसमें अध्यक्ष पद पर न्यायिक सदस्य, सदस्य के रूप में एक निर्दोष प्रत्यय–पत्र वाला एक विशिष्ट विधिक या प्रशासक और पदेन–सदस्य के रूप में राज्य सतर्कता आयोग का अध्यक्ष (जैसा कि नीचे पैरा 4.4.9 (ड़) में उल्लिखित है) । लोकायुक्त के अध्यक्ष का चयन मुख्य मंत्री, उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश और विधान सभा में विपक्ष के नेता की एक समिति

द्वारा सर्वोच्च न्यायालय के अवकाश प्राप्त न्यायाधीशों अथवा उच्च न्यायालय के अवकाश प्राप्त मुख्य न्यायाधीशों के पैनल से किया जाना चाहिए । यही समिति, दूसरे सदस्य का चयन विशिष्ट विधिकों/प्रशासकों में से करेगी । उप लोकायुक्त का चयन करने की कोई आवश्यकता नहीं होगी ।

ग. लोकायुक्त का कार्य क्षेत्र केवल भ्रष्टाचार में संलिप्त मामलों तक ही रहेगा । उन्हें सामान्य लोक शिकायतों की जांच नहीं करनी चाहिए ।

घ. लोकायुक्त को मंत्रियों और विधायकों के विरूद्ध भ्रष्टाचार के मामलों को निपटाना चाहिए ।

ड. प्रत्येक राज्य को राज्य सरकार के अधिकारियों के विरूद्ध भ्रष्टाचार के मामलों की जांच करने के लिए एक राज्य सतर्कता आयोग का गठन किया जाना चाहिए । इस आयोग में तीन सदस्य होने चाहिएं और इसके कार्य केन्द्रीय सतर्कता आयोग के समान ही होने चाहिएं ।

च. भ्रष्टाचार निवारण ब्यूरो को राज्य सतर्कता आयोग के नियंत्रण में ले आना चाहिए।

छ. लोकायुक्त का अध्यक्ष और सदस्यों की नियुक्ति सख्ती के साथ केवल एक ही अवधि के लिए होनी चाहिए और उन्हें उसके बाद सरकार के अधीन किसी सार्वजनिक पद को ग्रहण नहीं करना चाहिए ।

ज. लोकायुक्त के पास जांच के लिए अपनी ही एक व्यवस्था होनी चाहिए । आरंभ में, ये राज्य सरकार से अधिकारियों को प्रतिनियुक्ति पर ले सकते हैं परंतु पांच वर्षों की अवधि के बाद, इसे अपना एक संवर्ग भर्ती करने के लिए कदम उठाना चाहिए और उन्हें उचित रूप से प्रशिक्षण देना चाहिए ।

झ. भ्रष्टाचार के सभी मामलों को राष्ट्रीय लोकायुक्त या लोकायुक्त को भेजे जाने चाहिएं और इन्हें किसी जांच आयोग को नहीं भेजा जाना चाहिए ।

29. (4.5.6) स्थानीय स्तरों पर कानूनी प्रतिनिधित्व (ओम्बडसमैन)

क. स्थानीय निकायों के पदाधिकारियों के विरूद्ध मामलों की जांच करने के लिए जिलों के समुह के लिए एक स्थानीय निकायों के कानूनी प्रतिनिधि का गठन किया जाना चाहिए । इस प्रावधान को शामिल करने के लिए राज्यों के पंचायत राज अधिनियमों और शहरी स्थानीय निकायों के अधिनियम में संशोधन किया जाना चाहिए ।

ख. स्थानीय निकायों के प्रतिनिधि को स्थानीय स्वायत्तशासी सरकारों के पदाधिकारियों द्वारा भ्रष्टाचार और कुप्रशासन के मामलों की जांच करने के लिए सशक्त किया

जाना चाहिए और रिपोर्टों को सक्षम प्राधिकारियों के पास कार्रवाई के लिए प्रस्तुत किया जाना चाहिए । सक्षम प्राधिकारियों को सामान्यतः वही कार्रवाई करनी चाहिए जिसकी सिफारिश की गई हो । यदि वे सिफारिशों से सहमत न हों तो उन्हें इनके कारणों को लिखित रूप में बताना चाहिए और इन कारणों को सार्वजनिक कर देना चाहिए ।

30. (4.6.6) छानबीन और कानूनी कार्रवाई को मजबूत करना

*क. राज्य सतर्कता आयोगों/लोकायुक्तों को भ्रष्टाचार संबंधी मामलों की कानूनी कार्रवाई पर निगरानी रखने के लिए सशक्त किया जाना चाहिए ।

*ख. जांच संबंधी एजेन्सियों को विविध विषयों में दक्षता प्राप्त होनी चाहिए और वे विविध कार्यालयों/विभागों के कार्य संचालन से पूरी तरह से अवगत हों । उन्हें सरकार के विभिन्न स्कंधों से अधिकारियों को लेना चाहिए ।

*ग. जांच पड़ताल की आधुनिक तकनीकों, जैसे कि इलैक्ट्रानिक निगरानी, अचानक निरीक्षणों, घेरा डालना, तलाशी लेना और जब्ती की आडियो और विडियो रिकार्डिंग का प्रयोग किया जाना चाहिए ।

*घ. विभिन्न प्रकार के मामलों की जांच करने के लिए जांच एजेंसियों के लिए एक यथोचित समय सीमा नियत की जानी चाहिए ।

*ड. पता लगाए गए और जांच किए गए मामलों की संख्या में निरन्तर वृद्धि होनी चाहिए । भ्रष्टाचार के 'बड़े' मामलों पर केन्द्रित रहते हुए प्राथमिकताओं को पुनः चुनने की आवश्यकता है ।

*च. भ्रष्टाचार के मामलों का अभियोजन यथास्थिति राष्ट्रीय लोकायुक्त या लोकायुक्त के परामर्श से महान्यायवादी अथवा महा अधिवक्ता द्वारा तैयार किए गए अधिवक्ताओं के पैनल द्वारा किया जाना चाहिए ।

*छ. भ्रष्टाचार निवारण एजेंसियों को बहुत बड़े भ्रष्टाचार में लिप्त होने का विशेष संदर्भ देते हुए विभागों के व्यवस्थित सर्वेक्षण का आयोजन करना चाहिए ताकि आसूचना को एकत्र करके संदेहास्पद छवि वाले अधिकारियों पर नजर रखी जा सके ।

*ज. राज्यों के आर्थिक अपराध युनिट को मामलों की प्रभावशाली जांच को मजबूत करने की आवश्यकता है और वर्तमान एजेंसियों के बीच बेहतर समन्वय होना चाहिए ।

31. (5.1.12) नागरिकों की पहल

*क. नागरिकों के चार्टर को सेवा स्तरों का निर्धारण करके असरदार बनाया जाना चाहिए और यदि ये सेवा स्तर पर खरे नहीं उतरते हैं तो उसके उपचार ।

*ख. महत्वपूर्ण सरकारी संस्थानों और कार्यालयों में नैतिकता का आकलन और उसे बनाए रखने में नागरिकों को शामिल रहना चाहिए ।

*ग. नागरिकों की पहल किए जाने को बढ़ावा देने के लिए पारितोषिक योजनाओं को लाना चाहिए ।

*घ. स्कूल जागरूकता कार्यक्रमों को अमल में लाया जाना चाहिए, जिसमें नैतिकता के महत्व पर और भ्रष्टाचार कैसे खत्म किया जा सकता है इस पर प्रकाश डाला जाना चाहिए ।

32. (5.2.5) झूठा दावा अधिनियम

क. संयुक्त राष्ट्र मिथ्या दावा अधिनियम की तर्ज पर कानून लाया जाना चाहिए जिसमें नागरिकों और नागरिक सामाजिक वर्गों के लिए सरकार के विरूद्ध कपटपूर्ण दावों के लिए कानूनी राहत लेने के लिए प्रावधान हो । इस कानून में निम्नलिखित घटक होने चाहिए :

i. किसी भी नागरिक को सरकार के विरूद्ध झूठे दावे के लिए किसी व्यक्ति या एजेंसी के विरूद्ध मुकदमा करने के योग्य होना चाहिए ।

ii. यदि झूठे दावे को कानूनी अदालत में सिद्ध कर लिया जाता है तो उत्तरदायी व्यक्ति/एजेंसी, राजस्व या समाज की हुई हानि के पांच गुना के बराबर जुर्माना देने के लिए जिम्मेदार होगा ।

iii. यह हानि आर्थिक भी हो सकती है अथवा प्रदूषण के रूप में अनार्थिक अथवा अन्य सामाजिक लागतों में हो सकती है । अनार्थिक हानि के मामले में, न्यायालय को अधिकार होगा कि वह इस हानि का आर्थिक रूप में आकलन करे।

iv. मुकदमा करने वाला व्यक्ति वसूल की गई क्षति में से उपयुक्त प्रतिपूर्ति पा सकता है ।

33. (5.3.5) मीडिया की भूमिका

क. मीडिया द्वारा सभी आरोपों/शिकायतों के लिए आवश्यक समुचित जांच के लिए मानदंड और प्रणाली को अपनाया जाना और उन्हें जनता के सामने लाने के लिए कार्रवाई करना आवश्यक है ।

ख. इलैक्ट्रानिक मीडिया को एक आचार संहिता और स्वयं नियंत्रण व्यवस्था अपनानी चाहिए ताकि आचार संहिता का दुर्भाव कार्रवाई के विरूद्ध एक सुरक्षण के रूप में पालन किया जा सके ।

ग. मीडिया को भ्रष्टाचार मामलों के बारे में नियमित रूप से ब्यौरे देकर सरकारी एजेंसियां भ्रष्टाचार के विरूद्ध लड़ाई में सहायता कर सकती हैं ।

34. (5.4.2) सामाजिक लेखा परीक्षा

*क. सभी विकासशील स्कीमों के प्रचालन के दिशा–निर्देश और नागरिक केन्द्रस्थ कार्यक्रमों में सामाजिक लेखापरीक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए ।

35. (6.2.5) प्रतिस्पर्द्धा का विकास करना

*क प्रत्येक मंत्रालय/विभाग को उन इलाकों का पता लगाने के लिए एक तत्काल प्रयोग करना चाहिए, जहां वर्तमान 'कार्यों के एकाधिकार' को प्रतिस्पर्द्धा के साथ संयमित किया जा सके । इसी प्रकार का प्रयोग राज्य सरकारों और स्थानीय निकायों के स्तर पर किया जा सकता है । इस प्रयोग को एक समय सीमा में जैसे कि एक वर्ष के लिए बांध कर और कार्यों के एकाधिकार को कम करने के लिए एक नकशा बनाया जाना चाहिए । कार्य–निष्पादन को निर्धारित मानकों के अनुसार सुनिश्चित करने के लिए नियंत्रण की व्यवस्था के साथ साथ प्रतिस्पर्द्धा को भी लाना चाहिए ताकि जन हित के साथ कोई समझौता न किया जा सके ।

*ख. कुछ केन्द्रीय प्रायोजित स्कीमों का पुनर्गठन किया जा सकता है ताकि उन राज्यों को प्रोत्साहन दिया जा सके जो सेवा सुपुर्दगी में प्रतिस्पर्द्धा को विकसित करने के लिए कदम उठाते हों ।

*ग. उन विषयों पर सभी नई राष्ट्रीय नीतियां, जिनमें जनता के साथ बड़ा समन्वय होता हो, (और ऐसे विषयों पर वर्तमान नीतियों में संशोधन से), स्पष्ट रूप से प्रतिस्पर्द्धा को जन्म देने के मुद्दे को निपटाएगी ।

36. (6.3.5) लेनदेनों को सरल बनाना

*क. प्रशासनिक सुधार के केन्द्र बिन्दु में कार्य–प्रणालियों को आसान बनाने की आवश्यकता

है । विशिष्ट क्षेत्रीय आवश्यकताओं को छोड़ कर ऐसे सुधारों के मुख्य सिद्धांत होने चाहिएं : 'एक खिड़की' की व्यवस्था को अपनाना, राजतंत्र की कतारों को कम करना, निपटान के लिए समय सीमा निर्धारित करना आदि ।

*ख. वर्तमान विभागीय नियम पुस्तकों और कोडों की, विभागाध्यक्ष पर इस उत्तरदायित्व के साथ समीक्षा और उन्हें सरलीकृत किया जाना चाहिए कि वे ऐसे कागजातों को समय समय पर अद्यतन करेंगे और साट प्रतियों को आन–लाइन पर और हार्ड प्रतियों की बिक्री के लिए उपलब्ध करेंगे । इन नियम पुस्तकों को बहुत ही संक्षेप में लिखा जाना चाहिए और 'के विवेक पर छोड़ा गया' 'यथासंभव' 'उपयुक्त निर्णय ले लिया जाएं' आदि जैसे उप–वाक्यों को लिखने से बचें । इस बात को अनुमतियों, लाइसेंसों आदि के जारी करने के सभी नियमों और विनियमों के लिए अपनाया जाना चाहिए ।

*ग. प्रत्येक सरकारी संगठन में कार्य–प्रणालियों के सरलीकरण और उन्हें धारा प्रवाह में लाने के लिए पुरस्कार और मानदेयों की व्यवस्था को आरंभ किया जाना चाहिए ।

*घ. 'सकारात्मक चुप्पी' के सिद्धांत का सामान्यतः प्रयोग किया जाना चाहिए, यद्यपि यह सिद्धांत सभी मामलों में नहीं अपनाया जा सकता । जहां कहीं भी अनुमतियों/लाइसेंसों आदि को जारी किया जाना हो, उनकी प्रक्रिया के लिए एक समय सीमा होनी चाहिए जिसके पश्चात् अनुमति को प्रदान किया गया समझा जाना चाहिए, यदि यह पहले से न दी गई हो । तथापि, नियमों में यह व्यवस्था होनी चाहिए कि ऐसे किसी प्रत्येक मामले में विलंब किए जाने में जिम्मेदार अधिकारी के विरूद्ध कार्यवाई हो ।

37. (6.4.7) सूचना प्राद्यौगिकी का प्रयोग करना

*क. सरकार के प्रत्येक मंत्रालय/विभाग/संगठन को शासन में सुधार लाने के लिए सूचना प्रौद्योगिकी के प्रयोग के लिए एक योजना बनानी चाहिए । किसी भी सरकारी प्रकिया में सूचना प्रौद्योगिकी का प्रयोग वर्तमान कार्यप्रणालियों को पूरी तरह से पुनः अभियंत्रिकृत करने के बाद ही किया जाना चाहिए ।

*ख. सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय को कुछ सरकारी प्रकियाओं का पता लगा कर फिर उन्हें राष्ट्रीय पैमाने पर कंप्यूट्रीकृत करने की परियोजना को हाथ में लेने की आवश्यकता है ।

*ग. कंप्यूट्रीकरण को सफल बनाने के लिए विभागीय अधिकारियों की कंप्यूटर के संबंध में जानकारी को बढ़ाने की आवश्यकता होती है । इसी प्रकार, राष्ट्रीय सूचना केन्द्र को भी विभाग विशिष्ट गतिविधियों में प्रशिक्षित होने की आवश्यकता होती है, ताकि वे एक दूसरे के विचारों को समझ सकें और यह भी सुनिश्चित कर सकें कि प्रौद्योगिकी को प्रदान करने वाले प्रत्येक विभाग की रचना को समझ सकें ।

38. (6.6.4) सत्यनिष्ठा का समझौता

*क. आयोग 'सत्यनिष्ठा समझौते' की व्यवस्था को प्रोत्साहन देने की सिफारिश करता है। वित्त मंत्रालय को विधि और कार्मिक मंत्रालयों के प्रतिनिधियों के साथ एक कार्य दल का गठन करना चाहिए जो ऐसे समझौतों के लिए अपेक्षित व्यवहारों के प्रचार का पता लगा कर ऐसे समझौते करने के लिए एक नयाचार का प्रावधान करे । विशेष रूप से यह कार्यदल यह सिफारिश कर सकता है कि क्या ऐसे समझौतों को लागू करने के लिए वर्तमान कानून के ढांचे जैसे कि भारतीय संविदा अधिनियम और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम में कोई संशोधन करने की जरूरत है ।

39. (6.7.3) विवेकशीलता कम करना ।

*क. ऐसे सभी सरकारी कार्यालयों को, अपनी गतिविधियों की समीक्षा करनी चाहिए जिनकी जनता के साथ बातचीत होती हो तथा उन गतिविधियों की एक सूची बना लेनी चाहिए जिनमें विवेक का प्रयोग संलिप्त रहता हो । जहां ऐसा करना संभव न हो सके, वहां पर सुपरिभाषित नियमों से विवेक को बंधित किए जाने का प्रयत्न होना चाहिए । मंत्रालयों और विभागों को कहा जाना चाहिए कि वे इस काम को लेकर अपने संगठनों/कार्यालयों के साथ समन्वय करें और इसको एक वर्ष के अन्दर पूर्ण करें ।

*ख. महत्वपूर्ण मामलों पर निर्णय लेने का काम किसी व्यक्ति विशेष को सौंपने के बजाय एक समिति को दिया जाना चाहिए । तथापि, इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि इस प्रवृत्ति का प्रयोग तब नहीं किया जाना चाहिए जब तुरंत ही निर्णय लिए जाने की आवश्यकता हो ।

*ग. राज्य सरकारों को भी इसी प्रकार का रूख अपनाना चाहिए, विशेष रूप से स्थानीय निकायों और प्राधिकरणों में, जिनमें अधिकतम 'लोक संपर्क' होते हों ।

40. (6.8.7) निरीक्षण

*क. अधिकारियों की निगरानी संबंधी भूमिका पर पुनः जोर दिए जाने की आवश्यकता है। यह पुनः उल्लेख कर देना आवश्यक होगा कि पर्यवेक्षी अधिकारी अपने संबद्ध कर्मचारियों के बीच भ्रष्टाचार को दूर करने के लिए मुख्य तौर पर जिम्मेदार हैं और इस प्रयोजन के लिए उन्हें सभी रोकथाम के उपाय करने चाहिए ।

*ख. प्रत्येक पर्यवेक्षी अधिकारी को अपने संगठन/कार्यालय में गतिविधियों का विश्लेषण सावधानी से करना चाहिए, ऐसी गतिविधियों का पता लगाना चाहिए जिनसे भ्रष्टाचार फैलता हो और फिर रोकथाम और सतर्कता के उचित उपाय करने चाहिए । सरकार

अथवा जनता को अधिकारियों के कृताकृत कामों के द्वारा हुए नुकसान के सभी प्रमुख मामलों की जांच की जानी चाहिए और एक निश्चित समयबद्ध अवधि में त्रुटिपूर्ण अधिकारी पर उत्तरदायित्व नियत किया जाना चाहिए ।

*ग. प्रत्येक अधिकारी की वार्षिक निष्पादन रिपोर्ट में एक स्तंभ होना चाहिए जहां अधिकारी को यह प्रकट करना चाहिए कि उसने अपने कार्यालय और अपने अधीनस्थ लोगों के बीच भ्रष्टाचार पर नियंत्रण करने के लिए क्या क्या उपाय किए । रिपोर्ट अधिकारी को फिर उसपर अपनी विशेष टिप्पणी देनी चाहिए ।

*घ. उन पर्यवेक्षी अधिकारियों को अपनी स्थिति स्पष्ट करने के लिए कहा जाना चाहिए कि जो अपने अधीनस्थ भ्रष्ट अधिकारियों को उनकी वार्षिक निष्पादन रिपोर्टों में साफ छवि का प्रमाण पत्र दे देते हैं, यदि उस अधिकारी पर, जिसकी रिपोर्ट लिखी जा रही है, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अंतर्गत अपराध का आरोप है । इसके अतिरिक्त, उनकी रिपोर्टों में यह तथ्य दर्ज किया जाना चाहिए कि उन्होंने अपने अधीनस्थ भ्रष्ट अधिकारियों की सत्यनिष्ठा के बारे में कोई विपरीत टिप्पणी नहीं दी है ।

*ड. पर्यवेक्षी अधिकारियों को सुनिश्चित करना चाहिए कि उनके अधीन सभी कार्यालय सूचना अधिकार अधिनियम के अधीन सूचना के ब्यौरे स्वप्रेरणा से दे देने की नीति का अनुसरण करते हैं ।

41. (6.9.4) पहुंच और दायित्व को सुनिश्चित करना ।

*क. सेवा प्रदानकर्ताओं को अपनी गतिविधियों को केन्द्रीकृत करना चाहिए ताकि सभी सेवाओं को एक ही बिन्दु पर सुपुर्दगी की जा सके । ऐसे सामान्य सेवा बिन्दुओं को किसी एजेंसी को आउटसोर्स भी किया जा सकता है, जिसे नागरिकों के अनुरोध को संबंधित एजेंसियों के साथ उठाए जाने का काम दिया जा सकता है ।

*ख. ऐसे कार्यों को, जिनसे भ्रष्टाचार फेलता हो, विभिन्न गतिविधियों में विभाजित किया जाना चाहिए, जिन्हें विभिन्न लोगों को आगे सौंपा जा सकता है ।

*ग. सार्वजनिक संपर्क को अभिहित अधिकारियों तक ही सीमित रखा जाना चाहिए । नागरिकों को फाइल निगरानी व्यवस्था के साथ सूचना और सेवाएं प्रदान करने के लिए 'एक ही खिड़की का मुख्य कार्यालय' सभी विभागों में गठित किया जाना चाहिए।

42. (6.10.2) अनुवीक्षण शिकायतें

*क. ऐसे सभी कार्यालयों में, जहां बड़ी संख्या में सार्वजनिक संपर्क होता हो, वहां आन–लाइन शिकायत निगरानी व्यवस्था होनी चाहिए । यदि संभव हो तो शिकायत निगरानी का काम आउटसोर्स से किया जाना चाहिए ।

*ख. ऐसे कार्यालयों में जहां बड़ी संख्या में सार्वजनिक संपर्क होता हो, वहां शिकायतों की लेखा परीक्षा का बाहरी, सावधिक तंत्र होना चाहिए ।

*ग. प्रत्येक शिकायत की जांच करने और यदि कोई त्रुटियां हों तो उनका उत्तरदायित्व नियत करने के अतिरिक्त, शिकायत का प्रयोग व्यवस्थित त्रुटियों का विश्लेषण करने के लिए भी किया जाना चाहिए ताकि उपचारी उपाय किए जा सकें ।

43. (6.12.7) रोकथाम संबंधी सतर्कता के लिए जोखिम प्रबंधन

*क. नौकरियों की जोखिम की रूपरेखा (प्रोफालिंग) को सभी सरकारी संगठनों में अधिक व्यवस्थित ढंग से और संस्थागत तरीके से तैयार करने की आवश्यकता है।

*ख. अधिकारियों की जोखिम की रूपरेखा, उसके दस वर्ष की सेवा पूरी कर लेने के बाद और तत्पश्चात् प्रत्येक पांच वर्षों में एक बार 'प्रतिष्ठावान व्यक्तियों' की समिति द्वारा की जानी चाहिए । समिति को किसी निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए निम्नलिखित इन्पुटों का प्रयोग करना चाहिए :–

(i) रिपोर्ट अधिकारी का निष्पादन मूल्यांकन

(ii) रिपोर्ट अधिकारी द्वारा दिए गए स्वतः मूल्यांकन, जिसमें उसने अपने व्यवसाय के दौरान भ्रष्टाचार को रोकने के लिए प्रयासों पर ध्यान केन्द्रित किया हो ।

(iii) सतर्कता संगठन की रिपोर्टें

(iv) समिति द्वारा किसी मूल्यांकन प्रपत्र के माध्यम से गोपनीय रूप से किया गया किसी समकक्ष व्यक्ति का मूल्यांकन ।

44. (6.13.2) लेखा परीक्षा

*क. यह निर्धारित किया जाना चाहिए कि ज्यों ही लेखापरीक्षा दल द्वारा किसी बड़ी अनियमितता का पता चले या अंदेशा हो तो सरकार द्वारा तुरंत ध्यान दिया जाना चाहिए । इसके लिए एक समुचित व्यवस्था को बना कर रखा जाना चाहिए । यह कार्यालय प्रमुख का उत्तरदायित्व होगा कि वह किसी ऐसी अनियमितता की जांच करके कार्रवाई शुरू करे ।

*ख. लेखापरीक्षा दलों को अदालती लेखापरीक्षा में प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए ।

*ग. प्रत्येक कार्यालय को लंबित लेखापरीक्षा के प्रश्नों के बारे में वार्षिक लोक विवरण बनाने चाहिए ।

45. (6.14.3) भ्रष्टाचार पर सक्रिय सतर्कता

*क. सक्रिय सतर्कता उपाय करना कार्यालाध्यक्ष की मुख्य रूप से जिम्मेदारी होगी । कुछ संभव उपायों को पैरा 6.14.2 में दर्शाया गया है ।

46. (6.15.2) आसूचना एकत्र करना

*क. पर्यवेक्षी अधिकारियों को अपने अधीनस्थ कर्मचारियों की निष्ठा का उनके द्वारा मामलों, शिकायतों की देखरेख और विभिन्न स्रोतों से फीडबैक के आधार पर मूल्यांकन किया जाना चाहिए । इससे यह अधिकारियों की जोखिम की रूपरेखा के लिए एक महत्वपूर्ण इन्पुट बन सकता है ।

47. (6.16.2) सतर्कता नेटवर्क

*क. एक ऐसे राष्ट्रीय आंकड़ों का गठन किया जाना चाहिए जिसमें सभी स्तरों के सभी भ्रष्टाचार मामलों के ब्यौरे शामिल होने चाहिए । ये आंकड़े जनता के अधिकार क्षेत्र में होने चाहिए । आंकड़ों को नियमित रूप से अद्यतन करने के लिए जाने पहचाने प्राधिकारियों को जिम्मेदार ठहराया जाना चाहिए ।

48. (7.9) निष्ठावान सिविल सेवकों का बचाव करना ।

*क. किसी लोक सेवक के विरूद्ध शिकायतों के द्वारा या जांच एजेंसी द्वारा अपनाए गए स्रोतों से प्राप्त भष्टाचार के प्रत्येक आरोप को कोई छानबीन करने से पहले प्रारंभिक अवस्था में गहराई से परीक्षा कर लेनी चाहिए । ऐसे प्रत्येक आरोप का यह मूल्यांकन करने के लिए विश्लेषण किया जाना चाहिए कि क्या आरोप विशिष्ट है, क्या यह विश्वसनीय है और क्या इसे सत्यापित किया जा सकता है । जब कोई आरोप इन मानदंडों की आवश्यकताओं को पूरा करता है, तभी उसे सत्यापन के लिए सिफारिश की जानी चाहिए और सत्यापन का काम सक्षम प्राधिकारी का अनुमोदन प्राप्त करने के बाद ही किया जाना चाहिए । सत्यापनों/छानबीनों को अधिकृत किए जाने के लिए सक्षम प्राधिकारियों के स्तरों का नियतन संदिग्ध अधिकारियों के विभिन्न स्तरों के लिए भ्रष्टाचार निरोध एजेंसियों में किया जाना चाहिए ।

*ख. भ्रष्टाचार के आरोपों से संबंधित मामलों में शिकायतों/स्रोत से प्राप्त जानकारी के आधार पर खुले रूप में जांच पड़ताल सीधे ही नहीं की जानी चाहिए । जब सत्यापन/गुप्त छानबीनों को अनुमोदित कर दिया जाए तो यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि ऐसे सत्यापनों की गोपनीयता बरकरार रहे और सत्यापन ऐसे ढंग से किया जाए जिससे कि न तो संदिग्ध अधिकारी और न कोई और व्यक्ति को इसके बारे में जानकारी हो पाए । ऐसी गोपनीयता न केवल निर्दोषी और ईमानदार अधिकारियों की प्रतिष्ठा बचाने के लिए आवश्यक है, बल्कि खुली आपराधिक जांच की

प्रभावकारिता को सुनिश्चित करने के लिए भी जरूरी है । ऐसे सत्यापन/छानबीन की गोपनीयता यह सुनिश्चित करेगी कि यदि आरोप को गलत पाया जाता है तो मामले को बिना किसी को पता लगे समाप्त किया जा सकता है । छानबीन/सत्यापन अधिकारियों को भ्रष्टाचार के आरोपों के साथ निपटने में लिप्त संवेदनशीलताओं का अनुभव करने की स्थिति में होना चाहिए ।

*ग. सत्यापन/छानबीनों के नतीजों के मूल्यांकन को सक्षम और न्यायपूर्ण तरीके से किया जाना चाहिए । ऐसे तथ्यों के समर्थन में एकत्र किए गए तथ्य और साक्ष्य के त्रुटिपूर्ण मूल्यांकन के कारण अत्यधिक अन्याय हो सकता है । इस काम की देखरेख कर रहे लोगों को केवल सक्षम और निष्ठावान ही नहीं होना चाहिए बल्कि निष्पक्षपूर्ण और न्याय चेतना से सराबोर भी होना चाहिए ।

*घ. जब कभी कोई छानबीन अधिकारी तकनीकी/जटिल मामलों को समझने के लिए किसी विशेषज्ञ से परामर्श करना चाहता हो तो वह ऐसा कर सकता है परंतु प्रत्येक अवस्था में उचित विवेक का प्रयोग करना अनिवार्य आवश्यकता होनी चाहिए ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि निष्ठावान और निर्दोष व्यक्ति के साथ कोई अन्याय न हो सके ।

*ड. प्रशिक्षण द्वारा और छानबीन/जांच के दौरान अपेक्षित विशेषज्ञों को संबद्ध करके भ्रष्टाचार निवारण एजेंसियों में शक्ति निर्माण को सुनिश्चित किया जाना चाहिए । उन लोक सेवकों के बीच, जिनसे व्यापारिक/वित्तीय निर्णय लिए जाने की अपेक्षा होती है, उचित प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से शक्ति निर्माण किया जाना चाहिए ।

*च. जांच एजेंसियों में पर्यवेक्षी अधिकारियों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि केवल उन्हीं लोक सेवकों का अभियोजन किया जा सके जिनके विरूद्ध सुदृढ़ साक्ष्य हों।

*छ. अधिकारियों की प्रोफाइलिंग होनी चाहिए । प्रत्येक सरकारी सेवक की क्षमताएं, व्यावसायिक सक्षमता, सत्यनिष्ठा और प्रतिष्ठा के ब्यौरे बनाकर उन्हें अभिलेखबद्ध किया जाना चाहिए । किसी सरकारी सेवक के विरूद्ध कार्यवाही करने से पहले संबंधित सरकारी सेवक की प्रोफाइल बनाई जानी चाहिए ।

*ज. जांच करने वाली एजेंसियों के विरूद्ध भ्रष्टाचार के आरोपों की जांच करने के लिए एक विशेष जांच एकक प्रस्तावित लोकपाल (राष्ट्रीय लोकायुक्त)/राज्य लोकायुक्त/सतर्कता आयोग से संबद्ध होना चाहिए । यह एकक बहु विषयक होना चाहिए और इस एकक को जांच एजेंसी के विरूद्ध उत्पीड़न के आरोपों के मामलों की भी जांच करनी चाहिए । ऐसी ही ईकाईयां राज्यों में भी गठित की जानी चाहिएं। ऐसी ही इकाईयां राज्यों में गठित की जानी चाहिए ।

संलग्नक – 1(1)

"शासन में नैतिकता – कथनी से करनी तक"
पर राष्ट्रीय विचार गोष्ठी

प्रशासनिक सुधार आयोग और राष्ट्रीय न्यायिक अकादमी
द्वारा आयोजित

समापन भाषण
(2 सितम्बर 2006)

न्यायमूर्ति वाई. के. सभरवाल
भारत के मुख्य न्यायाधीश

स्वतंत्रता के बाद से ही भारत शिष्टाचार में आगे रहने वाले उन देशों में से एक रहा है, जो नागरिक समाज के सिद्धांतों को हृदय में बसा कर रखते हैं । भारत ने उस संविधान को अपना कर इस संबंध में अपनी प्रतिज्ञा पूरी करने की कोशिश की है, जिसने एक ऐसा सपना देखा था जिसमें समानता, निष्पक्षता और न्याय, जो इस विश्वास द्वारा जाने जाते है कि सभी लोगों को एकसमान राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक अधिकार हों । हमारी शासन प्रणाली कानूनी नियमों के ऊंचे सिद्धांतों पर आधारित है, जहां राज्य की शक्ति तीन मुख्य भागों में विभाजित है, जिनमें से प्रत्येक ने आचार के कर्तव्य के अधीन इस ढंग से काम करना है जो सभी की भलाई के लिए उपयोगी हो और एक कल्याणकारी राज्य के उद्देश्य को प्राप्त कर सके । जांच और संतुलनों को इस सूत्र के अनुपालन कि ''आप चाहे जितने भी ऊंचे हो जाओ, कानून आपसे ऊपर है,'' को सुनिश्चित करने के लिए छिपे सुरक्षणों के रूप में बनाया गया था । संविधान का उद्देश्य कांच की तरह स्पष्ट है, अर्थात् अच्छे शासन का लक्ष्य ।

हमारा राजतंत्र सिविल नागरिकों की मांगों को ध्यान में रखते हुए किस प्रकार अपना काम करता है, इस बात को देखने के बाद, उस समय की सरकार ने 1966 में एक जांच आयोग का गठन किया था जिसे प्रशासनिक सुधार आयोग कहा गया । उक्त पहले प्रशासनिक सुधार आयोग की सिफारिशों से हमारे देश में शासन की व्यवस्था में गुणात्मक परिवर्तन आए, जिनमें इस प्रकिया में प्रशासनिक व्यवस्था का ढांचा, शक्तियों और कृत्यों का विकेन्द्रीयकरण, वित्तीय प्रबंधन का नवीनीकरण और भ्रष्टाचार से निपटने का मामला, एक ऐसा विषय जो पुराने जमाने से सभी मुद्दों की जननी बना हुआ है, जैसे व्यापक मुद्दों पर ध्यान केन्द्रित किया गया ।

अब तक गंगा का पानी बहुत बह चुका है । भारत ने कई प्रकार से तरक्की की है । देश की जनसंख्या ज्योमितीय ढंग से कई गुना बढ़ गई है, आज भारत के लोगों की सामाजिक न्याय और उनके मूलभूत

संलग्नक – 1(1) जारी

अधिकारों की गारंटी के लिए आशाएं पहले से कहीं अधिक विकट और जोरदार हो गई हैं, विशेष तौर से, उन मामलों में, जो दर्जे की समानता, कानून के समक्ष समानता, सार्वजनिक रोजगार के अवसरों में समानता, संसाधनों और राष्ट्रीय आय आदि से संबंधित हैं ।

भारत अब अशक्त देश नहीं रह गया है, जो गरीबी रेखा के नीचे अमानवीय स्थितियों में रह रही अपनी लाखों की जनसंख्या को खिलाने के लिए हमेशा वित्तीय सहायता मांगता फिर रहा हो । आज हमारा देश एक आधुनिक देश बन गया है, जो विकास और आर्थिक प्रगति के क्षेत्रों में विशाल कदम लांघ चुका हैं । हमारी अर्थव्यवस्था आज ऐसी है जिसे पश्चिम के विकसित देश भी निकट भविष्य में एक वैश्विक श्शक्ति के रूप में उछाल तख्त पर शिलाप्रेक्षपक द्वारा उभर कर सामने आने वाली मानते हैं । पिछले लगभग दो दशकों से नीतियों और आयोजन में बड़ी संख्या में परिवर्तन आ जाने से कुछ समय से हमें सफलताएं देखने को मिली हैं विशेष रूप से विकास और आर्थिक गतिविधि से संबंधित मामलों में । उदारीकरण के फलस्वरूप लोक पदाधिकारियों की भूमिका में धीरे धीरे परिवर्तन आ रहा है । शासन के सख्त नियंत्रण विनियामक व्यवस्थाओं पर असर डाल रहे हैं । सामान्यतः कहा जाए तो सभी दावाधारियों में फैल रही सहक्रियाशीलता की भावना सभी के द्वारा अनुभवगम्य है ।

दूसरा पहलु यह है कि व्यापक आर्थिक प्रगति के बावजूद, विकास में न्यायसंगत वितरण दिखाई नहीं दिया है । पंचायती राज संस्थाओं के गठन के द्वारा राज्य की श्शक्ति का विकेन्द्रीकरण करने के लिए 73वें और 74वें संशोधन के माध्यम से सांविधानिक अधिदेश के बावजूद, जाति और पंथ के बाहरी और अस्वस्थ मुद्दों से उठने वाले क्षेत्रीय असंतुलनों की निरंतर ग्रस्तत बनी हुई है । पूर्ण साक्षरता का लक्ष्य अभी दूर का सपना है । बड़े ग्रामीण इलाकों में लाभकारी रोजगारों, सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं या बिजली, स्वच्छ जल, परिवहन आदि जैसी मूलभूत सुविधाओं के अवसरों से वंचित रखना निरंतर जारी है । सार्वजनिक पदों पर बैठे लोग अपने आप को सार्वजनिक सेवा में न समझ कर अभी भी यह समझते हैं कि एक राजा की तरह सत्ता उन्हीं के हाथों में है । राजनीति के अपराधीकरण और नौकरीशाही के राजनीतिकरण से अभिवृत्तिक परिवर्तनों का मार्ग रुक जाता है जिसका नतीजा होता है सभी स्तरों पर भाई–भतीजावाद, प्रतिकूल आचार, उदासीनता और विकृति है । सार्वजनिक जीवन में भ्रष्टाचार का विष जैसे हमारा निरंतर सहयोगी बना हुआ है ।

पहले प्रशासनिक सुधार आयोग ने जब से अपना काम समाप्त किया है उससे लगभग चार दशकों के गुजर जाने के बाद भारत सरकार द्वारा एक और प्रशासनिक सुधार आयोग का गठन बहुत ही उपयुक्त है, विशेषतः ''देश के लिए सरकार के सभी स्तरों पर एक क्रियाशील, उत्तरदायी, जवाबदेह संपोषित तथा कार्यकुशल प्रशासन बनाने के लक्ष्य'' को प्राप्त करने के उद्देश्य से । विचारार्थ विषयों में इस उद्देश्य को शामिल करना इस आशा को प्रेरित करता है कि भारत अभी भी उस साफ–सुथरे शासन के लक्ष्य को पाने के लिए जागरूक है जो हमने अपने लिए 1950 में संविधान के माध्यम से अपना लिया था । प्रशासनिक सुधार आयोग द्वारा अध्ययन के क्षेत्रों में सरकार का संगठनात्मक ढांचा, कार्मिक प्रशासन को नया रूप देना,

संलग्नक – 1(1) जारी

वित्तीय प्रबंधन प्रणालियों को सुदृढ. करना, राज्य, जिला और पंचायती स्तरों पर प्रभावी प्रशासन, सामाजिक धन, ट्रस्ट एवं सहभागितापूर्ण लोक सेवा प्रदान करना, लोक व्यवस्था आदि शामिल हैं । परंतु मेरे विचार में, ''शासन में नैतिकता'' सबसे अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि यह आयोग के एजेंडा के अन्य मुद्दों की जड़ तक जाती है । नैतिक शासन का उद्देश्य सार्वजनिक जीवन में भ्रष्टाचार के संकट के साथ नजदीकी से जुड़ा हुआ है । भ्रष्टाचार और नैतिक शासन दोनों एक साथ नहीं चल सकते । ये दोनों एक दूसरे से मेल नहीं खाते । अतः भ्रष्टाचार निरोध के उपायों की प्रभावकारिता के बारे में विचार करने की आवश्यकता है । यह एक ऐसा क्षेत्र है जो शासन के सभी तीनों अंगों से संबंधित है । यह अति समुचित ही है कि प्रशासनिक सुधार आयोग ने इस राष्ट्रीय विचार गोष्ठी का राष्ट्रीय न्यायिक अकादमी के साथ संयुक्त रूप से आयोजन किया है ताकि न्यायिक प्राधिकारियों सहित विविध दावाधारियों के विचारों को जाना जा सके ।

जब हम शासन में नैतिकता की बात करते हैं तो यह आवश्यक है कि हम ''शासन'' की अवधारणा को समझें या हो सकता है, पुनः समझें, जो इतनी पुरानी है कि जितनी मानव सभ्यता । जब से मनुष्य ने राजतंत्र के अस्तित्वों में स्वयं को संगठित करने का निर्णय लिया, तब से समाज छोटे छोटे भागों में बंट गया और इसने ऐसी शासन व्यवस्था को अपनाया, जिसके द्वारा इसके आंतरिक मामले और बाहरी संबंध नियंत्रित हो सके ताकि इसे अधिकतम लाभ हो सके । ''शासन'' का बहुत ही सरलीकृत रूप देखें तो इसका सरल अर्थ है निर्णय लेने की प्रक्रिया और वह प्रक्रिया जिसके द्वारा निर्णयों को कार्यान्वित किया जाता हो । जैसा कि मानव विकास रिपोर्ट द्वारा वर्णन किया गया है, यह ''देश के संसाधनों और मामलों का प्रबंधन करने के लिए शक्ति या प्राधिकार के प्रयोग – राजनीतिक, आर्थिक, प्रशासन या अन्यथा – को'' अपरिहार्य बना देती है ।

इस परिप्रेक्ष्य से, ''उन व्यवस्थाओं, प्रक्रियाओं और स्थितियों का एक ही स्थान पर संकलन हो जाता है, जिनके द्वारा नागरिक और वर्ग अपने हितों को सुस्पष्ट करते हैं, अपने कानूनी अधिकारों का प्रयोग करते हैं, अपने दायित्वों को निभाते हैं और अपने मतभेदों को सुलझाते हैं ।'' उपर्युक्त का आवश्यक परिणाम यह होता है कि शासन ''एक समन्वय का साधन बना जाता है जिसके माध्यम से नागरिक मध्यस्थता करके शासन के साथ बातचीत करते हैं ।'' इससे यह प्रकट होता है कि शासन के गुण अधिकतर लोगों द्वारा दिखाई गई आसक्ति पर निर्भर करते हैं । मध्यकालीन युग और औपनिवेशिक शासन, विशेष रूप से अफ्रीका और एशिया महाद्वीपों के अनुभवों के आधार पर बोलते हुए, कुछ राजनीतिक वैज्ञानिक शासन प्रणाली का वर्णन करते हुए उन शब्दों में व्यंग्य कसते थे, जो मैं यहां उद्धरण कर रहा हूं :–

> *''सारे इतिहास में यह चौंका देने वाला धैर्य था जिसके साथ पुरूष और महिलाओं ने उनकी सरकारों द्वारा डाले गए अनावश्यक बोझों को सहा था ।''*

संलग्नक – 1(1) जारी

आज विश्व ऐसी संशयवादी दार्शनिकता से बहुत दूर आ गया है । आज स्वतंत्र विश्व के सदस्य देशों का बहुमत 'कल्याणकारी राज्य' के सिद्धांत पर अपनी नींव रखता है, जिसमें संबंधित निवासियों की पूर्ण सहभागिता होती है, जन हित के कल्याण के लिए प्रयत्न किए जाते हैं और इस प्रक्रिया में सामाजिक हितों को प्राप्त करने के लिए व्यक्ति की उन्नति के लिए इष्टतम अवसर और संलिप्तता बनाई जाती है । इससे केवल शासन के मुकाबले ''अच्छे शासन'' का किसी शासन प्रणाली के भीतर एक विविध भागों की अवधारणा के रूप में विकास हुआ है, जो समाज के मूलभूत मूल्यों का निश्चित रूप से पता लगाने में सक्षम है, जहां मानदंडों का संबंध आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक–सांस्कृतिक मुद्दों से होता है जिसमें मानव अधिकार में लिप्त भी मुद्दे होते हैं और वह होता है जो उसे जवाबदेह और ईमानदार प्रशासन के माध्यम से अपनाता है । अच्छा शासन कोई मरीचिका या रामराज्य जैसी अवधारणा नहीं है । यह केवल वह मार्ग प्रशस्त करता है जिसमें प्रशासन जीवन की मूलभूत सुविधाओं की संरचना करके उन्हें उपलब्ध कराकर, अपने लोगों को सुरक्षा प्रदान करके और उनके स्तर को सुधारने के लिए अवसर प्रदान करके व्यक्तिगत उन्नति के लिए अवसरों तक पहुंच प्रदान करके, उनके वचनबद्ध भविष्य के लिए उनके दिलों में आशा बंधा कर, एक समान और समान योग्य आधार देकर, सहभागिता के अवसर देकर और सार्वजनिक कार्यों के निर्णय निर्माण में अपना प्रभाव डालने की शक्ति देकर, एक पोषित उत्तरदायी प्रणाली देकर, जिसमें न्याय स्वच्छ, निष्पक्ष और अर्थपूर्ण ढंग से योग्यताओं पर दिया जाता हो और सरकार के प्रत्येक अंग या प्रकार्य में जवाबदेही और ईमानदारी को बरकरार रखते हुए अपने समाज के सदस्यों का जीवन स्तर सुधारता है ।

शासन और सार्वजनिक जीवन में नीचता और चरित्रहीनता उन्नत समाजों में भी उनके इतिहास में भिन्न भिन्न समयों पर हुई है । अब्राहम लिंकन के शब्दों में कहा गया है :–

> *''मैं निकट भविष्य में एक संकट को अपनी ओर आता देख रहा हूं जो मुझे अचेतन कर रहा है और मुझे अपने देश की सुरक्षा के लिए थरथराहट दे रहा है..... ऊंचे स्तरों पर भ्रष्टाचार का जमाना आएगा और देश की धन सत्ता अपनी नकेल को लोगों के दुःखों का समाधान करते हुए जब तक धन संपदा कुछ लोगों की मुट्ठी में न आ जाए और गणतंत्र नष्ट न हो जाए, लंबे समय तक चलाने का प्रयास करेगी ।''*

संयुक्त राष्ट्र मानव अधिकार आयोग के अनुसार, एक अच्छे शासन की विशेषताओं में पारदर्शिता, उत्तरदायित्व, जवाबदेही, सहभागिता और लोगों की आवश्यकताओं के प्रति दायित्व शामिल होते हैं । अतः अच्छा शासन एक ऐसे वातावरण को लाने से जुड़ा होता है, जो मानव अधिकारों का प्रयोग करने और मानव विकास को बनाए रखने में प्रेरक हो । विश्व समुदाय विकास के 'अधिकार पर आधारित दृष्टिकोण' का प्रारंभ से ही समर्थन करता है और प्रत्येक सदस्य देश के खोज–बीन रिकार्ड का परीक्षण करता है । सरकार के प्रत्येक सिविल समाज की यह आशा होती है कि वह अपनी वचनबद्धता को पूरा करे और एक ऐसा न्यायसंगत वातावरण प्रदान करे जो व्यक्ति के विकास के अनुकूल हो । सरकार से यह अपेक्षा होती है कि वह अपने लोगों के प्रति पूरी तरह से जवाबदेह बन सके और सार्वजनिक संसाधनों के प्रयोग में पारदर्शी हो । यह

संलग्नक – 1(1) जारी

आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों का प्रवर्तन करता है और किसी भी प्रकार के भ्रष्टाचार को स्थान नहीं देता क्योंकि बेईमानी, आर्थिक कल्याण के लिए अभिशाप है और यह विकास के लिए आबंटित लोक निधि को अवैध रूप से निजी तिजोरी में बदल देती है । यही प्रमुख कारण है कि क्यों विश्व बैंक अपने गरीबी निवारण मिशन के लिए अच्छे शासन और भ्रष्टाचार निरोध उपायों को केन्द्रित करता है ।

श्री आर. वेंकटारमन, भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति ने कहा था कि एक अच्छी सरकार वह है जो ''स्थायी हो और बहुसंख्यक लोगों का सत्यता के साथ प्रतिनिधित्व करती हो, अपनी क्षेत्रीय सत्यनिष्ठा और राष्ट्रीय प्रभुसत्ता का पालन करती हो, आर्थिक उत्थान और विकास में तेजी लाती हो, सभी वर्गों के लोगों के कल्याण को सुनिश्चित करती हो और बिना विलंब न्याय देती हो ।''

क्योंकि मानवीय अधिकारों को मानव विकास करने के लिए भी बनाया जाता है, अच्छी सरकार मानव अधिकारों की रक्षा को अपने एजेंडे में सर्वोपरि प्राथमिकता देती है । संक्षेप में, उत्तम शासन, संस्थागत निरोध और संतुलन प्रणाली के माध्यम से शक्तियों के ऊर्ध्वगामी और अधोगामी पृथकीकरण और प्रभावकारी निगरानी एजेंसियों के अलावा सार्वजनिक नीति निर्माण में प्रभावी भागेदारी, कानूनी नियम के प्रचार और स्वतंत्र न्यायपालिका में लिप्त रहता है । विश्व बैंक संस्थान में शोधकर्त्ताओं ने इसी प्रकार से राजनीतिक स्थायित्व के साथ महत्वपूर्ण गुण, सरकार की प्रभावकारिता, जिसमें नीति निर्माण की विशेषता और लोक सेवा प्रदान करना शामिल है, जवाबदेही, सिविल स्वतंत्रता, कानूनी नियम, जिसमें सम्पत्ति के अधिकार शामिल हैं, न्यायपालिका की स्वतंत्रता और भ्रष्टाचार पर नियंत्रण जैसे अच्छे शासन के मुख्य अय्यामों के बीच श्रेष्ठता प्राप्त की है । एशिया और प्रशांत महासागर के संयुक्त राष्ट्र आर्थिक और सामाजिक आयोग द्वारा अपनाए गए विचार भी लगभग मिलते जुलते हैं । इसमें कहा गया है कि ''अच्छे शासन की 8 मुख्य विशेषताएं होती हैं । ये हैं, सहभागिता, सहमतिन्मुख, जवाबदेह, पारदर्शी, उत्तरदायी, प्रभावी और कुशल, न्यायसंगत और व्यापक और जो कानूनी नियमों का पालन करे । यह इस बात को आश्वस्त करता है कि भ्रष्टाचार न्यूनतम हो, अल्पसंख्यकों के विचारों का ध्यान रखा जाए और निर्णय निर्माण में समाज में सबसे कमजोर तबकों की आवाज सुनी जाए । यह समाज की वर्तमान और भविष्य की आवश्यकताओं के लिए भी जवाबदेह होता है।''

ये सभी अभिव्यक्तियां समय–परीक्षण अवधारणाओं के सिद्धांतों को बतलाती हैं । ''सहभागिता'' का प्रभावी होने के लिए सूचित और संगठित होना आवश्यक है और इसलिए, यह एक ओर ''संबद्धता और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता'' पर निर्भर करती है और दूसरी ओर ''संगठित सिविल समाज'' के अस्तित्व पर । यह आवश्यक रूप से ''प्रतिनिधि लोकतंत्र'' की ओर इशारा करती है । ''कानूनी नियम'' के लक्षण पूर्व अपेक्षित स्वच्छ वैधानिक ढांचे'' में अन्तर्निहित होते हैं जिनका निष्पक्षता से प्रवर्तन किया जाता है और विशेषतः ''मानव अधिकारों की पूरी रक्षा'' विशेष रूप से समाज के कमजोर तबकों के लिए । ''पारदर्शिता'' का घटक यह मांग करता है कि सूचना स्वतंत्र रूप से उपलब्ध हो और निर्णयों को इस प्रकार से लिया जाए या प्रभावी किया जाए कि वे नियमों और विनियमों का पालन करते हों । ''जवाबदेही'' गुण यह अनिवार्य करता है कि सभी

संलग्नक – 1(1) जारी

लोक संस्थान और उनकी प्रक्रियाएं ''एक युक्तियुक्त समय में सभी दावाधारियों की सेवा'' करने का प्रयास करें ।

उत्तम शासन, समाज में एक सुदृढ़ मानव विकास की उपलब्धि के लिए एक व्यापक सहमति बनाने के प्रयासों पर निर्भर करता है । यह घटक उत्तम शासन देने के लिए सर्वाधिक अनुकूल सरकार के एक प्रकार के रूप में प्रतिनिधि लोकतंत्र के महत्व को पुनः रेखांकित करता है । इस प्रकार की सरकार ही केवल पूर्ण समावेशन का दावा कर सकती है और ऐसा वातावरण आश्वस्त कर सकती है जिसमें सुधार और उन्नति के लिए निष्पक्षता और अधिकतम अवसर हों । यह अवश्य है कि परिणाम (आउटपुट) उपलब्ध संसाधनों के शक्तिशाली प्रयोग में कुशलता पर निर्भर करेंगे । तथापि, यदि शासन प्रणाली में ऐसे लोगों को नियत करने की कोई व्यवस्था नहीं की जाती है जो देश की शक्ति को जवाबदेह बना सके तो ऐसे उत्तम शासन का लक्ष्य समाज में काम नहीं कर पाएगा ।

लोकतंत्र, उदारता और विधि का नियम – ये तीनों उस ट्रोइका गाड़ी (अश्वत्रय) का एक साथ प्रतिनिधित्व करते हैं जिसे सिविल समाज के सूचकांक के रूप में अब सभी स्वीकार करते हैं । लोकतंत्र ऐसी सरकार का प्रतीक होता है जो लोगों की, लोगों द्वारा और लोगों के लिए होती है । लोकतंत्र की धारणा को एक स्वाभाविक उपसिद्धांत के रूप में अपनाते हुए व्यक्तिगत आजादी की रक्षा की जाती है । यह कानूनों की सुव्यवस्थित समनुरूपता के संयोग को लिप्त करता है, जिसके द्वारा समाज को नियंत्रित किया जा सकता है और विभिन्न संघर्ष हितों का पूरी व्यापकता से सामंजस्य किया जा सकता है । यही कारण है कि ''कानून के नियम'' अपरिहार्य होते हैं । यह अराजकता या मनमौजी एकाधिकार के विपरीत कानून के उत्कर्ष की परिकल्पना करता है । यह कानून के समक्ष सभी की समान जवाबदेही को लिप्त करता है चाहे कोई निम्न दर्जे का हो या उच्च दर्जे का ।

लोकतंत्र को शताब्दियों के अनुभव के बाद उन लोगों के बीच अपनाया गया है जो अच्छे शासन के सर्वोत्तम और अत्यधिक स्वीकार किए जाने वाले रूप में मानवीय व्यक्ति, गरिमा और अधिकारों का ध्यान रखते हैं । यह एक विचारवान धारणा है कि सभी नागरिकों को उन निर्णय बनाने वाली प्रक्रियाओं में भाग लेने का अधिकार होता है, जो उन नीतियों को अपनाती हैं जो समाजों पर लागू होती हों । इसका यह भी अर्थ है कि बहुमत निर्णय बनाने में कुछ सीमाएं होती हैं और इसलिए कुछ मूलभूत अधिकारों की रक्षा करना अपरिहार्य हो जाता है । यह उन असंख्य प्रतिस्पर्द्धात्मक हितों, मांगों, बाधाओं और विवशताओं के बीच एक आवश्यक साम्यता के रखरखाव पर आश्रित होता है, जो विकास के लिए उत्सुक किसी सिविल समाज में विद्यमान होते हैं ।

अतः वे महत्वपूर्ण सिद्धांत जो किसी आधुनिक लोकतंत्र का आधार ''कल्याणकारी राज्य'' की धारणा से प्रतिबद्ध हो कर बनते हैं और वे सिद्धांत जो ''अच्छे शासन'' के होते हैं, ये दोनों एक जैसे ही होते हैं अर्थात् स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनावों द्वारा सुनिश्चित की गई सभी दावाधारियों की निर्णय निर्माण प्रक्रिया में संपूर्ण सहभागिता, बोलने और प्रेस की स्वतंत्रता, कानून की दृष्टि और अवसरों में एकसमानता, कानूनी नियम और

संलग्नक – 1(1) जारी

स्वतंत्र तथा प्रभावकारी न्यायपालिका सहित व्यक्ति और समाज के उत्थान के लिए प्रेरक मूलभूत अधिकारों की गारंटी । इस परिप्रेक्ष्य से, ''सच्ची लोकतंत्रता'' ''अच्छे शासन'' का पर्याय है ।

भारत में संविधान निर्माताओं को इन शब्दों में सावधानी बरतने की जानकारी थीः ''जब विधायिका और कार्यपालिका एक ही व्यक्ति या निकाय में एकत्र हो जाती हैं तो वहां स्वतंत्रता नहीं हो सकती ..... जहां न्याय की शक्ति विधायिका के साथ जुड़ जाती है तो जनता की स्वतंत्रता और जीवन दोनों ही मनमाने ढंग से नियंत्रण के शिकार हो जाते हैं ।'' और फिर ''जहां न्याय करने की शक्ति कार्यपालिका की शक्ति के साथ जुड़ जाती है वहां न्यायाधीश एक दमनकारी की तरह हिंसा जैसा रवैया अपना सकता है ''।

अतः यह सुनिश्चित करने के लिए कि संविधान के मूल ढांचे को क्षति न पहुंचे, मूलभूत अधिकारों को छोटा न करना पड़े, कानून के नियम हमेशा बरकरार रहें और संविधान देश का 'वरिष्ट कानून', मूलभूत और सर्वोच्च कानून बना रहे, न्यायिक समीक्षा की अवधारणा को सहायता के रूप में रखा गया है और संविधान को प्रत्येक खंड के सभी अधिनियमों की कसौटी घोषित किया गया है । यह गारंटी देने के लिए कि कानून के नियम प्रत्येक व्यक्ति पर और प्रत्येक व्यक्ति के लिए लागू हों और संविधान द्वारा दिए गए वचन केवल कागजी वचन ही बन कर न रह जाएं, संविधान निर्माताओं ने न्यायपालिका की स्वतंत्रता के लिए उपबंध किए हैं ।

एक न्यायपूर्ण लोकतांत्रिक शासन का एक अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्धांत होता है सरकारी शक्ति में संवैधानिक परिसीमाओं का विद्यमान रहना । ऐसी परिसीमाओं में सावधि चुनाव, सिविल अधिकारों की गारंटी और एक स्वतंत्र न्यायपालिका, जो नागरिकों को उनके अधिकारों की रक्षा करने की आज्ञा दे और सरकारी कार्यवाइयों के विरूद्ध समाधान कर सके । ये परिसीमाएं, सरकारी शाखाओं को एक दूसरे के साथ और लोगों को जवाबदेही में सहायता प्रदान करती हैं । स्वतंत्र न्यायपालिका का होना कानूनी नियमों को सुरक्षित रखने के लिए महत्वपूर्ण है और इसलिए, यह अच्छे शासन का एक महत्वपूर्ण पहलु है ।

परंतु न्यायालयों को बड़ी सुदृढ़ता के साथ यह सुनिश्चित करना होता है कि देश के कानूनो को लगातार प्रभावी और निष्पक्ष रखा जा सके । कानून को चाहिए कि वह सरकार की सभी शाखाओं को एक साथ स्वेच्छा से बांधे । कानून के नियम भी व्यापारिक संरचना के लिए और पूंजी बाजार की स्थापना के लिए एक आधार हैं, जो आर्थिक विकास की नींव रखते हैं । नागरिकों को कानून निर्माण के सभी स्तरों में प्रत्यक्ष रूप से अथवा अपने निर्वाचित प्रतिनिधियों के माध्यम से संलिप्त होना पड़ता है । इस प्रक्रिया में सहभागिता लोगों को कानून में दावा देती है और यह विश्वास देती है कि कानून उनकी व्यक्तिगत और सम्पत्ति के अधिकारों की रक्षा करेगा ।

न्यायिक व्यवस्था को आखिरकार अधिक अच्छा शासन सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करनी होती है । विनियमों, नियमों और कार्य–पद्धतियों का आधिक्य हो सकता है परंतु जब विवाद उठते हैं तो उन्हें किसी कानूनी न्यायालय में ही सुलझाया जाता है । हां, इसके लिए माध्यस्थ जैसे वैकल्पिक विवाद समाधान तंत्र

संलग्नक – 1(1) जारी

हो सकते हैं । साधारणतः न्यायपालिका को ही पहला कदम उठाना चाहिए और सुनिश्चित करना चाहिए कि स्वस्थ वृत्तियां प्रचलित हों ।

इस राष्ट्रीय विचार गोठी के एजेंडा को देखते हुए, मैं विश्वस्त हूं कि भ्रष्टाचार का स्वरूप और इसके मानव गतिविधि के अनेक पहलुओं के शासन पर समग्र प्रभाव पर इन दो दिनों में प्रतिनिधियों द्वारा पहले ही विस्तार से विचार–विमर्श किए जा चुके हैं । यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि भ्रष्टाचार शासन को ''कुशासन'' की स्थिति में ला देता है । हमारे देश में लोक जीवन के विभिन्न छोरों में जो भ्रष्टाचार के उदाहरण सामने आते हैं, उनका एक बार फिर से उल्लेख करना निष्फल होगा । हमारे संस्थानों में चाहे वे सार्वजनिक हों या निजी, सभी स्तरों पर दूषण की कहानियां नियमित अंतराल पर रोज हो रहीं हैं । कुछेक अति ईर्षालु मीडिया के उच्च वर्ग के लोगों ने, हम पर शासन करने वाले प्रशासनिक पदानुक्रम के लगभग प्रत्येक क्षेत्र में भ्रष्टाचार को सामने लाने के लिए स्टिंग आपरेशन को रोजमर्रा की चीज बना लिया है । मुझे यहां यह कहना होगा कि ऐसे स्टिंग आपरेशन में अपनाया जाने वाला वर्गीकरण समय समय पर चल रही वाद विवाद बहस की विषय–वस्तु रही है । जो कुछ भी हो, इससे उस उप अपराध को स्वतः ही माफ नहीं किया जा सकता जो जनता के समक्ष ऐसे प्रयत्नों द्वारा देखा गया है और जिससे कानून का पालन करने वाले नागरिक वर्ग में घृणा और जुगुप्सा फैली है । सार्वजनिक लोगों द्वारा अपराध के मामले किसी पदेन काम को करने या करने से बचने के बदले गैर कानूनी परितोष्ण के रूप में तुच्छ आर्थिक लाभ स्वीकार करने तक ही सीमित नहीं हैं बल्कि उनका विस्तार स्वयं या अपने रिश्तेदारों को पद या प्राधिकार के दुरूपयोग द्वारा अन्यायपूर्ण ढंग से धनी बनाना, आर्थिक नियमों का पालन करने की बजाय अपना व्यक्तिगत लाभ लेते हुए सार्वजनिक संविदाओं को अवार्ड देने में या सरकारी संरक्षण पर एकाधिकार जमाना, जाति पंथ आदि के आधार पर पक्षपात बरतना, बाहरी प्रतिफलों के लिए स्व–विवेक बरतना, लोक क्षेत्र के उद्यमों को अपना व्यक्तिगत समझना, भ्रष्ट का उनके वरिष्ठों द्वारा कुछ सीमा तक खुले रूप में बचाव, डिजाइन का समुदाय आदि इत्यादि ।

भ्रष्टाचार के परिक्षेत्र को जो उत्पन्न करते हैं, उन गतिविधियों की एक बृहत् सूची तैयार करना शायद असंभव है । प्रशासनिक कानूनों द्वारा लोक प्राधिकारियों में निहित विवेकाधिकार संभवतः अनैतिक वृत्तियों के सर्वाधिक स्रोत हैं । ऐसा नहीं है कि सिविल सेवाओं के पूर्ण कार्य बल ने समझौता कर रखा है या बाहरी प्रभावों के कारण अपने अंतःकरण को बेच डाला है । कठिनाई केवल इस बात से पैदा होती है कि जो लोग कोई पक्षपातपूर्ण कार्रवाई करवाने के लिए लोक पद के प्राधिकार का दुरूपयोग करते हैं, ऐसे अनैतिक तत्वों के एकाधिकार के आगे जो लोग झुकने से इन्कार कर देते हैं, उन्हें आसानी से हाशिए में खड़ा कर दिया जाता है जबकि ऐसे लोक सेवक, जो उनमें निहित प्राधिकार को एक बिक्री की चीज समझ लेते हैं और प्रक्रिया में इस प्रकार से फेरबदल कर देते हैं ताकि वे सत्ता के अधिकार का इस प्रकार दुरूपयोग करके किसी के कृपा–पात्र बन सकें और इस सौदे में वे अपने भविष्य के आलेख को तेज गति की मोड़ पर ला देते हैं । इसमें आश्चर्य नहीं यदि वे इस दृश्य लेखमें ''हस्तांतरण उद्योग''का संचालन करते हैं और विभिन्न सरकारी विभागों में एक अत्यधिक उच्च युनिट के रूप में काम करते हैं । कोई आश्चर्य नहीं यदि एक अपवित्र राजनीतिक आपराधिक नौकरशाही के संबंध में विकसित होकर पनपते हैं । कोई आश्चर्य

संलग्नक – 1(1) जारी

नहीं यदि हमारे राजतंत्र में कुछ संस्थान तब तक अपना काम करने के लिए न उठें, जब तक उचित रूप से उनके हाथों में घूस न दे दी जाए।

हम सब जानते हैं कि भ्रष्टाचार का कैंसर, हमारे राजशासन के खून में रिस कर दौड़ने लगा है, वहीं दूसरी ओर एक मिलियन डालर प्रश्न जो हमारे सामने दीख पड़ता है, वह यह है कि इस बुराई को पूर्ण रूप से दूर करने के लिए जो कुछ हम कर रहे हैं, उसके अलावा और क्या कुछ किया जा सकता है । यदि हमारे शरीर का कोई भाग जब कोथ की बीमारी से सुन्न हो जाता है या गल जाता है तो चिकित्सक शल्य–चिकित्सा करने की सलाह दे सकता है । जब कोथ शरीर में पूरी तरह से फैल जाता है तो शायद शल्य चिकित्सा से भी बीमारी ठीक नहीं हो सकती । एक ओर भ्रष्टाचार पर आपराधिक कानून के रूप में दंडात्मक तरीके और लोक सेवकों द्वारा आचार नियमों के अतिक्रमण के लिए अनुशासनिक कार्यवाई तथा दूसरी ओर सक्रिय सतर्कता के रूप में रोकथाम उपायों को सुदृढ़ करने की आवश्यकता है । यदि ये अनैतिक तत्व कोई बचाव के उपाय अपनाते हैं तो उन्हें बन्द करने की आवश्यकता है परंतु मेरे विचार में इतना कुछ करना भी पर्याप्त नहीं होगा । जैसाकि इतिहास बताता है, ये अनैतिक तत्व हमेशा कानून से एक कदम आगे होते हैं । कुल मिला कर कानून प्रवर्तन से ऊपर भी हमें कुछ करने की आवश्यकता है ।

आज हम जिस विकट स्थिति का सामना कर रहे हैं, वह मुझे महात्मा गांधी जी की आत्मकथा के एक अध्याय ''मेरे सच्चे अनुभव'' का स्मरण कराती है । बापू जी ने 1911 में एक संस्थान की स्थापना की थी, जो दक्षिण अफ्रीका में टाल्सटाय फार्म के नाम से मशहूर हुआ । इस फार्म में वहां के निवासियों के बच्चों के लिए शिक्षा का प्रबंध करना अपना पिता का संतान के प्रति कर्तव्य जैसा निर्वाह करते हुए, उन्होंने स्वयं अपने को एक स्कूल–मास्टर की भूमिका की और इसका नेतृत्व किया । वे इस बात को सोचने लगे कि उनके अधीन आने वाले खंडों के युवा बच्चों को किस प्रकार की शिक्षा देना उचित होगा । उन्होंने इस विषय पर अपनी विचार प्रक्रिया को व्यक्त करते हुए, जिसमें सर्वप्रथम युवाओं को दी जाने वाली शिक्षा से आध्यात्मिक विकास करना अनिवार्य था, उन्होंने अध्यापक को एक ऐसा व्यक्ति बताया जो अपने शिष्यों को ''शाश्वत उद्देश्य की शिक्षा'' देने का प्रतिनिधित्व करे । इसके बाद उन्होंने इस पर जिन शब्दों में स्पष्टीकरण किया, उन्हें मैं उद्धरण कर रहा हूं :–

> *''यदि बच्चों को सत्य बोलने की शिक्षा देने के लिए मैं एक असत्यवादी होता तो यह मेरे लिए निरर्थक होता। एक कायर अध्यापक अपने छात्रों को शूरवीर नहीं बना सकता और स्वयं पर आत्म–संयम न रख पाने वाला व्यक्ति अपने शिष्यों को आत्म–संयम की शिक्षा नहीं दे सकता ।''*

बृहदांकय उपनिषद् में कहा गया है :–

> *"तुम वह हो जो तुम्हारी गहरी और प्रबल आकांक्षा है ।*
> *जो तुम्हारी आकांक्षा है वही तुम्हारी इच्छा है ।*
> *जो तुम्हारी इच्छा है, वही तुम्हारा कर्म है ।*
> *जो तुम्हारा कर्म है वही तुम्हारा भाग्य है ।''*

संलग्नक – 1(1) जारी

रामायण में, महर्षि वाल्मीकि ने शासन के एक अत्यंत मूलभूत सिद्धांत को सरल शब्दों में कहा है ''यथा राजा तथा प्रजा'' । यह संदेश प्रबल और स्पष्ट है । समाज में प्रतिलक्षित मूल्यों, नैतिक आचार या सत्यनिष्ठा में सामान्य गिरावट ही उन लोगों के चरित्र के दर्पण को परिलक्षित करती है जो उस समाज के कार्यों का संचालन करते हैं ।

मैं जिस बात पर जोर देने का प्रयत्न कर रहा हूं वह यह है कि यदि शासन में नैतिकता के मामले में कोई आदर्श परिवर्तन लाना है तो उसे हमारे समाज के प्रत्येक वर्ग के शीर्ष से लाना होगा । दानशीलता की तरह या संभवतः उससे भी अधिक आचरण की भावना उस नेता के द्वार से शुरू होनी चाहिए जो इसका प्रचार करता है । यदि सत्ता की शक्ति रखने वाले लोग आचरण के लिए प्रतिमानकों को निर्धारित करते हैं तो उन्हें उन आचरणों को पहले स्वयं पर अपनाना चाहिए ।

लोक सेवक जिस आचार संहित द्वारा नियंत्रित किए जाते हैं, वे उनके सेवा नियमों का अनिवार्य अंग होते हैं । इस आचार संहिता के उल्लंघन के परिणामस्वरूप अनुशासनिक कार्यवाई होने की उम्मीद की जाती है। प्रत्येक सरकारी विभाग ने अपने प्रयोजनों के लिए ऐसी संहिता की संरचना की हुई है । ऐसा लगता है कि इन संहिताओं का बाहूल्य सा मचा हुआ है । दूसरी ओर, दंड कानून जिसे भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम कहा जाता है, इस संकट से निपटने के लिए आपराधिक न्याय प्रणाली की भूमिका का ध्यान रखता है ।

सरकारी सेवकों की भिन्न भिन्न श्रेणियों की आचार संहिता की सामान्य विशेषताओं में यह शामिल हैं कि सरकारी सेवकों से यह आशा की जाती है कि वह पूर्ण सत्यनिष्ठा बरतेगा, कर्तव्य के प्रति समर्पित रहेगा, ऐसा कुछ नहीं करेगा जिससे उसके द्वारा धारित लोक पद के लिए अशोभनीय हो, वह अपने सरकारी कृत्यों के निष्पादन में सर्वाधिक न्यायोचित रहेग; तत्परता और शिष्टाचार बरतेगा; अपने आपको आचार की नीचता में लिप्त नहीं करेगा; किसी दलगत राजनीति में भाग नहीं लेगा; ऐसी गतिविधियों से संबंध नहीं रखेगा जो भारत की संप्रभुता के हितों या सत्यनिष्ठा के विपरीत हो; अपने वरिष्ठम अधिकारियों द्वारा दिए गए कानूनी प्राधिकार को छोड़ कर मीडिया के साथ किसी साक्षात्कार में स्वयं में लिप्त नहीं करेगा; कोई आर्थिक लाभ प्राप्त नहीं करेगा, विशेष रूप से उनसे जिनके साथ उसके सरकारी मामलों में व्यवहार हैं; सार्वजनिक पद पर रहते हुए कोई निजी व्यापार या व्यवसाय नहीं करेगा; नशा या जुए में लिप्त नहीं होगा; अपने वित्तीय लेन देनों को ऐसे व्यवस्थित करेगा जिससे वह हमेशा ऋण से मुक्त रह सके और जिन व्यक्तियों के साथ उसके सरकारी लेन देन चल रहे हों उनके साथ किसी संपत्ति के लेनदेन में अपने को लिप्त नहीं रखेगा ।

एक आम राय जो हर तरफ व्याप्त हैं वह यह है कि ये अनुशासनिक नियम और आपराधिक कानून सरकारी सेवकों द्वारा भ्रष्टाचार की प्रकृति में कदाचार से निपटने के अर्थ में होते हैं । प्रत्येक बार जब कोई राजनेता गलत बात पर पकड़ा जाता है तो ''राजनीतिक रूप से प्रेरित है'' जैसे बचाव के अलावा, यह बहस छिड़ जाती है कि उन ''सरकारी सेवकों'' का क्या महत्व है जिनपर नियंत्रण के लिए ये उपाय बनाए गए हैं । ऐसा सामान्यतः पाया गया है कि आचार नियमों के अंतर्गत भ्रष्टाचार के तत्वों से निपटने संबंधी

संलग्नक – 1(1) जारी

अधिकार–क्षेत्र को बड़ी जल्दी में लागू किया गया है । ऐसा प्रतीत होता है कि भ्रष्टाचार के कलंकपूर्ण कार्यों को छिपा दिए जाने की प्रवृत्ति व्याप्त है जिससे यह राय बनती है कि प्राधिकारी व्यवस्था को साफ सुथरा रखने की बजाय भ्रष्टाचारी का बचाव करने में अधिक रूचि रखते हैं । ईमानदार लोक सेवकों को दुर्भावपूर्ण कार्रवाई से बचाने के लिए अनिवार्य स्वीकृति के सांविधिक उपबंधों का प्रयोग दोषी लोक सेवकों को आपराधिक अभियोजन से बचाने में किया जाता है । ''एकक निदेश'' के औचित्य और तर्कसंगति पर बहस जारी है और यह मामला सत्ता के विभिन्न हाथों में से होकर इधर से उधर घूम रहा है । ऐसे मत भी दिए जा रहे हैं कि अनुच्छेद 311 को भी इस क्षेत्र में पर्याप्त और समय पर कार्यवाई की कमी के कारण उत्तरदायी ठहराया जाएगा । राजनीतिक वर्ग हमेशा इस विश्वास पर अड़ता आया है कि उनके आचार और उन लोगों को, जिनकी सेवा में वे सक्रिय होने का दावा करते हैं, दोनों और आमने सामने रखते हुए कोई नैतिक संहिता उन्हें बाध्य नहीं करती ।

मई 2000 में लोक सभा के तत्कालीन अध्यक्ष ने नैतिकता पर एक संसदीय समिति का गठन किया था । नैतिकता पर उक्त समिति ने अपनी प्रथम रिपोर्ट को 31 अगस्त 2001 में सौंप दिया था । रिपोर्ट में यह दर्शाया गया है कि समिति का यह मत था कि विधानमंडलों के सदस्यों के लिए नैतिक व्यवहार के मानदंड, नियमों और कार्य पद्धति में, अध्यक्ष के निदेशों में और विविध संसदीय समितियों द्वारा सिफारिशों के आधार पर वर्षों से अपनाई गई परंपराओं में ''पर्याप्त रूप से प्रदान किए गए हैं'' । समिति का मत था कि विधान मंडलीय सदस्यों की ओर से अनैतिक व्यवहार से संबंधित उपचार विद्यमान मानदंडों में कड़े प्रवर्तन में अधिकथित हैं।

इसके अलावा समिति ने कुछ अतिरिक्त मानदंडों की सिफारिश की जिन्हें इसने ''सामान्य नैतिक सिद्धांत'' कहा जाना चुना । समिति द्वारा सिफारिश किए गए इन ''सामान्य नैतिक सिद्धांतों'' का प्रतिबल यह था कि विधान मंडल सदस्यों को अपने पद का प्रयोग लोगों की आम भलाई के लिए करना चाहिए और यदि उसके व्यक्तिगत हितों और सार्वजनिक हितों के बीच कोई संघर्ष है तो उन्हें इसका समाधान कर लिया जाना चाहिए ताकि व्यक्तिगत हित उनके सार्वजनिक पद के कर्तव्यों के बाद उनके अधीनस्थ हों । यह सिफारिश की गई थी कि निजी वित्तीय अभिरूचियों के कारण सार्वजनिक हित को खतरा नहीं होना चाहिए तथा संसद और विधान मंडलों के सदस्यों को सार्वजनिक जीवन में नैतिकता, गरिमा, शिष्टता और मूल्यों के उच्च मानदंडों का पालन करना चाहिए और अपने मस्तिष्क में संविधान के भाग IV क में सूचीबद्ध मूलभूत कर्तव्यों को सर्वोपरि रखना चाहिए ।

रिपोर्ट में ही यह संकेत किया गया है कि उक्त सामान्य नैतिक सिद्धांतों का प्रवर्तन विधायकों की विशेषाधिकार समिति के स्व–विवेक का एक गुलाम है । यह सामान्य जानकारी है कि ऐसी समितियों के उदाहरण जिनमें विधायकों को उप–अपराध में वास्तविक दोषी पाया गया है इतने कम हैं कि रोकथाम के वास्तविक मूल्य को पहचाना नहीं जा सकता । हम केवल बातों पर ही नहीं चल सकते ।

विद्यमान हालातों में, जिनमें कुछ पर मैं प्रकाश डाल चुका हूं, भ्रष्टाचार का सामना करने के लिए हमारे प्रयास तीन मुख्य कारणों से विफल रहे हैं :–

संलग्नक – 1(1) जारी

(i) एक ऐसी मूल या लघु आचार संहिता का अभाव जो प्रत्येक लोक पद या प्राधिकारी पर समान रूप से लागू हो, चाहे वह शासन के किसी भी खंड से संबंधित हो;

(ii) वह कार्य पद्धति जिसके प्रत्येक कदम पर दोषी के बच कर निकलने का रास्ता मिल जाता है; और

(iii) प्राधिकारियों की ओर से कोई खतरा मोल लेने के लिए कोई पहल या इच्छा का अभाव होना।

साफ सुथरे शासन की तृष्णा रखने वालों में केवल भारत ही अकेला नहीं है । युनाईटेड किंगडम के तत्कालीन प्रधान मंत्री ने अक्तूबर 1994 में सार्वजनिक जीवन के मानकों की एक समिति का गठन किया था, जिसे 'नोलन समिति' के रूप में जाना गया । नोलन समिति ने अपनी पहली रिपोर्ट मई 1995 में प्रस्तुत की थी, जिसमें उस समय संसद सदस्यों, मंत्रियों और सिविल सेवकों आदि के लिए आचार संहिता पर ध्यान केन्द्रित किया गया था, क्योंकि समिति के विचार से यह एक ''सार्वजनिक तौर से सर्वाधिक चिन्ता'' का मामला था । समिति ने लोक पदों पर बैठे लोगों से पुनः सार्वजनिक विश्वास जगाने के उपाय अपनाने के लिए सुझाव देने के विचार से मामलों की जांच की थी । इसने घूसखोरी, पद का दुरूपयोग, अभद्र व्यवहार, पिछले या भविष्य में पक्षपात के लिए इनाम देना, शासन का उपहार वितरण आदि के मामलों को ध्यान में लिया । इसने पाया कि कुछेक सार्वजनिक पदाधिकारियों जिनके मामले मीडिया में प्रचारित हो जाते हैं, की ओर से उच्च मानदंडों के अनुपालन और प्रवर्तन में शिथिलता को दर्शाने वाले उदाहरणों से यह व्यापक संदेह उत्पन्न होता है कि कदाचार के वास्तविक मामले उन मामलों से कहीं अधिक होते हैं, जो सार्वजनिक रूप से जनता की नजरों में आते हैं । समिति का मत था कि यदि सुधारात्मक उपाय शीघ्र नहीं किए गए तो इस बात का खतरा है कि चिन्ता और संदेह से भ्रांतियां और मानव द्वेष फैल जाएगा । समिति ने सार्वजनिक जीवन पर आचार के सात सामान्य सिद्धांत अपनाए, जिनसे लोक विश्वास पुनः जगाया जा सकता है ।

मेरे मत से ये सात सामान्य सिद्धांत हमारे प्रयोजनों के लिए बड़े मूल्य और महत्व के हैं । इनमें निम्नलिखित शामिल हैं :–

1. ***निःस्वार्थनिष्ठता***
   सरल रूप में इसका अर्थ यह है कि सार्वजनिक पदाधिकारियों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे अपना आचरण इस तरह से करें जिससे उनके स्वयं के हित के स्थान पर जन हित को सामने रख कर काम कर सकें ।

2. ***सत्यनिष्ठा***
   यह धारणा अच्छी प्रकार से जानी पहचानी है । एक सार्वजनिक प्राधिकारी को सरकारी कर्तव्यों से संबंधित मामलों में बाहरी दबावों से स्वयं को अलग रखना चाहिए ।

संलग्नक – 1(1) जारी

3 *विषयनिष्ठा*

सार्वजनिक पदाधिकारियों के कर्तव्यों में निर्णय लेने का प्राधिकार निहित होता है जिसमें नियुक्तियां करना, ठेके देना, लाभों का वितरण करना आदि शामिल होते हैं । चयनों को योग्यता के आधार पर करने के अलावा कोई अन्य मापदंड की अनुमति नहीं दी जा सकती है। निर्णयों को उन कारणों पर आधारित होना चाहिए जो मन–मर्जी से मुक्त हों । कार्यपालिका, न्यायपालिका की पुस्तक से प्रत्येक कार्यवाई के लिए स्व–प्रेरणा से कारण दिए जाने के लिए उद्धरण ले सकती है । कारणों को लेखबद्ध करने की आवश्यकता ही स्वयं में बड़ा सुरक्षण है जो निर्णय निर्माताओं को व्यक्तिनिष्ठ होने से रोकता है ।

4. *जवाबदेही*

कोई भी सार्वजनिक पद एक विश्वास का पद होता है । अतः कोई सार्वजनिक पदाधिकारी, शासन के किसी काम को करते हुए, जिसमें विधान मंडल के सदस्य भी शामिल होते हैं, उस पद पर रहते हुए किए गए कार्यों के निष्पादन में सभी कार्यवाईयों के लिए जवाबदेह होता है। इससे यह बात स्वाभाविक रूप से निकलती है कि किसी भी कृत्य या अकृत्य की छानबीन की जाती है, चाहे वह आन्तरिक लेखा परीक्षा या बाह्य लेखा परीक्षा व्यवस्था से की जाए । यहां पर मैं 'लेखा परीक्षा' शब्द का प्रयोग खातों की लेखा परीक्षा के संकुचित अर्थ में नहीं बल्कि शासन की प्रत्येक कार्यवाई के कारणों और परिणामों के मूल्यांकन की दृष्टि से कर रहा हूं ।

5. *खुलापन*

सूर्य के प्रकाश से अधिक बेहतर कोई रोगाणुनाशक नहीं हो सकता । पारदर्शिता प्रत्येक सरकारी कृत्यों का मंत्र होना चाहिए । न्यायपालिका अपनी कार्यवाहियों को खुले में आयोजित करके इस बात को ईमानदारी से अपनाती है । पारदर्शिता से जांच भी सहज रूप में हो जाती है । 'सूचना का अधिकार' व्यवस्था के आगमन ने हमारे देश मे प्रशासनिक ढांचे को वास्तव में सही दिशा में ला दिया है ।

6. *ईमानदारी*

न्यायपालिका में हम यह नियम अपनाते हैं कि केवल न्याय दिया ही नहीं जाए बल्कि यह देखा भी जाए कि न्याय मिल गया है । नैसर्गिक न्याय के जो नियम न्यायिक नैतिकता पर नियंत्रण करते हैं, उनमें यह आवश्यक होता है कि कोई भी व्यक्ति अपने काम के बारे में न्याय करने वाला नहीं बन सकता । यह ईमानदारी की अवधारणा की एक विडंबना ही होगी, यदि कोई प्रशासनिक प्राधिकारी ऐसे मामलों में निर्णय लेता हो, जिनमें उन लोगों के निजी हित लिप्त होते हों, जो प्राधिकारी से निकटता से जुड़े हुए हों । इस विचार से यह आवश्यक है कि सार्वजनिक पदाधिकारियों को अपने निजी हितों की घोषणा करने के लिए बाध्य किया जाए ताकि उन्हें हमेशा उस समय जवाबदेह ठहराया जा सके जब उनके सार्वजनिक कर्तव्य में लिप्त

संलग्नक – 1(1) जारी

कोई द्वंद्व हो रहा हो । इसका यह भी अर्थ है कि सार्वजनिक पदाधिकारियों की संपत्तियो और दायित्व के ब्यौरे जनता की जानकारी में हों । सार्वजनिक पद ग्रहण करते समय और उसके बाद समय समय पर अनिवार्य घोषणाएं करने से उस प्रकार की ईमानदारी सुनिश्चित हो सकेगी जो हम लाना चाहते हैं ।

7. ***नेतृत्व***

यह सिद्धांत मेरे उसी विचार से मेल खाता है जिसका उल्लेख मैंने महात्मा गांधी जी के सत्यता के अनुभव के संदर्भ में किया है । एक सच्चा नेता हमेशा अपने ही अनुभव से चलता है । यदि नेता ईमानदार है, निष्कपट है, उसे जो काम दिया गया है, उसके प्रति वह वचनबद्ध है, तो जिस व्यवस्था पर उसका नियंत्रण है, उसे साफ–सुथरा करने में जो वातावरण बनेगा, वह लोक पदाधिकारियों के पदानुक्रम को भी धीरे धीरे साफ सुथरा कर देगा ।

मैंने नौकरशाही का राजनीतिकरण और राजनीति के अपराधीकरण का उल्लेख किया है । आज हमारे राजतंत्र में जो रूग्णता आई हुई है, उन सब का प्रमुख कारण ये दोनों घटनाएं मिल कर बनी हैं । निहित स्वार्थ, राजनीतिक कार्यपालक, जो नौकरशाही के साथ मिलीभगत रखने वाले वर्ग के माध्यम से काम करते हैं, में अपने अनुचरों के माध्यम से धन देकर या बल का प्रयोग करके शासन पर नियंत्रण करना चाहते हैं । यह बात सबकी जानकारी में है कि लोक सेवाओं में विविध लॉबी के वर्ग शामिल होते हैं । प्रत्येक बार जब भी किसी राज्य के राजनीतिक वातावरण में परिवर्तन होता है तो सत्ता में आई नयी राजनीतिक पार्टी के प्रति निष्ठावान नौकरशाही के वर्ग उचित स्तरों पर प्राधिकारियों के पद पर आसीन हो जाते हैं । ऐसे लोक सेवकों द्वारा लिए गए निर्णयों में राजनीतिबाज गुरूओं की अनुचित और अपवित्र निष्ठा की झलक मिलती है । वरिष्ठ नौकरशाह संवैधानिक प्राधिकार के पदों पर बार बार राजनीतिक संरक्षण लेने, लाभ के पद पाने, पारितोषिक पाने, इनाम लेने और अवकाश प्राप्ति के बाद निपटान कराने के लिए एक–दूसरे से प्रतिस्पर्द्धा करते हुए एक सामान्य स्थान पर देखे जा सकते हैं । उदाहरण के लिए, राज्यपाल का प्रतिष्ठावान पद । संविधान में यह कल्पना की गई थी कि इसके लिए ऐसा व्यक्ति होगा जो सभी दलों से असंबद्ध होगा । सरकारिया आयोग ने, वास्तव में, यह सिफारिश की थी कि इस पद के लिए उम्मीदवार वह व्यक्ति होना चाहिए जिसने राजनीति में सामान्य रूप से भाग न लिया हो और विशेष से हाल ही के विगत समय में भाग न लिया हो । तथापि, व्यवहार में राज्यपाल का पद दो रास्तों के एक घुमावदार द्वार से जुड़ा हुआ है – एक लोक सेवाओं को जाता है और दूसरा सक्रिय राजनीति को । इसमें कोई आश्चर्य नहीं यदि वरिष्ठ निष्ठावान नौकरशाह लोक सेवक के पदों को छोड़ने के तुरंत बाद राज्यपाल के उत्तरदायित्व को संभाल लेते हैं या विधान मंडलों के सदस्यों के रूप में नामांकन द्वारा राजनीति में प्रवेश के लिए तैयार हो जाते हैं ।

न्यायपालिका किसी न्यायिक पद को छोड़े जाने के बाद सक्रिय कानूनी वृत्ति के प्रति कुछ प्रतिबधों के प्रतिमानकों को अपनाती है । इससे लोक हित का कई प्रकार से पालन होता है जिसमें न्यायिक पदाधिकारियों का भविष्य के संरक्षण के प्रस्ताव से पृथक रहना शामिल है । इस सिद्धांत का विस्तार करके इसे एक सामान्य आचार संहिता का भाग बनाया जाना चाहिए जिसमें लोक सेवकों और उन लोगों को, जो सेवा–निवृत्ति के

संलग्नक – 1(1) जारी

बाद संवैधानिक पदों पर हों पर्याप्त रूप से लंबी अनिवार्य प्रतीक्षा अवधि तक सक्रिय राजनीति में शामिल होने के लिए निषिद्ध कर दिया जाए ।

आचार संहिता के उल्लंघन से यहां एक ओर अनुशासनिक कार्यवाई आवश्यक होती है, वहीं सार्वजनिक जीवन में भ्रष्टाचार पर नियंत्रण करने वाला दंड कानून आवश्यक होता है जिसका निपटान आपराधिक न्याय प्रशासन के अधीन किया जाता है, ये दो संकेन्द्रित चक्र बनाते हैं । इन दोनों प्रक्रियाओं से निपटने वाले प्राधिकारियों में आवश्यक रूप से मतभेद होते हैं और इनमें लागू कार्य प्रणाली, सबूत का स्तर और परिणाम भी पृथक होते हैं । फिर भी, इन दोनों क्षेत्रों को नियंत्रण करने वाले नियम या कानूनों के माध्यम से जो सामान्य लक्षण पाए जाते हैं उनकी उत्पत्ति एक भ्रष्टाचार मुक्त शासन की सामान्य उचित अपेक्षा से होती है । विविध सेवाओं से जुड़े पदों की मांगें जो शासन में शामिल होती हैं पृथक हो सकती हैं । उदाहरण के लिए, न्यायिक पद धारियों से साफ–सुथरे और निर्दलीय न्याय की अपेक्षा करना श्शायद उच्चतम क्रम की बात होगी । यही कारण है कि लोक सेवाओं के मामलों की तरह न होकर न्यायिक सदस्यों से सामान्यतः गैर सामाजिक होने की अपेक्षा की जाती है ।

परंतु यह तथ्य है कि सार्वजनिक जीवन में नैतिकता और उचित आचार के कुछ न्यूनतम मानदंड होते हैं जो शासन या लोक कर्तव्यों से संबद्ध प्रत्येक व्यक्ति पर देश के निम्नतम प्राधिकारी से लेकर उच्चतम प्राधिकारी तक लागू किए जा सकते हैं । ऐसी न्यूनतम आचार संहिता को समान रूप से लागू करने के लिए बोर्ड पर प्रत्येक लोक पदधारी के लिए संभवतः आवश्यक हो गया है, जिसका उल्लंघन करना सेवा विधि शास्त्र के अधीन नियंत्रण के प्रयोजनों के लिए एक ओर अनुशासनहीनता समझा जाएगा और दूसरी ओर आपराधिक न्याय उपकरण की व्यवस्था के माध्यम से दंड परिणामों का पालन करने के लिए अपराध समझा जाएगा ।

हमारी व्यवस्था में कठिनाई यह है कि हम स्वयं को वास्तविक कार्यवाई करने की बजाए वाद विवाद में अधिक उलझा देते हैं । इस संदर्भ में मैं जो एक उदाहरण देना चाहूंगा, वह पुलिस सुधारों के विषय में है, विशेषतः एक ओर आम जनता को पुलिस बलों की जवाबदेही के सुधारों और कानून के नियमों के संबंध में और दूसरी ओर जांच करने वाली पुलिस एजेंसियों का राजनीतिक हस्तक्षेप से पृथकता के संबंध में । विविध आयोगों और समितियों द्वारा पिछले तीन दशकों से अधिक समय से सुधारों के सुझाव लगभग मिलते जुलते अर्थों में दिए गए हैं । फिर भी, हम ऐसे पुलिस अधिनियम द्वारा नियंत्रण जारी रख रहे हैं जो हमें विदेशियों ने 1861 में भारत में ब्रिटिश शासन के आरंभिक वर्षों में दिया गया था ।

इसी संदर्भ में, मैं भ्रष्टाचार पर आपराधिक कानून के अनेक त्रुटिपूर्ण उपबंधों में से एक का जिक्र करना चाहूंगा। भ्रष्टाचार से प्राप्त की गई संपत्तियों को कुर्क करने या जब्त करने का कानून में प्रावधान है । 1944 वर्ष के आपराधिक कानून संशोधन अध्यादेश के सौजन्य से इस प्रक्रिया की सिविल कार्य पद्धति द्वारा नियंत्रित किया जा रहा है । जांच अथवा अभियोजन एजेंसियां भ्रष्ट लोक सेवक की अवैध संपत्तियों की कुर्की की प्रक्रिया को बहुत ही बोझिल पाती हैं । जिन मामलों में इस प्रक्रिया को आरंभ किया जाता है, उसके समानांतर आपराधिक कार्यवाही भी चल रही होती है । आपराधिक कानून उपकरण के लिए यह और मुश्किलें खड़ी

संलग्नक – 1(1) जारी

कर देती है । लोक सेवक, जो इनमें से प्रत्येक मामले में प्रतिवादी होता है, वह विलंबकारी तरीकों का आश्रय लेकर अनुचित लाभ उठाता है । यदि संबंधित विभाग आचार नियमों के अंतर्गत अनुशासनिक कार्रवाई करता है तो लोक सेवक वास्तव में राजस्व की कीमत पर लाभ उठाने लग जाता है । वह प्रत्येक कार्यवाही पर दूसरी कार्यवाही के विचाराधीन होने का बहाना बना कर विलंब करता रहेगा । और जब कार्यवाही में साक्ष्य को दाखिल करने की स्थिति आ जाती है तो वह विभिन्न चरणों पर गवाहों के सामान्य सैट के साक्ष्य में विरोधाभास का उल्लेख करते हुए भ्रान्ति पैदा कर देगा । साक्ष्य के विद्यमान नियमों के अधीन यह अभियोजन एजेंसी को पीछे धकेल देगा ।

1996 में, उच्चतम न्यायालय ने **दिल्ली विकास प्राधिकरण बनाम स्कीपर कंस्ट्रक्शन कंपनी (प्रा.) लि.** {(1996) 4 एस.सी.सी. 622} के मामले में भ्रष्टाचार निरोध की अपर्याप्तता की ओर ध्यान दिलाया । न्यायालय ने सफेमा जैसे कानून के अधिनियमन की सिफारिश की ''जो सबूत का वह भार कि जब्त की गई संपत्तियों को भ्रष्ट सौदे से प्राप्त धन/संपत्तियों से अधिग्रहित नहीं किया गया था, उस संपत्ति के धारक पर छोड़ देगा ।''

भारतीय विधि आयोग ने उच्चतम न्यायालय के उपर्युक्त सुझाव को गंभीरता से लेते हुए अपनी 166वीं रिपोर्ट में विशेष कानून के अधिनियमन का सुझाव दिया है । उसने ''भ्रष्ट लोक सेवक (संपत्ति की जब्ति) बिल '' के नाम से अपने बिल का ड्राफ्ट भी बनाया है जिसे भारत सरकार को फरवरी 1999 में भेजा गया था । हमें उक्त प्रस्ताव के नतीजे का अभी भी इंतजार है ।

आपराधिक आरोप का सामना कर रहे अभियुक्त की ओर से चुप्पी लगा लेने के अधिकार पर पुनः विचार करने की आवश्यकता है, कुछ मामलों में एक ओर अभियुक्त के वास्तविक और सद्भावपूर्ण अधिकारों के संतुलन पर और दूसरी ओर सत्यता के लिए जिज्ञासा पर भी यह आवश्यक है । जहां ईमानदार लोक सेवकों की रक्षा करने और संभवतः पारितोषिक देने की आवश्यकता का एक उत्तम मामला बनता है वहीं दूसरी ओर कुल कलंकी को सजा देने की भी वास्तव में बड़ी जरूरत है क्योंकि यही वे लोग हैं जो भूमिका के माडल के आवरण पर धीरे धीरे छा जाना चाहते हैं । भ्रष्ट व्यक्ति को शीघ्र कार्यवाही करते हुए सख्त सजा देना एक ऐसा लक्ष्य है जिस पर न्यायपालिका और कार्यपालिका को एक संगठित भूमिका निभानी होगी ।

शासन में तब तक कोई सुधार नहीं लाए जा सकते जब तक कि न्यायिक सुधारों के लिए आम जनता की आशाओं को ध्यान में रखते हुए उपाय न किए जाएं । यह सर्वत्र ज्ञात है कि सरकार प्रत्येक न्यायिक पदानुक्रम की परतों में मुख्य वादी होती है । अतः यदि न्यायिक सुधारों से मामले शीघ्रता से निपटा दिए जाते हैं तो सरकार इस बारे में मुख्य लाभार्थी होगी । न्यायालयों के समक्ष आने वाले विवादों में सरकार द्वारा स्थिति की समीक्षा के लिए उचित व्यवस्था के सुझाव समय समय पर दिए गए हैं । ऐसी समीक्षा व्यवस्था का उद्देश्य अनावश्यक और परिहार्य वादों में कमी लाना है । दुर्भाग्यवश, इन सुझावों का उत्तर हमेशा अधमने से दिया गया है । शासन स्वयं को उन कानूनी विवादों में लिप्त करके अपने संसाधनों के अपव्यय को सहन नहीं कर जिनसे जन हित का कल्याण न होता है । उचित स्तरों पर अफसरशाही को

संलग्नक – 1(1) जारी

संवेदनशीलता द्वारा जवाबदेही की भावना को लाना होगा ताकि न्यायालयों में चल रहे प्रत्येक ऐसे वादों का सावधिक मूल्यांकन किया जा सके जिसमें सरकार लिप्त हो और मामलों की गैर जिम्मेदार स्पर्द्धा या अभियोजन को न होने दिया जा सके।

न्यायिक सुधार कानूनी सुधारों की प्रक्रिया का हिस्सा होते हैं । विधायिका ने हाल ही में न्यायालयों पर नियंत्रण करने वाले कार्य–पद्धति संबंधी कानूनों में अनेक संशोधन किए हैं । सिविल पद्धति संहिता में नए उपायों से संबंधित मुद्दों से निपटते हुए, उच्चतम न्यायालय ने सलेम एडवोकेट बार एसोसिएशन (II) बनाम भारत संघ (2005) 6 एस.सी.सी. 344, स्वच्छ, गतिमान और मितव्ययी न्याय के अधिकार को वास्तविकता में बदलने के लिए कुछ और सुधारों का प्रस्ताव किया है ।

सलेम एडवोकेट बार एसोसिएशन के मामले में न्यायालय द्वारा केन्द्रित किए गए क्षेत्रों में से एक था वाद के भविष्य का सामने कर रहा प्रशासन का उदासीन रवैया । न्यायालय ने ध्यान दिलाया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 80 के अंतर्गत नोटिस दिए जाने में अधिक अनुक्रियाशील और उत्तरदायी कार्यवाई किए जाने से सार्वजनिक धन के अपव्यय से राजस्व को बचाया जा सकता है । न्यायालय की निम्नलिखित टिप्पणियों का पुनः उल्लेख करने की आवश्यकता है :–

> *'38. ..... जहां कहीं भी मुकदमा फाइल करने के लिए एक शर्त के रूप में सांविधिक उपबंध के अंतर्गत नोटिस दिया जाना और उसके लिए विहित अवधि का होना आवश्यक हो, वहां पर सरकार या विभागों या अन्य सांविधिक निकायों के लिए ऐसे नोटिस का उत्तर देना आवश्यक नहीं है परंतु उस नोटिस में उठाए गए महत्वपूर्ण बिन्दुओं और मुद्दों का उचित रूप से निपटारा करना भी आवश्यक है । देश की विविध अदालतों में लंबित असंख्य मुकदमों में सरकारें, सरकारी विभाग या सांविधिक प्राधिकरण प्रतिवादी होते हैं । न्यायिक नोटिस में यह तथ्य देखा जा सकता है कि अनेकानेक मामलों में या तो नोटिस का उत्तर नहीं दिया जाता और कुछ मामलों में यदि उत्तर दिया भी जाता है तो वह सामान्यतः अस्पष्ट और टालमटोल करने वाला होता है । परिणाम यह होता है कि संहिता की धारा 80 में उल्लिखित और इसी प्रकार के उपबंधों का उद्देश्य विफल हो जाता है । यह न केवल परिहार्य मुकदमेबाजी को पैदा करता है बल्कि राजस्व पर भी भारी खर्च और लागतों का बोझ पड़ जाता है। उचित उत्तर देने से शासन और नागरिकों के बीच वादों को कम किया जा सकता है । यदि उचित उत्तर दे दिया गया हो तो या तो नोटिस में किए गए दावे को स्वीकार कर लिया जाना चाहिए या फिर विवाद के क्षेत्र में कटौती कर दी जाए अथवा शासन द्वारा उठाए गए कदम की जानकारी होने पर नागरिक को संतुष्ट किया जाना चाहिए । सरकार में, केन्द्र या राज्य में अथवा सांविधिक प्राधिकारियों में धारा 80 की भावना और उद्देश्य का उल्लंघन करने के लिए कोई जवाबदेही नहीं होती।*
>
> *39. इन उपबंधों के तहत सभी संबंधित सरकारों और राज्यों तथा सांविधिक प्राधिकरणों का यह निहित कर्तव्य है कि वे ऐसे नोटिसों का उचित उत्तर दें । विद्यमान स्थितियों को ध्यान में रखते हुए हम सभी संबंधित सरकारों, केन्द्रीय या राज्य या अन्य प्राधिकरणों को निदेश देते हैं कि जब भी किसी वाद या*

संलग्नक – 1(1) जारी

उसके विरूद्ध अन्य कार्यवाही को फाइल करने के लिए एक शर्त के रूप में नोटिस भेजना संविधि के तहत आवश्यक हो तो तीन माह के भीतर किसी अधिकारी को नामांकित किया जाए जो यह सुनिश्चित करने के लिए उत्तरदायी हो कि धारा 80 अथवा इसी प्रकार के उपबंधों के तहत नोटिसों के उत्तर किसी विशेष कानून में अनुबंधित अवधि के भीतर भेज दिए जाएं । इन उत्तरों को अपनी समझ का उचित प्रयोग करते हुए भेजा जाना चाहिए । ऐसे नामांकन के बावजूद यदि न्यायालय यह पाता है कि या तो नोटिस का उत्तर नहीं दिया गया है या उत्तर टालमटोल करने वाला और अस्पष्ट है और समझ का उचित प्रयोग करते हुए नहीं भेजा गया है तो न्यायालय को चाहिए कि वह सरकार पर साधारणतः बहुत बड़ी लागत लगा कर दंडित कर दे और संबंधित अधिकारी के विरूद्ध लागतों की वसूली उसी से किए जाने के साथ साथ उचित कार्रवाई किए जाने के निदेश दे दे ।''

न्यायालय ने अन्य बातों के अलावा, केन्द्रीय सरकार द्वारा समय की आवश्यकताओं के अनुरूप संबद्ध न्यायालयों के पर्याप्त प्रावधान करने के मुद्दे की जांच करने और जब कभी ऐसे विधान को लाया जाता है तब ''न्यायिक प्रभाव निर्धारण'' करना अनिवार्य करने का सुझाव दिया है जैसाकि इससे नए वादों के उत्पन्न होने की संभावना होती है और ऐसी चुनौती का सामना करने हेतु न्यायिक ढांचे के लिए बजट का प्रावधान भी किया जाना चाहिए । क्योंकि संशोधित दंड प्रक्रिया संहिता ने वैकल्पिक विवाद समाधान पद्धतियों पर जोर दिया है, अतः केन्द्र सरकार को न्यायालय द्वारा उस सुझाव की जांच करने को कहा गया है जिसमें मामलों को अनिवार्य रूप से माध्यस्थ या समझौते पर आने वाले व्यय को शासन द्वारा वहन किया जाना चाहिए। सरकार से सकारात्मक उत्तर अनुच्छेद 14, 21, 37, 38, 39 क और 247 के अधीन संवैधानिक दायित्वों के अनुरूप।

मैं इससे पहले ही भ्रष्टचारी को बचाने के लिए भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन अभियोजन के लिए स्वीकृत्ति से संबंधित कानूनी उपबंधों के बारे में कह चुका हूं । विनीत नारायण {(1998) 1 एस.सी.सी. 226} के मामले में उच्चतम न्यायालय के निदेशों के अनुसरण में, केन्द्रीय सतर्कता आयोग को सांविधिक दर्जा दिया गया है । यह देश में इस विषय पर सर्वोत्तम प्राधिकरण है । यदि हम शासन में नैतिकता को लाने के लिए प्रशासनिक सुधारों के प्रश्न पर गंभीर हैं तो यह उपयुक्त समय है कि केन्द्रीय सतर्कता आयोग को अभियोजन की स्वीकृत्ति के प्रश्न पर विचार करने के लिए इस प्रकार के प्राधिकार से विहित कर दिया जाए जो अन्तिम और सबके लिए बाध्य हो । इसे एक ऐसा प्राधिकरण बना कर रख देना चाहिए जिसकी सिफारिशों को उन्मुक्ति के नाम से दरकिनार कर दिया जाए तो यह एक सफेद हाथी की स्थिति की तरह ही होगी । चूंकि यह सतर्कता के विषय पर खास विशेषज्ञता लिए हुए एक उच्च अधिकार प्राप्त निकाय है, अतः इसकी भूमिका का विस्तार करने की आवश्यकता है ताकि यह उच्च पदाधिकारियों के भ्रष्टाचार में लिप्त होने वाले मामलों की जांच और अभियोजन पर निगरानी करने के अधिकार से सी.बी.आई. सशक्त हो सके।

अन्त में, क्योंकि आशावाद मेरी एक कमजोरी रही है, मैं अभी भी आशान्वित हूं कि हम अपने जीवन काल के भीतर देख पाएंगे कि लोकपाल का संस्थान जल्दी ही अपनी स्थिति ग्रहण करेगा क्योंकि हमारी शासन

संलग्नक – 1(1) जारी

व्यवस्था के उच्च सोपानकों में अनैतिक तत्वों के साथ निपटने के लिए सभी सुधारों की यह जननी होगा और जिसके बिना उचित परिणाम कभी भी प्राप्त नहीं किए जा सकते । ऐसा ओमबड्मैन (लोकपाल) एक सच्चे तौर पर स्वतंत्र, स्वायत्तशासी और स्वतः पोषित प्राधिकारी होना चाहिए जो जांच, अभियोजन और आवश्यक अनुसरण करने की शक्तियों से युक्त होगा ।

कोई भी व्यवस्था उतनी ही अच्छी होती है जितनी कि उस पर काम करने वाला आदमी । हम जो अपने आस पास व्यापक भ्रष्टाचार को देख रहे हैं वह हमारे समाज में आचरण और नैतिकता के पतन को दिखलाता है। एच. एम. सीरवाई ने 1970 में सर चिमनलाल सेटलवाड व्याख्यान माला के एक भाग के रूप में यह टिप्पणी की थी :–

> *''शक्ति, विधान, न्यायिक और कार्यपालिका के दुरूपयोग के खिलाफ अंततोगत्वा गारंटी ऐसे दुरूपयोग के खिलाफ राजनीतिक और कानूनी सुरक्षणों में, एक सतर्क लोक विचार में, और लोगों में सामान्य तौर पर न्याय के अर्थ में निहित होती है ।''*

यदि हम सुधार करना चाहते हैं तो सबसे पहले हमें अपने निजी जीवन में अभिरूचिगत सुधार लाने होंगे । मैं अंदरे बेतिले के शब्दों को दोहराकर अपनी बात समाप्त करूंगा :–

> *''संविधान उस दिशा की ओर इशारा करता है जिसकी ओर हमें जाना है परंतु सामाजिक ढांचा यह निर्णय देगा कि हम कितनी दूर तक जा सकेंगे और किस गति से ।''*

संलग्नक – 1(2)

श्री एम. वीरप्पा मोइली, अध्यक्ष
दूसरा प्रशासनिक सुधार आयोग द्वारा
''शासन में नैतिकता – कथनी से करनी तक''
पर राष्ट्रीय विचार गोष्ठी के अवसर पर दिया गया भाषण
1 सितम्बर 2006

आदरणीय न्यायमूर्ति जे.एस.वर्मा जी, सम्माननीय श्री सुरेश पचौरी जी, संसदीय कार्य और कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन राज्य मंत्री, भारत सरकार, आमंत्रित गण्यमान्य व्यक्तिगण, विशिष्ट सहभागीगण, दूसरा प्रशासनिक सुधार आयोग के सदस्यगण, महिलाएं और पुरूषगण,

आज मुझे ''शासन में नैतिकता – कथनी से करनी तक'' पर राष्ट्रीय विचार गोष्ठी के एक हिस्से में यहां आ कर इस सामान्य सत्र को संबोधित करते हुए प्रसन्नता हो रही है । इस विचार गोष्ठी द्वारा आज और कल जो विषय का शीर्षक संबोधित किया जा रहा है वह मेरे लिए प्रासंगिक है । हमने भ्रष्टाचार : इसके कारण और व्यापकता, इसकी लागतें और परिणामों के बारे में बहुत ज्यादा बातें कर ली हैं । अगर हम अपने भीतर से निवारण करने की बात करें तो मुझे मानना पड़ेगा कि भ्रष्टाचार पर आज तक हम ने जो कुछ भी कहा है वह सिर्फ नीतियों तक ही रह गया है, उस पर कार्यान्वयन कम हुआ है । अब समय आ गया है जब हम अपनी कथनी को करनी में बदल डालें ।

परंतु, मैं एक बात ध्यान में ला दूं कि भ्रष्टाचार पर हमने बहुत कुछ कहा जरूर : इससे कुछ लाभदायक रूपक भी मिले हैं । इनमें एक का मैं अवश्य उल्लेख करूंगा । वह यह है कि भ्रष्टाचार को कैंसर की गंभीर बीमारी के प्रतीक के रूप में चित्रित किया गया है । भ्रष्टाचार कैंसर की बीमारी की तरह ऐसी चीज है जो अधिकारी से अधिकारी तक, विभाग से विभाग तक, संस्थान से संस्थान तक खोखला करती रहती है जब तक कि पूरी व्यवस्था ही समाप्त न हो जाए । ये बीमारी के रूपक बड़े कठोर हैं परंतु ये एक महत्वपूर्ण संदेश देते हैं । भ्रष्टाचार एक ऐसी भयंकर समस्या है जिसमें शासन और सामाजिक स्थितियां अनिवार्य रूप से विकृत हो जाती हैं और रिश्वतखोरी, भ्रष्टाचार, स्वार्थ अभिकेन्द्रित हो जाते हैं । इसका परिणाम न बच सकने वाला होता है : भ्रष्टाचार को खत्म किया जाना चाहिए ताकि व्यवस्था को स्वस्थ किया जा सके या और बेहतर किया जा सके, इससे पहले कि यह मुख्य से गौण रूप में फैलता जाए, इसे रोकने की आवश्यकता है ।

भ्रष्टाचार कोई हाल ही की घटना नहीं है । यह तो अनेकानेक शताब्दियों से फैला हुआ है । कौटिल्य ने भी अर्थशास्त्र लिखते समय मौर्य युग की राजनीतिक अर्थव्यवस्था पर टिप्पणी करते हुए कहा था,

- जिस प्रकार जिह्वा के अग्रभाग पर लगे मधु अथवा विष को न चख पाना असंभव है, उसी प्रकार सरकारी कोष से संबंध रखने वाले व्यक्ति के लिए यह असंभव है कि वह राजा की संपत्ति के छोटे से अंश का भी रस ग्रहण न करे ।

संलग्नक – 1(2) जारी

- जिस प्रकार यह जान पाना असंभव है कि जल में घूमती हुई मछली कब पानी पी लेती है, उसी प्रकार यह जान पाना भी असंभव है कि सरकारी प्रतिष्ठानों के प्रभारी कर्मचारी कब धन का दुरूपयोग कर लेते हैं ।

- आकाश में उड़ते पक्षियों का मार्ग तो जाना जा सकता है पर उन राजकीय अधिकारियों के कार्यकलापों को, जो (बेईमानी की) की अपनी आय को छिपा लेते हैं, नहीं समझा जा सकता।

- जिन अधिकारियों ने (गलत साधनों से) धन इकट्ठा किया हो, उन से उसकी भरपाई की जाए (तत्पश्चात्) उन्हें ऐसे दूसरे कामों पर नियुक्त कर दिया जाए जहां वे राजा की संपत्ति का दुरूपयोग न कर सकें अथवा निगले हुए धन को दोबारा न उगलना पड़े ।

- जो अधिकारी राजा की संपत्ति का भक्षण न करके उसमें न्यायसंगत साधनों से वृद्धि करते हैं तथा राजा के प्रति पूर्णतया निष्ठावान् रहते हैं उनकी सेवा स्थायी कर दी जानी चाहिए ।

यह तथ्य है कि भ्रष्टाचार की लागत और परिणाम हमें कमजोर कर रहे हैं । भ्रष्टाचार देश के विकास के एजेंडे, इसकी अर्थव्यवस्था को और राजनीति को जितनी हानि पहुंचाता है, उसकी जानकारी प्राप्त नहीं की जा सकती क्योंकि भ्रष्टाचार पर आंकडें प्राप्त करना मुश्किल है । सौभाग्यवश, अब हमारे लिए अनुसंधान करना संभव है क्योंकि बहु–राष्ट्रीय भ्रष्टाचार इंडैक्स के रूप में आंकड़ों का संकलन उपलब्ध है । इसका उद्देश्य उन अन्तर्राष्ट्रीय कंपनियों को सूचना प्रदान करना है जो यह जानना चाहती हैं कि किस देश में वे विनियोग करें । इन आंकड़ों के वर्ग संबंधित देशों के बारे में जानकारी रखने वाले लोगों के विचारों पर आधारित होते हैं जैसे कि विनियोगकर्त्ता, बैंकर, और वित्तीय विश्लेषक ।

अत्यधिक बृहत् बहु–राष्ट्रीय भ्रष्टाचार इंडैक्स, ट्रांसपेरेंसी इंटरनैशनल द्वारा तैयार किया जाता है । ट्रांसपेरेंसी इंटरनैशनल द्वारा तैयार किया जाने वाला भ्रष्टाचार अवबोधन इंडैक्स एक 'पोल आफ दी पोल्स' है, जो 85 देशों को श्रेणीबद्ध करता है तथा जिसमें भ्रष्टाचार फैलने के बारे में असंख्य विशेषज्ञों और आम जनता के विचारों को शामिल किया जाता है, इसमें उन व्यवसायिक लोगों की अवधारणाएं प्रतिबिम्बित होती हैं, जो इन सर्वेक्षणों में भाग लेते हैं । ऐसे आंकड़े उस प्रकार से तो व्यवस्थित रूप में प्रलेखबद्ध और प्रतिध्वनित नहीं होते जैसे कि सामाजिक वैज्ञानिक इन्हें देखना चाहेंगे परंतु भ्रष्टाचार के कठिन क्षेत्र में ये आंकड़े सर्वोत्तम बृहत् स्तर के होते हैं ।

ऐसे बहु–राष्ट्रीय भ्रष्टाचार इंडैक्स के आंकड़ों के वर्ग का प्रयोग करने के बाद हाल ही के अनेक क्षेत्र–पार अध्ययनों से अब भ्रष्टाचार के बृहत् आर्थिक प्रभाव को स्थापित कर पाना संभव हो सका है । उदाहरण के लिए, पौलो मौर्या का अध्ययन यह दर्शाता है कि खंडपार के देशों के जीडीपी के अंश के अध्ययन से पता चला है कि भ्रष्टाचार के उच्च स्तरों का विनियोग के निम्न स्तरों के साथ संबंध होता है । मौर्या ने यह दर्शाया है कि वे देश जहां पर उच्च स्तरों पर भ्रष्टाचार होता है, वहां पर मानव पूंजी में बहुत कम ही विनियोग किया

संलग्नक – 1(2) जारी

है । ऐसा इसलिए होता है क्योंकि अधिक पूंजी–गहन लोक व्यय के अन्य प्रकारों, जैसे कि अवसंरचना और रक्षा की तुलना में शिक्षा में भ्रष्टाचार के कम अवसर होते हैं । नैक और कीफर के अध्ययन से पता चलता है कि भ्रष्टाचार के ऊंचे स्तरों का अर्थ है कम विनियोग का होना, संपत्ति और संविदा के अधिकारों की विश्वसनीय गारंटी का अभाव और सरकार का दुर्बल संस्थानिकरण । भ्रष्टाचार का अंतर्राष्ट्रीय विनियोग के साथ संपर्क ठहराते हुए शांग–जिन वी का अध्ययन यह सिद्ध करता है कि भ्रष्टाचार विदेशी प्रत्यक्ष विनियोग पर कर की तरह अपना काम करता है । कर की दर में एक बिन्दु की वृद्धि विदेशी प्रत्यक्ष विनियोग में 5 प्रतिशत की कमी कर देती है जबकि सिंगापुर से भ्रष्टाचार के स्तर में वृद्धि मेक्सिको की कर दरों में 32 प्रतिशत बिन्दु के समान वृद्धि करती है । एक अन्य अध्ययन में भ्रष्टाचार के इंडैक्स में एक मानक विसंगति (2.4) का सुधार, विनियोग की दर में 4–प्रतिशत बिन्दु की वृद्धि और प्रति व्यक्ति जीडीपी की वार्षिक विकास दर में): की वृद्धि से संबद्ध होता है ।

ऐसे बहुत से अध्ययन हैं जो हमें समाज के स्वास्थ्य के बारे में बतलाते हैं, जहां भ्रष्टाचार ऊंचे स्तर पर होता है । राबर्ट कूटर का अध्ययन यह दिखलाता है कि जिस समाज में भ्रष्टाचार ऊंचे स्तर पर होता है, वहां पर सामाजिक बातचीत भी निम्न स्तर की होती है और कानूनी नियम भी कमजोर होते हैं । कूटर, ने खेल के सिद्धांत को प्रयोग करके यह दिखलाया है कि जहां पर लोग अक्सर स्वतंत्र बातचीत करते रहते हैं वहां पर सुदृढ़ और समुचित मानदंड उनके द्वारा बनाए जा सकते हैं । कूटर के अनुसार, सही और गलत की लोकप्रिय परिकल्पनाओं पर सर्वेक्षण और साक्षात्कार अनुसंधान से यह सुझाव मिलता है कि अधिकतर नागरिक, सिविल सेवकों का रोजमर्रा की इस बातचीत में पाए गए सामाजिक मानदंडों द्वारा ही आकलन करते हैं । कूटर यह भी ध्यान में लाते हैं कि उन देशों में, जहां निम्न स्तर का भ्रष्टाचार होता है, वहां सामाजिक वर्ग – व्यापारिक और व्यावसायिक संघ या समुदाय वर्ग – ने 'कानून के व्यापारियों' का काम किया है और वे अच्छे व्यवसाय की संहिता को जारी करवाने में सफल हुए हैं और भ्रष्टाचार निरोध शास्तियों को भी अधिरोपित करने की स्थिति में हो गए हैं ।

ईशाम, कौफमैन और प्रिचैत के दो अध्ययनों से पता चलता है कि भ्रष्टाचार के ऊंचे स्तर वाले समाजों में राजनीति में जनसमूह की भागीधारी बहुत कम स्तर पर होती है और वहां सिविल स्वतंत्रता का भी कमजोर बचाव रहता है । ईस्टरली और लेवाइन के अध्ययन ने भी स्थापित किया है कि भ्रष्टाचार की बड़ी घटनाओं वाले समाज में गहरे जातिगत विभाजन और संघर्षों के लक्षण रहते हैं ।

दूसरे शब्दों में, ये अध्ययन यह स्थापित करते हैं कि किस प्रकार से भ्रष्टाचार कम विकास, कम विनियोग और दुर्बल आर्थिक प्रतिस्पर्द्धा से समीपता से परस्पर संबंधित होता है । संक्षेप में, भ्रष्टाचार अर्थव्यवस्था का ह्रास करता है । अध्ययनों से हमें यह भी पता चलता है कि ऊंचे स्तर वाले भ्रष्टाचार के समाजों में अंततोगत्वा सामाजिक बातचीत के निम्न स्तर होते हैं, कानूनी नियम कमजोर होते हैं, निम्न प्रकार की शिक्षा होती है, राजनीति में सहभागिता निम्न स्तरों की होती है, सिविल स्वतंत्रता का दुर्बल बचाव होता है और गहरे जातिगत विभाजन और संघर्ष होते हैं ।

संलग्नक – 1(2) जारी

कुल मिलाकर भ्रष्टाचार, रिश्वत देने वाले के लिए कष्टप्रद होने के अलावा, यह अर्थव्यवस्था और समाज के लिए भी अधिक मूलभूत उलझनों से भरा हुआ है । भ्रष्टाचार के ऊंचे स्तर अर्थव्यवस्था को हानि पहुंचाते हैं, और समाज को बहुत कमजोर कर देते हैं । ये क्षेत्र–पार अध्ययन बीमारी के उपाय प्रदान करते हैं और उन्हें गंभीर रूप से किया जाना चाहिए ।

भ्रष्टाचार को रोकने के लिए क्या किया गया है ? परंपरागत तौर से, इसे नियंत्रण व्यवस्था का प्रयोग करके किया गया है ।

नियंत्रण व्यवस्था

नियंत्रण व्यवस्थाएं वे प्रणालियां हैं जिन्हें भ्रष्टाचार का पता लगाने, सजा देने और भ्रष्टाचार कम करने के लिए बनाया जाता है । नियंत्रण व्यवस्थाएं विभिन्न प्रकार की हो सकती हैं : शास्ति दर, आंतरिक नियंत्रण, बाहरी नियंत्रण और सामाजिक नियंत्रण ।

शास्तियां (दंड)

अत्यन्त सामान्य रूप से उपकरणों में से शास्ति का प्रयोग किया जाता है । शास्ति (दंड) – जो एक वैधानिक प्रकृति की होती है – कैद की सजा से लेकर नौकरी से हटाए जाने से लेकर अनुचित रूप से प्राप्त की गई संपत्तियों की वसूली तक हो सकती है । उदाहरण के लिए, सिंगापुर में भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम में भ्रष्टाचार के लिए पांच वर्ष की कैद और 10000 डालर के जुर्माने का अनुबंध है । अधिनियम में यह उपबंध है कि सिविल सेवक, जिसके विरूद्ध भ्रष्टाचार का आरोप हो, को न्यायिक दंड के अलावा घूस का पैसा भी वापस करना होगा । एक पृथक् विधान भ्रष्टाचार (लाभों की जब्ती) अधिनियम, 1989, भ्रष्ट वृत्ति अन्वेषण ब्यूरो को भ्रष्टाचार द्वारा लिए गए लाभों को जब्त करने के लिए सशक्त करता है ।

अधिकतर देश भ्रष्टाचार के लिए उच्च शास्ति देते हैं । थाईलैंड एक ऐसा ही देश है । थाई दंड संहिता में भ्रष्टाचार के दोषी अपराधी के लिए आजीवन कैद या मृत्यु दंड निर्धारित किया गया है । वास्तव में, थाई दंड व्यवस्था में दी जाने वाली सजा अन्य देशों में इसी प्रकार के अपराधों के लिए दी जाने वाली सजा से पर्याप्त रूप से ऊंची है । फिर भी, थाईलैंड अन्य राष्ट्रों के बीच में भ्रष्टाचार में सबसे ऊंचे स्तर पर दिखाई देता है ।

कठोर दंड दे दिए जाने से भी यह अनिवार्य नहीं है कि रोकथाम हो जाए । जो महत्वपूर्ण है, वह यह है कि शास्तियों को कार्यान्वित करने का सामर्थ्य होना चाहिए । यदि भ्रष्टाचार सिद्ध हो जाए तो कम से कम सरकारी नौकरी से हटा दिए जाने का दंड दिया जाना चाहिए । सिविल सेवा में नौकरी को बहुत ही ऊंचा समझा जाता है और इससे प्रतिष्ठा मिलती है, वहीं निलंबित किए जाने का अर्थ पूरी परिवार के लिए अपमान की बात होती है और इसीलिए, परिवार के सदस्यों को भ्रष्टाचार को हतोत्साहित करने की प्रेरणा होती है। ऐसे सिविल सेवकों को निजी क्षेत्र में नौकरी से निषिद्ध रखे जाने का अनुबंध भ्रष्टाचार में लिप्त होने की कीमत कहीं अधिक चुकाता है ।

संलग्नक – 1(2) जारी

कोरिया ने ऐसे अनुबंध कर रखे हैं । 1975 के सामान्य प्रशासनिक सुधार आंदोलन ने ऐसे सिविल सेवकों को निजी क्षेत्र में दोबारा नौकरी पर रखने का निषेध कर दिया था जिन्हें भ्रष्टाचार के आरोपों पर निलंबित कर दिया गया था । यह आंदोलन एक कदम और आगे चला गया । वह व्यक्ति जिसने प्रारंभ में उस अधिकारी के मामले में सिफारिश की थी, जो बाद में भ्रष्टाचार का दोषी पाया गया था, उसे भी निलंबित कर दिया गया और भ्रष्टाचार के दोषी पाए गए व्यक्ति को दोबारा नौकरी पर रखे जाने की निषेधाज्ञा को उसके पुत्रों और पोतों तक भी बढ़ा दिया गया था ।

निष्पक्ष तौर से, शास्तियों को केवल उन लोगों तक ही सीमित नहीं रखना चाहिए जो लोग रिश्वत लेते हैं बल्कि उन्हें भी शामिल किया जाना चाहिए जो रिश्वत देते हैं । दुर्भाग्य से यह सामान्य वृत्ति नहीं है और अधिकतर देश उन लोगों को सजा देने में शर्म महसूस करते हैं जो घूस देते हैं । यह केवल संयुक्त राष्ट्र में है कि विदेशी भ्रष्ट वृत्ति अधिनियम बहुराष्ट्रीय कंपनियों पर शास्तियां अधिरोपित करता है, जो घूस देती हैं ।

आन्तरिक नियंत्रण व्यवस्थाएं

सभी विभागों में एक मुख्य सतर्कता अधिकारी होता है जिसकी सहायता के लिए उसके नीचे भ्रष्टाचार की शिकायतों और अनुशासनिक कार्यवाहियों का काम देखने के लिए सतर्कता अधिकारी होते हैं । प्रशासन में सत्यनिष्ठा का पालन करने से संबंधित सभी मामलों के बारे में केन्द्रीय सरकार को परामर्श देने के लिए हमारा केन्द्रीय सतर्कता आयोग है । सीबीआई सूचना एकत्र करता है, जांच और तलाशियां करता है और भ्रष्ट के खिलाफ मुकदमा करने के लिए आवश्यक कार्यवाई करता है । परंतु यह तथ्य है कि इन सभी भ्रष्टाचार निरोधी निकायों के संयुक्त प्रयास भी भ्रष्टाचार से उबार नहीं सके ।

राज्य सरकारों के स्तर पर इसी प्रकार की सतर्कता और भ्रष्टाचार निरोधी संगठन होते हैं, यद्यपि, राज्य सरकारों के बीच इन संगठनों की प्रकृति और कर्मचारियों में भिन्नता होती है । कुछ राज्यों में सतर्कता आयोग होते हैं जबकि अन्य में पुलिस विभाग के एक भाग के रूप में भ्रष्टाचार निरोध ब्यूरो होते हैं ।

जहां कहीं राज्य सतर्कता आयोग अस्तित्व में होते हैं, उनका अध्यक्ष उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की हैसियत का व्यक्ति होता है और उनका प्रतिरूप केन्द्रीय सतर्कता आयोग जैसा होता है । राज्य सतर्कता आयोग सिविल सेवकों के खिलाफ शिकायतों की जांच करने के लिए सशक्त होते हें । जांच करते समय, राज्य सतर्कता आयोगों की सहायता के लिए राज्य सरकारों से पुलिस अधिकारियों को प्रतिनियुक्ति पर भेजा जाता है ।

कुछ राज्य सरकारों ने लोक आयुक्त की संस्था का गठन कर रखा है जो एक भ्रष्टाचार निरोध संस्थान है जो कार्यपालिका से वैधानिक रूप से स्वतंत्र है । यद्यपि, लोक आयुक्त की संस्था को प्रथम प्रशासनिक सुधार आयोग की सिफारिशों पर गठित किया गया था, फिर भी राज्यों में संस्थानों के ढांचे में काफी विसंगति है ।

यह एक आम राय है कि लोक आयुक्त की संस्था को उस कोटि की स्वतंत्रता नहीं दी गई है जो एक स्वायत्त भ्रष्टाचार निरोध निकाय के रूप में प्रभावशाली कार्य करने के लिए इसे दी जानी आवश्यक है । विविध राज्यों

संलग्नक – 1(2) जारी

के लोक आयुक्तों की यह सामान्य शिकायत है कि उन्हें सरकारी विभागों से पर्याप्त जानकारी नहीं मिला पाती जिससे वे प्रभावी ढंग से काम कर सकें ।

आन्तरिक नियंत्रण व्यवस्था भारत में विफल रही है । इसके अनेक कारण हैं । पहला, सरकार के सभी स्तरों के काम में कपट है और भ्रष्टाचार से प्राप्त लाभों का हिस्सा आपस में बांटा जाता है । परिणामस्वरूप, ऐसे बहुत ही कुछेक मामले होते हैं जिनमें भ्रष्टाचार की सूचना दी जाती है और उन कुछेक मामलों में भी सामान्य विलंब किए जाते हैं और कार्रवाई में नरमी बरती जाती है जिससे भारत में जांच की प्रक्रिया के लक्षण दिखाई देते हैं ।

दूसरा, जांच और अभियोजन एजेंसियां कार्यपालिका सरकार से स्वतंत्र नहीं हैं । दूसरे शब्दों में, जांच और अभियोजन एजेंसियों का संचालन संभावित हस्तक्षेप से पृथक नहीं है । एक नियमित हस्तक्षेप कार्यपालिका सरकार की जांच एजेंसियों के महत्वपूर्ण पदाधिकारियों की नियुक्ति और उनका स्थानान्तरण है । इसका परिणाम होता है जांच और अभियोजन में अवांछनीय शिथिलता होना ।

तीसरा, अगर कुछ मामलों में जांच का काम किया भी जाता है तो जांच प्रक्रिया को जानबूझ कर तोड़ा–मरोड़ा जाता है । जांच प्रक्रिया पर युनाईटेड किंगडम में अभियोजन निदेशक या संयुक्त राज्य में विशेष स्वतंत्र परिषद् जैसे किसी निष्पक्ष व्यावसायिक निकाय द्वारा निगरानी किए जाने की कोई व्यवस्था नहीं है ।

चौथा, किसी भ्रष्ट सिविल सेवक के खिलाफ अपराधपूर्ण कार्रवाई करने या उसे विभागीय रूप से दंडित करने का अन्तिम निर्णय कार्यपालिका सरकार के हाथों में होता है । लोक आयुक्त जैसे भ्रष्टाचार निरोध स्वायत्त निकाय, जिनकी अध्यक्षता न्यायिक पृष्ठभूमि का कोई व्यक्ति करता है, किसी अभियोजन या विभागीय कार्रवाई की कार्यपालिका सरकार के विचार के लिए केवल सिफारिश ही कर सकता है । और ऐसे मामलों में, कपटी का जाल–तंत्र यह सुनिश्चित करता है कि निर्णय भ्रष्ट सिविल सेवक के पक्ष में ही हो ।

पांचवां, कार्यवाहियों में जो कार्य–प्रणालियों की जो उलझनें हैं, वे अनेकानेक हैं । उदाहरण के लिए, विभागीय कार्रवाई में 12 अवस्थाएं हैं । ये अवस्थाएं एक निश्चित आरोप पत्र तैयार करने से शुरू होती हैं और शास्ति के अधिरोपण में समाप्त होती हैं । ये अनेक अनगिनत अवस्थाएं कार्य–प्रणाली के लिहाज से आवश्यक हैं क्योंकि किसी सिविल सेवक को संवैधानिक सुरक्षण की गारंटी दी गई हैं । वास्तव में, भारत में सिविल सेवक को प्रदान किए गए सुरक्षणों की मांग अधिकतर अन्य देशों की तुलना में अधिक है । संवैधानिक सुरक्षण सामान्यतः भ्रष्ट व्यक्ति के पक्ष में ही काम करते हैं ।

कुल मिलाकर भारत में आन्तरिक नियंत्रण व्यवस्था उतनी कारगर नहीं हुई है, जितनी कि यह कागजों पर थी । बंगाली भाषा में एक कहावत है जो भारत में आंतरिक नियंत्रण व्यवस्था की वर्तमान हालत को चरितार्थ करती है : 'भूत–पिशाचों की झाड़–पोंछ के लिए सरसों के तेल के बीजों का प्रयोग किया जाता है । यदि सरसों में ही भूत–पिशाच हों तो वे झाड़–पोछ कैसे कर पाएंगे ।'

संलग्नक – 1(2) जारी

बाहरी नियंत्रण व्यवस्था

बाहरी नियंत्रण व्यवस्था रोकथाम की एक औपचारिक व्यवस्था के रूप में काम करती है और ऐसे प्रशासन में काम करती है जिसमें पृथक शक्तियों का प्रावधान हो और जांच और तुलन सरकार की अन्य शाखाओं द्वारा किया जाता हो । भारत में, बाहरी नियंत्रण व्यवस्था बिल्कुल सफल है – इसमें बाहरी लेखा परीक्षा और एक स्वतंत्र न्यायपालिका शामिल हैं ।

लेखा परीक्षा

लेखा परीक्षा प्रणाली का काम नियंत्रक और महालेखापरीक्षक (सीएजी) द्वारा किया जाता है । सीएजी भारत के संविधान द्वारा गठित एक स्वतंत्र प्राधिकरण है । लेखा परीक्षा की स्वतंत्रता इसे संविधान के उपबंधों के अधीन रक्षा और विशेषाधिकार देकर सुनिश्चित की जाती है । इसकी स्वतंत्रता विधायी अधिनियमन – नियंत्रक–महालेखाकार (कर्त्तव्य, शक्तियां तथा सेवा की शर्तें) अधिनियम 1971 में लेखा परीक्षा की शक्तियों की प्रगणना द्वारा और सुदृढ़ की गई है ।

वे कौन कौन सी शर्तें हैं जिनके अंतर्गत भ्रष्टाचार से निपटने के लिए लेखा परीक्षा प्रभावकारी हो सकती है? पहली, लेखा परीक्षा को कार्यपालिका से स्वतंत्र होना चाहिए और इसके बाहर होना चाहिए । एक स्वतंत्र और बाहरी लेखा परीक्षा भ्रष्टाचार को सामने लाकर और दंड द्वारा व्यय नियंत्रण को सुनिश्चित कर सकती है । भारत में सीएजी कार्यपालिका से स्वतंत्र और बाहरी है । इसे सिविल सेवकों द्वारा की जाने वाली भ्रष्ट वृत्तियों की छानबीन करने के लिए और कार्यवाई की सिफारिश करने के लिए शक्ति, साधन और संसाधन जुटाए गए हैं ।

दूसरी, लेखा परीक्षा की टिप्पणियों पर कार्यवाई करने के लिए व्यवस्थाएं होनी चाहिए । भारत में, ऐसी व्यवस्थाएं हैं परंतु व्यवहार में भारत का कार्यपालक लेखा परीक्षा की टिप्पणियों पर कार्यवाई करने के लिए अनिच्छुक है ।

तीसरी, भ्रष्टाचार के कृत्यों और उनके लेखा परीक्षा द्वारा इसका पता लग जाने के बीच में कोई महत्वपूर्ण विलंब नहीं किया जाना चाहिए अर्थात्, लेखा परीक्षा और उसपर कार्रवाई तुरंत की जानी चाहिए ताकि भ्रष्ट सिविल सेवकों के खिलाफ लेखा परीक्षा की रिपोर्टों के आधार पर ठीक समय पर कार्यवाई प्रारंभ की जा सके। परंतु लेखा परीक्षा के काम विलंब से होने के कारण और लोक लेखा समितियों द्वारा लेखा परीक्षा की रिपोर्टों पर विचार विमर्श में लिप्त धीमी प्रक्रिया के कारण नियंत्रण के एक प्रभावकारी यंत्र के रूप में लेखा परीक्षा का प्रभाव न्यून हो जाता है । वास्तव में, जैसा कि सामान्य अनुभव है, लेखा परीक्षा की रिपोर्टें ऐसे लेनदेनों से संबंधित होती हैं जो कई वर्ष पुराने होते हैं । बीच के वर्षों के दौरान यह बिल्कुल संभव है कि सिविल सेवक जो प्रश्नसूचक वृत्तियों में लिप्त थे, उनका स्थानान्तरण अन्य विभागों में हो जाए या इससे भी बदत्तर वह सेवा–निवृत्त हो गया हो या उसकी मृत्यु हो जाए ।

निष्पक्षतः लेखा परीक्षा प्रभावकारी है परंतु केवल न्यून मात्रा में । रिपोर्ट उच्च स्तरों पर भ्रष्टाचार की राष्ट्रीय वाद विवाद गोष्ठियों के लिए एजेंडा बनाने में सीएजी की रिपोर्ट बड़ी कारगर होती है । परंतु अधिकतर मामलों

संलग्नक – 1(2) जारी

में, भ्रष्टाचार के वास्तविक कृत्यों और लेखा परीक्षा में इस बारे में रिपोर्ट होने के बीच समय का अंतराल इतना बड़ा होता है कि ऐसी भ्रष्ट वृत्तियां समय पर कम ही सामने आ पाती है ।

पांचवें वेतन आयोग ने इस पहलु को प्रकाश में डाला था और सिफारिश की थी कि समय के इस अंतराल में कटौती करने के लिए लेखा परीक्षा को समवर्ती होना चाहिए । आयोग के शब्दों में,

> *''लेखा परीक्षा को यथा–संभव समवर्ती होने का प्रयास करना चाहिए । कलंकपूर्ण और घोटालों का तभी पता चल जाता है जब उनकी योजना बनाई जाती है और उनका निष्पादन किया जाता है । यदि लेखा परीक्षा उनकी ओर अच्छे प्रचार से ध्यान आकर्षित करे तो ऐसे कलंकपूर्ण कार्यों को बीच में ही रोका जा सकता है । मरणोत्तर परीक्षा लाभदायक होती हैं परंतु इनका संचालन तभी किया जा सकता है जब रोगी की मृत्यु हो गई हो । यह बेहतर होगा कि रोगी का इलाज करके उसे जीवित रखा जाए।''*

न्यायपालिका

एक दूसरी बाहरी नियंत्रण व्यवस्था अर्थात् स्वतंत्र न्यायपालिका भी भारत में विद्यमान है । भारत में न्यायपालिका रोकथाम का एक महत्वपूर्ण यंत्र है क्योंकि भारतीय दंड संहिता और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम भ्रष्ट वृत्तियों को न्यायालय में दंड देते हैं । भारत में न्यायपालिका स्वतंत्र है – यह कार्यपालिका से स्वतंत्र है ।

यद्यपि, न्यायपालिका स्वतंत्र है, परंतु फिर भी यह रोकथाम के प्रभावकारी यंत्र के रूप में काम नहीं कर सकी है । इसके अनेक कारण हैं । पहला, न्यायालयों में विचारण के लिए भ्रष्टाचार के ज्यादा मामले लाए ही नहीं जाते । ऐसा इसलिए है क्यों कि भ्रष्टाचार के मामलों में अभियोजन की स्वीकृत्ति की शक्ति कार्यपालिका के हाथों में होती है और जैसा कि हमने देखा, उन मामलों की संख्या जिनमें अभियोजन की स्वीकृति दे दी गई है बहुत ही कम है ।

दूसरा, भ्रष्टाचार के मामलों में अपनाई जाने वाली भारतीय कानूनों में अधिकथित अभियोजन प्रणाली कमजोर और अव्यावसायिक है । भ्रष्टाचार को सिद्ध करने के लिए और दोषी करार देने के लिए साक्ष्य इकट्ठा करना कठिन है, विशेषतः उस प्रकार के साक्ष्य जो अधिनियमों के अधीन अपेक्षित हों ।

तीसरा, भ्रष्टाचार के मामलों में न्यायालयों से मिलने वाले निर्णय में लंबे विलंब एक महत्वपूर्ण बाधा हैं । किसी भ्रष्ट सिविल सेवक को अपराध करने के लंबे अंतराल के बाद सिद्धदोषी का करार देना कोई असामान्य नहीं है, और अधिकतर मामलों में, सिविल सेवक के सेवा–निवृत्त हो जाने के बाद ही । दूसरे शब्दों में, न्यायिक प्रभाव है ही नहीं और भारत में न्यायपालिका भ्रष्टाचार के मामलों को शीघ्र निपटाने के लिए असमर्थ प्रतीत होती है।

मामलों की संख्या को बढ़ाने के उद्देश्य से भारत में न्यायालयों द्वारा अनुच्छेद 311 के अंतर्गत विहित सुरक्षण और कार्य पद्धतियों का निर्वचन इस प्रकार से किया जाता है कि जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि वे मामले तकनीकी तौर पर भ्रष्ट लोगों के पक्ष में जाऐं भले ही ऐसा जानबूझ कर न किया जाता हो। वास्तव में, जैसा कि भ्रष्टाचार रोकथाम पर संथानम समिति ने निराशाजनक टिप्पणी की है, "हमारे न्यायालयों द्वारा संविधान के अनुच्छेद 311 का जिस प्रकार से निर्वचन किया जाता है उससे भ्रष्ट सिविल सेवकों के साथ प्रभावपूर्ण निपटना बहुत ही कठिन है।" अनुच्छेद 311 में संशोधन करने के बाद भी जो सुरक्षण और कार्य पद्धतियों के कवच उपलब्ध हैं, उनकी व्याख्या इस प्रकार से की जाती है कि कार्यवाहियों को लम्बा किया जा सके और इस प्रकार अन्तिम विश्लेषण

संलग्नक – 1(2) जारी

जीर्ण–क्षीण हो जाए । इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि अनुच्छेद 311 भ्रष्ट सिविल सेवकों के विरूद्ध कार्रवाई करने में आड़े जाते हैं । अनुच्छेद 311 की दोबारा से समीक्षा की जानी चाहिए ।

काफी समय से कुछ ताजा परिवर्तन हुए हैं । भारतीय उच्चतम न्यायालय द्वारा और इस उदाहरण को अपनाते हुए कुछेक उच्च न्यायालयों द्वारा कानून की व्याख्या विशेषतः भ्रष्टाचार से संबंधित जन हित याचिकाओं के मामलों में अत्यन्त उदार कर दी गई है । जन हित याचिकाओं को इन न्यायालयों में संबंधित नागरिकों द्वारा फाइल किया जाता है और इन याचिकाओं की विषय–वस्तु भ्रष्टाचार ही होती है ।

उच्चतम न्यायालय, भारतीय संविधान के अनुच्छेद 142 की उदार व्याख्या करके (जो उच्चतम न्यायालय को ऐसी डिक्रियां और आदेश पारित करने के लिए प्राधिकृत करता है जो उसके समक्ष लंबित किसी वाद या विषय में पूर्ण न्याय करने के लिए आवश्यक हो) । भ्रष्टाचार के मामलों में लिप्त ऊंचे पदों पर आसीन लोगों के संबंध में एक सकारात्मक निदेश देने में सफल हो गया है । यह सुनिश्चित करने के लिए कि प्रभावपूर्ण व्यक्तियों के आदेश पर जांच–एजेसियों द्वारा जांच पड़ताल को बहुत लंबे समय तक रोक न दिया जाए, इसके लिए उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश जांच की प्रक्रिया का व्यक्तिगत रूप से पर्यवेक्षण करने की सीमा तक भी चले गए हैं ।

उच्चतम न्यायालय के इस सक्रिय कदम से अपेक्षित प्रभाव बन सका है परंतु ये अधिक से अधिक एक मार्ग ही दिखा सकता है । तथापि, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के उपबंधों की अधीन अपेक्षित भ्रष्टाचार के अधिकतर मामलों को निचली अदालतों के समक्ष लाया जाना होता है । अतः यदि न्यायपालिका को रोकथाम के प्रभावकारी सोपान के रूप में काम करना है तो आवश्यक बोझ संपूर्ण न्यायिक व्यवस्था को ही वहन करना होगा न कि केवल भारत के उच्चतम न्यायालय द्वारा ।

भारत में विद्यमान सरकारी भ्रष्टाचार की विविधताओं के संदर्भ में एक बिन्दु स्पष्ट किए जाने की आवश्यकता है । सरकारी भ्रष्टाचार को दो सामान्य वर्गों में विभाजित किया जा सकता है । एक है घोटालों का भ्रष्टाचार, जैसाकि सरकार के उच्च स्तरों पर बड़ी संविदाओं और बड़े पक्षपातों के मामले में । सामान्यतः इसमें राजनीतिज्ञ प्रत्यक्ष रूप से लिप्त होते हैं । यह घोटालों के बारे में ही है कि भारत का उच्चतम न्यायालय एक कड़ा कद उठाने में सफल हुआ है ।

अन्य विविधता है छोटे या फुटकर भ्रष्टाचार की । यह जोर जबरदस्ती का भ्रष्टाचार होता है जो देश में अधिकतर नागरिकों के जीवन को छूता है । फुटकर या छोटा भ्रष्टाचार अधिक व्यापक तौर पर फैला हुआ है– लोक कार्य केन्द्र के हाल के अध्ययन भारत में फुटकर भ्रष्टाचार के फैलाव पर प्रमाण देते हैं । इन अध्ययनों के अनुसार, चेन्नई में हर चौथा आदमी शहरी विकास प्राधिकरण, बिजली बोर्ड, नगर निगम और दूरभाष जैसी एजेंसियां से निपटने के लिए घूस का पैसा देता है जबकि बंगलौर में आठ में से एक व्यक्ति होता है और पुणे में 17 व्यक्तियों में से एक व्यक्ति होता है । स्पष्ट है कि फुटकर भ्रष्टाचार व्यापक रूप में फैला हुआ है और यदि अधिक नहीं तो कम से कम इसका समाधान भी उसी गंभीरता के साथ किया जाना

संलग्नक – 1(2) जारी

चाहिए जितना कि घोटालों का क्योंकि यह नागरिकों के जीवन को लूट–खसोट के असंख्य तरीकों से छूता है ।

न्यायपालिका को रोकथाम के प्रभावकारी सोपान के रूप में काम करने के लिए चार शर्तों को पूरा करना चाहिए। ये चार शर्तें हैं न्यायिक स्वतंत्रता, न्यायिक प्रवर्तन, न्यायपालिका तक स्वतंत्र पहुंच और न्यायिक प्रभावकारिता । भारत में न्यायपालिका स्वतंत्र है । न्यायिक प्रवर्तन हैं – भारत में न्यायपालिका अपने निर्णयों को प्रभावी करने में समर्थ । न्यायपालिका तक पहुंच है परंतु अत्यधिक महत्वपूर्ण शर्त के संबंध में न्यायपालिका में बिना लंबे विलंबों के मामलों को निपटाने में कोई संगठनात्मक कुशलता नहीं है ।

सामाजिक नियंत्रण

एक सुदृढ़ और सतर्क सिविल समाज भ्रष्टाचार पर निगरानी कर सकता है और प्रतिरोधी कार्रवाई के लिए आधार बन सकता है । भ्रष्ट राज्य, भ्रष्टाचार निवारण निकायों और निगरानी संगठनों को धन प्रचुर मात्रा में दे देते हैं जो बदले में स्पष्ट रूप से भ्रष्टाचार को छिपाने या बचाव करने में लग जाते हैं बजाय इसके कि वे उन्हें दंड दें क्योंकि यदि परिणाम असंतोषजनक भी हों तो भी राज्य के ढांचे से बाहर जवाबदेही मांगने की स्थिति में कोई नहीं होगा । एक सुदृढ़ और सतर्क सिविल समाज के अभाव में औपचारिक लोकतांत्रिक संस्थानों का अत्यन्त बृहत् पुलिंदा भी आवश्यक जवाबदेही को प्रस्तुत करने की स्थिति में नहीं हो सकता ।

जहां तक भारत में सिविल समाज का संबंध है, पुरानी प्रवृत्तियां और अवरोधन अभी भी प्रचलित हैं । ऐसा दो कारणों से हो रहा है । पहला, भारत में सिविल समाज यह देखने का इच्छुक ही नहीं कि देश की वास्तविक प्रक्रियाएं क्या हैं, प्रक्रिया में वह सुदृढ़ता जो पहले थी, राज्य के पदाधिकारियों का यह विचार कि देश एक काली पेटी की प्रकृति का हो गया है । दूसरा, एक सर्वसम्मत विश्वास है – बीते समय की एक बार फिर विरासत – सार्वजनिक पदों पर आसीन लोगों के लिए यह बिल्कुल उचित है कि वे देश के, इसके ढांचे और संसाधनों का प्रयोग इस प्रकार से करें कि जैसे उन्हें पसन्द आए अर्थात् अपने निजी हितों में वृद्धि करने के लिए ।

मुख्य अय्याम यह है कि जहां तक भ्रष्टाचार का संबंध में, भारत मे सिविल समाज एक सामान्य दृष्टि या मूल्यों को स्वीकार नहीं करता । क्या सही है और क्या गलत है, इसके बारे में इसने मजबूत और उचित मानदंड विकसित नहीं किए हैं और परिणामस्वरूप यह अच्छे व्यवहार की संहिता को जारी नहीं कर पाया है । क्योंकि गलत और सही की ऐसी कोई व्यापक रूप से साझा लोकप्रिय अवधारणा नहीं है, जिससे लोक सेवकों के व्यवहार को आंकने के लिए एक तल चिह्न के रूप में प्रयोग किया जा सकता है । अतः कोई भी आकलन नहीं है । संभवतः यह इस तथ्य को स्पष्ट कर देता है यद्यपि, सिविल उदारता और मानव अधिकारों के क्षेत्र में बहुत ही कम वर्ग काम कर रहे हैं परंतु भ्रष्टाचार से लड़ने के लिए अधिक वर्ग काम नहीं कर रहे हैं । जन हित के एच. डी. शौरी ने भ्रष्टाचार के खिलाफ न्यायालयों के माध्यम से एक निर्भीक परंतु अकेली लड़ाई छेड़ी है । केवल एक अन्य वर्ग बंगलौर में है – सेमुअल पाल'स लोक कार्य केन्द्र – जो भारत की अपेक्षा विदेशों में अधिक जाना जाता है ।

संलग्नक – 1(2) जारी

सूचना

सरकार के बारे में सूचना सिविल समाज द्वारा किसी अर्थपूर्ण भ्रष्टाचार निरोधी प्रयास के लिए एक पूर्व–शर्त है । भारत में किसी नागरिक को सरकारी सूचना तक तभी पहुंचने दिया जाता था, जब वह प्राधिकारियों को इस बात से संतुष्ट कर लेता था कि उसका जीवन ऐसी सूचना से प्रभावित है ।

शासकीय गुप्त बात अधिनियम सरकारी सूचना को जनता की पहुंच से इन्कार करने का एक आसान बहाना होता था । जानकारी ही शक्ति है और इसीलिए शासकीय गुप्त बात अधिनियम सिविल सेवकों के हाथों में एक ऐसा सुगम हथियार है जिसे वे यथासंभव अपने गले लगा कर रख सकते हैं । यह सत्ता के राजनीतिज्ञों का आशीर्वाद ही है, जो किसी भी तरह अपने संदिग्ध निर्णयों के लिए जवाबदेही के लिए बड़ी कठिनाई से तैयार होंगे ।

सूचना अधिकार अधिनियम, हाल ही में अधिनियमित एक नया विधान है, जो गोपनीयता के अंधकार से पारदर्शिता की सुबह तक चले आने का सूचक है । सूचना अधिकार अधिनियम के नियम भ्रष्टाचार से लड़ने का एक शक्तिशाली साधन है । इससे सरकारी सूचना के प्रवाह को लोगों तक पहुंचाने में वृद्धि होगी और इस दृष्टि से, सिविल समाज द्वारा सरकारी प्रक्रियाओं पर प्रभावशाली निगरानी की प्रक्रिया भी बढ़ेगी । इसके अलावा, इस प्रशासनिक सुधार आयोग ने पहले ही सरकार को सिफारिश की है कि सरकारी गुप्त बात अधिनियम 1923 को वापस ले लिया जाए ।

नागरिकों की आवाज

भ्रष्ट व्यवहार को सामने लाने, उसे समाप्त करने और उस पर प्रतिबंध लगाने के लिए नागरिकों की आवाज का प्रयोग किया जा सकता है । उदाहरण के लिए, जापान में सिविल सेवकों के व्यवहार पर नियंत्रण रखने के लिए सामाजिक परित्याग प्रधान स्रोत हैं । जापान में सामाजिक परित्याग को व्यक्त करने के बहुत से तरीके हैं । एक है संदिग्ध सत्यनिष्ठा पर सिविल सेवकों को सामाजिक रूप से शर्मिंदा करना । दूसरा है, राजनीतिक उलझन, और जैसाकि जापानी सिविल सेवक मानते हैं, राजनीतिक उलझन सरकारी आचार के लिए सामाजिक बहिष्कार का एक प्रभावकारी रूप हो सकता है ।

सामाजिक बहिष्कार पदानुक्रम वाले नौकरशाही ढांचे में नियंत्रण व्यवस्था के रूप में विशेष तौर से प्रभावी सिद्ध हो सकता है जिसमें उच्चतम लोक सेवकों को अपनी अधीनस्थ लोगों द्वारा किए गए कामों के लिए उत्तरदायी ठहराया जाता है । जापानी व्यवस्था में भ्रष्टाचार को सीमित रखने में सामाजिक बहिष्कार ने एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है । गलती करने वाले लोक सेवक का भी उतना ही सामाजिक बहिष्कार किया जाता है, जितना कि उसके काम को देख रहे वरिष्ठ लोक सेवकों का । अतः उन मामलों में जहां सरकारी कदाचार का न्यायालय, मीडिया या डाईट में सिद्ध हो जाता है, वहां पर संबंधित पूरी एजेंसी में इस प्रभाव का आभास हो जाता है क्योंकि प्रभारी मंत्री के साथ वरिष्ठ लोक सेवक भी लोक बहिष्कार के सामाजिक परिणामों से पीड़ित होते हैं ।

संलग्नक – 1(2) जारी

क्लिटगार्ड ने भ्रष्टाचार के उन दोषी लोगों को शर्मिंदा करने में प्रभावकारिता दिखाई है । परंतु सामाजिक परित्याग केवल उन देशों में प्रभावी होता है जहां पर लोक सेवकों पर परंपरा ने एक ऊंचा स्थान दिया हो और लोक सेवक अपनी ओर से समाज के मत को मूल्यवान समझते हों ।

अतः यह आवश्यक है कि सिविल समाज भ्रष्टाचार को समाप्त करने के लिए आगे आए और बहिष्कार करने की इच्छा व्यक्त करे । दुर्भाग्य से, ऐसा उन देशों में नहीं होता, जहां भ्रष्टाचार को सामाजिक स्वीकृति मिली होती है । ऐसी स्वीकृति अनिवार्य तौर पर सामाजिक आत्म समर्पण किए जाने की अभिव्यक्ति है और यह भ्रष्टाचार का पता लगाने और दंड दिलाने में हानिकारक है क्योंकि नागरिक भ्रष्टाचार की सूचना देने में सरकार के साथ सहयोग करने में आगे नहीं आते । वास्तव में, अधिकतर देशों में ऐसा सामाजिक आत्मसमर्पण एक परिचित नजारा है । इन देशों में आर्थिक विकास धीमा, नकारात्मक और असमान है ; संस्थानों में एकाधिकार है और आर्थिक और राजनीतिक विकल्पों का अभाव है और लोग भ्रष्टाचार को अपरिहार्य रूप में देखते हैं और इससे लड़ने की कोशिश को निष्फल समझते हैं । ऐसी स्थिति में भ्रष्ट लोक सेवकों के साथ निपटने के कुछ विकल्प हैं और जो उनकी शर्तों को छोड़ कर हैं और यह उन भ्रष्ट लोक सेवकों के हित में है कि वे अपनी इस आकर्षणमय स्थिति को जितना बचाकर रख सकते हैं, उतना बचा कर रखें ।

मैं हमेशा हांग कांग से प्रभावित रहता हूं कि कैसे उसने अपनी सरकार में भ्रष्टाचार को कम किया है और इससे अधिक महत्वपूर्ण यह है कि कैसे उसने भ्रष्टाचार की अपरिहार्यता के बारे में लोगों की मनःवृत्ति को तोड़ दिया है ।

हांग कांग की आईसीएसी

हांग कांग की इंडीपेंडेंट कमीशन एगेंस्ट करप्शन (आईसीएसी) ने भ्रष्टाचार में महत्वपूर्ण कमी करने के लिए और लोगों की अभिरूचियों में परिवर्तन लाने के लिए गहन वैधानिक और जांच शक्तियों तथा नई सामाजिक रणनीतियों का प्रयोग किया है । आईसीएसी के आने से पूर्व हांग कांग भ्रष्टाचार से निश्चित रूप से घिरा हुआ था । इससे बुरा यह था कि अधिकतर नागरिकों ने इसे अपरिहार्य देखा और इसका विरोध करना निष्फल समझा । अतः स्वतंत्रता आवश्यक है : जो केवल सर्वोपरि सरकारी नेतृत्व द्वारा जवाबदेह और इसके अपने अधिकारी, जिन्हें नौकरी छोड़ने के बाद वर्षों तक अन्य लोक एजेसियों में काम करने की मनाही हो, आईसीएसी भ्रष्टाचार के जाल से उतनी ही स्वतंत्र है, जितनी इसके निर्माता बना सकें । इसकी शक्तियां भी सराहनीय हैं : व्यावसायिक तथा सरकारी भ्रष्टाचार इसके अध्यादेश में ही आते हैं । यह व्यक्तिगत और व्यावसायिक रिकार्डों को बड़ी आसानी से जब्त कर सकता है और संदेहास्पद व्यक्ति पर निर्दोष सिद्ध करने का भार डाल सकता है ।

अनेक लोकतंत्र ऐसी शक्तियां प्रदान नहीं करते हैं परंतु वे आईसीएसी के सिविल समाज पर केन्द्रित ध्यान से सीख सकते हैं । इसके विशाल, सुनियोजित लोक संपर्क आंदोलनों ने इस विश्वास को तोड़ दिया है कि भ्रष्टाचार अपरिहार्य है । दूरदर्शन के विज्ञापनों में शिकायत करने के लिए दूरभाष नंबर दिए जाते हैं और बचाव

संलग्नक – 1(2) जारी

वचन दिया जाता है । ऐसे आंदोलनों में और स्कूली बच्चों को वितरित की गई सामग्री में भ्रष्टाचार को चित्रों द्वारा दिखाया जाता है कि यह परिवारों के लिए, अर्थव्यवस्था के लिए और पारंपरिक चीनी मूल्यों के लिए हानिकारक है । आईसीएसी – वित्त पोषित संगीत समारोहों और खेल की घटनाओं में सामाजिक बातचीत में भ्रष्टाचार निरोध विषयों को केन्द्रित किया जाता है ।

हांग कांग में कई लोग आईसीएसी को बुरा कहते हैं और इसे इस दृष्टि से देखते हैं कि गलत काम करने वालों को सार्वजनिक तौर से अपमानित किया जा रहा है । 1980 तक हांग कांग में युवा लोगों ने भ्रष्टाचार के प्रति अपने पूर्वजों की अपेक्षा अधिक सख्त रवैया अपनाया था – कुछ सोसाएटियों में से एक – जहां यह मामला हुआ था । आईसीएसी ने एक सामाजिक वातावरण को बदला है, जिसने भ्रष्टाचार को सहते हुए इसे बढ़ावा दिया ।

हांग कांग का अनुभव अति स्पष्ट रूप से हमें जो पाठ पढ़ाना चाहता है, वह यह है कि लोगों के रवैए को केन्द्रित प्रयासों द्वारा बदला जा सकता है । कुल मिलाकर, भ्रष्टाचार मुक्त सरकार लाने के लिए प्रोत्साहन देने की सूचना को लोगों तक पहुंचाए जाने की आवश्यकता है । ऐसा परिवर्तन आएगा, जब भ्रष्ट व्यवस्था को उखाड़ फेंकने पर दिए जाने वाले प्रोत्साहन ऐसी व्यवस्था को बनाए रखने के मुकाबले अधिक आश्चर्यजनक होंगे ।

मुझे विश्वास है कि यहां पर उपस्थित गण्यमान्य व्यक्ति शासन में नैतिकता से संबंधित विविध मुद्दों पर विचार–विमर्श करेंगे । विचार विमर्श के लिए प्रस्तावित मुद्दे महत्वपूर्ण और व्यापक हैं : वे नीति और प्रेरणाओं से लेकर संस्थागत ढांचे तक के हैं । मुझे निश्चय है कि यह संगाष्ठी ऐसे निष्कर्षों तक पहुंचेगी जो प्रशासनिक सुधार आयोग को सरकार को महत्वपूर्ण सिफारिशें करने में सहायता करेंगे । मैं इस राष्ट्रीय संगोष्ठी की अपने प्रयत्नों में पूर्ण सफलता की कामना करता हूं ।

संलग्नक – 1(3)

श्री सुरेश पचोरी, आदरणीय कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन तथा संसदीय कार्य राज्य मंत्री द्वारा राष्ट्रीय न्यायिक अकादमी, भोपाल में 1 और 2 सितम्बर 2006 को आयोजित हुई ''शासन में नैतिकता – कथनी से करनी तक'' विषय पर हुई विचार गोष्ठी में अध्यक्षीय भाषण

आदरणीय न्यायमूर्ति जे.एस. वर्मा जी, भारत के भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश, सम्मानीय श्री वीरप्पा मोइली जी, अध्यक्ष, प्रशासनिक सुधार आयोग, प्रो0 जी. मोहन गोपाल, निदेशक, राष्ट्रीय न्यायिक अकादमी, माननीय लोकायुक्त और उप–लोकायुक्त, माननीय न्यायमूर्तिगण और न्यायाधीशगण, प्रतिष्ठित विशेषज्ञगण और अधिकारीगण, महिलाएं एवं पुरूष ।

प्रशासनिक सुधार आयोग और राष्ट्रीय न्यायिक अकादमी द्वारा आयोजित 'शासन में नैतिकता' पर इस राष्ट्रीय विचार गोष्ठी में आज सुबह मुझे यहां आपके बीच में रहकर बहुत खुशी हो रही है ।

सबसे पहले मैं एक बड़े समकालीन महत्व और संगत विषय पर राष्ट्रीय विचार गोष्ठी का आयोजन करने के लिए आयोजकों के प्रति उद्गार व्यक्त करता हूं और उन्हें बधाई देता हूं ।

मैं प्रशासनिक सुधार आयोग द्वारा इसके अध्यक्ष श्री वीरप्पा मोइली जी के योग्य नेतृत्व में किए जा रहे काम के लिए भी अपनी गहरी सराहना व्यक्त करता हूं । इस आयोग ने पहले ही यूपीए सरकार द्वारा दो मार्गप्रशस्त अधिनियमनों के प्रभावशाली कार्यान्वयन पर केन्द्रित दो रिपोर्टों अर्थात् सूचना अधिकार नियम और राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम को प्रस्तुत कर दिया है । मुझे विश्वास है कि आयोग की सिफारिशों से आम आदमी की आवश्यकताओं के लिए हमारे लोक प्रशासन को और अधिक पारदर्शी, जवाबदेह, कुशल और संवेदनशील बनाने के लिए मार्ग प्रशस्त होगा ।

हमारे लिए बड़े सौभाग्य और सम्मान की बात है कि आज न्यायमूर्ति जे.एस.वर्मा जी हमारे बीच विराजमान हैं । न्यायमूर्ति वर्मा जी का अन्य सफलताओं के अलावा, ख्यातिप्राप्त विनीत नारायन मामले में अपने 1998 के ऐतिहासिक निर्णय के द्वारा भ्रष्टाचार को रोकने के ढांचे को मजबूत करने के लिए यशोगान किया जाता है । संसद् द्वारा केन्द्रीय सतर्कता आयोग अधिनियम, 2003 का अधिनियमन इसी निर्णय का प्रत्यक्ष नतीजा है । इस अधिनियम में केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो (सी.बी.आई) के स्वतंत्र संचालन को सुनिश्चित करने के लिए उपबंध हैं और यह भ्रष्टाचार के मामलों से संबंधित एक सांविधिक आयोग द्वारा सी.बी.आई. पर पर्यवेक्षण करता है । एक और महत्वपूर्ण भ्रष्टाचार निरोध तंत्र को लाने के लिए श्रेय अधिकतर हमारी न्यायपालिका को जाता है जिसे 'सीटी बजाने वाला या भ्रष्टाचार या घोटाले की सूचना देने वाला संकल्प' कहा जाता है । हमारे देश में भ्रष्टाचार का सामना करने में न्यायपालिका के सराहनीय योगदान को स्वीकार करने के लिए मैं स्वयं को बहुत ही सौभाग्यशाली महसूस करता हूं ।

इससे पहले कि मैं आज के विषय पर आउं, मैं इस अकादमी के निदेशक, डा0 जी. मोहन गोपाल को इस बैठक का आमंत्रण देने के लिए इतने प्रभावी प्रबंध करने पर धन्यवाद देना चाहूंगा । मैं डा0 गोपाल को कई

संलग्नक – 1(3) जारी

वर्षों से जानता हूं और मुझे विश्वास है कि उनके योग्य मार्गदर्शन में न्यायपालिका का यह मुख्य संस्थान श्रेष्ठता की नई ऊंचाइयों को प्राप्त कर लेगा ।

'शासन में नैतिकता' लोक प्रशासन में रिवाजी मूल्यों और आचार के नियमों से जुड़ी हुई होती है । युनाइटिड किंगडम में लार्ड नोलन समिति द्वारा सार्वजनिक जीवन के सात सिद्धांतों – निःस्वार्थनिष्ठता, सत्यनिष्ठा, विषयनिष्ठता, जवाबदेही, खुलापन, ईमानदारी, नेतृत्व की सिफारिश की थी । खुलापन और जवाबदेही अनिवार्यतः कार्य–प्रणाली की प्रकृति के होते हैं और कार्य–प्रणालियों का निर्धारण खुलापन और जवाबदेही को सुनिश्चित करने के लिए किया जाता है । विषयनिष्ठता और नेतृत्व कार्य निष्पादन से संबंधित होते हैं। तथापि, सबसे बड़ी चुनौती हमारे लोक सेवकों को सत्यनिष्ठा, ईमानदारी और निःस्वार्थनिष्ठता के साथ काम करने के लिए बनाने की है । ये ऐसे कथन हैं, जो अकेले नैतिकता की प्रकृति के हैं और इसीलिए उनके लिए प्रमापी–मानकों को बनाने में कठिनाई पैदा करते हैं ।

प्रधान मंत्री जी ने हाल ही में, नैतिकता के महत्व पर जोर देते हुए कहा था, ''समाज के रूप में, हमें एक ऐसा मानक अपनाना चाहिए, जहां ईमानदारी हमारी जिन्दगी का एक हिस्सा बन जाए, यदि हमारे पास ईमानदारी है तो बाकी सब कुछ कोई अर्थ नहीं रखता, यदि हमारे पास ईमानदारी नहीं है तो बाकी सब कुछ तब भी कोई अर्थ नहीं रखता । मैं यह दृढ़ता से मानता हूं कि लोक सेवकों के रूप में हमें ईमानदारी के व्यक्तिगत मानदंड बना लेने चाहिएं और संदेश ऊपर से नीचे की ओर जाना चाहिए न कि किसी ओर तरह से । ईमानदारी, निष्पक्षता और योग्यता के मूल्य हमारे सिविल सेवकों के मार्गदर्शी सिद्धांत बनते हैं । ''

हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी ने शायद भविष्य में नैतिकता पर किसी संकट की आशंका करते हुए ''सात भयानक पापों'' के विरूद्ध चेतावनी दी थी : ये पाप थे :–बिना काम के धन, बिना अंतःकरण के आराम, बिना मानवता के विज्ञान, बिना चरित्र के ज्ञान, बिना सिद्धांतों के राजनीति, बिना नैतिकता के व्यापार,, बिना बलिदान के पूजा ।

सार्वजनिक जीवन में नैतिकता के सवाल पर न्यायमूर्ति वर्मा द्वारा भी विनीत नारायण निर्णय में विवेचन किया गया है , जिसमें उन्होंने बड़े ही उपयुक्त ढंग से यह अवलोकन किया है, ''सार्वजनिक पद पर बैठे व्यक्तियों को शक्तियां केवल जनहित में ही प्रयोग करने के लिए सौंपी जाती हैं, अतः उनका पद को धारण करना लोगों के विश्वास के लिए होता है । उनमें से किसी के द्वारा ईमानदारी के रास्ते से विमुख होना लोगों के विश्वास का उल्लंघन करना होता है और इसे कहीं छिपा कर रखने की बजाय इसके साथ सख्ती से निपटा जाना चाहिए ।''

इस बात से कोई भी असहमत नहीं होगा कि एक स्वतंत्र, लोकतांत्रिक और खुशहाल समाज के रूप में हमारे जीवन के अस्तित्व के लिए यह आवश्यक है कि हम जनता के रूप में और सरकार में हममें से सभी नैतिकता के ऊंचे मूल्यों का निर्वाह करें । फिर भी, हमारे सामने चेतावनी यह सुनिश्चित करने की है कि नैतिक मूल्यों का पालन किया जाए और विशेष रूप से शासन के मामले में उन्हें हम अपने जीवन में लागू करें । इस चेतावनी

संलग्नक – 1(3) जारी

का सामना आज भारत ही नहीं बल्कि समुचा विश्व कर रहा है । जहां एक ओर, संसार बड़े इरादों के अनेक सकरात्मक विकास देख रहा है, वहीं दूसरी ओर स्वार्थपरता, भौतिकवाद और बेईमानी हमारे समाज रूपी कपड़े को धमका रही हैं ।

आवश्यकता इस बात है कि एक सड़े हुए पौधे को हरा भरा करने के लिए नीति निर्माताओं, कानून का प्रवर्तन करने वाली एजेंसियों और सभी उपयुक्त विचारधारा के लोगों द्वारा सामूहिक कार्यवाई की जाए । हम सभी इस बात को स्वीकार करते हैं कि बढ़ता हुआ राजनीतिक भ्रष्टाचार चिन्ता के अत्यधिक महत्वपूर्ण विषयों में से एक है । राजनीतिक भ्रष्टाचार को रोकने के लिए आवश्यक निर्वाचित और संस्थागत सुधारों पर राजनीतिक सहमति अपनाने की आवश्यकता है । सभी प्रमुख राजनीतिक दलों को चाहिए कि राष्ट्रीय हित को व्यक्तिगत और दलीय स्वार्थों से परे रख कर एक हो जाएं और इस बात को सुनिश्चित करते हुए कि हमारी लोकतांत्रिक प्रणाली और हमारी निर्वाचित प्रक्रियाओं की स्वतंत्रता, सत्यनिष्ठता, समावेशन और खुलेपन के साथ कोई समझौता नहीं होगा, राजनीतिक भ्रष्टाचार को दूर करने के लिए आवश्यक निर्वाचित और संस्थागत सुधारों पर एक सहमति अपना लें ।

भ्रष्टाचार निरोध कानूनों के प्रवर्तन को मजबूत करने के लिए भ्रष्टाचार के मामलों की शीघ्र और प्रभावी जांच, अभियोजन और दंड दिया जाना समान रूप से आवश्यक है । वास्तव में, विनीत नारायण निर्णय में भारत के उच्चतम न्यायालय पर बोलते हुए, भारत के तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश, न्यायमूर्ति जे.एस.वर्मा ने कहा था,''भ्रष्टाचार का तुरन्त ही अभियोजन किया जाना चाहिए ताकि कानून का आधिपत्य बना रह सके और कानून के नियम अपना काम कर सकें । कानून के नियमों को लागू करना और इसलिए कानून के नियमों की अनदेखी से उसका बचाव भी करना न्यायपालिका का कर्तव्य है ।'' भ्रष्टाचार के अपराधों का शीघ्र विचारण, प्रभावपूर्ण जांच और अभियोजन पर निर्भर करता है । भ्रष्टाचार को हतोत्साहित करने के लिए इन पहलुओं का अत्यधिक मजबूत किया जाना आवश्यक है । मैं इस बात की सराहना करता हूँ कि उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय भ्रष्टाचार के मामलों के शीघ्र निपटान को प्राथमिकता दे रहे हैं । हमें यह सुनिश्चित करने के लिए एक साथ काम करने की आवश्यकता है कि भ्रष्टाचार के मामलों पर तेजी के साथ विचार किया जाए और इस संबंध में बकाया मामलों को यथाशीघ्र निपटा लिया जाए । मुझे कोई संदेह नहीं है कि इस संबंध में न्यायपालिका से हमें पूरा सहयोग मिलेगा ।

यूपीए सरकार ने अपने साझा न्यूनतम कार्यक्रम में हमारे देश के लोगों को एक भ्रष्टाचार–मुक्त, पारदर्शी और हमेशा जवाबदेह सरकार प्रदान करने और ऐसा प्रशासन देने के लिए, जो जिम्मेदार और प्रभावी हो, गंभीर प्रतिज्ञा की हुई है ।

अपनी प्रतिज्ञा पूरी करते हुए, यूपीए सरकार ने लोगों को एक भ्रष्टाचार–मुक्त, पारदर्शी और जवाबदेह प्रशासन प्रदान करने के लिए अनेक उपाय किए हैं । प्रशासनिक लोकाचार, गोपनीयता और नियंत्रण संस्कृति में मूलभूत परिवर्तन लाने और शासन में खुलापन, पारदर्शिता और जवाबदेही का नया युग लाने के लिए सूचना अधिकार अधिनियम को अधिनियमित किया गया है । अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में इस ऐतिहासिक

संलग्नक – 1(3) जारी

विधान का असर पहले से ही बिल्कुल दिखाई दे रहा है । जानकार और सहभागी जनता भविष्य में ऐसी सूचना को प्राप्त करने के लिए इस अधिनियम का अधिकाधिक आश्रय ले सकेगी, जो लोक कार्यालयों में ईमानदारी और पारदर्शिता को लाने के लिए विवश होगी ।

विविध सरकारी कार्यालयों द्वारा नागरिक चार्टरों को तैयार कर लिया गया है और नागरिकों को इन चार्टरों में दिए गए समय–बद्ध ढांचे के भीतर लोक सेवाएं उपलब्ध कराने के लिए प्रयास किए जा रहे हैं । केन्द्रीय सतर्कता आयोग ने लोक अधिप्राप्ति और निविदा प्रक्रियाओं में पारदर्शिता लाने के लिए अनेक अनुदेश जारी किए हैं । सतर्कता प्रशासन तंत्र और लोक शिकायत समाधान तंत्र को बहुत अच्छी तरह से मजबूत कर लिया गया है । रोकथाम सतर्कता, निगरानी और गुप्तचर और रोकथाम दंड कार्रवाई की तीन–पक्षीय रणनीति को भ्रष्टाचार का सामना करने के लिए तैयार कर लिया गया है ।

सिविल सेवाओं के संचालन को सुधारने के भी अनेक सुधार प्रारंभ किए गए हैं । सिविल सेवक के व्यवसाय में विविध बिन्दुओं के अनिवार्य मध्य–व्यवसाय प्रशिक्षण की नई प्रणाली तैयार कर ली गई है । अधिकारियों के निष्पादन का अधिक उद्देश्यपूर्ण अंकीय ग्रेडिंग पर आधारित मूल्यांकन प्रदान करने के लिए वरिष्ठ सिविल सेवकों के लिए निष्पादन मूल्यंकन प्रणाली में परिवर्तन किया जा रहा है । पदोन्नति/नामिकायन के लिए तल चिन्ह प्राप्तांकों का निर्धारण किया जा रहा है और अधिकारियों की प्रतिष्ठा को जानने के लिए संस्थागत साधनों का गठन किया जा रहा है । सिविल सेवकों के बीच श्रेष्ठता के लिए प्रधान मंत्री पुरस्कारों की पहल कर ली गई है । सिविल सेवकों को आश्वासित न्यूनतम अवधि प्रदान करने के लिए कदम उठाए जा रहे हैं।

भ्रष्टाचार के विरूद्ध लड़ाई को मजबूत करने के लिए विशिष्ट सिफारिशों पर विचार करने और उन्हें विकसित करने के लिए राज्यों और केन्द्रीय सरकार के भ्रष्टाचार निरोध खंडों के लिए जिम्मेदार लोकायुक्त, वरिष्ठ अधिकारी का एक बड़ा चयन वर्ग, अन्य सरकारी अधिकारी, शिक्षाविद् और सिविल समाज के कार्यकर्ता आज यहां एकत्र हुए हैं । मैं विशेष रूप से प्रसन्न हूं कि उच्च न्यायालयों के अनेक न्यायाधीश भी आज हमारे बीच हैं ।

आप जो भी विचार–विमर्श और जिन संस्तुतियों को निर्धारित करेंगे और सिफारिश करेंगे, मुझे उनकी उत्सुकता से इन्तजार है । भ्रष्टाचार से लड़ने के लिए हमें अपने प्रयासों को दोगुना करने की आवश्यकता है । भ्रष्टाचार को कम करने के लिए हमने अनेक अवसरों पर वाद–विवाद किया है और उपायों पर विचार–विमर्श किया है । अब वह समय आ गया है जब हमें कार्यवाई करनी होगी और मेरा विश्वास है कि आज आपकी कोशिशें सरकार को भ्रष्टाचार का सामना करने के लिए सुदृढ़ उपाय करने में सहायता करेंगी ।

मैं राष्ट्रीय विचार गोष्ठी की पूर्ण सफलता की कामना करता हूं ।

धन्यवाद,

संलग्नक – 1(4)

सहभागियों की सूची

न्यायाधीश / लोकायुक्त / उप–लोकायुक्तः

1. सम्मानीय श्री न्यायमूर्ति जे. एस. वर्मा, भारत के भूतपूर्व सर्वोच्च न्यायाधीश
2. सम्मानीय श्री न्यायमूर्ति फैजानुददीन, भूतपूर्व न्यायाधीश, भारत का उच्चतम न्यायालय
3. सम्मानीय श्री न्यायमूर्ति डा. एम.के. शर्मा, अध्यक्ष, प्रशिक्षण कार्यक्रम निर्धारण समिति, दिल्ली
4. सम्मानीय श्री न्यायमूर्ति ए.एस.नायडु, न्यायाधीश, उड़ीसा उच्च न्यायालय, कटक
5. सम्मानीय श्री न्यायमूर्ति जे. चेल्मेश्वर, न्यायाधीश, आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय
6. सम्मानीय श्री न्यायमूर्ति एच.एल. दत्तु, कर्नाटक उच्च न्यायालय
7. सम्मानीय श्री न्यायमूर्ति जे.एस. खेहर, पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय
8. सम्मानीय श्री न्यायमूर्ति एस.एच.ए. रजा, लोकायुक्त, उत्तरांचल
9. सम्मानीय श्री न्यायमूर्ति मोहद. शमीम, लोकायुक्त, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, दिल्ली
10. सम्मानीय श्री न्यायमूर्ति एन.के. सुद, लोकायुक्त, हरियाणा
11. सम्मानीय श्री न्यायमूर्ति लक्ष्मण उरौण, लोकायुक्त , झारखंड
12. सम्मानीय श्री न्यायमूर्ति रिपुसुदन दयाल, लोकायुक्त, मध्य प्रदेश
13. सम्मानीय श्री न्यायमूर्ति दलजीत धालीवाल, लोकायुक्त, पंजाब
14. सम्मानीय श्री न्यायमूर्ति समरेश बनर्जी, लोकायुक्त, पश्चिम बंगाल
15. सम्मानीय श्री न्यायमूर्ति श्री एन. के. मेहरोत्रा, लोकायुक्त, उत्तर प्रदेश
16. सम्मानीय श्री न्यायमूर्ति आर. एन. प्रसाद, लोकायुक्त, बिहार
17. सम्मानीय श्री न्यायमूर्ति जी. पत्री बासवान गौड, उप लोकायुक्त, कर्नाटक
18. सम्मानीय श्री न्यायमूर्ति सुरेश कुमार, उप लोकायुक्त, महाराष्ट्र
19. सम्मानीय श्री न्यायमूर्ति एम. शिवरत्न, उप–लोकायुक्त, आंध्र प्रदेश

राज्य न्यायिक अकादमियां के प्रमुख आदि

20. श्री अनंत विजय सिंह, निदेशक, न्यायिक अकादमी, झारखंड, रांची
21. श्री अराली नागराज, निदेशक, कर्नाटक न्यायिक अकादमी, बंगलौर
22. श्री बिधु प्रसन्ना परीजा, निदेशक, उड़ीसा न्यायिक अकादमी, कटक
23. श्री जार्ज, निदेशक, हिमाचल प्रदेश राज्य न्यायिक अकादमी, शिमला
24. श्री एन. रवि शंकर, निदेशक, आंध्र प्रदेश राज्य न्यायिक अकादमी, सिकन्द्राबाद
25. श्री एम.के.तिवारी, निदेशक, छत्तीसगढ़ राज्य न्यायिक अकादमी, बिलासपुर
26. श्री कंचन चक्रवर्ती, अतिरिक्त निदेशक, पश्चिम बंगाल न्यायिक अकादमी कल्कत्ता
27. श्री के.बी. जिनजरदे, संयुक्त निदेशक, न्यायिक अधिकारी प्रशिक्षण संस्थान, नागपुर
28. निदेशक, बिहार न्यायिक अधिकारी प्रशिक्षण संस्थान, पटना

केन्द्रीय सतर्कता आयोग / सतर्कता आयुक्त / भ्रष्टाचार निवारण ब्यूरो / केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो

29. श्री बलविंदर सिंह, अतिरिक्त सचिव, केन्द्रीय सतर्कता आयोग, दिल्ली
30. श्री एस. के. उपाध्याय, भा.पु.से., निदेशक, सतर्कता और भ्रष्टाचार निवारण, तमिल नाडु सरकार, चेन्नई
31. डा. अशोक नारायण, सतर्कता आयुक्त, गुजरात सरकार

संलग्नक – 1(4) जारी

32. श्री आर. सी. समाल, सतर्कता आयुक्त, आंध्र प्रदेश सरकार, हैदराबाद
33. श्री जे. डी. विरकर, भा.पु.से., महानिदेशक, भ्रष्टाचार निवारण ब्यूरो, महाराष्ट्र सरकार, मुम्बई
34. श्री बी. के. भट्ट, सचिव, गुजरात सतर्कता आयोग, गांधीनगर
35. श्री आर. आर. स्वैन, उप महानिरीक्षक, एस.वी.ओ., जम्मू और कश्मीर
36. श्री एम. एस. अहलावत, भा.पु.से., उप महानिरीक्षक, राज्य सतर्कता ब्यूरो, हरियाणा सरकार, पंचकुला
37. श्री परमवीर सिंह, भा.पु.से., जे.डी. (ए.सी./मुख्यालय), केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो, नई दिल्ली
38. श्री सी.एस.आर. रेड्डी, पुलिस महानिरीक्षक–सह–निदेशक, सर्तकता ब्यूरो, पंजाब सरकार, चंडीगढ़
39. श्रीमती ममता उपाध्याय लाल, निदेशक, केन्द्रीय सतर्कता आयोग, दिल्ली
40. श्री रनवीर सिंह, निदेशक, केन्द्रीय सतर्कता आयोग, दिल्ली
41. श्री विनीत माथुर, उप सचिव, केन्द्रीय सतर्कता आयोग, दिल्ली
42. श्री ए. के. पतेरिया, उप महानिरीक्षक, केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो, एस.सी.आर. भोपाल
43. श्री एम.सी. साहनी, पुलिस अधीक्षक, केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो, ए.सी.बी., भोपाल

अन्य

44. श्री एम.एन. बुच, भा.प्रशा.से. (अवकाश–प्राप्त)
45. श्री पी. सी. पारख, भा.प्रशा.से. (अवकाश–प्राप्त)
46. श्री अजय सिंह, महानिदेशक सूचना प्राद्यौगिकी (अन्वे.), पटना
47. श्री ए.के. सामंत रे, अतिरिक्त सचिव, विधि और विधायी कार्य विभाग, छत्तीसगढ़ सरकार, रायपुर
48. श्री एस. सत्यनारायण, मुख्य कार्यकारी अधिकारी, एन.आई.एस.जी., हैदराबाद
49. डा. जी. नरेन्द्र कुमार, सचिव (प्रशासनिक सुधार), राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली
50. श्री बसंत सिंह, आवास आयुक्त, मणिपुर सरकार, नई दिल्ली
51. श्री आई. पी. सिंह, भूतपूर्व उप नियंत्रक और महालेखापरीक्षक, दिल्ली
52. श्री पदमवीर सिंह, प्रधान सचिव, लोक निर्माण विभाग, भोपाल
53. श्री पी. के. त्रिपाठी, निदेशक, कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग, नई दिल्ली
54. सुश्री संगीता सिंह, निदेशक, कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग, नई दिल्ली
55. डा. एन. भास्कर राव, अध्यक्ष, सी. एम. एस., नई दिल्ली
56. सुश्री मधु भादुरी, परिवर्तन, दिल्ली
57. श्री पी. एस. बावा, ट्रांसपेरेंसी इंटरनैशनल इंडिया, दिल्ली
58. श्री एस. सेन, समन्वयकर्ता (विकास परियोजनाएं), सी. आई. आई., दिल्ली

प्रशासनिक सुधार आयोग

59. श्री एम. वीरप्पा मोइली, अध्यक्ष, प्रशासनिक सुधार आयोग
60. श्री वी. रामाचंद्रन, सदस्य, प्रशासनिक सुधार आयोग
61. डा. ए. पी. मुखर्जी, सदस्य, प्रशासनिक सुधार आयोग
62. डा. ए. एच. कालरो, सदस्य, प्रशासनिक सुधार आयोग
63. सुश्री विनीता राय, सदस्य–सचिव, प्रशासनिक सुधार आयोग

संलग्नक – 1(5)

सामूहिक सिफारिशें

कार्यशाला 1

विषयः– भारत की भ्रष्टाचार निवारण नीतियों और कार्यविधियों में कितना अन्तर होता है जब इन्हें अन्तर्राष्ट्रीय मानकों के साथ मापा जाता है ? इन अन्तरों को भरने के लिए क्या किया जाना चाहिए?

- भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (पीसीए) की धारा 19 में उचित रूप से संशोधन किया जाना चाहिए ताकि मंजूरी लेने की आवश्यकता अननुपातिक सम्पत्ति के मामले में और जाल बिछाकर पकड़ने के मामले में पूर्वापेक्षा न बन सके ।
- भ्रष्टाचार को पी.सी.ए. में बृहत् ढंग से परिभाषित किया जाना चाहिए ।
- रिश्वत देने और रिश्वत देने की कोशिश करने को भी पी.सी.ए. में प्राथमिक अपराध के रूप में शामिल किया जाना चाहिए ।
- निजी क्षेत्र द्वारा भ्रष्टाचार, जो लोक उपयोगिता सेवाओं से संबंधित है, को पी.सी.ए. में भ्रष्टाचार के कार्य–क्षेत्र के तहत शामिल किया जाना चाहिए ।
- जैसाकि भारत में व्याप्त अवस्थाओं के अनुकूल है, संयुक्त राज्य मिथ्या दावा अधिनियम के अनुरूप एक पृथक् विधान अधिनियमित किया जाना चाहिए ।

कार्यशाला 2

विषयः– नैतिकता ढांचा

- सभी संहिताओं में नैतिकता के सात तत्व होने चाहिए जो इस प्रकार हैं : निःस्वार्थनिष्ठा, सत्यनिष्ठा, विषयनिष्ठता, जवाबदेही, खुलापन, ईमानदारी और नेतृत्व ।
- मंत्रियों, संसद सदस्यों, विधायकों और अन्य निर्वाचित प्रतिनिधियों के लिए अलग से आचार संहिता होनी चाहिए ।
- लोक सेवकों के लिए आचार संहिता का विस्तार किया जाना चाहिए । संहिता में उन्हें गैर सरकारी संगठनों से जुड़े रहने से और किसी भी क्लब या सामाजिक संगठन में निर्वाचित पद पर भी रहने से निषेध किया जाना चाहिए ।
- लोकपाल/लोकायुक्त बिलों को पारित कर दिया जाना चाहिए । इन संस्थानों को मंत्रियों, संसद सदस्यों और विधायकों के विरूद्ध शिकायतें प्राप्त करने के लिए सशक्त किया जाना चाहिए और यहां तक कि उनकी जांच और अभियोजन के लिए भी मंजूरी दे दी जानी चाहिए।

संलग्नक – 1(5) जारी

- संयुक्त सचिव और इससे ऊपर स्तर के लोक सेवकों की नियुक्तियों, उन्हें पैनल में रखने, पदोन्नतियों, स्थानान्तरणों और अनुशासनिक कार्यवाई के संबंध में एक स्वतंत्र लोक सेवा आयोग का गठन किया जाना चाहिए । इस आयोग की नियुक्ति एक समिति द्वारा की जानी चाहिए जिसमें प्रधान मंत्री /मुख्य मंत्री, विपक्ष के नेता, मुख्य न्यायाधीश शामिल होने चाहिए और इसके अध्यक्ष उच्चतम न्यायालय/उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश होने चाहिए ।
- व्यावसायिक निकायों के संबंध में यद्यपि आचार संहित विद्यमान है, पर उनका कार्यान्वयन नहीं किया जा रहा है । इसमें परिवर्तन किया जाना चाहिए ।

कार्यशाला 3

विषयः– भ्रष्टाचार निरोध संस्थानों को अधिक प्रभावकारी बनाया जाना

- डी.ए. मामलों में और रिश्वत की सीधी मांग/स्वीकृति में, अपराधिक मामले के पंजीकरण के लिए पूर्व सहमति की कोई आवश्यकता नहीं होनी चाहिए । प्रारंभिक छानबीन, यदि अपेक्षित हो तो, सहमति केन्द्रीय सतर्कता आयोग द्वारा दे दी जानी चाहिए ।
- स्वीकृति प्राधिकारी के लिए गवाह के रूप में पेश होने की आवश्यकता नहीं है ।
- संदेहास्पद निष्ठा वाले असक्षम लोगों को निकाल बाहर करने के लिए एफ. आर.. 56 जे का और अधिक प्रभावी प्रयोग किया जाना चाहिए । इस नियम की भी समीक्षा किए जाने और न्यायिक घोषणाओं के संदर्भ में, जिसने अपनी प्रभावशालीनता को कम कर दिया है, इसे सुदृढ़ किए जाने की आवश्यकता है ।
- आंतरिक सतर्कता प्रणालियों और पद्धतियों को किराए के अवसरों से सुस्पष्ट किया जाना चाहिए।
- इस बारे में मतभेद था कि क्या प्रधान मंत्री को लोकपाल के अधिकार क्षेत्र में शामिल किया जाना चाहिए ।

कार्यशाला 4

विषयः– जांचों को और अधिक प्रभावशाली कैसे बनाया जा सकता है ?

- जांच एजेंसी को लोकायुक्त के पर्यवेक्षणाधीन ला दिया जाना चाहिए ।
- मंजूरी देने की आवश्यकता को हटा दिया जाना चाहिए या लोकायुक्त को पी.सी.ए. की धारा 19 और दंड प्रविधि संहिता की धारा 197 के तहत प्रयोजनों के लिए मंजूरी प्राधिकारी बना दिया जाना चाहिए ।
- अभियोजन का पर्यवेक्षण भी लोकायुक्त के विहित होना चाहिए और लोक अभियोजकों को भ्रष्टाचार के मामलों में विशेष रूप से नियुक्त किया जाना चाहिए ।

संलग्नक – 1(5) जारी

- कु–प्रशासन से उठने वाली शिकायतों के समाधान पर भी लोकायुक्त का अधिकार क्षेत्र होना चाहिए ।
- संविधान में संशोधन करके एक केन्द्रीय कानून अधिनियमित किया जाना चाहिए ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि लोकायुक्त का संस्थान प्रत्येक राज्य/संघ क्षेत्र में विद्यमान है, चयन प्रक्रिया मजबूत और निष्पक्ष है, उचित कार्मिक प्रदान किए गए हैं, प्रतिनियुक्ति अधिकारियों को प्रत्यावासन पर कोई उत्पीड़न न हो और वित्तीय स्वायत्तता हो । कर्नाटक लोकायुक्त अधिनियम के प्रावधानों को लाया जाना चाहिए ।

कार्यशाला 5

विषयः– भ्रष्टाचार के लिए प्रोत्साहनों को कम करने के लिए कौन से विशेष कदम उठाए जाने चाहिएं ?

- जिस प्रकार से कानूनों का कार्यान्वयन किया जाता है, उन्हें पुनगर्ठित किए जाने की आवश्यकता है । पारदर्शिता लाने के लिए नागरिकों के बीच में कानूनों के बारे में जानकारी कैसे लानी है इससे निपटा जाना चाहिए ।
- बड़े परिप्रेक्ष्य में नैतिकता से वंचित होना और बढ़ते हुए उपभोक्ता हितों का समाधान किया जाना चाहिए ।
- जहां कहीं भी बड़े लोक उद्यम, बड़ी सुपुर्दगी प्रणालियां हो, उच्च तकनीक और विदेशी विनियोग लिप्त हों, वहां विनियामक व्यवस्था के साथ बाजार दलों को अपना काम करने के लिए लाया जाना चाहिए ।
- निगरानी और सतर्कता को विकेन्द्रीकृत तौर पर लाया जाना चाहिए ।
- वस्तुओं के अभाव को दूर किया जाना चाहिए ।
- उन क्षेत्रों में यहां समाज के असुरक्षित वर्ग प्रभावित होते हों, उन्हें प्राथमिकता पर लक्ष्य किया जाना चाहिए । नागरिक केन्द्रित सेवाओं को शुरू किया जाना चाहिए । आउटसोर्सिगं को उन्नत किया जाना चाहिए । शिक्षा, स्वास्थ्य आदि में सुपुर्दगी प्रणालियों को पुनःयंत्रीबद्ध किया जाना चाहिए ।
- ऊंचे जोखिम वाले मंत्रालयों को कार्यविधि की समीक्षा करने के लिए इन–हाउस प्रबंध होने चाहिए ।
- ग्राम अभिलेख तक पहुंच होनी चाहिए ।
- आन्तरिक निरीक्षण विभागाध्यक्ष की प्राथमिक जिम्मेदारी होनी चाहिए ।
- वित्तीय लेखा परीक्षा पर केन्द्रित होने की बजाय लेनदेन और प्रक्रिया की लेखा परीक्षा होनी चाहिए ।

संलग्नक – 1(5) जारी

- लेखा परीक्षक पर कोई जवाबदेही नहीं होती । नियंत्रक और महालेखापरीक्षक के संपूर्ण कार्यों का पुनरीक्षण करना होगा ।

कार्यशाला 6

विषयः– सेवा विनियामक एजेंसियों और व्यावसायिक विनियामक एजेंसियों के संचालन में जवाबदेही, पारदर्शिता और सत्यनिष्ठा को किस प्रकार से सुनिश्चित किया जा सकता है ? क्या इस पर सुव्यवस्थित ढंग से निगरानी रखी जानी चाहिए और कानूनी ढांचा कैसा होना चाहिए ? इन निकायों के प्रभावशाली संचालन के लिए प्रचालित स्वायत्तता पर असर डाले बिना जवाबदेही, सत्यनिष्ठा और पारदर्शिता को प्राप्त करने के लिए कानूनी संस्थागत और कार्यविधिक ढांचा क्या होना चाहिए ?

उन गैर–सरकारी एजेंसियों की स्वायत्तता और प्रचालन लचकता के साथ बिना कोई समझौता किए जवाबदेही, पारदर्शिता को सुनिश्चित करने के लिए क्या–क्या कदम उठाए जाने चाहिए, जिनकी परियोजनाएं या तो सरकार द्वारा या वित्त पोषित एजेंसियों द्वारा वित्त पोषित या प्रायोजित की गई हों ?

- जवाबदेही और पारदर्शिता को सुनिश्चित करने के लिए कर्नाटक पारदर्शिता अधिनियम की तर्ज पर कानून अधिनियमित किया जाना चाहिए ।
- विनियंत्रक निकाय एक स्वतंत्र निकाय होना चाहिए और विधान मंडल (मंडलों) और विपक्ष के नेता (नेताओं) के पदासीन अधिकारी के परामर्श द्वारा नियुक्तियां की जानी चाहिए । इस विनियामक निकाय के लिए एक अपीलीय और निरीक्षक निकाय के रूप में एक न्यायनिर्णायक निकास भी होना चाहिए । अपीलीय निकाय के निर्णयों को केवल भारत के उच्चतम न्यायालय में ही चुनौती योग्य बनाया जाना चाहिए ।
- सांविधिक व्यावसायिक निकायों के सभी सदस्यों को पी.सी.ए., भारतीय दंड संहिता और लोकायुक्त अधिनियम के प्रयोजनों के लिए लोक सेवक की परिभाषा के अंतर्गत लाना चाहिए। इसी प्रकार से, सभी सहकारिता सोसाइटियों और सोसाइटी पंजीकरण अधिनियम के अंतर्गत इस प्रयोजन के लिए सरकार द्वारा अधिसूचित की गई सोसाइटियों को शामिल किया जाना चाहिए ।

कार्यशाला 7

विषयः – भ्रष्टाचार को रोकने के लिए एक व्यवहार्य रणनीति के मुख्य तत्व क्या होने चाहिए ? भ्रष्टाचार के विरूद्ध लड़ाई को प्राथमिकता दी जानी चाहिए/दी जा सकती है ? वे कौन से क्षेत्र ऐसे हैं जिन पर सबसे पहले ध्यान केन्द्रित किया जाना चाहिए ? क्रम क्या होना चाहिए ? क्या ''ऐसे धीरे–धीरे पकने वाले फल हैं'' जहां सुधारों को व्यापक लोक हितों के साथ शीघ्र पैदा किया जा सके ? (भारत सरकार और इसकी एजेंसियों के लिए)

संलग्नक – 1(5) जारी

- इस संबंध में वे क्षेत्र, जो पर्याप्त प्रभाव सहित तेजी से परिणाम दे सकते हैं, वे हैं : विपदा प्रबंधन, लोक वितरण प्रणाली, ग्रामीण रोजगार, सिविल निर्माण कार्य, भूमि सूचना, कराधान (प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष), नगरपालिका सेवाएं, लाईसेंस और पुलिस–सार्वजनिक बातचीत ।
- प्रतिनिधिमूलक उत्तरदायित्व के संबंध में, अन्तःपाशान जवाबदेही होनी चाहिए और निरीक्षण अधिकारी को अपने अधीनस्थ लोगों के प्रति जवाबदेह ठहराया जाना चाहिए ।
- अधिकारियों की रूपरेखा वाली व्यवस्था होनी चाहिए और तैनातियां ऐसी रूपरेखाओं पर आधारित होनी चाहिए ।
- अनाम और नकली शिकायतों पर ध्यान नहीं दिया जाना चाहिए ।

कार्यशाला 8

विषयः– भ्रष्टाचार को रोकने के लिए एक व्यवहार्य रणनीति के मुख्य तत्व क्या होने चाहिए ? भ्रष्टाचार के विरूद्ध लड़ाई को प्राथमिकता दी जानी चाहिए /दी जा सकती है ? वे कौन से क्षेत्र ऐसे हैं जिन पर पहले केन्द्रित किया जाना चाहिए ? क्रम क्या होना चाहिए ? क्या ''ऐसे धीरे धीरे पकने वाले फल हैं'' जहां सुधारों को व्यापक लोक हितों के साथ शीघ्र पैदा किया जा सके ? (राज्य सरकार और उसकी एजेंसियों के लिए)

- सूचना तकनीक के औजारों को बहुत बड़े ढंग से शुरू किया जाना चाहिए जैसाकि आन्ध्र प्रदेश में ई–सेवा केन्द्र, चंडीगढ़ में ई–संपर्क और ई–भूमि के मामलों में (सभी अभिलेखों का कंप्यूट्रीकरण)
- विवेकशीलता को न्यूनतम किया जाना चाहिए । गैर–विवेकशील मामलों को स्वचालित कर दिया जाना चाहिए ।
- भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ाई में प्राथमिकता के क्षेत्र ये होने चाहिए : जहां लोक संपर्क अधिक होता हो, वहां बड़े राजस्व वाले क्षेत्र और बड़े लोक व्यय क्षेत्र । विशेष रूप से नगरपालिका सम्पत्ति कर मामलों के क्षेत्रों में, ई–सेवा केन्द्र और सामुदायिक नीति संसाधन केन्द्र के मामलों में (जैसाकि पंजाब के मामले में है), परिणाम शीघ्र ही प्राप्त किए जा सकते हैं ।
- सद्भावपूर्ण स्थितियों को छोड़कर , वरिष्ठतम अधिकारी पर उत्तरदायित्व छोड़ देना समुचित नहीं होगा ।
- नाजुक पदों का पता लगाकर, संदेहास्पद सत्यनिष्ठा वाले व्यक्तियों को वहां पर तैनात नहीं किया जाना चाहिए ।
- महत्वपूर्ण पदों पर समय अवधि की स्थिरता होनी चाहिए और अधिकारियों की प्रोफाइल तैयार की जानी चाहिए ताकि दीर्घ अवधि के अभिलेखों से ईमानदार अधिकारियों का बचाव किया जा सके ।

संलग्नक – 1(5) जारी

कार्यशाला 9

विषयः– जांच, अभियोजन और विचारण की विद्यमान व्यवस्था में क्या–क्या त्रुटियां हैं ? इन त्रुटियों को वैधानिक/कार्यविधिक परिवर्तन ला कर कैसे दूर किया जा सकता है ?

- अन्वेषक अधिकारी का परिवर्तन होते रहना, अन्वेषक अधिकारी का मामलों के बोझ से दबे रहना, अन्वेषक अधिकारी का राजनीतिक/नौकरशाही के दबाव में आना, विद्वेषपूर्ण गवाह, अभियोजकों की पर्याप्त संख्या में अनुपलब्धता, अभियोजकों की गैर जवाबदेही, न्यायालय में गवाहों की पड़ताल करने में दोष, निधियों की कमी आदि व्यवस्था की त्रुटियां हैं ।

- भ्रष्टाचार निरोध स्थापना और जांच के सभी पहलुओं की देख–रेख और नियंत्रण को लोकायुक्त के हवाले कर देना, कथनों की वीडियो रिकार्ड्रिंग की किस्म को अपना कर, गवाहों को सुरक्षा प्रदान करना, अभियोजकों को जवाबदेह बनाना, विचारण को प्रतिदिन के हिसाब से आयोजित करना, न्यायालयों द्वारा भ्रष्टाचार निरोध मामलों को उच्चतर प्राथमिकता देना आदि व्यवस्था को सुदृढ़ करने के कुछ उपाय हैं ।

- अनुशासनिक कार्यवाहियों को एक समयबद्ध तरीके से पूरा किया जाना चाहिए ।

कार्यशाला 10

विषयः– अधिप्राप्ति और सरकारी संविदाएं

- ई–अधिप्राप्ति प्रक्रिया को प्रत्येक कदम पर स्वप्रेरणा से प्रकटीकरण के साथ अधिक पारदर्शिता के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए ।

- दर की संविदाएं भ्रष्टाचार को कम करती हैं परंतु उसे दूर नहीं करतीं । अतः निर्माताओं के परिसर पर और प्राप्ति वाले छोर पर निरीक्षणों का काम किया जाना चाहिए ।

- उच्च विशेषज्ञता प्राप्त अधिप्राप्तियों के मामले में, व्यावसायिक परामर्शदाताओं को नियुक्त किया जाना चाहिए और अन्य पक्षकारों को किए गए वितरणों की जांच की जानी चाहिए ।

- प्रमुख अधिप्राप्तियों के मामले में पूर्व–लेखा परीक्षा अपेक्षित होती है परंतु इसे तकनीकी विशेषज्ञों की सहायता से आन्तरिक लेखा परीक्षा द्वारा ही किया जा सकता है ।

कार्यशाला 11

विषयः– सरकारी निर्णय लेने की प्रक्रिया में (पंचायत स्तर तक शामिल) सिविल सोसाइटी गतिविधियां और लोक भागीदारी किस प्रकार से भ्रष्टाचार को कम कर सकती है ? बड़ी पारदर्शिता और सूचना तकनीक तथा सूचना अधिकार के माध्यम से पारदर्शिता को बढ़ाने के लिए क्या–क्या उपाय किए जाने चाहिए ?

संलग्नक – 1(5) जारी

- पारदर्शिता बढ़ाने के लिए सूचना के अधिकार का प्रयोग किया जाना चाहिए । प्रारंभ में, राज्य सरकारों को निर्णय लेने के लिए प्रक्रियाओं और मूलाधार के बारे में सूचना सार्वजनिक अधिकार में रखी जानी चाहिए । लोक अन्वेषक अधिकारी को जानकारी दी जानी चाहिए ।
- ई–गवर्नंस का विस्तृत रूप से प्रयोग होना चाहिए ।
- स्थानीय स्तर पर न्याय दिलाने में चलते–फिरते न्यायालय लाभदायक हो सकते हैं । न्यायालय प्रक्रियाओं को वीडियो कैमरों के प्रयोग से पारदर्शी बनाया जा सकता है ।
- जांच–पड़ताल पत्रकारिता, सूचना अधिकार का प्रयोग करके नागरिकों को अधिक जानकारी देने में सहायता कर सकती है ।
- स्वतंत्र सर्वेक्षणों और मतों के वोट का प्रयोग पारदर्शिता का यंत्र बनाने की ओर बड़ी सावधानी से किया जाना चाहिए ।

संलग्नक – 1(6)

प्रश्नमाला

शासन में नैतिकता

I - वैधानिक ढांचा

1. क्या भ्रष्टाचार को दूर करने के लिए राष्ट्रीय नीति होनी चाहिए ? ऐसी नीति में क्या निरूपित होना चाहिए ?
2. क्या भ्रष्टाचार की परिभाषा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अनुसार पर्याप्त है ? क्या इस परिभाषा का संयुक्त राष्ट्र कन्वेंशन, जिसमें भारत ने भी हस्ताक्षर किए हुए हैं, को ध्यान में रखते हुए विस्तार किया जाना चाहिए ?
3. क्या भारत को संयुक्त राज्य मिथ्या दावा अधिनियम की तरह कानून बनाना चाहिए ?
4. क्या भारत में विनियमों का आधिक्य है ? क्या भारत में ऐसे कानून/नियम हैं, जो भ्रष्टाचार फैलाने में एक वातावरण पैदा करते हैं ?
5. क्या सामान और सेवाओं के अभाव से भ्रष्टाचार फैलता है ? इन अभावों को दूर कैसे किया जा सकता है ?
6. क्या संविधान और कानून लोक सेवकों को अनुचित संरक्षण देते हैं ? क्या अनुच्छेद 311 को फिर से देखने की आवश्यकता है ?
7. क्या नियंत्रण अधिकारियों को अपने अधीन काम कर रहे कर्मचारियों को उप अपराध करने के लिए उचित निगरानी का प्रयोग न करने के लिए जवाबदेह ठहराया जाना चाहिए ?
8. क्या अनुचित साधनों से प्राप्त किए गए धन जैसे मामलों से निपटने के लिए नए कानूनों की आवश्यकता है ?

II - नैतिकता का ढांचा

1. भ्रष्टाचार के विरूद्ध लड़ाई की नैतिक आधारशिला को मजबूत करने के लिए किन विशिष्ट उपायों की आवश्यकता है ?
2. राजनीतिक भ्रष्टाचार को प्रभावशाली ढंग से दबा देने के लिए किन संवैधानिक/संस्थागत/प्रशासनिक उपायों की आवश्यकता है ?
3. क्या मंत्रियों के लिए हमें आचार संहिता रखनी चाहिए ? इसमें क्या क्या शामिल होना चाहिए?
4. क्या हमें निर्वाचित सदस्यों के लिए आचार संहिता रखनी चाहिए ? इसमें क्या क्या शामिल होना चाहिए ?

संलग्नक – 1(6) जारी

5. लोक सेवकों के लिए आचार संहिता में क्या क्या आवश्यक तत्व होने चाहिए ?

6. क्या वृत्तिकों के लिए और वृत्तिक निकायों के लिए आचार संहिता होनी चाहिए ?

III - भारत सरकार में संस्थागत व्यवस्था

1. क्या विद्यमान संस्थागत व्यवस्था जिसमें केन्द्रीय सतर्कता आयोग और केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरों शामिल हैं, भ्रष्टाचार को रोकने के लिए पर्याप्त हैं ?

2. नियंत्रण अधिकारी काफी समय से भ्रष्टाचार को अपने अधीनस्थ कर्मचारियों के बीच दूर करने में कम ध्यान दे रहे हैं ? क्या केवल संस्थानों को गठित करने से ही भ्रष्टाचार दूर हो सकेगा? क्या बाहरी संस्थागत व्यवस्था आन्तरिक सतर्कता का प्रतिस्थापन है ?

3. क्या अधिकारियों के लिए उन्हें भारत सरकार में तैनाती के लिए जाने से पहले सतर्कता मंजूरी प्राप्त करने की प्रकिया प्रभावशाली है ? यदि नहीं, तो इसे सुधारने के लिए क्या उपाय किए जाने चाहिए ?

4. यह सुनिश्चित करने के लिए कि केवल ईमानदार अधिकारियों की तैनाती नाजुक कामों में की जा सके, किस व्यवस्था की आवश्यकता है ?

IV - राज्य सरकारों में संस्थागत व्यवस्था

1. लोकायुक्त, राज्य सतर्कता आयोग और भ्रष्टाचार निरोध ब्यूरो के बीच में क्या संबंध होना चाहिए ?

2. लोकायुक्त का संस्थान हर राज्य में भिन्न भिन्न होता है क्या इनमें से प्रत्येक के सर्वोत्तम लक्षणों को लेकर सभी राज्यों में एकीकृत ढांचा बनाया जा सकता है ?

3. इन संस्थानों में स्वायत्ता के साथ साथ उन्हें जवाबदेह बनाना किस प्रकार से सुनिश्चित किया जा सकता है ?

4. निचले स्तरों पर भ्रष्टाचार से आम आदमी दुःखी होता है । क्या इसे रोकने के लिए विशेष उपायों की आवश्यकता है ?

5. शक्ति को लोगों के पास अंतरित करने के लिए क्या किया जाना चाहिए जिससे निर्णय लेने का शक्ति बिंदु लोगो के नजदीक हो सके ? क्या इससे जवाबदेही बढ़ेगी ?

V - कार्यविधि मामले

1. यह किस प्रकार से सुनिश्चित किया जाए कि सत्यनिष्ठा वाले व्यक्ति ही नाजुक पदों पर तैनात हो सकें ?

संलग्नक – 1(6) जारी

2. क्या लोक सेवकों की सत्यनिष्ठा पर निगरानी रखने के लिए किसी तंत्र की आवश्यकता है ? यह कार्य किस एजेंसी को दिया जाना चाहिए ?

3. इस समय सतर्कता मंजूरी को प्राप्त करने की व्यवस्था है । इसे कैसे सुधारा जा सकता है ?

4. ईमानदार अधिकारियों को उत्पीड़न से बचाने के लिए कौन कौन से सुरक्षणों की आवश्यकता है ? क्या मामलों का पंजीकरण करने से पहले सरकार की पूर्व अनुमति लेने का विद्यमान प्रावधान आवश्यक है ? यह कैसे सुनिश्चित किया जा सकता है कि यह भ्रष्ट अधिकारियों के लिए एक अवलंब न बन सके ?

5. क्या मामले का पंजीकरण करने से पहले सरकार की पूर्व अनुमति लेने की आवश्यकता भ्रष्टाचार के विरूद्ध एक बाधा है ? ईमानदार अधिकारी को उत्पीड़न से कैसे सुरक्षण दिया जा सकता है ?

6. क्या विनियामक एजेंसियों द्वारा कुछ कृत्यों की आउटसोर्सिंग भ्रष्टाचार में कमी लाएगी ? किन कृत्यों की आउटसोर्सिंग की जा सकती है ?

VI - रोकथाम के उपाय

1. प्रतिस्पर्द्धा लाने से उपयोगकर्त्ता/उपभोक्ताओं को चयन करने का अवसर मिल जाता है । सरकारी एजेसियों द्वारा सेवा सुर्पुदगी में प्रतिस्पर्द्धा को कैसे लाया जा सकता है ?

2. अति–विनियमन भ्रष्टाचार का क्षेत्र बढ़ाता है । ऐसे कौन से क्षेत्र हैं, जहां विनियमों को कम किया जा सकता है ?

3. क्या सभी प्रमुख अधिप्राप्ति/संविदाओं की अनिवार्य पूर्व–लेखा–परीक्षा होनी चाहिए ?

4. व्यवस्थित सुधार भ्रष्टाचार की संभावना को कम करने में सहायता कर सकते हैं । ऐसे कौन से क्षेत्र हैं, जो ऐसे व्यवस्थित सुधारों के लिए स्वयं को उधार देते हैं ? ऐसे व्यवस्थित सुधार किस प्रकार से लाए जा सकते हैं ?

5. तकनीक का प्रयोग विवेक को कम करने में मदद कर सकता हैं और इस प्रकार विषयनिष्ठा ला सकता हैं । शासन में आधुनिक तकनीक के प्रयोग में क्या क्या बाधाएं आ रही हैं ? इनका सामना कैसे किया जा सकता है ?

6. क्या कोई भ्रष्टाचार अथवा घोटाले की सूचना देने वाला (सीटी बजाने वाला) अधिनियम होना चाहिए ?

7. क्या पृथक लोक सेवा कानून में उल्लिखित 'लोक सेवा मूल्यों' को रखने की आवश्यकता है?

संलग्नक – 1(6) जारी

VII - नागरिकों की पहल

1. भ्रष्टाचार के विरूद्ध लड़ाई में नागरिकों को सक्रियता से लिप्त करने के लिए किसी प्रकार के तंत्र की आवश्यकता है ?

2. क्या 'स्टिंग प्रचालनों' को वैधानिक समर्थन दिया जाना चाहिए ?

3. दावाधारियों को सेवा सुपुर्दगी संगठनों में भ्रष्टाचार पर निगरानी रखने में किस प्रकार लिप्त किया जा सकता है ?

4. क्या अधिकारियों के आकलन और दर्जा दिए जाने की व्यवस्था भ्रष्टाचार पर आधारित होनी चाहिए और फिर ऐसे मूल्यांकन के साथ प्रोत्साहन जोड़ने चाहिए ?

संलग्नक – VII(1)

सरकारी वसूलियों में सर्वांगी सुधार

1. सरकारी वसूली में वृद्धि : दूसरे विश्व युद्ध के दौरान युद्ध के प्रयासों में अर्थव्यवस्था के कमान ऊंचाइयों पर राज्य नियंत्रण और आयोजित आर्थिक विकास के साथ कल्याणकारी राज्य के विकसित हो जाने के कारण विशाल संसाधनों और परिणामी वसूलियों की आवश्यकता हुई । इन सबसे स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सरकारी गतिविधियों में कई गुना वृद्धि हो गई जिसके कारण संघ सरकार और राज्य सरकारों द्वारा सार्वजनिक वसूलियों में घातक वृद्धि हुई । आज, सारे विश्व में सार्वजनिक वसूली एक बड़ा व्यवसाय बन गया है । विश्व बैंक[56] ने सभी स्तरों पर और देश में सभी एजेंसियों द्वारा कुल मिलाकर लगभग 100 बिलियन डालर का अनुमान लगाया है, जिसमें कुल बजट का 13 प्रतिशत और सकल घरेलू उत्पाद का 20 प्रतिशत से ऊपर है ।

2. वसूली की परिभाषा : 'वसूली' को इस प्रकार से परिभाषित किया जा सकता है : ''यह एक प्रक्रिया है, जो वितरण के भंडारों, सेवाओं या अभियांत्रिकी और निर्माण कार्यों, किसी भी वस्तु को किराए पर लेने, बिक्री और अधिग्रहण या अधिकारों और रियायतों को मंजूरी देने से संबंधित संविदाओं की संरचना करती है, उनका प्रबंध करती है और उसे पूरा करती है ।'' (वाटरमेयेर)

3. वसूलियों में बड़े पैमाने पर भ्रष्टाचार का आविर्भाव : संथानम समिति ने बहुत पहले ही 1960 में यह अवलोकन किया था कि ''बड़ी संख्या में गवाहों ने हमें बताया था कि सरकार की ओर से निर्माण, क्रय, विक्रय और अन्य नियमित व्यापार के सभी ठेकों में पक्षों द्वारा लेनदेन में नियमित रूप से कमीशन अदा की जाती है और ये संबंधित अधिकारियों के बीच ठहराए गए अनुपात में बांट ली जाती है ।''

भारतीय उद्योग परिसंघ (सीआईआई) ने 1999 के अध्ययन में जिसमें 210 निजी क्षेत्र की फर्में लिप्त थीं, पाया कि इनमें से 60 प्रतिशत फर्मों ने इस बात की पुष्टि की कि किसी सरकारी ठेके को प्राप्त करने के लिए ठेके का 2–25% मूल्य अदा करना पड़ता है । ऊपर कथित विश्व बैंक की दिसंबर 2003 के मूल्यांकन में भी यह पाया गया कि ''अधिकारी और ठेकेदार, जिनका साक्षात् लिया गया था, दोनों ने इसके प्रचलन की पुष्टि कर दी परंतु एक ओर अधिकारियों का विश्वास है कि यह ठेके के मूल्य से 5 प्रतिशत से अधिक नहीं है, जबकि दूसरी ओर ठेकेदारों का कहना है कि सरकार की सभी शाखाओं को मिलाकर यह 15 प्रतिशत तक बैठता है और यह मूल्य में शामिल होता है । ''

वसूली में भ्रष्टाचार के विविध कारण हैं । कुछ महत्वपूर्ण ये हैं :

क. संघ और राज्य सरकारें और उनकी एजेंसियां विविध विकास की गतिविधियों के लिए बड़ी धनराशियां आबंटित करती हैं । इन गतिविधियों के निष्पादन पर सामान और सेवाओं की खरीद के लिए पर्याप्त राशि व्यय करने की आवश्यकता होती है । यह खरीद सभी स्तरों पर की जाती है – भारत सरकार, राज्य सरकारें, जिले और उप जिले और पंचायत स्तर । वास्तव में, सामान और सेवाओं की वूसली सरकारी बजट में शायद एक सब से बड़ी मद होती है ।

[56] भारत, राष्ट्रीय वसूली मूल्यांकन रिपोर्ट, 2003 ; विश्व बैंक का प्रलेख

संलग्नक – VII (1) जारी

यद्यपि, स्थानीय निकायों को सामान और सेवाओं की वसूली करने के लिए सशक्त किया गया है परन्तु फिर भी ऐसी वसूली के पर्यात भाग का केन्द्रीयकरण किया गया है ताकि मितव्ययिता के पैमाने को प्राप्त कर खरीद की प्रक्रिया में अधिक नियंत्रण किया जा सके । वसूली के सभी लेनदेनों में वितरकों को दिए जाने वाले बड़ी राशियों के भुगतान लिप्त होते हैं । इससे भ्रष्ट अधिकारियों को परितोषण लेने का अवसर मिल जाता है यद्यपि, संपूर्ण लेनदेन विहित नियम और विनियमों के अनुसार होना चाहिए । इस प्रकार की वृत्ति अनेक अन्य स्थितियों में भी देखी जाती है जहां भुगतान लिप्त होता है ।

ख. क्योंकि अनुबंधित कार्य–पद्धति के अनुसार, सबसे कम दर बताने वाले पक्ष को ही माल देने का आदेश दिया जाता है, अतः बड़ी संख्या में भावी वितरकों को, जो इस आदेश को प्राप्त करने में रूचि रखते हैं, जिनके लिए यह एक महत्वूपर्ण व्यवसाय का अवसर होता है, इस व्यवसाय को लेने में अवैध साधनों का प्रयोग करने में इच्छुक थे । ऐसी भ्रष्ट वृत्तियां कई गुना बढ़ गईं जब अधिकारियों द्वारा यह देखा गया कि उनके द्वारा अमीर बनने का यह एक वास्तविक अवसर था और वह भी कम जोखिम पर । धीरे धीरे यह भ्रष्टाचार की सुसंगठित व्यवस्था बन गई ।

ग. कभी–कभी वितरक अपने ऐसे माल को बेचने के लिए, जो विहित मानदंडों से मेल नहीं खाता था, अधिकारियों को वह माल स्वीकार करने का लालच देने में सफल हो जाता था ।

घ. एक विस्तृत कार्य प्रणाली ढांचे के बावजूद, जो अन्य उद्देश्यों के अलावा भ्रष्टाचार को कम करने वाला होता है, ऐसे बहुत से अंतराल और बचाव हैं, जिनका वितरक और खरीददार द्वारा भ्रष्ट वृत्तियों को फैलाने में शोषण किया जाता है ।

ड. कभी कभी, विद्यमान कार्यप्रणाली ढांचे के बावजूद, ऐसे बाहरी प्रभाव भी होते हैं जो वसूली एजेंसियों को गलत काम करने के लिए विवश करते हैं ।

च. विस्तृत नियमों के बावजूद, वसूली प्रक्रिया वास्तव में पारदर्शी नहीं होती ।

भ्रष्टाचार का जोखिम पर्याप्त रूप से ठेके के मूल्य, तकनीक की जटिलता, अधिग्रहण की शीघ्रता और परियोजना की तत्परता अधिकारियों में निहित विवेक की सीमा, वसूली में लिप्त प्रक्रियाओं की जटिलता और अपारदर्शिता, शिकायत निवारण व्यवस्थाओं की अनुपस्थिति अथवा अपर्याप्तता, पूर्व लेखा परीक्षा, समवर्ती लेखा परीक्षा, उपरांत लेखा परीक्षा और अन्य जवाबदेही व्यवस्थाओं की कार्यकुशलता में दर्शित अनाचार के पता चल जाने के अवसर,

वसूली व्यवस्था में बुराइयां

क. किसी नीति निर्माता विभाग/का न होना ।
ख. केन्द्रीय कानून का अभाव
ग. किसी विश्वसनीय शिकायत/चुनौती/वाद की कार्य–पद्धति का अभाव ।
घ. मानक निविदा प्रलेखों का अभाव ।
ड. वसूली में वरीयता का व्यवहार करना ।
च. मोल–तोल
छ. निविदा प्रक्रिया और अवार्ड दिए जाने के फैसले में विलंब ।
ज. निर्माण ठेकों के लिए पुरानी कार्य–पद्धति
झ. पारंपरिक रिकार्ड पर अति निर्भरता

स्रोत : भारत, राष्ट्र वसूली मूल्यांकन रिपोर्ट 2003
विश्व बैंक का प्रलेख

संलग्नक – VII(1) जारी

जांच की निश्चितता और गति और आन्तरिक सतर्कता द्वारा दंड की कार्रवाई तथा बाहरी सतर्कता, जांच और निगरानी निकायों द्वारा की गई कार्रवाई और इन सब से ऊपर प्रचलित राजनीतिक–सामाजिक वातावरण पर निर्भर करता है ।

राज्यों में भी स्थिति इसी प्रकार की है । जैसे जैसे राज्य स्तर से उप जिला और पंचायत/स्थानीय निकायों के स्तर को देखा जाए, वसूली का काम देखने वाले कार्मिकों की सामर्थ्य में गिरावट आई है । भ्रष्टाचार के मामले सभी स्तरों पर पाए जाते हैं । अनेक बोली लगाने वालों के साथ बातचीत नेमी आधार पर की जाती है और कभी कभी ठेकों को कई पक्षों के बीच या सभी पक्षों के बीच में बांट कर निविदा प्रक्रिया का परिहास किया जाता है । कुछ राज्यों में वार्षिक 'दर ठेके' का अत्यधिक प्रयोग किया जाता है जिसे किसी न किसी बहाने से वर्ष प्रतिवर्ष बढ़ा दिया जाता है जिससे नई निविदाओं को आमंत्रित करने को नजरअंदाज करके भ्रष्ट कारणों के लिए वर्तमान ठेकेदारों का हित किया जा सके ।

कभी कभी वसूली एजेंसी द्वारा कोई विशेष पक्षपात करने की नियत से माल में किसी खास तरह की विशिष्टताओं के माध्यम से, संविदा अवसरों के बारे में चुनी हुई जानकारी, प्रतिस्पर्द्धा से बचने के लिए या उसे सीमित करने के लिए शीघ्रता दिखाना, किसी का पक्षपात करने के लिए पक्षकारों की गोपनीयता का अतिक्रमण करके, अनुचित पूर्व योग्यता अपेक्षाएं देना जिससे अपर्याप्त प्रतिक्रिया आ सके, मिथ्या मापों को लिख लेना, निर्णयों में फेरबदल करने के लिए रिश्वत स्वीकार करना आदि से ठेकों में हेरा फेरी की जाती है ।

5. संस्थागत और वैधानिक ढांचा : वसूली के लिए संस्थागत और संवैधानिक ढांचा भारत के संविधान से लिया गया है । अनुच्छेद 298 संघ और राज्य सरकारों को माल और सेवाओं के लिए अधिकृत करता है और कार्यपालिका को सभी नागरिकों के साथ एक समान व्यवहार करने के मूलभूत अधिकारों की रक्षा करने की अपेक्षा करता है । संविधान का अनुच्छेद 299 संघ और राज्य सरकारों की ओर से ठेकों का निपटान और अनुच्छेद 300 उनके मुकदमों और कार्यवाहियों के निपटान को देखता है ।

ठेकों के लिए मुख्य ढांचे का विनियमन ठेका अधिनियम, माल विक्रय अधिनियम, माध्यस्थम् अधिनियम, परिसीमा अधिनियम और हाल ही में सूचना अधिकार अधिनियम 2005 द्वारा किया जाता है । भारत में वसूली के नियंत्रण के लिए कोई संघीय कानून नहीं है । वसूली से संबंधित नीतियां, कार्य प्रणालियां, मार्गदर्शी सिद्धांत और प्राधिकार के प्रत्यायोजन भारत सरकार द्वारा मुख्यतः वित्त मंत्रालय के माध्यम से जारी किए जाते हैं और उसके बाद प्रत्येक मंत्रालय/विभाग के आदेशों द्वारा जारी किए जाते हैं । भारत सरकार में महानिदेशक, पूर्ति और निपटान तथा राज्य स्तर पर 'भंडार क्रय विभाग' 'ठेका दरों' की प्रक्रिया से माल वसूल कराने में सरकारों की सहायता करते हैं जिसमें खरीदे जाने वाली विभिन्न मदों और वितरकों के लिए दरें समय समय पर नियत की जाती हैं और फिर सभी सरकारी विभाग और एजेंसियां ऐसे वितरकों पर सीधे माल का आदेश दे सकते हैं ।

संलग्नक – VII (1) जारी

सामान्य वित्तीय नियम सरकारी विभागों द्वारा माल और सेवाओं के क्रय के लिए कार्य प्रणाली प्रदान करते है । सामान्य वित्तीय नियमों में दी गई मुख्य सिद्धांतों की रूपरेखा के आधार पर राज्य सरकारों/केन्द्रीय लोक क्षेत्र एककों के अपने सामान्य वित्तीय नियम बनाए हुए होते हैं । जवाबदेही को सुनिश्चित करने के लिए नियंत्रक और महालेखापरीक्षक तथा राज्य सरकारों के स्थानीय कोष लेखा परीक्षा विभाग प्राथमिक निरीक्षण एजेंसियां हैं । केन्द्रीय लोक लेखा समिति और राज्य लोक लेखा समितियां नियंत्रक और महालेखापरीक्षक की रिपोर्टों की जांच करती हैं । एक विधिक प्राधिकरण – केन्द्रीय सतर्कता आयोग भी वसूली के संबंध में मार्गदर्शी सिद्धांतों को जारी करता है और सार्वजनिक ठेकों में लिप्त लोक सेवकों के अपराधिक कदाचार और भ्रष्टाचार के मामले में निरीक्षण की शक्तियां रखता है । सिविल न्यायालय, उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय वसूली में अनियमितताओं में लिप्त मामलों में न्यायिक उपचार प्रदान करती है । सिविल समाज संगठन और मीडिया भी सार्वजनिक वसूली में भ्रष्टाचार को प्रकाश में लाने में भूमिका अदा करते हैं ।

विश्व बैंक ने वसूली के लिए कार्य–पद्धति पर टिप्पणी करते हुए पाया :

> *''इस देश में अपनाया जाने वाला मूल कार्य प्रणाली का ढांचा विश्व बैंक के मार्गदर्शी सिद्धांतों या युनिसिटरल माडल लॉ और विश्व व्यापार संगठन के सरकारी वसूली समझौते और सार्वजनिक वसूली के अन्य उत्तम माडलों से कहीं भिन्न नहीं है । अतः नियमों, कार्य–पद्धतियों और प्रलेखों का युक्तियुक्त ढांचा तथा कुछेक अच्छे व्यवसायी भी हैं ।''*

संघ, केन्द्रीय लोक क्षेत्र और चुनी हुई राज्य सरकार की प्रक्रियाओं के अध्ययन के बाद 2003 में प्रकाशित विश्व बैंक द्वारा देश में वसूली मूल्यांकन से यह निष्कर्ष निकला है कि संघ सरकार के मंत्रालयों, विभागों और उप–एजेंसियों में वसूली का काम संतोषजनक आता है, यदि अन्य विकसित देशों में सार्वजनिक वसूली की तुलना और राज्यों में कार्य निष्पादन के साथ तुलना की जाती है । तथापि, यह अच्छा कार्य निष्पादन अनाचार, भ्रष्टाचार और कभी कभी लोकापवाद के मामलों के कारण बिगड़ जाता है ।

संघ और राज्य सरकारों द्वारा वसूली में भ्रष्टाचार के क्षेत्र को कम करने के लिए अनेक कदम उठाए गए हैं। तमिल नाडु और कर्नाटक की सरकारों द्वारा देश में 1990 के अंत में सार्वजनिक वसूली को नियमित करने के लिए एक औपचारिक वैधानिक ढांचा प्रदान करने की शुरूआत की गई है जिसमें तमिल नाडु सरकार द्वारा इस संदर्भ में अग्रणी प्रयास किया गया है जब उसने निविदा अधिनियम, 1998 में तमिल नाडु पारदर्शिता को अधिनियमित किया । इसके बाद कर्नाटक की पारदर्शिता ने सार्वजनिक वसूली अधिनियम, 1999 द्वारा इसे अपनाया । माल और सेवाओं के लिए केन्द्रीय सतर्कता आयोग ने मार्गदर्शी सिद्धांतों को जारी किया है ।

6. रोकथाम और नियंत्रण – आगे का मार्ग : वसूली में भ्रष्टाचार के निवारण और उसके नियंत्रण के लिए जिन भ्रष्टाचार निवारण उपायों की आवश्यकता है, मुख्य रूप से उन्हें शासन पर लागू कुल मिला कर सामान्य उपायों और वसूली की प्रक्रियाओं से संबंधित विशिष्ट क्षेत्रीय उपायों के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है । सामान्य उपायों अथवा सत्यनिष्ठा स्तंभों को निम्न प्रकार से श्रेणीबद्ध किया जा सकता है, अर्थात्

संलग्नक – VII(1) जारी

क. एक प्रभावकारी अपराध न्याय व्यवस्था जो गलत काम करने वाले को सजा दे

ख. प्रभावशाली प्रशासनिक निरीक्षण और प्रबंधन नियंत्रण व्यवस्थाएं जो शासन की प्रणाली में अन्तर्निहित हों ।

ग. सत्यनिष्ठा और आचार संहिता के साथ अच्छी तरह अधिकथित एक कुशल सिविल सेवा प्रणाली

घ. सूचना तक पहुंच का अधिकार

ड. स्वतंत्र लेखा परीक्षा प्राधिकारी द्वारा धन के लिए मूल्य को सुनिश्चित करने के लिए प्रभावकारी लेखा परीक्षा

च. प्रभावशाली प्रवर्तन सुनिश्चित करने के लिए भ्रष्टाचार निरोध आयोग और जांच एजेंसियां

छ. उच्च स्तर पर भ्रष्टाचार की जांच करने के लिए स्वतंत्र ओम्बडसमैन और

ज. भ्रष्टाचार, भ्रष्टाचार या घोटाले की सूचना देने वाले और गवाहों की सुरक्षण से संबंधित सख्त कानून और होने वाली हानि के लिए क्षतिपूर्ति लेने के लिए सिविल उपचार ।

इन सामान्य उपायों को वसूली से संबंधित कदाचार के लिए विशिष्ट उपचारात्मक उपायों द्वारा अनुपूरक किए जाने की आवश्यकता है । कुछ विशिष्ट उपाय ये हैं :–

क. सभी वसूलियां वितरकों के बीच प्रतिस्पर्द्धा के बाद ही की जानी चाहिएं । विशिष्टियों का रूप इस प्रकार होना चाहिए कि हमेशा कुछ ऐसे वितरक हों जो आवश्यकताओं की पूर्ति करते हों।

ख. सभी राज्यों और संघ के पास 'वसूली में पारदर्शिता अधिनियम' होना चाहिए । इस कानून को वसूली के लिए कार्य प्रणाली का अनुबंधन करना चाहिए, वसूली के निर्णयों के लिए प्राधिकारियों को अधिकथित किया जाना चाहिए, अनियमितताओं आदि की जांच करने के लिए एक अपीलीय व्यवस्था का अनुबंध होना चाहिए ।

ग. वसूली प्रक्रिया नियंत्रित करने वाली शर्तों और नियमों को बिना किसी अस्पष्टता के साफ तौर से लेखबद्ध किया जाना चाहिए । यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि सभी बोली देने वाली इन शर्तों और नियमों के बारे में सूचित कर दिया गया है और उनके संशयों, यदि कोई हों, का बोली शुरू करने से पहले समाधान कर देना चाहिए ।

घ. लिए गए निर्णयों के बारे में और उनके कारणों की जानकारी जनता के अधिकार में रखी जानी चाहिए ।

संलग्नक – VII (1) जारी

ड. बोली शुरू होने से पहले बोली के मूल्यांकन के लिए मानदंड को अधिकथित किया जाना चाहिए और इसे सभी बोली देने वालों की जानकारी में ला देना चाहिए । किसी भी स्थिति में मांनदंडों को बोली के बीच में बदला नहीं जाना चाहिए ।

च. बड़ी धनराशियों में लिप्त बोलियों का मूल्यांकन समितियों द्वारा किया जाना चाहिए ।

छ. विभागों के वसूली स्कंधों को बोलियों की युक्तियुक्तता अथवा अन्यथा तक पहुंचने के लिए बाजार शोध करना चाहिए ।

ज. वसूली प्रक्रिया को पारदर्शी और कार्यकुशल बनाने के लिए सूचना तकनीक का लगातार उपाश्रय लिया जाना चाहिए ।

झ. वसूली प्रक्रिया में केवल उन्हीं अधिकारियों को लिप्त किया जाना चाहिए जो प्रमाणित सत्यनिष्ठा के हों ।

ञ. वितरकों को भुगतान का निपटान तुरंत ही किया जाना चाहिए ।

ट. उच्च मूल्य की खरीद में सत्यनिष्ठा संधि का प्रयोग किया जाना चाहिए ।

ठ. निविदा ठेकों में यह शर्त शामिल होनी चाहिए कि रिश्वत के मामले का पता चलने पर सरकार भुगतानों को जब्त कर सकेगी ।

संलग्नक – VII (2)

सर्वांगी सुधार – कराधान विभागों में भ्रष्टाचार : (आय कर विभाग का मामला)

1. परिचय : भ्रष्ट वृत्तियों के लिए अवसर सभी सरकारी विभागों में विद्यमान हैं । ये अवसर मूल रूप में वितरण की ओर से बाधाओं के कारण, कार्य प्रणाली में कठिनाइयों और एक ओर लोक सेवा सुपुर्दगी से संबंधित विवेक शक्तियां और दूसरी ओर निजी लाभ के लिए मिलीभगत के फलस्वरूप पैदा होते हैं । परंतु कर उगाई और प्रशासन के लिए उत्तरदायी सरकारी विभागों के मामले में ऐसे अवसर करदाता द्वारा कर चुकाने के लिए इच्छुक न होने के कारण भी विद्यमान होते हैं । यह अनिच्छा प्रत्यक्ष करों जैसे कि आय कर के मामलों में और भी तीव्र हो जाती है जिसका एक सरल कारण यह होता है कि अप्रत्यक्ष कर (उत्पादन शुल्क, सेवा कर आदि) उपभोक्ताओं द्वारा या तो अनदेखे चले जाते हैं और या फिर उनके पास कोई चारा नहीं होता अथवा जिन्हें व्यवसाय का एक हिस्सा माना लिया जाता है और उसे व्यवसाय करने की लागत समझा जाता है जबकि दूसरी ओर आय कर व्यक्ति की मेहनत से कमाई गई आय पर लगता है ।

2. भ्रष्टाचार का सार्वजनिक बोध : ट्रांसपेरेंसी इंटरनैशनल इन्डिया द्वारा मीडिया अध्ययन केन्द्र के साथ मिलकर किए गए 'भारत भ्रष्टाचार अध्ययन 2005' शीर्षक से एक अध्ययन में आय कर विभाग द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं के बारे में प्रत्यर्थियों से पूछताछ की गई थी । अध्ययन के प्रयोजन के लिए राज्यों को सकल राज्य घरेलू उत्पाद (एनएसडीपी) के आधार पर तीन मुख्य श्रेणियों में बांटा गया था : उच्च , मध्यम और निम्न । इस अध्ययन के अधिकार क्षेत्र में उन करदाताओं को भ्रष्ट वृत्तियों से बाहर रखा गया जो अपने कर दायित्व को कम करने के लिए विभाग के साथ स्वयं बातचीत करते हैं । इस अध्ययन के अनुसार, निम्नलिखित तालिका भ्रष्टाचार के फैलाव के बारे में बोधगम्य कराती है :

भ्रष्टाचार का बोध	राज्य का एनएसडीपी			
	उच्च	मध्यम	निम्न	कुल
सहमत नहीं हैं	15	22	11	16
न तो सहमत हैं और न ही असहमत	20	24	18	20
सहमत हैं	61	49	67	60
कह नहीं सकते	04	05	04	04

इस अध्ययन से यह पता चला कि भ्रष्टाचार का बोध निम्न आय के राज्यों में अपेक्षाकृत ऊंचा था । इस अध्ययन में रिश्वत देने के उद्देश्य पर भी ध्यान केन्द्रित किया गया । निम्नलिखित तालिका में इसका निचोड़ दिखाया गया है:

संलग्नक – VII (2) जारी

(आंकड़ें प्रतिशत में)

रिश्वत देने का प्रयोजन	राज्य का एनएसडीपी			
	उच्च	मध्यम	निम्न	कुल
विवरणी जमा कराना	52	26	49	43
कम निर्धारण	09	06	19	13
पैन कार्ड जारी करना [57]	09	09	15	12
आय कर वापसी सुनिश्चित करना	17	10	30	21
मामला छानबीन के अंतर्गत नहीं आएगा, यह सुनिश्चित करना	05	06	08	07
छानबीन को समाप्त करना सुनिश्चित करना	06	06	08	07
शास्ति कम करना	05	25	03	10
आय कर छूट पाप्त करना	03	01	05	03
विवरणी पिछली तारीख से लेना	05	08	10	08

विवरणी भरे जाने से संबंधित भ्रष्टाचार की ऊंची प्रतिशतता निम्न को दर्शाती है :

- विवरणी भरे जाने के बारे में जानकारी का अभाव है, या
- अधिकार–क्षेत्र के बारे में जानकारी का अभाव है, या
- अन्तिम तारीख को ही विवरणी जमा कराने की प्रवृत्ति है, या
- विवरिणयां ऐसे अधिकार क्षेत्रों में जमा कराई जा रही है जहां छानबीन के लिए पकड़े जाने के आसार कम हैं ।

3. विभागीय पहल : आय कर विभाग ने करदाता द्वारा कर के भुगतान को सुविधाजनक बनाने और भ्रष्ट वृत्तियों के क्षेत्र को कम करने के लिए अनेक पहलें की हैं । इनमें महत्वपूर्ण ये हैं :

- कानूनों, कार्य–पद्धतियों और करदाता द्वारा भरे जाने वाले विविध प्रपत्रों का सरलीकरण
- पैन का आबंटन और पैन कार्डों का जारी करना पूर्णतया आउटसोर्स कर दिया जाए ।
- कंप्यूट्रीकरण के लिए पूरे जोर शोर से विशाल अभियान

[57] अब आउटसोर्स किए गए ।

संलग्नक – VII (2) जारी

- विवरिणयों की कंप्यूट्रीकृत प्रक्रिया
- स्पष्ट रूप से पता चली गलतियों को सुधारने के काम का समयबद्ध निपटान ।
- वापसी का आन–लाइन भुगतान भी परीक्षणाधीन

4. आगे का मार्ग

क. **सेवा सुपुर्दगी से संबंधित मुददे** : करदाताओं में बहुत पर्याप्त संख्या में या तो नौकरीपेशा कर्मचारी होते हैं या अपेक्षाकृत लघु व्यापार/व्यावसायिक आय वाले लोग । सेवा सुपुर्दगी से संबंधित भ्रष्टाचार बड़े पैमाने पर इन करदाताओं के साथ विभाग की बातचीत में केन्द्रित होता है । उनका विभाग के साथ बातचीत करने के मुख्य कारण निम्नलिखित होते हैं :

i. आय विवरणी को फाइल करना

ii. विवरिणयों की प्रक्रिया

iii. वापसी दावे और वापसी को जारी करना

iv. विवरणी में दिखने वाली अशुद्धियों/गलतियों के परिणामस्वरूप कंप्यूटर पर विवरणी की प्रक्रिया के समय कर मांग के नोटिसों को जारी करना ।

v. स्पष्ट गलतियों के संशोधन में लिप्त कार्य–पद्धति से संबंधित कठिनाइयां ।

ख. **सुझाव** :

i. अधिकार–क्षेत्र से संबंधित कार्यालय के बारे में जानकारी को हर वर्ष अग्रिम रूप से मुद्रण मीडिया द्वारा और वैब पर सार्वजनिक किया जाना चाहिए ।

ii. पहली बार भरने वाले करदाता के लिए स्पष्ट अनुदेश जारी किए जाने चाहिए ।

iii. विवरणी को अन्य सार्वजनिक कार्यालयों पर फाइल करने की अन्तिम तारीख से कम से कम एक सप्ताह पहले स्वीकार किया जाना चाहिए (जैसाकि 2006 में किया गया था)

iv. विवरणी की प्रक्रिया को अधिकार–क्षेत्र कार्यालयों से कार्यमूलक रूप से पृथक किया जाना चाहिए और विशिष्टता वाले कंप्यूट्राईज्ड कार्यालयों को दिया जाना चाहिए । ऐसे केन्द्रों को प्रतिदिन के आधार पर प्रक्रिया की जाने वाली विवरिणयों के बारे में जानकारी को अपलोड कर लिया जाना चाहिए ।

संलग्नक – VII (2) जारी

v. मांग और वापसी के लिए सूचना जारी करने के काम को अधिकार क्षेत्र कार्यालयों और प्रक्रिया केन्द्र दोनों को कार्यमूलक रूप से पृथक कर दिया जाना चाहिए । सकल परिणाम को प्रतिदिन ऐसे विशिष्ट केन्द्रों पर अपलोड किया जाना चाहिए । जहां कहीं भी विकल्प दिया गया हो वहां पर वापसी को इलैक्ट्रॉनिक रूप में अदा किया जाना चाहिए ।

vi. वापसी की कंप्युट्राईज्ड प्रक्रिया की सत्यता की जांच कर ली जानी चाहिए और करदाताओं द्वारा विवरणी भरते समय की गई एक ही तरह की अशुद्धियों की सूची बना ली जानी चाहिए और उसे नियमित रूप से अद्यतन करते रहना चाहिए । इस सूची के आधार पर, विभाग को समय समय पर जनता को शिक्षा देनी चाहिए ताकि अशुद्धियों की आवृत्ति न हो और विभाग से बातचीत को कम से कम रखा जा सके । इसे आसानी से समझ में आने वाली और वर्णनात्मक पुस्तिकाओं को प्रकाशित करके उसे वैबसाइट में डाल कर किया जा सकता है । इस जानकारी को नियमित रूप से अद्यतन किया जाना चाहिए । इसी प्रकार से, कंप्यूटर पर विवरणी की प्रक्रिया करते हुए होने वाली आम अशुद्धियों की तालिका बनाई जानी चाहिए । प्रक्रिया का काम करने वाले स्टाफ को भी तदनुसार शिक्षित और प्रशिक्षित किया जाना चाहिए ।

vii. पता लगाई गई अशुद्धियों को सुधारने के लिए कार्य–पद्धति को सरल और प्रभावशाली किया जाना चाहिए । (उनका निपटान पहले से ही समयबद्ध किया जा चुका है ।)

viiii. कंप्यूट्रीकरण के कारण कार्य प्रणाली के स्तरों में और हाथ से जांच करने के काम में आगे वृद्धि नहीं होनी चाहिए ।

ग. कपटपूर्ण रिश्वत के संबंध में, मूल सिद्धांत बहुत ही सरल है : ''रिश्वत के पैसे से काम नहीं होगा'' । दूसरे शब्दों में, यदि करदाता को यह अहसास करा दिया जाए कि रिश्वत देने के बावजूद भी कानून के लंबे हाथों से बच निकलना निश्चित नहीं है तो यह कपटपूर्ण रिश्वत काफी कम हो जाएगी । इसके लिए निम्नलिखित कदम उठाने की आवश्यकता है :–

i. 'राजस्व की हानि के आदेशों का पुनरीक्षण' स्कीम को सुदृढ़ किया जाना चाहिए । इसे एक उदाहरण देते हुए निम्न प्रकार से किया जाना चाहिए :

- पिछले दो वित्तीय वर्षों के भीतर जारी किए गए आदेशों के कार्यक्षेत्र को (वर्तमान स्कीम) छह वित्तीय वर्षों तक बढ़ाते हुए ।
- 'राजस्व के लिए हानिकर' क्या है, इसकी परिभाषा अधिनियम में ही दी जानी चाहिए । परिभाषा सरल होनी चाहिए जिससे आय कर अपीलीय अधिकरणों के समक्ष अपीलों का निर्णय योग्यता पर ही हो जाए, न कि तकनीकी आधार पर ।

संलग्नक – VII(2) जारी

ii. 'निर्धारण मामलों को पुनः खोलने' की स्कीम को सुदृढ़ किया जाना चाहिए । इसे इस प्रकार से किया जा सकता है :

- पुनः निर्धारण से संबंधित प्रावधानों को सरलीकृत करके (यदि आवश्यक हो, तो 'निर्धारण से बचने वाली कर प्रभार योग्य आय' को अधिनियम में ही सरल ढंग से परिभाषित किया जाना चाहिए ।)
- छह वित्तीय वर्षों को एकीकृत और बिना शर्त के लागू करना (वर्तमान में सामान्य रूप से 4 वर्षों तक सीमित और 6 वर्षों तक सशर्त सीमित ।)

iii. इन उपबंधों के दुरूपयोग से संबंधित पर्याप्त सुरक्षण बनाना और व्यवस्था की समीक्षा करना ।

iv. विभाग की 'केन्द्रीय सूचना ब्यूरो' (सीआईबी) के संगठनात्मक ढांचे को सुदृढ़ किया जाना चाहिए और इसकी भूमिका में विस्तार करके इसे पुनः परिभाषित किया जाना चाहिए (सीआईबी के पास जानकारी के संग्रहण और प्रचार–प्रसार के लिए अधिदेश है ।) विविध स्रोतों से सूचना का अतिरेक, इसका सदुपयोग और उपलब्ध जानकारी पर की गई कार्रवाई की उचित समीक्षा करना, ये इस संदेश को देने का सबसे पक्का उपाय है कि कपट से काम नहीं चलेगा । उठाए गए कदमों में ये शामिल होंगे :

- नकद लेन–देनों/वित्तीय लेन–देनों/सम्पत्ति के लेन–देनों आदि से संबंधित विविध स्रोतों से सूचना एकत्र करना ।
- पैन को क्रेडिट कार्ड के प्रयोग से जोड़ना और अन्य वित्तीय लेन–देन ।
- किसी विशिष्ट सीमा से ऊपर के नकद लेन–देनों को सीआईबी को सूचित करना।
- कर दाताओं/अधिकार–क्षेत्र कार्यालय के आंकड़ों का विश्लेषण और पहचान।
- सूचना के प्रचार–प्रसार को अधिकार–क्षेत्र के कार्यालयों में भेजना और अधिकार–क्षेत्र के कार्यालयों को प्रदान की गई सूचना पर की गई कार्रवाई की समीक्षा । पहचान लिए गए करदाताओं से संबंधित सूचना को पैन डाटाबेस के साथ टैगबद्ध किया जाना चाहिए जिससे छानबीन के लिए मामलों का स्वतः कंप्यूट्राईज्ड चयन हो सके । करदाताओं की पहचान न होने के मामले में, सूचना का विविध विनियमित निकायों में स्वतः प्रचार–प्रसार किया जाना चाहिए ।

संलग्नक – VII (2) जारी

जिस जानकारी का विश्लेषण नहीं किया गया हो और उसपर कोई तर्कसंगत निर्णय ले लिया गया हो तो उसे बिल्कुल भी जानकारी नहीं माना जाएगा ।

- इससे अतिरिक्त जनशक्ति और सीआईबी के कंप्यूट्रीकरण की आवश्यकता होगी ।

v. किसी विशिष्ट धनराशि से ऊपर छूट/कटौती का प्रत्येक नया दावा तत्काल सत्यापन के लिए तीन वर्षों के अन्दर आय कर निदेशालय (अन्वेषण) को भेज दिया जाना चाहिए।

vi. स्रोत पर करों की कटौती के क्षेत्र को ('कर को रोक कर') लगातार बड़ा किया जाता रहना चाहिए ।

vii. कर की चोरी की रोकथाम के किसी प्रयोग में आने के लिए दंड प्रावधानों को सरल और प्रभावी बनाया जाना चाहिए ।

viii. जहां कर की उद्देश्यपूर्ण चोरी के पर्याप्त साक्ष्य उपलब्ध हों, ऐसे मामलों में अपराधों को संज्ञेय बनाया जाना चाहिए ।

ix. अभियोजन शुरू करने के लिए कार्य–पद्धति को सरलीकृत किया जाना चाहिए ।

x. ईमानदार करदाताओं को सुविधाएं देना और तीन वर्षों के लिए छानबीन से उन्मुक्त कर देना ।

संलग्नक – VII(3)

भूमि प्रशासन में सर्वांगी सुधार

1. परिचय : भूमि प्रशासन शायद सबसे महत्वपूर्ण कामों में से एक है, जिनका निष्पादन सरकार करती है। यह मूलभूत रूप से नागरिकों की भूमि के स्वामित्व और अचल सम्पत्तियों के बारे में रिकार्डों के रखरखाव के काम को देखती है । भूमि प्रशासन व्यवस्थाएं जो आज भारत में विद्यमान हैं, उनकी रूपरेखा प्राथमिक तौर पर स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व बनाई गई थी । उस समय भूमि प्रशासन व्यवस्था का मुख्य उद्देश्य 'भू–राजस्व' को एकत्र करना था । भूमि प्रशासन की व्यवस्था भू–राजस्व अधिनियम और उनके अधीन बनाई गई संहिता और विनियमों में अधिकथित है । पुरानी व्यवस्था में ग्रामीण भूमियों पर ध्यान केन्द्रित किया जाता था । तथापि, बढ़ते हुए शहरीकरण और भूमि मूल्यों में उत्तरोत्तर वृद्धि, शहरी क्षेत्रों में भूमि प्रबंधन व्यवस्थाओं का बहुत अधिक महत्व हो गया है ।

भू राजस्व कानूनों और विनियमों में ग्रामीण क्षेत्रों में भूमि रिकार्डों के रखरखाव के लिए विस्तृत कार्य–प्रणालियों को अधिकथित किया गया है । वास्तव में, 'तहसीलदारों' और 'पटवारियों' के माध्यम से भूमि प्रबंधन करवाना कलैक्टर के मुख्य कर्तव्यों में से एक था । परंतु, इसी प्रकार की कार्य प्रणालियां शहरी क्षेत्रों में विद्यमान नहीं होतीं जहां ऐसे रिकार्डों का रखरखाव नगरपालिका या विकास प्राधिकरण या कभी कभी 'तहसीलदारों' द्वारा रखा जाता है ।

ऐसा महसूस किया जाता है कि भूमि रिकार्डों के अभिलेख रखे जाने की अवस्था में बहुत कुछ अपेक्षित है। ग्रामीण क्षेत्रों में लोगों के बीच जागरूकता लाने के अपेक्षाकृत निम्न स्तरों से समस्याएं और भी कई गुना बढ़ जाती हैं । भूमियों के विस्तृत सर्वेक्षण के काम दशकों से नहीं किए गए हैं और रिकार्डों के अद्यतन का काम काफी पीछे रह गया है । शहरी क्षेत्रों में भूमि के ऊंचे मूल्यों के साथ–साथ अनुचित अभिलेख प्रबंधन व्यवस्थाएं बड़े भ्रष्टाचार के फैलाव को जन्म देते हैं ।

2. सार्वजनिक बोध : ट्रांसपेरेंसी इंटरनैशनल में – 2005 में विविध सरकारी विभागों में भ्रष्टाचार का सीएमएस सर्वेक्षण – शोध में उत्तर देने वालों में से लगभग 4/5 लोगों का मत था कि भूमि प्रशासन विभाग भ्रष्ट था । भूमि अभिलेखों के कंप्यूट्रीकरण के उच्च स्तर या निम्न स्तर के साथ राज्यों के बीच बोध में कोई पर्याप्त अन्तर नहीं था ।

3. भ्रष्टाचार के स्तरों पर आंकड़ें :

- उसी सर्वेक्षण के अनुसार, देश में भूमि प्रशासन विभाग में भ्रष्टाचार का मूल्य 3126 करोड़ रूपए प्रति वर्ष अनुमानित किया गया है ।
- देश में पिछले एक वर्ष में 14.4 प्रतिशत गृहस्थियों ने विभाग के साथ बातचीत करने का दावा किया।

संलग्नक – VII (3) जारी

- देश के सभी 7.6 प्रतिशत गृहस्थियों ने, जिन्होंने वर्ष के दौरान विभाग के साथ बातचीत की थी विभाग को रिश्वत अदा करने का दावा किया । ये आंकडें. पश्चिमी (3%) और उत्तरी भारत (5%) की अपेक्षा पूर्वी (10%) और दक्षिणी (9%) भारत में ऊंचे थे ।
- जिन 3/4 (79%) अधिक लोगों ने विभाग के साथ बातचीत की थी, उन्होंने यह माना कि विभाग में भ्रष्टाचार है ।
- जिन 2/3 (61%) के लगभग लोगों ने विभाग के साथ बातचीत की थी, उन्होंने रिश्वत अदा करने की बजाय प्रभाव के प्रयोग का वैकल्पिक मार्ग अपनाया था ।
- जिन लोगों ने रिश्वत अदा की थी, उनमें से 1/3 (36%) ने विभाग के अधिकारियों को पैसे दिए थे, जब कि 33% ने अपना काम करवाने के लिए मध्यस्थों जैसे कि प्रलेख लेखक, सम्पत्ति का लेन–देन करने वालों को पैसे दिए थे ।

उत्तर देने वाले जिन लोगों ने विभाग में रिश्वत देने का दावा किया था, उनसे उस काम/सेवा के बारे में पूछा गया जिसके लिए उन्होंने रिश्वत दी थी । उत्तर देने वालों में से 39% का दावा था कि उन्होंने सम्पत्ति के पंजीकरण के लिए रिश्वत दी थी । 1/4 ने नामांतरण के लिए रिश्वत दी थी ।

जिस काम के लिए रिश्वत दी जाती है

विविध उत्तर	आंकड़े प्रतिशत में
कार्य/सेवा	कुल
सम्पत्ति पंजीकरण	39
नामांतरण	25
भूमि कर बकाया चुकाना	12
भूमि / सम्पत्ति का कम मूल्यांकन	12
भूमि सर्वेक्षण	12
खरीद स्टैंप पेपर	7
भूमि/सम्पत्ति प्रलेख प्राप्त करना	4

3. भ्रष्टाचार के कारण :– ट्रांसपेरेंसी इंटरनैशनल सर्वेक्षण में उत्तर देने वाले जिन 2/5 लोगों ने भूमि प्रशासन विभाग से बातचीत की थी, उन्होंने अपने काम करवाने के लिए वैकल्पिक तरीके, जैसेकि प्रभाव जगाने का प्रयास या रिश्वत का आश्रय लिया । वैकल्पिक प्रक्रियाओं का प्रयोग करने के लिए उत्तर देने वालों द्वारा बताए गए कारण निम्न प्रकार से थे :–

संलग्नक – VII(3) जारी

51% उत्तर देने वालों ने कहा कि ऐसा उन्होंने समय बचाने के लिए किया, 46% ने कहा कि वे अपना काम सामान्य तरीके से नहीं करवा सके और 3% ने लेनदेनों के नियमों और कार्य प्रणालियों के बारे में अज्ञानता बताया ।

इनके कारण ये हैं कि जमीन भारत में और किसी तेजी से विकसित हो रही अर्थव्यवस्था में वैभवता, शक्ति और सम्मान का एक परंपरागत महत्वपूर्ण चिन्ह है, अब यह एक जरूरी आर्थिक संसाधन है । अतः भूमि पर नियंत्रण भारत में भ्रष्टाचार के मुख्य स्रोतों में से एक बन गया है, जैसा कि सरकार की सेज नीति पर हाल ही में हुए नीतिगत विवाद और पहले के सरकार द्वारा निजी एजेंसियों, राजनीतिक दलों, कपटपूर्ण धर्मार्थ सामाजिक संस्थाओं और इसी प्रकार की अन्य संस्थाओं को बाजार दरों से नीचे सार्वजनिक भूमि के आबंटन पर चल रहे विवादों से पता चलता है ।

4. आवश्यक सुधारात्मक उपाय और आगे का मार्ग

शहरी क्षेत्रः

क. भूमि अधिकतम सीमा अधिनियम को समाप्त करके और खाली जमीन पर उच्चतर निर्माण शुल्क, सार्वजनिक भूमि आबंटन नीतियों को विवेकी आबंटनों से हटा कर बाजार के माध्यम से प्रतिस्पर्द्धात्मक नीलामियों में अंतरित करके और जो किसान सार्वजनिक या निजी क्षेत्रों में अपनी जमीन से वंचित रह जाते हैं, उन्हें विकसित जमीन का एक भाग देकर उन्हें विकास के कारण मिले नतीजों में से एक हिस्से का अवसर देने जैसे कदमों को विशेष रूप से शहरी क्षेत्रों में जमीन के वितरण को खोलकर, नियंत्रणो को हटाना, ये कुछ ऐसे कदम हो सकते हैं, जो भ्रष्टाचार के क्षेत्र को कम कर सकते हैं और अधिक व्यापक आधारित विकास को भी जन्म दे सकते हैं ।

ख. अधिकतर राज्य ग्रामीण/कृषि भूमि के लिए भूमि अभिलेखों के प्रपत्र मिलते हैं, शहरी सम्पत्तियों के लिए, पंजीकृत प्रलेख, वसीयतों आदि ही केवल सम्पत्ति के प्रलेख हैं, जो उपलब्ध हैं और ये अपरिहार्य रूप से समय के गुजरने के साथ ही जटिल और अपूर्ण हो जाते हैं जिससे सम्पत्ति विवाद खड़े हो जाते हैं और विशाल मुकदमेबाजी को भड़कावा मिलता है। अतः उचित अभिलेखों का आरंभ किया जाना चाहिए । सभी शहरी जमीनों का समय समय पर आधुनिक तकनीकों द्वारा सर्वेक्षण किया जाना चाहिए । स्वामित्व के प्रलेख प्राप्त करने के लिए कार्य–पद्धतियों को अधिकथित करने और व्यक्तियों द्वारा अधिकारों के अधिग्रहण के मामलों में नामांतरण करवाने के लिए विस्तृत नियम बनाए जाने चाहिए । अभिलेखों में इन्दराजों के मामलों में विवादों के हल की व्यवस्था के लिए नियम अधिकथित किए जाने चाहिए, जैसे कि ग्रामीण क्षेत्रों में होता है, जहां ऐसे विवाद को हल करने की व्यवस्था भूमि राजस्व कानूनों के अधीन प्रदान की गई है ।

संलग्नक – VII (3) जारी

ग्रामीण क्षेत्रः

क. सभी जमीनों का काफी देर से बकाया सर्वेक्षण तत्काल किया जाना चाहिए ।

ख. 'पटवारियों' जैसे क्षेत्रीय पदाधिकारियों को 'अधिकारों से अवगत कराने' के विविध कानूनों के बारे में उनकी जानकारी को बढ़ाने के लिए एक विस्तृत क्षमता निर्माण कार्यक्रम बनाने की आवश्यकता है ।

ग. पर्यवेक्षी अधिकारियों को सुनिश्चित करना चाहिए कि अधिकतर नामांतरण स्वप्रेरणा से ग्रामीणों द्वारा बिना इधर–उधर घूमे कर दिए जाएं । बिक्री प्रलेख, विरासतें आदि जैसे ऐसे नामांतरणों के ब्यौरे पहले से ही भूमि राजस्व शासन के पास उपलब्ध होते हैं ।

घ. भूमि अभिलेखों का कंप्यूट्रीकरण समय समय पर किया जाना चाहिए । परंतु यह सुनिश्चित किए जाने की आवश्यकता है कि एक बार ये अभिलेख कंप्यूट्रीकृत हो जाने के बाद उन्हें लगातार अद्यतन किया जाए ।

भूमि अभिलेखों का कंप्यूट्रीकरण

कर्नाटक में 176 तालुकों में 6.7 मिलियन भू–स्वामियों के 20 मिलियन भूमि रिकार्डों का आन–लाईन प्रणाली के आधार पर कंप्यूट्रीकरण किया जा चुका है जो किसी कपट की घटना को रोकने के लिए फिंगर प्रिंट बायोमैट्रिक प्रमाण का प्रयोग करते हैं, 'पहले आओ, पहले जाओ' नामांतरण प्रक्रियाओं और भूमि रिकार्डों का नियमित अद्यतन प्रदान करता है, जिससे भूमि रिकार्डों के प्रबंधन में सुरक्षा और विश्वसनीयता के साथ संपूर्ण पारदर्शिता आ गई है । अतः किसान अब भूमि के अभिलेखों को 2 मिनटों में प्राप्त कर लेते हैं, ये अभिलेख प्रमाणिक होते हैं और नामांतरणों को भी तुरंत करवाया जा सकता है और किसान ऋण भी आसान हो गए हैं । न्यायिक प्रशासन और वित्तीय संस्थानों के लिए स्वच्छ भू–स्वामित्व के रूप में सहगामी लाभ हो गए हैं और प्रशासन के लिए एक परिशुद्ध, आसानी से निर्वाह किए जाने वाले डाटाबेस के रूप में हो गए हैं जो अनेक अन्य विकास और विनियमन गतिविधियों के लिए लाभदायक हैं ।

ड. भूमि अभिलेखों के सावधिक अद्यतन का अभाव और ऐसे अभिलेखों का अशुद्ध पुनरीक्षण (ग्राम सर्वेक्षण नक्शों सहित) भू–धारक के साथ उत्पीड़न का एक बड़ा स्रोत है । यहां तक कि राज्यों में भी जहां अभिलेखों का कंप्यूट्रीकरण हुआ है, प्रयोगकत्ताओं के 'संतुष्टि स्तर' में कोई महत्वपूर्ण सुधार नहीं हुआ है । शायद, वह समय आ गया है जब मामले पर नियंत्रण करने वाले राज्य विधान को अशुद्ध अद्यतन और प्रतियों के वितरण में विलंब के लिए कड़े दंडों के उपबंध का प्रावधान किया जाना चाहिए ।

च. वह समय भी आ गया है जब ग्राम भूमि प्रबंधन ब्यौरों को भूकर सर्वेक्षण मानचित्र के साथ अधिकारों के अभिलेखों के सभी ब्यौरों को शामिल करते हुए 'निर्वाचित नामावलियों' की तर्ज पर प्रकाशित किया जाना चाहिए । भूमि अभिलेखों के कंप्यूट्रीकरण के साथ, यह बिल्कुल ही व्यवहार्य बन गया है और भूमि रिकार्डों की पुरातनता को काफी कम कर देगा (इसे शहरी क्षेत्रों में भी अपनाया जाना चाहिए)।

संलग्नक – VII(3) जारी

छ. कलैक्टर और उसके क्षेत्र के कर्मचारी भूमि प्रबंधन के लिए आवश्यक ध्यान नहीं दे रहे हैं । यह आवश्यक है कि कलैक्टर को प्रशिक्षित कर्मचारियों के रूप में पर्याप्त सहायता प्रदान की जाए ताकि इस महत्वपूर्ण कृत्य को वे निष्पादित कर सकें ।

5. भूमि अधिग्रहण :

राष्ट्रीय आयोजन को सुदृढ. आधार पर लाने के लिए कठोर प्रयास किए जाने की आवश्यकता है । आरंभ में, इस उद्देश्य से नीतियों को अधिकथित करने के लिए औपचारिक जिम्मेदारी ग्राम विकास मंत्रालय (भूमि संसाधन विभाग) संपूर्ण मार्गदर्शन में राज्य सरकारों में निहित की जानी चाहिएं ।

अपर्याप्त भूमि प्रयोग के आंकड़ें भी भूमि अधिग्रहण में अनियमितताओं का एक प्रमुख कारण हैं । भारतीय सर्वेक्षण को प्रत्येक जिले के लिए ऐसे डाटा के संग्रहण, निर्वाह और अद्यतन करने की जिम्मेदारी दे दी जानी चाहिए । इसको राज्यों के भू राजस्व विभागों के साथ मिल कर किया जाना चाहिए ।

6. पंजीकरण :

क. उन उच्च स्टैंप शुल्कों के उदारीकरण की आवश्यकता है जो सम्पत्ति के लेनदेनों में कम निर्धारण करना और काले धन के प्रयोग को बढ़ावा देते हैं । इसके साथ साथ पंजीकरण विभागों के कृत्यों में सूचना तकनीक के प्रयोग सहित सुधार और प्रक्रिया संशोधन की भी आवश्यकता है, ताकि लोक–सरकारी बातचीत को कम और भ्रष्टाचार को दूर किया जा सके और स्वायत्तता लाई जा सके ।

ख. क्योंकि स्टैंप शुल्क भूमि की कीमत पर आधारित होता है, अतः हर बार भूमि की कीमत निर्धारित करते रहने से ये पंजीकरण प्राधिकारियों के हाथों में काफी विवेकशीलता को छोड़ देता है । यह अपेक्षित होगा कि विभिन्न प्रकार के स्थानों और विभिन्न प्रकार की भूमियों के लिए भूमि की कीमतों का निर्धारण बहुत ही अग्रिम रूप से किया जाएं ।

संलग्नक – VIII

फिनलैंड में केन्द्रीय सरकार में सिविल सेवकों के बीच ईमानदारी के कारण*

कुछ ऐसे तत्व हैं जो यह बताते हैं कि फिनलैंड में बहुत ही कम भ्रष्टाचार क्यों होता है ।

1. **समतावादी समाज – कोई वर्ग भेद नहीं** : 1906 में, फिनलैंड विश्व में पहला ऐसा देश बना जिसने एक समान मताधिकार को अपनाया जिसमें महिलाओं के अधिकार में केवल मतदान करना ही शामिल नहीं था बल्कि चुनाव में उम्मीदवार के रूप में भी खड़ा होना शामिल था । लोक प्रशासन सबके लिए खुला रहता है और सिविल सेवक के रूप में अपना भविष्य बनाना सबके लिए खुला रहता है । 1960 के आगे से कल्याणकारी सेवाओं को बढ़ा दिया गया है । कल्याणकारी समाज के मुख्य तत्वों में है 65 साल के ऊपर के प्रत्येक व्यक्ति के लिए एक मूलभूत वृद्धावस्था पेंशन, निःशुल्क मूलभूत शिक्षा, किंडरगार्टन स्थान और उच्च शिक्षा और प्रत्येक के लिए स्वास्थ्य देखभाल । शासन बेरोजगारों की देखभाल करता है । पूर्वकथित सभी घटकों से सिविल सेवकों को रिश्वत देने के आग्रह में और सिविल सेवकों द्वारा रिश्वत लेने के लालच में कमी आई है ।

2. **सिविल सेवकों के लिए अच्छा दर्जा, पर्याप्त वेतन** : सिविल सेवक के भविष्य को हमेशा ही उच्च सम्मान दिया गया है । वेतन विशेष रूप से ऊंचे नहीं हैं परंतु अच्छे हैं । फिनलैंड में जनसंख्या और प्रशासन इतने छोटे हैं कि यदि आप समाज में अपना अच्छा नाम खो देते हैं तो आप बहुत कुछ खो देते हैं । अतः गलत काम करके अभियुक्त बनने और सामान्य समाज के दायरो से बाहर निकाल दिए जाने के जोखिम की शक्तिशाली रोकथाम बनी रहती है । यही कारण है कि भ्रष्टाचार के व्यक्तिगत मामले हमेशा कभी कभार ही होते हैं ।

3. **दलों के लिए सार्वजनिक वित्तपोषण** : सारे विश्व में, राजनीतिक गतिविधियों के लिए वित्त पोषण के पारंपरिक तरीकों में सदस्यता शुल्क, प्रचार, लाटरी दान, निजी समर्थन और लघु–व्यापारिक गतिविधियां शामिल रही हैं । फिनलैंड पहले ऐसे देशों में से था जिसने राजनीतिक दलों के लिए सरकारी कोषों का आबंटन किया । यह व्यवस्था 1967 से जारी है।

4. **वैधानिक ढांचा और प्रशासन की संस्कृति** : 1817 में एक डिक्री में, फिनलेंड में वकीलों या जो कम से कम कानून की डिग्री में स्नातक थे, के लिए वरिष्ठ सिविल सेवा पद आरक्षित किए गए । लोक क्षेत्र में आधुनिकीकरण के बावजूद, सरकारी प्रशासन ने कानून की परंपरा को बनाए रखा है । बिना साफ–सुथरे राजनीतिक पदों के और निम्न विरासत वाले ढांचे के प्रशासन और इसके साथ साथ प्रशासन के प्रत्येक स्तर पर सिविल सेवकों के बीच व्यक्तिगत और सामूहिक उत्तरदायित्व के ऊंचे दर्जे के प्रशासन और सार्वजनिक छानबीन के अनावरण के, भ्रष्टाचार पनप नहीं सकता ।

*उद्धृत : फिनलैंड में अच्छा शासन और भ्रष्टाचार : विश्व में सबसे कम भ्रष्ट देश से अनुभव (डा0 पाला तिहोनेन, डाक्टर आफ एडमिनिस्ट्रेटिव सांइसिस और सेपो तिहोनेन, डाक्टर आफ पोलिटीकल सांइसिस द्वारा वर्चुअल फिनलैंड के लिए लिखित)

संलग्नक – VIII जारी

5. **मध्यस्थ अथवा पंच व्यवस्था** : मध्यस्थ व्यवस्था फिनलैंड प्रशासन में विधान का एक पुराना स्तंभ है । मध्यस्थ एक सिविल सेवक होता है जो किसी सलाह पर शोध करता है, विकल्पों का सुझाव देता है और एक अन्तिम प्रस्ताव पेश करता है । इस व्यवस्था में मध्यस्थ, जो निर्णय लेने वाले राजनीतिज्ञ अथवा सिविल सेवक के निम्न स्तर का होता है, वरिष्ठ दल के विरूद्ध अपना मत दे सकता है । मंत्री एक ऐसा राजनीतिक निर्णय दे सकता है जो मध्यस्थ के निर्णय के भिन्न हो । यदि मध्यस्थ इस पर हस्ताक्षर नहीं करता है तो फिर भी यह वैधानिक रूप से बाध्य बन जाता है । मध्यस्थ अपने निर्णयों के लिए वैधानिक रूप से उत्तरदायी होता है । यदि कोई मंत्री या सरकार कोई ऐसा निर्णय लेते हैं, जो लिप्त सिविल सेवक द्वारा प्रस्तावित मामले से भिन्न होते हैं, तो सिविल सेवक वैधानिक उत्तरदायित्व से अपना उत्तर देकर बच सकता है परंतु ऐसा कम ही होता है । भ्रष्टाचार की दृष्टि से, फिनलैंड व्यवस्था किसी शक्तिशाली भ्रष्टाचारी से दोगुने काम की मांग करती है । उसे निर्णय लेने वाले और मध्यस्थ को अपनी अभिरूचियों के बारे में संतुष्ट करना होता है ।

6. **मंत्रालयों के प्रमुखों के रूप में गैर–राजनीतिक सिविल सेवक – 2005 तक:** फिनलैंड में राजनीतिक शासन सचिवों की व्यवस्था नहीं थी । गैर–राजनीतिज्ञ, व्यावसायिक रूप से कुशल, स्थायी सिविल सेवकों को ही नागरिकों के हितों को विकसित करने के लिए सर्वोत्तम समझा जाता था । 2005 में, सरकारी मंत्रालयों में राजनीतिक शासन सचिवों की नियुक्तियां होनी शुरू हुई थी ।

7. **पारदर्शिता और खुलापन:** फिनलैंड का मुख्य सिद्धांत हमेशा यही रहा है कि लोक प्रशासन में प्रत्येक वस्तु ही वास्तव में सार्वजनिक है, अन्य सिविल सेवकों, नागरिकों और मीडिया द्वारा आलोचना के लिए खुली हैं । लोक प्रशासन में सभी डायरियां और अभिलेख हर किसी के लिए खुले हैं ।

8. **निर्णयों के कारणों का सार्वजनिक रूप से स्पष्टीकरण देने का कर्तव्य और सकिय रहने का कर्तव्य** : संविधान के अनुसार, अच्छे शासन की सर्वाधिक महत्वपूर्ण गारंटियां हैं सुनवाई का अधिकार, एक कारण युक्त निर्णय प्राप्त करने का अधिकार और अपील करने का अधिकार । एक अन्य महत्वपूर्ण सिद्धांत यह है कि सिविल सेवक के लिए केवल यही आवश्यक नहीं है कि वह गलतियां न करे । एक सिविल सेवक को यह भी चाहिए कि वह नागरिकों के सर्वोत्तम हितों में कर्तव्यों का पालन करने में सतर्क रहे ।

9. **न्याय चांसलर और ओमबडसमैन की मजबूत स्थितियां** : न्याय चांसलर सरकार में काम करता है – सरकार का एक व्यापक भाग है और ओमबडसमैन संसद का एक भाग है । राष्ट्रपति दोनों नामांकित करता है परंतु वे अपने काम में पूरी तरह से स्वतंत्र होते हैं । उनके पास वे सब हथियार और अधिकार होते हैं जिनकी उन्हें जांच करने और जिन पर कृत्य करने

संलग्नक – VIII जारी

की आवश्यकता होती है । वे फिनलैंड में सबसे ऊंचे और अत्यंत सम्मानित वैधानिक अधिकारी होते हैं ।

10. **सामूहिक और सहकर्मी निर्णय ढांचा** : यदि किसी निर्णय निर्माता एकक में केवल एक ही व्यक्ति हो उससे भ्रष्टाचार को सहारा मिलता है । भ्रष्टाचारी व्यक्ति उस व्यक्ति विशेष की ओर सभी युक्तियां और संसाधनों को केन्द्रित कर सकता है । क्योंकि सामान्यतः दोनों पक्षकारों को इससे लाभ होता है, अतः उन दोनों के बीच हुए सौदों को किसी अन्य को बता देने का कोई कारण नहीं होता और इस प्रकार उन्हें संभावित दंड उपायों के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता । तथापि, यदि निर्णय सयुंक्त रूप से सहकर्मियों द्वारा लिए गए हों तो भ्रष्टाचार करना बहुत ही अधिक कठिन हो जाता है परंतु फिर भी यह असंभव नहीं होता । किसी हित समूह के पक्ष में निर्णय लेने के परामर्श के लिए और अधिक लोगों को संतुष्ट करना पड़ेगा और यह संभावना हमेशा रहेगी कि उनमें एक संभावित भ्रष्टाचारी किसी गलत लेनदेन होने पर सीटी बजाकर भ्रष्टाचार की सूचना दे सकता है। सामूहिक निर्णय निर्माण की परंपरा फिनलैंड में 17वीं शताब्दी से चली आ रही है ।

11. **निम्न विरासती ढांचा और व्यक्तिगत स्वतंत्रता तथा प्रशासन में स्वयं का उत्तरदायित्वः** यहां का प्रशासन सदा विनीत रहा है, सुशिक्षित सिविल सेवक और लोकतांत्रिक दृष्टि से विचारवान व्यक्ति यहां प्रबल रहे हैं । यही कारण हैं कि अधिकतर सिविल सेवक अपना काम शुरू से ही व्यक्तिगत रूप से करते रहते हैं जब तक कि उनका निर्णय बिना वरिष्ठतम अधिकारियों के हस्तक्षेप के नहीं हो जाता । सिविल सेवक उनके द्वारा की गई चहुमुखी कार्रवाई के लिए वे ही जिम्मेदार होते हैं । वे अपने कार्यों के बारे में दूसरों को सूचना देने के लिए बाध्य होते हैं ।

12. **सिविल सेवकों का भविष्य अपेक्षाकृत बंद रहता है** : फिनलैंड में ऐसा बहुत ही कम होता है जब प्रशासन के बाहर से कोई व्यक्ति भीतर में आ कर उच्च पदों के लिए नियुक्त हो जाए यद्यपि, यहां कोई बन्द भविष्य की व्यवस्था नहीं होती । फिनलैंड में फ्रांस के इकोल नेशनेल डी' एडमिनिस्ट्रेशन, दि ईएनए की तर्ज पर सिविल सेवकों को उच्च पदों पर ले जाने के लिए कोई सर्वोत्कृष्ट शैक्षिक स्थापना नहीं होती और न ही फिनलैंड में कोई बहुत ही विरासतन प्रशासकीय ढांचे होते हैं जैसे कि कुछ दक्षिणी यूरोपीय देशों में होता है ।

वृत्ति में भ्रष्टाचार की सीमाओं की जांच करना : ''रिश्वत क्या होती है'' : फिनलैंड सरकार की परंपरा बड़ी ही वैधानिक होती है, परंतु इस के साथ ही ये व्यवहार्य और लचकदार होती है, यह महत्वपूर्ण है कि उच्चतम न्यायालय, जो वैधानिक और प्रशासनिक कार्यों में मूल्यों का स्पष्टीकरण और उनकी परीक्षा करता है, समय समय पर यह भी स्पष्ट करता है कि मानदंड से क्या मंशा होती है । इस व्यवस्था से राजनीतिक सर्वोत्कृष्टता का और सर्वोच्च स्तर के सिविल सेवकों पर नियंत्रण हो जाता है और क्यों इनका प्रशासन के निम्न स्तरों पर भी असर पड़ता है, अतः मानदंडों की सीमाओं और उचित निर्वचन का हर किसी को स्मरण रहता है ।

द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग
भारत सरकार

द्वितीय मंजिल, विज्ञान भवन एनैक्स, मौलाना आज़ाद रोड, नई दिल्ली–110 001
e-mail : arcommission@nic.in website : http://arc.gov.in